बी.ए./बी.एस.सी/बी.कॉम, द्वितीय वर्ष
आधार पाठ्यक्रम, प्रथम प्रश्नपत्र

हिन्दी भाषा और नैतिक मूल्य

मध्यप्रदेश भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय
MADHYA PRADESH BHOJ (OPEN) UNIVERSITY

Reviewer Committee

1. Dr (Prof) Dharmendra Pare
   Professor
   Govt Hamidia College Bhopal
2. Dr (Prof) Rachna Tailang
   Professor
   Govt Hamidia College Bhopal
3. Dr (Prof) Sharda Singh
   Professor
   Govt Hamidia College Bhopal

Advisory Committee

1. Dr Jayant Sonwalkar
   Hon'ble Vice Chancellor
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal
2. Dr H.S.Tripathi
   Registrar
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal
3. Dr (Prof)Anjali Singh
   Director Student Support
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal
4. Dr (Prof) Dharmendra Pare
   Professor
   Govt Hamidia College Bhopal
5. Dr (Prof) Rachna Tailang
   Professor
   Govt Hamidia College Bhopal
6. Dr (Prof) Sharda Singh
   Professor
   Govt Hamidia College Bhopal

COURSE WRITERS

Dr. Saroj Kumari, Assistant Professor, Department of Hindi, Vivekanand College, University of Delhi
Unit (1.0-1.2, 1.2.1, 1.3.1, 1.5-1.9)
Dr. Gyan Prakash, Assistant Professor, Hindi Department, Vivekanand College, Delhi University, Delhi
Units (1.2.2-1.2.3, 1.3, 2.0-2.2, 2.2.1, 2.3.1, 2.4-2.9)
Ghanshyam Kumar Devansh, Academic Author
Units (1.3.2-1.3.4, 2.2.3-2.2.4, 3.2.2-3.2.4, 4.2.2-4.2.4, 5.2.2-5.2.3, 5.3.3-5.3.4)
Dr. Urvija Sharma, Associate Professor, Department of Hindi, SD PG College, Ghaziabad
Unit (1.4)
Dr. Seema Sharma, Lecturer, Department of Hindi, Ginni Modi Girls (PG) College, Modinagar
Units (2.2.2, 3.3, 3.3.2, 4.0-4.1, 4.2, 4.2.1, 4.3-4.4, 4.5-4.10, 5.0-5.1, 5.2, 5.2.1, 5.2.4-5.2.5, 5.3, 5.3.1, 5.3.2, 5.4.1, 5.5, 5.5.1, 5.6-5.10)
Yatindranath Gaur, Freelance Author
Unit (2.3, 2.3.2-2.3.4)
Dr. Snehlata Gupta, Associate Professor, Department of Hindi, Ginni Devi Modi Girls (PG) College, Modinagar (UP)
Units (3.0-3.1, 3.2, 3.2.1, 3.3.1, 3.4-3.9, 5.4, 5.4.2-5.4.4, 5.5.2-5.2.4)

Copyright © Reserved, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal

All rights reserved. No part of this publication which is material protected by this copyright notice may be reproduced or transmitted or utilized or stored in any form or by any means now known or hereinafter invented, electronic, digital or mechanical, including photocopying, scanning, recording or by any information storage or retrieval system, without prior written permission from the Registrar, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal.

Information contained in this book has been published by VIKAS® Publishing House Pvt. Ltd. and has been obtained by its Authors from sources believed to be reliable and are correct to the best of their knowledge. However, the Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal, Publisher and its Authors shall in no event be liable for any errors, omissions or damages arising out of use of this information and specifically disclaim any implied warranties or merchantability or fitness for any particular use.

Published by Registrar, MP Bhoj (Open) University, Bhopal in 2020

Vikas® is the registered trademark of Vikas® Publishing House Pvt. Ltd.

VIKAS® PUBLISHING HOUSE PVT. LTD.
E-28, Sector-8, Noida - 201301 (UP)
Phone: 0120-4078900 • Fax: 0120-4078999
Regd. Office: A-27, 2nd Floor, Mohan Co-operative Industrial Estate, New Delhi 1100 44
• Website: www.vikaspublishing.com • Email: helpline@vikaspublishing.com

SYLLABI-BOOK MAPPING TABLE

हिन्दी भाषा और नैतिक मूल्य

Syllabi	Mapping in Book
इकाई–1 हिन्दी भाषा 1. वह तोड़ती पत्थर (कविता) – सूर्यकांत त्रिपाठी निराला 2. दिमागी गुलामी (निबंध) – राहुल सांकृत्यायन 3. वर्ण–विचार (स्वर–व्यंजन, वर्गीकरण, उच्चारण स्थान)	**इकाई 1** : हिन्दी भाषा **(पृष्ठ 3–71)**
इकाई–2 हिन्दी भाषा 1. नारीत्व का अभिशाप (निबंध) – महादेवी वर्मा 2. चीफ की दावत (कहानी) – भीष्म साहनी 3. विराम चिह्न – (संकलित)	**इकाई 2** : हिन्दी भाषा **(पृष्ठ 73–114)**
इकाई–3 हिन्दी भाषा 1. चली फगुनाहट बौरे आम (ललित निबंध) – विवेकी राय 2. इन्द्रधनुष का रहस्य (वैज्ञानिक लेख) – डॉ. कपूरमल जैन 3. संधि (संकलित)	**इकाई 3** : हिन्दी भाषा **(पृष्ठ 115–156)**
इकाई–4 हिन्दी भाषा 1. सपनों की उड़ान (प्रेरक निबंध) – ए.पी.जे. अब्दुल कलाम 2. हमारा सौरमंडल (संकलित) 3. प्रमुख वैज्ञानिक आविष्कार (संकलित) 4. समास (संकलित)	**इकाई 4** : हिन्दी भाषा **(पृष्ठ 157–220)**
इकाई–5 नैतिक मूल्य 1. शिकागो व्याख्यान (व्याख्यान) – स्वामी विवेकानन्द 2. धर्म और राष्ट्रवाद (लेख) – महर्षि अरविन्द 3. सादगी (आत्मकथा) – महात्मा गांधी 4. चित्त जहां भयशून्य (कविता) – रवीन्द्रनाथ टैगोर	**इकाई 5** : नैतिक मूल्य **(पृष्ठ 221–264)**

विषय–सूची

परिचय **1–2**

इकाई 1 हिन्दी भाषा **3–71**

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 'वह तोड़ती पत्थर' (कविता) : सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'
  1.2.1 वह तोड़ती पत्थर : व्याख्या
  1.2.2 निराला की काव्य कला का विकास
  1.2.3 निराला की साहित्यिक दृष्टि एवं काव्यगत विशेषताएं
1.3 'दिमागी गुलामी' (निबन्ध) : राहुल सांकृत्यायन
  1.3.1 'दिमागी गुलामी' निबंध का मूल पाठ
  1.3.2 'दिमागी गुलामी' निबंध का सार
  1.3.3 'दिमागी गुलामी' निबंध का व्याख्यांश
  1.3.4 'दिमागी गुलामी' निबंध का समीक्षात्मक अध्ययन
1.4 वर्ण विचार (स्वर–व्यंजन, वर्गीकरण, उच्चारण स्थान)
1.5 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
1.6 सारांश
1.7 मुख्य शब्दावली
1.8 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.9 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 2 हिन्दी भाषा **73–114**

2.0 परिचय
2.1 उद्देश्य
2.2 नारीत्व का अभिशाप (निबन्ध) : महादेवी वर्मा
  2.2.1 'नारीत्व का अभिशाप' निबन्ध का मूल पाठ
  2.2.2 'नारीत्व का अभिशाप' निबन्ध का सार
  2.2.3 व्याख्यांश
  2.2.4 'नारीत्व का अभिशाप' (निबन्ध) का समीक्षात्मक अध्ययन
2.3 चीफ की दावत (कहानी) : भीष्म साहनी
  2.3.1 'चीफ की दावत' (कहानी) का मूल पाठ
  2.3.2 चीफ की दावत' (कहानी) का सार
  2.3.3 व्याख्यांश
  2.3.4 'चीफ की दावत' (कहानी) का समीक्षात्मक अध्ययन
2.4 विराम चिह्न : (संकलित)
2.5 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
2.6 सारांश
2.7 मुख्य शब्दावली
2.8 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.9 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 3 हिन्दी भाषा **115–156**

3.0 परिचय
3.1 उद्देश्य
3.2 चली फगुनाहट बौरे आम (ललित निबन्ध) : विवेकी राय
3.2.1 चली फगुनाहट बौरे आम (ललित निबन्ध) : मूल पाठ
3.2.2 चली फगुनाहट बौरे आम : निबंध का सार
3.2.3 चली फगुनाहट बौरे आम : व्याख्यांश
3.2.4 'चली फगुनाहट बौरे आम' निबंध का समीक्षात्मक अध्ययन
3.3 इन्द्रधनुष का रहस्य (वैज्ञानिक लेख) : डॉ. कपूरमल जैन
3.3.1 इन्द्रधनुष का रहस्य (वैज्ञानिक लेख) : मूल पाठ
3.3.2 आलेख का महत्व एवं प्रासंगिकता
3.4 संधि (संकलित)
3.5 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
3.6 सारांश
3.7 मुख्य शब्दावली
3.8 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
3.9 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 4 हिन्दी भाषा **157–220**

4.0 परिचय
4.1 उद्देश्य
4.2 सपनों की उड़ान (प्रेरक निबन्ध) : ए.पी.जे. अब्दुल कलाम
4.2.1 सपनों की उड़ान (प्रेरक निबन्ध) : मूल पाठ
4.2.2 सपनों की उड़ान (प्रेरक निबन्ध) का सार
4.2.3 सपनों की उड़ान (प्रेरक निबन्ध) : व्याख्यांश
4.2.4 सपनों की उड़ान (प्रेरक निबन्ध) का समीक्षात्मक अध्ययन
4.3 हमारा सौरमण्डल (संकलित)
4.4 प्रमुख वैज्ञानिक आविष्कार (संकलित)
4.5 समास (संकलित)
4.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
4.7 सारांश
4.8 मुख्य शब्दावली
4.9 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
4.10 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 5 नैतिक मूल्य **221–264**

5.0 परिचय
5.1 उद्देश्य
5.2 शिकागो व्याख्यान (व्याख्यान) : स्वामी विवेकानन्द
5.2.1 शिकागो व्याख्यान का मूल पाठ
5.2.2 शिकागो व्याख्यान का सार
5.2.3 शिकागो व्याख्यान का व्याख्यांश
5.2.4 शिकागो व्याख्यान की महत्ता एवं प्रासंगिकता
5.2.5 शिकागो व्याख्यान का समीक्षात्मक अध्ययन

5.3 धर्म और राष्ट्रवाद (लेख) : महर्षि अरविन्द
5.3.1 धर्म और राष्ट्रवाद लेख का मूल पाठ
5.3.2 धर्म और राष्ट्रवाद लेख का सार
5.3.3 धर्म और राष्ट्रवाद लेख का व्याख्यांश
5.3.4 धर्म और राष्ट्रवाद लेख का समीक्षात्मक अध्ययन
5.4 सादगी (आत्मकथा) : महात्मा गांधी
5.4.1 सादगी आत्मकथा का मूल पाठ
5.4.2 सादगी आत्मकथा का सार
5.4.3 सादगी आत्मकथा का व्याख्यांश
5.4.4 सादगी आत्मकथा का समीक्षात्मक अध्ययन
5.5 चित्त जहां भयशून्य (कविता) : रवीन्द्रनाथ टैगोर
5.5.1 मूल कविता : चित्त जहां भयशून्य
5.5.2 चित्त जहां भयशून्य कविता की व्याख्या
5.5.3 चित्त जहां भयशून्य : कविता की मूल संवेदना
5.5.4 चित्त जहां भयशून्य कविता का कला एवं भावपक्ष
5.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
5.7 सारांश
5.8 मुख्य शब्दावली
5.9 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
5.10 सहायक पाठ्य सामग्री

परिचय

टिप्पणी

प्रस्तुत पुस्तक 'हिन्दी भाषा और नैतिक मूल्य' विश्वविद्यालय द्वारा बी.ए. द्वितीय वर्ष के लिये निर्धारित आधार पाठ्यक्रम के अनुरूप तैयार की गयी है।

निराला जिस युग में कविता लिख रहे थे, उस युग में भारतीय समाज अनेक प्रकार के सामाजिक–आर्थिक परिवर्तनों से गुज़र रहा था। पूंजीवादी व्यवस्था द्वारा किये जा रहे शोषण को देख कर निराला बहुत बेचैन होते थे। उनकी अनेक रचनाओं में यह बेचैनी और पीड़ा झलकती है। 'वह तोड़ती पत्थर' कविता में भी श्रमिक नारी के जीवन और उसके प्रति समाज की हृदयहीनता का अंकन किया गया है। यह एक प्रगतिवादी रचना है और शिल्प–सौंदर्य की दृष्टि से अद्भुत है। निराला ने इसमें परिवेश की विडंबना को साकार किया है।

राहुल सांकृत्यायन सच्चे अर्थों में जनता के लेखक थे। ज्ञान–विज्ञान की अनेक शाखाओं, साहित्य की अनेक विधाओं में उन्हें महारत हासिल थी। इतिहास, दर्शन, पुरातत्व, नृतत्वशास्त्र, साहित्य, भाषा–विज्ञान आदि विषयों पर उन्होंने अधिकारपूर्वक लेखनी चलायी। उनका समूचा जीवन व लेखन सभी प्रकार के प्रतिगामी विचारों, रूढ़ियों, मूल्यों–मान्यताओं–परम्पराओं के खिलाफ विद्रोह का जीता–जागता प्रमाण है। उनका प्रसिद्ध निबन्ध 'दिमागी गुलामी' आज भी हमारे समाज में प्रचलित रूढ़ियों के खिलाफ समझौताहीन संघर्ष की ललकार है।

महादेवी वर्मा ने महिलाओं की समस्याओं को ही इंगित नहीं किया, बल्कि उन्होंने नारी जगत को भारतीय संदर्भ में मुक्ति का संदेश दिया। नारी मुक्ति के विषय में उनका विचार है कि भारत की स्त्री तो भारत मां की प्रतीक है। वह अपनी समस्त सन्तान को सुखी देखना चाहती है। उन्हें मुक्त करने में ही उनकी मुक्ति है। महादेवी अपनी लेखनी से सजगता और निडरता के साथ भारत की नारी के पक्ष में लड़ती रहीं। नारी शिक्षा की ज़रूरत पर जोर से आवाज़ बुलंद की और खुद इस क्षेत्र में कार्यरत रहीं। 'नारीत्व का अभिशाप' निबंध में भी उनकी यही भावना व्यक्त हुई है।

भीष्म साहनी हिन्दी के महत्वपूर्ण और प्रतिबद्ध कहानीकार हैं। वे नयी कहानी के सशक्त हस्ताक्षर हैं, जो नवीन जीवन–मूल्यों, नयी मान्यताओं और पाखण्डों से परिपूर्ण अहमन्यताओं को रेखांकित करते हुए मानवीय सम्बन्धों को विश्लेषित करते हैं। उन्होंने निम्न एवं मध्यवर्गीय जीवन के अन्तर्विरोध, पूंजीवादी प्रवृत्ति, आर्थिक विषमता तथा साम्प्रदायिकता से उत्पन्न प्रश्नों को प्रभावी रूप से उठाया है। उनकी प्रसिद्ध कहानी 'चीफ की दावत' में मध्यवर्गीय जीवन का खोखलापन, उसकी विकृतियां और लोलुपताएं बेनकाब हुई हैं। भीष्म साहनी के कथा साहित्य से गुजरना अपने समय को बेधते हुए गुजरना है।

इस पुस्तक में स्वाध्याय प्रणाली का प्रयोग किया गया है, जिसमें प्रत्येक इकाई का आरंभ उस इकाई के परिचय से होता है, तत्पश्चात इकाई के उद्देश्य आते हैं। पाठ के बीच–बीच में अपनी प्रगति जांचिए के प्रश्न समाविष्ट किये गये हैं। प्रभावी पुनर्कथन

के लिये प्रत्येक पाठ के अंत में सारांश, मुख्य शब्दावली और स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास दिये गये हैं।

टिप्पणी

पुस्तक को पांच इकाइयों में समायोजित किया गया है, जिनका विवरण निम्न प्रकार है–

पहली इकाई में हिन्दी के शिखर कवि निराला का परिचय देते हुए उनकी प्रसिद्ध कविता 'वह तोड़ती पत्थर' की व्याख्या और समीक्षात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। साथ ही इसमें प्रख्यात लेखक राहुल सांकृत्यायन का परिचय, उनके प्रसिद्ध निबंध 'दिमागी गुलामी' का समीक्षात्मक विश्लेषण और हिन्दी व्याकरण से 'वर्ण विचार' की जानकारी भी दी गयी है।

दूसरी इकाई में महादेवी वर्मा के व्यक्तित्व, कृतित्व एवं उनके निबंध 'नारीत्व का अभिशाप' का अध्ययन किया गया है। साथ ही कथाकार भीष्म साहनी का लेखकीय परिचय देते हुए उनकी प्रसिद्ध कहानी 'चीफ की दावत' का समीक्षात्मक विश्लेषण भी दिया गया है। व्याकरण के अंतर्गत 'विराम चिह्नों' के बारे में भी इकाई में विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

तीसरी इकाई में विवेकी राय के व्यक्तित्व का परिचय देते हुए उनके ललित निबंध 'चली फगुनाहट बौरे आम' तथा डॉ. कपूरमल जैन के वैज्ञानिक लेख 'इन्द्रधनुष का रहस्य' का महत्व और प्रासंगिकता बताते हुए उनका अध्ययन किया गया है। व्याकरण के अंतर्गत सन्धि और उसके विभिन्न नियमों को भी उदाहरण सहित समझाया गया है।

चौथी इकाई में भारत के पूर्व राष्ट्रपति और 'मिसाइलमैन' डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के जीवन–संघर्ष और योगदान के बारे में बताते हुए संकलित निबंध 'सपनों की उड़ान' का समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। साथ ही हमारे सौरमंडल और विश्व के प्रमुख वैज्ञानिक आविष्कारों के बारे में विस्तार से चर्चा करते हुए व्याकरण के अंतर्गत समास का भी अध्ययन किया गया है।

पांचवीं एवं अन्तिम इकाई में स्वामी विवेकानंद, महर्षि अरविंद, महात्मा गांधी एवं रवीन्द्रनाथ टैगोर के जीवन और व्यक्तित्व का परिचय देते हुए उनकी कृतियों– क्रमशः 'शिकागो व्याख्यान', 'धर्म और राष्ट्रवाद', 'सादगी' तथा 'चित्त जहां भयशून्य' का बहुआयामी विश्लेषण किया गया है।

हमें विश्वास है कि यह पुस्तक विद्यार्थियों के लिये अध्ययन में उपयोगी साबित होगी।

इकाई 1 हिन्दी भाषा

टिप्पणी

संरचना

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 'वह तोड़ती पत्थर' (कविता) : सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'
  1.2.1 वह तोड़ती पत्थर : व्याख्या
  1.2.2 निराला की काव्य कला का विकास
  1.2.3 निराला की साहित्यिक दृष्टि एवं काव्यगत विशेषताएं
1.3 'दिमागी गुलामी' (निबन्ध) : राहुल सांकृत्यायन
  1.3.1 'दिमागी गुलामी' निबंध का मूल पाठ
  1.3.2 'दिमागी गुलामी' निबंध का सार
  1.3.3 'दिमागी गुलामी' निबंध का व्याख्यांश
  1.3.4 'दिमागी गुलामी' निबंध का समीक्षात्मक अध्ययन
1.4 वर्ण विचार (स्वर–व्यंजन, वर्गीकरण, उच्चारण स्थान)
1.5 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
1.6 सारांश
1.7 मुख्य शब्दावली
1.8 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.9 सहायक पाठ्य सामग्री

1.0 परिचय

हिन्दी साहित्य जगत में सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का महत्वपूर्ण स्थान है। 'निराला' का जन्म सन् 1397 में तत्कालीन बंगाल के मेदिनीपुर जिले के एक छोटे गांव में हुआ था, जिसका नाम था– महिषादल। उनकी प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही हुई। कुछ ही वर्षों के वैवाहिक जीवन के बाद उनकी पत्नी का निधन हो गया। परिवार में और भी अनेक संकट आये। कविता लिखने की उनकी शैली नयी थी और संपादक प्रारंभ में उनकी कविता छापते नहीं थे। अतः उनके जीवन में आर्थिक अभाव भी बने रहे। निराला संस्कृत, बंगला और अंग्रेजी भाषा के ज्ञाता थे तथा संगीत और दर्शन में भी उनकी रुचि थी। वे रूढ़ियों के विरोधी थे। उन्होंने हिंदी कविता को नया जीवन और नया मार्ग दिया। 'परिमल', 'अनामिका', 'तुलसीदास', 'नये पत्ते, 'राम की शक्ति पूजा', 'गीतिका' आदि उनकी प्रसिद्ध रचनाएं हैं। सन् 1961 में उनका निधन हो गया। निराला जिस युग में कविता लिख रहे थे, उस युग में भारतीय समाज अनेक प्रकार के सामाजिक–आर्थिक परिवर्तनों से गुज़र रहा था। पूंजीवादी व्यवस्था द्वारा किये जा रहे शोषण को देख कर निराला बहुत बेचैन होते थे। उनकी अनेक रचनाओं में यह बेचैनी और पीड़ा झलकती है। 'वह तोड़ती पत्थर' कविता में भी श्रमिक नारी के जीवन और उसके प्रति समाज की हृदयहीनता का अंकन किया गया है। कवि ने उसे इलाहाबाद की किसी सड़क पर उसे काम करते देखा है। उसी का चित्र उन्होंने यहां खींचा है।

'वह तोड़ती पत्थर' एक प्रगतिवादी रचना है। शिल्प–सौंदर्य की दृष्टि से यह रचना अद्भुत है। निराला ने इसमें परिवेश की विडंबना को साकार किया है। एक ओर

टिप्पणी

भीषण गरमी में सड़क पर पत्थर तोड़ती औरत और दूसरी ओर सुंदर सजावटी वृक्षों की पंक्तियों से सजे परकोटों से घिरे बड़े–बड़े महल। कवि का उद्देश्य परिवेश के विरोध और विडंबना को साकार करना ही नहीं है। वह कहता है 'गुरु हथौड़ा हाथ, करती बार–बार प्रहार', वह हाथ में भारी हथौड़ा लेकर बार–बार प्रहार कर रही है, पत्थरों पर ही नहीं, बल्कि सामने उन तरुमालिका, अट्टालिका और प्राकारों की सुविधाओं का भोग करने वाले, वहां रहने वाले उन सभी लोगों पर और साथ ही साथ उस व्यवस्था पर भी, जहां शोषित मजदूर प्रतिकूल परिस्थितियों में काम करते हैं और शोषक उनसे बेखबर होकर सुख–सुविधाओं में जीते हैं।

राहुल सांकृत्यायन सच्चे अर्थों में जनता के लेखक थे। दुनिया की छब्बीस भाषाओं के जानकार राहुल जी की अद्‌भुत मेधा का अनुमान इस बात से भी लगाया जा सकता है कि ज्ञान–विज्ञान की अनेक शाखाओं, साहित्य की अनेक विधाओं में उनको महारत हासिल थी। इतिहास, दर्शन, पुरातत्व, नृतत्वशास्त्र, साहित्य, भाषा–विज्ञान आदि विषयों पर उन्होंने अधिकारपूर्वक लेखनी चलायी। दिमागी गुलामी, तुम्हारी क्षय, भागो नहीं दुनिया को बदलो, दर्शन–दिग्दर्शन, मानव समाज, वैज्ञानिक भौतिकवाद, जय यौधेय, सिंह सेनापति, दिमागी गुलामी, साम्यवाद ही क्यों, बाईसवीं सदी आदि रचनाएं उनकी महान प्रतिभा का परिचय अपने आप करा देती हैं।

राहुल जी देश की शोषित–उत्पीड़ित जनता को हर प्रकार की गुलामी से आजाद कराने के लिए कलम को हथियार के रूप में इस्तेमाल करते थे। समाज को पीछे की ओर धकेलने वाले हर प्रकार के विचार, रूढ़ियों, मूल्यों–मान्यताओं–परम्पराओं के खिलाफ उनका मन गहरी नफरत से भरा हुआ था। उनका समूचा जीवन व लेखन इनके खिलाफ विद्रोह का जीता–जागता प्रमाण है। इसीलिए उन्हें महाविद्रोही भी कहा जाता है। राहुल सांकृत्यायन का प्रसिद्ध निबन्ध 'दिमागी गुलामी' आज भी हमारे समाज में प्रचलित रूढ़ियों के खिलाफ समझौताहीन संघर्ष की ललकार है।

इस इकाई में हिन्दी के शिखर कवि निराला का परिचय देते हुए उनकी प्रसिद्ध कविता 'वह तोड़ती पत्थर' की व्याख्या और समीक्षात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। साथ ही इसमें प्रख्यात लेखक और यायावर राहुल सांकृत्यायन का परिचय तथा उनके प्रसिद्ध निबंध 'दिमागी गुलामी' का समीक्षात्मक विश्लेषण भी दिया गया है।

1.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- हिन्दी के शिखरस्थ कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' के जीवन और व्यक्तित्व से परिचय प्राप्त करेंगे;
- निराला की प्रसिद्ध कविता 'वह तोड़ती पत्थर' के मूल पाठ की व्याख्या कर पाएंगे;
- 'वह तोड़ती पत्थर' कविता के काव्य–सौन्दर्य का विश्लेषण कर पाएंगे;
- निराला की काव्य–कला के क्रमिक विकास को समझ पाएंगे;
- निराला की साहित्यिक दृष्टि एवं काव्यगत विशेषताओं से अवगत हो पाएंगे;

- राहुल सांकृत्यायन के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से परिचय प्राप्त करेंगे;
- 'दिमागी गुलामी' निंबध के मूल पाठ एवं उसके सार को समझेंगे;
- 'दिमागी गुलामी' निबंध के अंशों की व्याख्या कर पाएंगे;
- 'दिमागी गुलामी' निबंध का समीक्षात्मक विश्लेषण करने में सक्षम हो पाएंगे;
- व्याकरण के अंतर्गत वर्ण–विन्यास का समग्र विवेचन कर पाएंगे।

टिप्पणी

1.2 'वह तोड़ती पत्थर' (कविता) : सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

महाप्राण सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' वास्तव में अपने नाम के ही अनुरूप निराले रचनाकार थे। वे हिन्दी साहित्याकाश के सबसे देदीप्यमान नक्षत्रों में से एक थे। इस महान साहित्यशिल्पी का जन्म बंगाल के मेदिनीपुर में 21 फरवरी, 1896 को उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले के मूल निवासी पंडित रामसहाय त्रिपाठी के घर हुआ जो उस समय मेदिनीपुर के राजा की नौकरी कर रहे थे। बचपन में ही उनकी माता का देहान्त हो गया था। सैनिक स्वभाव वाले पिता के कठोर अनुशासन में बालक सूर्यकांत का लालन–पालन हुआ।

उनकी प्रारम्भिक शिक्षा बांग्ला और संस्कृत में हुई। दसवीं की परीक्षा पास करने के उपरांत स्वाध्याय द्वारा बांग्ला, संस्कृत, अंग्रेज़ी आदि कई भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया। इस बीच मनोहरा देवी से उनकी शादी हो चुकी थी, उन्हीं के प्रभाव से सूर्यकांत जी ने हिन्दी पर अधिकार प्राप्त किया और उसमें कविता लिखना शुरू किया। परंतु कवि सूर्यकांत की प्रसिद्धि देखने का मौका मनोहरा देवी को न मिल सका, उससे पूर्व ही एक पुत्री और एक पुत्र को छोड़ कर वे स्वर्गवासी हो गयी थीं।

पिता की मृत्यु के बाद कुछ समय तक मेदिनीपुर राज्य की नौकरी करने के बाद 'निराला' जी ने बंगाल छोड़ दिया और लखनऊ आ गये। यहां भी कुछ समय रह कर वे इलाहाबाद के दारागंज मुहल्ले में आकर रहने लगे, जहां इनके जीवन का अधिकांश समय गुज़रा। साहित्य–सृजन के अलावा जीविकोपार्जन के लिये विभिन्न प्रकाशनों में प्रूफ–रीडर के तौर पर काम किया और 'समन्वय' नामक पत्रिका का संपादन भी किया। अपने विद्रोही स्वभाव तथा अपारंपरिक लेखन के कारण सृजनकर्म से उन्हें कभी पर्याप्त आमदनी न हुई। इसी अवस्था में उन्होंने किसी तरह अपनी पुत्री सरोज का विवाह किया, परंतु केवल एक वर्ष बाद ही उसकी मृत्यु हो गई, इसी कारण 9 अक्टूबर 1936 को 'सरोजस्मृति' नामक कविता अस्तित्व में आयी, जो हिन्दी का अब तक का सर्वश्रेष्ठ शोकगीत माना जाता है।

आर्थिक विपन्नता की हालत में भी स्वयं कष्ट सह कर दूसरों की यथासंभव सहायता करने के अनेक प्रसंग उनके सही अर्थों में महामानवीय चरित्र को उद्घाटित करते हैं। सारा जीवन दुख और तकलीफों से जूझते 'निराला' अंतिम समय में अध्यात्म की ओर झुक गये थे। उनकी इस समय लिखी कविताओं में यह पक्ष उभर कर आया है। कहा जाता है कि मृत्यु से पूर्व वे कुछ विक्षिप्त से भी हो गये थे। जूही की कली, तुलसीदास, राम की शक्ति–पूजा, सरोज–स्मृति, वह तोड़ती पत्थर, रानी और कानी,

कुकुरमुत्ता (कविताएं), देवी, लिली, चतुरी चमार, कुल्लीभाट, बिल्लेसुर बकरिहा (गद्य रचनाएं) जैसी अनेक कालजयी कृतियों के इस अमर रचनाकार ने 15 अक्टूबर 1961 को अपना पार्थिव शरीर त्याग दिया।

टिप्पणी

निराला वास्तव में ओज, औदात्य एवं विद्रोह के कवि हैं। उन पर वेदांत और रामकृष्ण परमहंस तथा विवेकानंद के दर्शन का प्रभाव रहा है। यही कारण है कि उनकी कविताओं में रहस्यवाद भी मिलता है। निराला अकुंठ एवं वयस्क श्रृंगार दृष्टि तथा तृप्ति के कवि हैं। वे सुख और दुःख दोनों को भरपूर देख कर तथा उससे ऊपर उठ कर चित्रण करने की क्षमता रखते हैं। उनकी कविता में बौद्धिकता का भरपूर दबाव और तर्कसंगति है। अपने युग का विषय, यथार्थ और उससे उबरने की साधना उनकी तीन प्रबंधात्मक दीर्घ कविताओं– तुलसीदास, सरोज स्मृति और राम की शक्तिपूजा में प्रकट हुई है। निराला हिन्दी में मुक्त छंद के लिये प्रसिद्ध हैं। वे स्थितियों के संश्लेष से कम से कम शब्दों द्वारा अधिक से अधिक भाव पक्ष प्रकट करते हैं। नाद–योजना का उनकी काव्यात्मकता में विशिष्ट स्थान है। यही कारण है कि उनकी कविता में कभी कभी दुरूहता आ जाती है।

निराला में प्रारंभ से ही छायावाद से साथ साथ सरल और बोलचाल की भाषा में जीवन के विषय–यथार्थ को अभिव्यक्त करने की प्रवृत्ति रही है। यह महत्व निराला को ही प्राप्त है कि नयी हिन्दी कविता की सभी प्रवृत्तियों के कवि अपना संबंध निराला से जोड़ने में गौरव का अनुभव करते हैं। उनकी अधिकांश रचनाओं में भाषा तत्सम बहुल है और उनमें समासों की अधिकता है। परंतु कुछ प्रगतिवादी रचनाएं आम बोलचाल की भाषा में भी काव्यबद्ध हुई हैं। इससे यह तो पता चलता ही है कि भाषा के विविध रूपों पर उनका समान अधिकार था।

वह तोड़ती पत्थर : मूल पाठ

वह तोड़ती पत्थर;
देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर–
वह तोड़ती पत्थर।

कोई न छायादार
पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार;
श्याम तन, भर बंधा यौवन,
नत नयन, प्रिय–कर्म–रत मन,
गुरु हथौड़ा हाथ,
करती बार–बार प्रहार–
सामने तरु–मालिका अट्टालिका, प्राकार।

चढ़ रही थी धूप;
गर्मियों के दिन,
दिवा का तमतमाता रूप;
उठी झुलसाती हुई लू

रुई ज्यों जलती हुई भू,
गर्द चिनगीं छा गयी,
प्रायः हुई दुपहर–
वह तोड़ती पत्थर।

देखते देखा मुझे तो एक बार
उस भवन की ओर देखा, छिन्नतार;
देखकर कोई नहीं,
देखा मुझे उस दृष्टि से
जो मार खा रोयी नहीं,
सजा सहज सितार,
सुनी मैंने वह नहीं जो थी सुनी झंकार।

एक क्षण के बाद वह कांपी सुघर,
ढुलक माथे से गिरे सीकर,
लीन होते कर्म में फिर ज्यों कहा–
"मैं तोड़ती पत्थर।"

1.2.1 वह तोड़ती पत्थर : व्याख्या

1. वह तोड़ती पत्थर;
देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर –
वह तोड़ती पत्थर।
कोई न छायादार
पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार;
श्याम तन, भर बंधा यौवन,
नत नयन, प्रिय–कर्म–रत मन,
गुरु हथौड़ा हाथ,

टिप्पणी

करती बार–बार प्रहार :–

सामने तरु–मालिका, अट्टालिका, प्राकार!

टिप्पणी

सन्दर्भ– प्रस्तुत कविता महाकवि निराला द्वारा रचित है। यह कविता निराला रचनावली भाग–1 में संकलित है। यह निराला की बहुत लोकप्रिय कविता है।

प्रसंग – इस कविता में निराला एक ऐसी स्त्री के संघर्ष की गाथा कह रहे हैं जो भरी दोपहरी में इलाहाबाद के पथ पर पत्थर तोड़ रही है।

व्याख्या – वह पत्थर तोड़ रही है, उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर गर्म दोपहरी में पत्थर तोड़ते हुए देखा। जहां कोई भी छायादार वृक्ष नहीं था, जिसके नीचे बैठ वह पत्थर तोड़ती। अर्थात् वह इतनी कर्मठ है कि किसी छाया अर्थात् किसी सहायता के बगैर ही वह अकेले पत्थर तोड़ने का कठिन कार्य कर रही है। उसका शरीर श्यामला है और यौवन उभार पर है, उसके नयन नीचे हैं और मन प्रेमपूर्वक कर्म में लगा हुआ है। हाथ में भारी हथौड़ा है जिससे बार–बार पत्थरों पर प्रहार करती है अर्थात् पत्थर के रूप में तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था पर प्रहार करती है। सामने वृक्षों की घनी बगिया और बड़ी–बड़ी इमारतें तथा मकान आदि भी हैं किन्तु वह बिना किसी की सहायता के पत्थर तोड़ने का कार्य एकाग्रचित होकर कर रही है।

विशेष–

- इस कविता का रचनाकाल 1935 माना जाता है।
- इस समय प्रगतिवाद का समय था, इस कविता में प्रगतिवाद का स्वर साफ सुनाई देता है।
- पूरी कविता सामंतवादी व्यवस्था के खिलाफ गरीब और मजदूर वर्ग की आवाज उठाती है।
- गुरु हथौड़ा से सामंतवादी मूल्यों पर प्रहार है।
- भाषा तत्समबहुला खड़ी बोली हिन्दी है।
- स्त्री सशक्तीकरण का स्वर है।
- मुक्त छन्द
- ओज–गुण

2. चढ़ रही थी धूप :

गर्मियों के दिन

दिवा का तमतमाता रूप;

उठी झुलसाती हुई लू,

रुई ज्यों जलती हुई भू,

गर्द चिनगीं छा गयी,

प्रायः हुई दुपहर–

वह तोड़ती पत्थर।

टिप्पणी

सन्दर्भ– प्रस्तुत कविता महाकवि निराला द्वारा रचित है। यह कविता निराला रचनावली भाग–1 में संकलित है। यह निराला की बहुत लोकप्रिय कविता है।

प्रसंग – इस कविता में निराला एक ऐसी स्त्री के संघर्ष की गाथा कह रहे हैं जो भरी दोपहरी में इलाहाबाद के पथ पर पत्थर तोड़ रही है।

व्याख्या– कवि निराला कहते हैं, धीरे–धीरे धूप तेज हो रही थी, गर्मियों के दिन थे। दिवस अपना तमतमाता हुआ रूप दिखा रहा था। पृथ्वी रुई की भांति झुलस रही थी और चारों ओर धूल–मिट्टी की चादर बिछी हुई थी। दोपहर हो गई पर वह अपने कर्म में रत पत्थर तोड़ने का कार्य करती रही।

विशेष–

- इन पंक्तियों में गरीब जनता की विह्वल अवस्था का चित्रण है।
- भाषा में प्रवाह है।
- स्त्री की कर्मठता का चित्रण है।
- 'रुई ज्यों जलती हुई भू' उत्प्रेक्षा अलंकार के माध्यम से अतिशयोक्ति का भाव अभिव्यक्त हुआ है।

3. देखते देखा मुझे तो एक बार

उस भवन की ओर देखा, छिन्नतार

देखकर कोई नहीं,

देखा मुझे उस दृष्टि से

जो मार खा रोयी नहीं;

सजा सहज सितार,

सुनी मैंने वह नहीं जो थी, सुनी झंकार।

एक क्षण के बाद वह कांपी सुघर,

ढुलक माथे से गिरे सीकर,

लीन होते कर्म में फिर ज्यों कहा–

'मैं तोड़ती पत्थर।'

सन्दर्भ– प्रस्तुत कविता महाकवि निराला द्वारा रचित है। यह कविता निराला रचनावली भाग–1 में संकलित है। यह निराला की बहुत लोकप्रिय कविता है।

प्रसंग – इस कविता में निराला एक ऐसी स्त्री के संघर्ष की गाथा कह रहे हैं जो भरी दोपहरी में इलाहाबाद के पथ पर पत्थर तोड़ रही है।

व्याख्या – उस पत्थर तोड़ती हुई स्त्री ने मुझे एक बार देखा, फिर उस भवन की ओर देखा और यह देखा कि कोई नहीं है। उसने मुझे ऐसी दृष्टि से देखा जिसमें दृढ़ता थी,

टिप्पणी

जिसमें लड़ने की क्षमता थी, ऐसी दृष्टि जो विषम परिस्थितियों को झेलकर भी टूटी नहीं थी, जीवन से लड़ने का साहस उसमें था।

तभी कवि को ऐसा लगा कि सितार सज गया और उसकी झंकार स्वयं कवि ने सुनी। एक क्षण के लिए वह कांप उठी। उस सुगृहिणी के माथे पर भय के कारण पसीने की बूंदें झलकने लगी, फिर साहस बटोर कर वह पुनः अपने कर्म में लीन हो गई और कवि को ऐसा लगा कि वह स्वयं कह रही है कि 'मैं तोड़ती पत्थर'।

विशेष –

- स्त्री की कर्मठता का चित्रण है।
- तत्सम बहुला हिन्दी का प्रयोग है।
- मुक्त छन्द।

'वह तोड़ती पत्थर' कविता का काव्य सौंदर्य

महाप्राण कवि सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की कालजयी कविता 'वह तोड़ती पत्थर' सन् 1935 में लिखी गई थी। हिंदी साहित्य में प्रगतिवाद का उदय यद्यपि 1936 से माना जाता है तथापि इस कविता को देखने पर यह कहने में संकोच नहीं होना चाहिए कि प्रगतिवादी कविता की नींव डालने वाले कवि निराला ही थे। 'वह तोड़ती पत्थर' की मज़दूरिन के पत्थरों से उस नींव को जो मजबूती मिली है, वही प्रगतिवाद का ठोस आधार है।

भाव पक्ष–इस कविता का आद्योपांत सौंदर्य यदि व्याकरण और दर्शनशास्त्र की दृष्टि से देखा जाए यह कविता अपनी विलक्षणता को लेकर सामने खड़ी हो आती है। कविता का प्रारंभ अन्य पुरुष सर्वनाम के वाचक 'वह' शब्द से हुआ है और अंत में यह 'वह' कविता की अंतिम पंक्ति 'मैं तोड़ती पत्थर' के उस 'मैं' से मिलता है जो कि उत्तम पुरुष का एकवचन है। इस 'वह' और 'मैं' में अद्वैत दर्शन का सोऽहं (वह परमात्मा मैं हूं) गरजता हुआ दिखाई देता है। अद्वैत दर्शन का 'वह' भी 'मैं' बनने तक कठोर साधना से गुजरता है। कविता में भी मज़दूरिन की एकाग्रतामयी कठोर साधना ही उसके 'मैं' को प्रकट करके सामने ले आती है। छायाविहीन स्थान पर, झुलसती हुई लू में बैठी हुई उस तपस्विनी की तपस्या में समाधि की निष्क्रियता नहीं अपितु कर्मयोग की सक्रियता है। भगवद् गीता में कृष्ण ने भी संन्यास के बजाय 'कर्मयोग' को ही अधिक महत्व दिया है और स्पष्ट किया है कि संन्यास से जिस लक्ष्य (सोऽहं) की प्राप्ति होती है वही कर्मयोग से भी मिलता है। (यत्सांख्यैः प्राप्यते स्थानं तद् योगैरपि गम्यते। – गीता 5/20) कहने का तात्पर्य यह नहीं कि निराला ने इस कविता का लेखन किसी दार्शनिक सिद्धांत को स्थापित करने की योजना के अंतर्गत किया था, किंतु अनायास ही अद्वैत दर्शन के संपूर्ण/आद्योपांत स्वरूप का इसमें समावेश हो जाने से भी इनकार नहीं किया जा सकता।

'वह तोड़ती पत्थर' में कवि की दृष्टि ने एक स्त्री को ही चुना, इस तथ्य के गांभीर्य को भी समझना आवश्यक है। 'वह तोड़ती पत्थर' के स्थान पर 'वह तोड़ता पत्थर' भी संभव था, किंतु बंधनों का सर्वाधिक भार प्रायः एक स्त्री पर रहता है। निराला की प्रगतिवादी दृष्टि की यह विशेषता है कि 'नारी मुक्ति' पर वे अधिक बल देते हैं। उनकी एक कविता

'मुक्ति' में भी उन्होंने घरों की चारदीवारियों में बंधी नारी की मुक्ति का आह्वान किया है –

तोड़ो, तोड़ो, तोड़ो कारा
पत्थर की, निकलो फिर
गंगा जल धारा।
गृह–गृह की पार्वती!
पुनः सत्य–सुन्दर–शिव को संवारती।।

टिप्पणी

प्रस्तुत कविता में पत्थर तोड़ने वाली यद्यपि घर के कारागार में कैद नहीं है, लेकिन ऐसा होने पर भी स्वतंत्र नहीं है। यह एक खुली कैद है। इस खुली कैद में उसकी भरी जवानी बंधी हुई है। सामने वृक्षों की कतार है, किंतु उनकी ओर जाने की बात तो दूर, उन्हें देखने तक के लिए वह स्वतंत्र नहीं है–

श्याम तन भर बंधा यौवन
नत नयन, प्रिय कर्मरत मन।
सामने तरुमालिका, अट्टालिका प्राकार।।

'गुरु हथौड़ा हाथ' शब्दों में भी शाक्त दर्शन की छाया में अद्वैत दर्शन का भाव परिलक्षित होता है। शाक्त दर्शन के अनुसार शक्ति और शक्तिमान में कोई अंतर नहीं होता (शक्ति–शक्तिमतोः अभेदः)। 'हाथ और उसकी शक्ति' दोनों को अलग करके नहीं देखा जा सकता। इसीलिए कवि ने 'हाथ में हथौड़ा' कहने के बजाए हाथ हथौड़ा' कहकर दोनों को एकाकार कर दिया है। जड़ हथौड़ा चेतन हाथ की शक्ति से चेतन होकर प्रहार करता है, ठीक वैसे ही जैसे जड़ शरीर अदृश्य चेतन–आत्मा से स्पंदित होकर शक्तिमान हो जाता है।

चढ़ती धूप, गर्म दोपहरी और झुलसाने वाली लू में 'पत्थर तोड़ने वाली' की एकाग्रता का भंग न होना उसकी कर्मयोग की तपस्या का दृश्य प्रस्तुत कर रहा है।

कवि उसे निरंतर देख रहा है– अतः वह एक बार कवि की ओर देखती है। लेकिन यह देखना किसी अपेक्षा को नहीं अपितु उपेक्षा को प्रकट करता है, क्योंकि उसने कवि को ऐसे देखा है जैसे वह कोई है ही नहीं–

देखकर कोई नहीं
देखा मुझे उस दृष्टि से।

इस तरह यह पत्थर तोड़ने वाली तपस्विनी का 'निष्काम कर्मयोग' बन जाता है। प्रायः लोग परिश्रम के साथ–साथ इस सोच में डूबे पाए जाते हैं कि सबको देखने वाला अप्रत्यक्ष परमात्मा या अन्य कोई हमें कब हमारे परिश्रम का फल देगा? किंतु पत्थर तोड़ने वाली को प्रत्यक्ष द्रष्टा से भी कोई सरोकार नहीं है। उसकी दृष्टि में वह भाव है जो मार खाने को तैयार है, किंतु रोने का दीनभाव उसमें नहीं है –

देखा मुझे उस दृष्टि से
जो मार खा रोई नहीं।

टिप्पणी

बुद्ध के मध्यम मार्ग में भी मुक्ति का उपाय निष्काम कर्मयोग ही है, केवल व्याख्या का ढंग भिन्न है। संन्यास लिए बिना गृहस्थ जीवन में ही साधना (अर्थात् कर्म में लगे रहना) को वहां सितार के माध्यम से समझाया जाता है। कहा जाता है कि सितार के तार इतने ढीले मत छोड़ो कि सुर ही न निकलें और इतने भी मत कसो कि तार टूट जाएं। निराला की कविता में वही सितार मज़दूरिन की दृष्टि के रूप में साकार हो गया है –

सजा सहज सितार

सुनी मैंने वह, नहीं जो थी सुनी झंकार।

इस तरह यहां दो दर्शनों का शास्त्रार्थ नहीं अपितु एक सुलझी हुई दृष्टि है, जो अनेक शास्त्रों और दर्शनों के मंथन से उत्पन्न होती है। कोई तार नहीं बजे लेकिन 'झंकार' सुनी गई। 'स्फोटवादी' इसे 'नाद–ब्रह्म' कहते हैं। कबीर की वाणी में यह 'अनहद नाद' है। परंतु निराला की कविता में वह 'नाद–ब्रह्म' या 'अनहद नाद' मज़दूरिन की दृष्टि में जीवन का अंग बनकर सामने आया है। कविता के इस सौंदर्य का श्रोता–पाठक अपने जीवन में अनुभव भी कर सकते हैं और उतार भी सकते हैं।

कविता का समग्र सौंदर्य कविता की निम्न अंतिम पंक्तियों में उभरकर आ गया है–

ढुलक माथे से गिरे सीकर,

लीन होते कर्म में फिर ज्यों कहा–

''मैं तोड़ती पत्थर।''

मज़दूरिन मौन है और 'मैं तोड़ती पत्थर' कहने वाली उसके श्रम सीकर (पसीने की बूंदें) हैं, जो उसके द्वारा तोड़े जा रहे पत्थरों में समा जाते हैं और संदेश दे जाते हैं कि शब्दों का बोलना महत्व नहीं रखता, अपितु कर्म का बोलना ही महत्व रखता है। इसी को गोस्वामी तुलसी दास ने रामचरितमानस में उत्तम आचरण बताते हुए कहा है कि संसार में तीन प्रकार के लोग होते हैं–

(क) केवल बोलने वाले

(ख) बोलकर कर्म करने वाले

(ग) केवल कर्म करने वाले

कविता के उपर्युक्त दार्शनिक किंतु यथार्थ सौंदर्य के अलावा परतंत्रता और स्वतंत्रता के संघर्ष को भी आलोचकों ने इस कविता में देखा है, उसे भी नकारा नहीं जा सकता। कवि को 'क्रांतिद्रष्टा' कहा ही जाता है। अतः निराला की क्रांतिकारी दृष्टि से अनेक भावों में संक्रमण करने वाली अनुभूति के बल पर इस कविता में अनेक अर्थों को खोजने में कोई दोष नहीं। अपितु विभिन्न दृष्टियों को जो संतोष दे सके उसी में कविता का सौंदर्य अपार होता है। अतः निष्कर्ष में कहा जा सकता है कि इस कविता का अपार सौंदर्य अपने में संपूर्णतः 'सत्य शिव और सुंदर' से परिपूर्ण है।

कला पक्ष–कवि निराला ने इस कविता को मुक्त छंद किंवा गद्यशैली में लिखा है। मज़दूरिन के जीवन की नीरसता को व्यक्त करने के लिए यही सर्वोत्तम शैली सिद्व हुई है। गद्य शैली के सरल शब्द श्रोता/पाठक को कविता की चेतना से जोड़ने में पूर्ण सामर्थ्य

से संपन्न हैं। अतः कला पक्ष की दृष्टि से भी यह कविता यथार्थ के धरातल पर मजबूती से खड़ी दिखाई देती है।

1.2.2 निराला की काव्य कला का विकास

टिप्पणी

निराला के काव्य का भाव क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है उन्हें किसी वाद की सीमा में बांधना कठिन है, यद्यपि लोग उन्हें विविध वादों के अन्तर्गत घसीटते हैं। छायावाद के प्रवर्तकों में उनकी गणना होती ही है। आचार्य शुक्ल एवं अन्य परवर्ती समीक्षक उनके काव्य में स्वच्छन्दतावाद का प्रसार देखते हैं। व्यंग्यपरक रचनाओं के बाद लोग उन्हें प्रगतिवाद का प्रयोगवादी कहने लगे। वार्धक्यावस्था के आत्मनिवेदनात्मक काव्य को अन्तश्चेतनवादी कहा जाने लगा। उस प्रकार निराला को समय-समय पर उनकी रचनाओं के आधार पर विभिन्न वादों का कवि माना गया। जबकि सत्य तो यह है कि वे भले ही आशा के स्वर को लेकर चले हों अथवा आक्रोश के अथवा भक्ति-भावना के, पर मानवतावादी स्तर पर सदैव आसीन रहे हैं और मानव-जीवन के प्रति गहन आस्था का दीप अपने अन्तस्तल में सदैव संजोये रहे हैं।

निराला के काव्य-विकास को उनकी काव्य कृतियों के आधार पर निम्न भागों में बांटा जा सकता है-

1. सन् 1916-17 से लेकर सन् 1927 तक की अवधि का प्रथम चरण जिसकी सर्वप्रमुख विशेषता स्वच्छन्दता है।
2. सन् 1927-28 से लेकर सन् 1935-37 तक की अवधि का द्वितीय चरण, जिसमें अधिकांशतः गीतों का सर्जन हुआ है।
3. सन् 1935 से सन् 1942 तक का तृतीय चरण, जिसमें एक ओर उन्होंने उदात्त भूमि पर पहुंचकर महाकाव्योचित गरिमा से युक्त रचनाएं लिखी हैं और दूसरी ओर हास्य और व्यंग्यपरक कविताएं लिखी हैं।
4. सन् 1942 से सन् 1950 तक का चतुर्थ चरण, जिसमें कवि ने विविध प्रयोग किये और गजलें, प्रशस्तियां, व्यंग्यात्मक कविताएं आदि लिखीं।
5. सन् 1950 से सन् 1961 तक का पंचम चरण, जिसमें उन्होंने भक्ति गीतों का सृजन किया तथा सौंदर्य और सात्विकता से अभिमण्डित काव्य-सृष्टि की। आध्यात्मिक भावना से युक्त, प्रकृति चित्रण सम्बन्धी, कतिपय श्रृंगारी गीत जो कि शान्त रस के अधिक समीप है, उन्होंने इस चरण में लिखे।

निराला की काव्य-कला का आरम्भ सन् 1916 में लिखित 'जूही की कली' से हुआ, जो कि उनकी सर्वप्रथम रचना थी। 'अधिवास' नामक कविता की रचना भी इसी सन् में हुई। सन् 1923 में उनका 'अनामिका' नामक प्रथम काव्य संग्रह प्रकाशित हुआ जो कि अब अप्राप्य सा है। बाद में इसका द्वितीय संस्करण सन् 1938 में छपा, जो कि प्रथम संस्करण से नितान्त भिन्न है। प्रथम संस्करण की महत्वपूर्ण कविताएं 'परिमल' संग्रह में प्रकाशित हो गयीं। 'परिमल' का प्रकाशन सन् 1930 में हुआ। इस संग्रह की कुछ उल्लेखनीय कविताएं 'बादलराग', 'जूही की कली', 'जागो फिर एक बार', 'महाराज शिवाजी का पत्र', 'यमुना के प्रति', 'तुम और मैं' आदि हैं।

टिप्पणी

प्रथम चरण में निराला के काव्य की सबसे बड़ी विशेषता उसका स्वच्छन्द रूप है। काव्य की अनुभूति और अभिव्यक्ति दोनों पक्षों में उन्होंने परम्परागत रूढ़ियों का हनन किया। 'बादल राग' और 'जागो फिर एक बार' जैसी कविताओं में क्रांति का आह्वान है तो 'यमुना के प्रति' में अतीत के स्वर्णिम दिनों का उद्वेगमय संस्मरण है। इस कविता में भावों का ऐसा उद्दाम वेग है कि उसकी प्रवाहमयता में पाठक बहता चला जाता है। अभिव्यक्ति की दृष्टि से स्वच्छन्दता लाने के लिए निराला ने इसी काल में मुक्त छन्द में कविताएं लिखीं। यद्यपि कुछ कविताएं छन्दोबद्ध भी हैं, किन्तु वे भी कविता के विद्रोही व्यक्तित्व की गहरी छाप लिए हुए हैं। इसी काल की एक अन्य कविता 'तुम और मैं' भी कवि की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति की परिचायक है। इसमें कवि ने आत्मा और परमात्मा के जितने सम्बन्ध व्यक्त किए हैं, वे उनकी कल्पना के वैभव के सूचक हैं और मन में उठने वाले भावों के उद्दाम वेग के परिचायक हैं। इसी काल की 'जूही की कली' नामक कविता में प्रसुप्त जूही की कली के प्रति नायक पवन जिस उच्छृङ्खलता को प्रदर्शित करता है, वह कवि की जीवन-बसन्त की मादक भावप्रवणता का अभिव्यंजक है। इस प्रकार अपनी काव्य कला के विकास के प्रथम चरण में निराला पूर्णत: स्वच्छन्दतावादी और विद्रोही मनोवृत्ति के कवि थे।

इस चरण की कविताओं में 'जूही की कली' और 'बादल राग' सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। डॉ. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय के अनुसार, '''जूही की कली' हिन्दी काव्य में एक प्रकाश स्तम्भ है। मुक्त छन्द, ललित भावनाओं की स्वच्छन्द अभिव्यक्ति और एक अव्यक्त संकेतात्मकता के कारण यह कविता आचार प्रधान, नियमानुशासित, इतिवृत्तिप्रधान द्विवेदीयुगीन काव्य के विरुद्ध प्रतिक्रिया के रूप में आती है। जूही की कली में यौवन की सारी उद्दामता एवं ऊष्मा अभिव्यक्त हो उठी है। साथ ही कवि ने रतिक्रीड़ा के चित्र को एक प्रतीक के रूप में परिवर्तित कर दिया है।''

यद्यपि कवि ने 'जूही की कली' के माध्यम से आत्मा की रहस्यानुभूति पर प्रकाश डालना अपना अभीष्ट कार्य बतलाया है किन्तु ''सुन्दर सुकुमार देह सारी झकझोर डाली, मसल दिये गोरे कपोल गोल'' जैसी पंक्तियां पाठक का ध्यान प्रतीक की ओर न खींचकर रति-क्रीड़ा की ओर खींचती हैं। अतएव कवि रहस्यवाद न सही, लौकिक शृंगार की अभिव्यक्ति में पूर्ण सफल हुआ है।

'गीतिका' के इन गीतों की भाषा सरल, प्रवाहमयी और अलंकृत है। विविध छन्दों में इन्हें रचा गया है। 'जागो जीवन धनिके', 'जला दे जीर्ण-शीर्ण प्राचीन' आदि गीतों में कवि की सामाजिक संचेतना भी मुखरित हुई है। निराला ने इन गीतों को शास्त्रीय संगीत के आधार पर लिखा है और वे इनकी स्वर-लिपि भी तैयार करना चाहते थे। यदि ऐसा हो जाता तो संभवत: 'गीतिका' के ये गीत भी घर-घर गाये जाते। 'गीतिका' के गीतों में 'दे मैं करूं वरण, जननि' जैसे प्रार्थनापरक गीत हैं, जिनमें जननी को संबोधित करते हुए प्रार्थनाएं की गई हैं और कर्त्तव्य-पथ पर अग्रसर होने के लिए शक्ति की याचना की गई है। 'कौन तम के पार रे कह' जैसे दार्शनिक गीत भी इसमें हैं।

'गीतिका' के शृंगारिक गीतों में आध्यात्मिकता का सन्निवेश है। इसके लिए कवि ने दो पद्धतियों को काम में लिया है- शृंगार का इतनी गहराई से निरूपण किया कि उसमें आध्यात्मिकता का आभास हो जाये तथा शृंगारिक भावना का किसी आध्यात्मिक भूमिका पर पर्यवसान। भक्ति-युगीन कवियों में भी लौकिक चित्रण में अलौकिक निरूपण की

प्रवृत्ति मिलती है। अपनी गीति-सृष्टि के बल पर निराला जयदेव, विद्यापति, सूर आदि कवियों की पंक्ति के गीतकार ठहरते हैं।

टिप्पणी

निराला के काव्य-विकास का तीसरा चरण 1935 से 1942 तक निर्धारित किया जा सकता है। सन् 1938 मे 'अनामिका' नामक निराला के काव्य-संग्रह का द्वितीय संस्करण प्रकाशित हुआ जो कि प्रथम संस्करण से सर्वथा भिन्न था। 'रेखा', 'सरोज-स्मृति', 'दान', 'वनबेला', 'तोड़ती पत्थर', 'नाचे उस पार श्यामा', 'राम की शक्ति पूजा' इस संग्रह की कुछ उल्लेखनीय कविताएं हैं।

'अनामिका' की 'दान' शीर्षक कविता में पूंजीवाद पर प्रहार है जो बंदरों को तो पुए खिलाता है पर दीन-हीन भिखारियों के ऊपर दृष्टिपात भी नहीं करता। 'प्रलाप' तथा 'प्रगल्भ प्रेम' नामक कविताओं में यथार्थ की कटुताओं को देख पलायन की प्रवृत्ति मुखरित हुई है। 'सच है' नामक कविता में हिन्दी के प्रति कवि ने अपने अनुराग का परिचय दिया। 'तोड़ती पत्थर' नामक कविता का भी कवि के यथार्थ के प्रति जागरूक रहने की भावना से सृजन हुआ है।

'अनामिका' की 'सरोज स्मृति' नामक कविता एक मार्मिक दु:खगीति है और कवि की युवापुत्री की मृत्यु से उत्पन्न विषाद से जन्मी है। करुणा की पीठिका पर इस अनुपमेय गीत का निर्माण हुआ है। अनुभूतियों का निश्छल प्रकाशन इस सुन्दर कविता में हुआ है। सजग और प्रयत्नसाध्य कलाकार हृदय से इसकी सर्जना नहीं हुई, अपितु कवि की व्यथा स्वयं ही शब्दों के परिधान में मुखरित हो उठी है। पुत्री के प्रति आर्थिक अभाववश दायित्व का पालन न कर सकने की कचोट ने कवि के भावुक हृदय को साला है-

''धन्ये, मैं पिता निरर्थक था,
कुछ भी तेरे हित न कर सका।''

वेदना का अथाह पारावार इस शोक गीत में लहरा उठा है-

''दुख ही जीवन की कथा रही,
क्या कहूं आज जो नहीं कही।''

अपने काव्य-विकास के इस तृतीय चरण में निराला का कवि-व्यक्तित्व दो धाराओं में विभक्त हो गया है। एक ओर उन्होंने महाकाव्योचित शैली में 'तुलसीदास' तथा 'राम की शक्ति पूजा' की सर्जना की है और दूसरी ओर हास्य और व्यंग्य की प्रवृत्ति का प्रदर्शन करने वाली कविताएं लिखी हैं। 'राम की शक्ति पूजा' भाषा, छंद और कल्पना की दृष्टि से कुछ दुरूह सी जान पड़ती है। संस्कृत गर्भित क्लिष्ट भाषा में इसकी रचना हुई है। उदात्त भावना का स्वर इसमें प्रधान है।

'राम की शक्ति पूजा' में निराला ने पौराणिक गाथा को युगानुरूप बनाकर युग की आत्मा को झकझोरने का प्रयास किया है। इसमें कवि की कल्पना नि:सीम व्योम में विचरण करती हुई महाकाव्योचित गरिमा से मण्डित दिखाई देती है। इस काव्य का कथानक चार भागों में बांटा जा सकता है - 1. राम-रावण-युद्ध 2. राम की निराशा 3. हनुमान का महाकाश को निगलने का प्रयास 4. राम का शक्ति की उपासना करना। पूजा के लिए एक सौ आठ कमल पुष्प रखकर राम जब शक्ति की उपासना करते हैं तब अन्तिम पुष्प को देवी उठा लेती है। राम व्यथा से कातर हो उठते हैं, परन्तु तुरन्त यह

टिप्पणी

स्मरण आते ही कि बचपन में मां मुझे 'राजीव नयन' कहा करती थीं, वे अपनी दाहिनी आंख कमल के स्थान पर प्रस्तुत करने को उद्यत हो जाते हैं। उसी क्षण देवी उदित होकर कहती है कि युद्ध में तुम्हारी जय होगी और राम के शरीर में विलीन हो जाती है। यह कथा परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़े भारतवासियों के लिए भी एक प्रतीकात्मक अर्थ रखती थी कि बिना संगठित हुए और विघ्नों की उपेक्षा किये विदेशी शासन से मुक्त होना सर्वथा असंभव है। कथा की प्रतीकात्मकता स्वयं निराला के जीवन पर भी घटित होती है जहां राम के रूप में वे निरन्तर विरोधों का सामना करने को उद्यत हैं। निम्न पंक्तियां उनके जीवन पर घटित होती हैं -

''धिक जीवन जो पाता ही आया है विरोध

धिक साधन जिसके लिए सदा ही किया शोध।''

चरित्र-चित्रण, भाव-चित्रण, एवं रस-निरूपण की दृष्टि से भी 'राम की शक्ति पूजा' हिन्दी साहित्य के इतिहास में अपना विशिष्ट स्थान रखती है। युद्ध में रावण को अजेय देख राम हताश हो उठते हैं। तदनन्तर उनके मानस पटल पर प्रियतमा सीता के प्रथम दर्शन की स्मृति उदित होती है -

''नयनों का नयनों से गोपन-प्रिय संभाषण,

पलकों का नव पलकों पर प्रथमोत्थान-पतन।''

वीरता, निराशा, उग्रता, ग्लानि आदि विविध भावों का कवि ने सजीव अंकन किया है। भाषा प्रौढ़ और परिमार्जित है।

तुलसीदास की रचना सन् 1938 में हुई है। सौ छन्दों के इस प्रबंध-काव्य का प्रणयन महाकवि तुलसी के जीवन में घटित पत्नी की फटकार पर गृह-त्याग की घटना के आधार पर हुआ है। कथावस्तु संक्षिप्त है, परन्तु इस पर भावों का अत्यन्त मनोरम प्रासाद निर्मित है। ग्रन्थ दो भागों में विभक्त है। प्रथम में भारतीय संस्कृति के पतन तथा तुलसी के जन्म आदि का चित्रण है। द्वितीय भाग में पत्नी के प्रति अपार आसक्ति तथा पत्नी की प्रतारणा के उपरान्त राम-चरणों में लवलीन हो जाने का चित्रण है। कवि अपने युग की परिस्थितियों से निरपेक्ष नहीं रह सकता। 'तुलसीदास' में भी पराधीन भारत के मुक्ति हेतु देशवासियों में आशा और विश्वास का मंत्र फूंकने की चेष्टा है। पाश्चात्य संस्कृति के प्रभावों से भारतीय संस्कृति को मुक्त करने का इसमें प्रयास है। तुलसीदास को कवि ने राष्ट्रीय जागरण के प्रतीक के रूप में चित्रित किया है। बाह्य घटनाओं के विस्तार में अधिक रुचि न लेकर तुलसी के मन के आवृत्त विवर्त्त में प्रविष्ट होने की चेष्टा की है और मन की प्रक्रिया से अवगत होना चाहा है।

अभिव्यक्ति पक्ष की दृष्टि से 'तुलसीदास' का अध्ययन यह प्रकट करता है कि उसकी भाषा ओज और प्रवाहमय है। वह संस्कृत बहुल एवं क्लिष्ट भी हो गई है। प्रकृति-वर्णन और रूपकों की इसमें भरमार है। हार्दिकता के स्थान पर बौद्धिकता के अतिरेक ने 'तुलसीदास' की कला को सामान्य बुद्धि के पाठक की समझ के परे बना दिया है और प्रबुद्ध पाठक ही उसका आनन्द ले सकता है। शब्दों के परम्परागत अर्थ को छोड़कर कवि ने अपने अर्थ में उनका प्रयोग किया है और इसीलिए काव्य का दुरूह हो जाना स्वाभाविक है। यह काव्य प्रसाद की कामायनी के स्वर के समकक्ष उतरता है।

कामायनी में यदि मनोविकारों का विकास प्रदर्शित किया गया है तो इसमें उनका उत्थान-पतन दिखाया गया है। विद्वानों ने इसे निराला की श्रेष्ठतर रचनाओं में स्थान दिया है।

टिप्पणी

विकास के इस तृतीय चरण में निराला ने एक ओर औदात्य की भाव-भूमि पर पहुंचकर 'राम की शक्ति पूजा' और 'तुलसीदास' जैसे ग्रंथों की रचना की है, तो दूसरी ओर हास्य और व्यंग्य की प्रवृत्ति से परिचालित होकर हल्की कविताएं भी लिखी हैं। 'दान', 'ठूंठ', 'मित्र के प्रति', 'सच है' आदि कविताएं इसी वर्ग में आती हैं।

इसके अनन्तर निराला के काव्य-विकास का चतुर्थ चरण सन् 1942 से 1950 तक का है। 'कुकुरमुत्ता', 'बेला', 'नए पत्ते' आदि इस चरण की रचनाएं हैं। इन संग्रहों में निराला की प्रयोगवादी प्रवृत्ति विशेषतया परिलक्षित होती है। निराला एक युग-द्रष्टा और जागरूक कलाकार थे। उन्होंने भारत की परतन्त्रावस्था में देश के विगत गौरव के मान सुनाए। भारत की स्वतंत्रता के बाद उन्होंने देखा कि साधारण जनता की स्थिति सुधरने के बजाय और बिगड़ती जा रही है। अभावों का ताण्डव नर्तन, भुखमरी का विकराल रूप, बेकारी और निर्धनता का बढ़ता प्रकोप - और इन सबके नीचे दलित-शोषित कराहता मानव। यह दशा देखकर भी यदि कवि आसमान से उतरती संध्या सुन्दरी की छवि को निहारता, यमुना की लहरों से अतीत के गान पूछता, जूही की कली की निठुर नायक द्वारा सताई देह-यष्टि का चित्रांकन करता तो यह उसका युग और समाज की दशा से आंख मूंदना कहलाता। निराला ने ऐसा नहीं किया है। भिक्षुक, विधवा, बादल राग आदि के वे आरंभ से ही कवि थे, पर उस समय की उनकी कविता में अन्य स्वर भी प्रधान थे। अब उन्होंने गुलाब को छोड़कर कुकुरमुत्ता की ओर सराहना भरी दृष्टि से देखा। जीवन की विभीषिकाओं और समाज की समस्याओं का चित्रण किया।

सन् 1942 का बंगाल का अकाल, आर्थिक विषमताओं से ग्रस्त तड़पता जन-समूह आदि से प्रभावित होकर निराला ने अपने काव्य में व्यंग्य को प्रधानता दी। 'कुकुरमुत्ता' उनकी इसी सामाजिक संचेतना, प्रगतिशील विचारधारा और व्यंग्यात्मक प्रवृत्ति का परिणाम है। इस कृति का व्यंग्य बहुपक्षीय है। पूंजीवाद के प्रतीक गुलाब की ही नहीं, सर्वहारा वर्ग के प्रतीक कुकुरमुत्ता को भी कवि ने हंसी उड़ायी है। इससे प्रकट है कि उन परिस्थितियों में वे समाज-निर्माण के किसी निर्धारित ढांचे में विश्वास नहीं करते थे और मानव-संस्कृति के प्राचीन बन्धनों को विच्छिन्न कर नवीन नियमों के निर्माण में आस्था रखते थे। उनकी प्रगतिशील विचारधारा का यह ग्रंथ परिचायक है। इसमें पूंजीपति वर्ग, कुत्सित बुद्धिवादियों, तथाकथित साम्यवादी नेताओं, आधुनिक कवियों आदि सभी पर व्यंग्य की तीखी मार है।

'बेला' (प्रकाशन काल सन् 1943) भी निराला काव्य की विविध प्रवृत्तियों की द्योतक रचना है। इसमें विनयपरक, शृंगारिक, दार्शनिक, व्यंग्यात्मक, राष्ट्रीय आदि विचारधारा के गीत हैं। निम्न पंक्तियों में पूंजीवाद पर प्रहार देखिए-

''किनारा वह हमसे किये जा रहे हैं
दिखाने को दर्शन, दिए जा रहे हैं
खुला भेद, विजय कहाए हुए जो,
लहू दूसरे का पिए जा रहे हैं।''

टिप्पणी

'बेला' की भाषा सरल, सुबोध तथा उर्दू-फारसी के शब्दों से युक्त है। इस संग्रह में जितनी भावों की विविधता दिखाई देती है, उतनी ही भाषा की विविधता भी है। उर्दू गजल की शैली में भी कविताएं लिखकर निराला ने एक नया प्रयोग किया है। उनकी निम्न पंक्तियां दाग और जौक की याद दिला देती हैं -

''बदलीं जो उनकी आंखें, इरादा बदल गया।
गुल जैसे चमचमाता कि बुलबुल मसल गया।''

'नए पत्ते' (प्रकाशन काल सन् 1946) की कविताएं 'कुकुरमुत्ता' के ही धरातल पर गठित है। यथार्थ का चित्रण करने के लिए निराला ने तीखे व्यंग्य और हास्य का सहारा लिया है। कई स्थलों पर भाषा ऊबड़-खाबड़ और भावों का अनावृत्त स्वरूप भी दिखाई देता है। इस संग्रह की प्रमुख कविताएं 'रानी और कानी', 'गरम पकौड़ी', 'खजोहरा' 'मास्को डायलाग्स', 'मंहगू मंहगा रहा', 'कुत्ता भौंकने लगा' आदि हैं। इनमें कुछ 'कुकुरमुत्ता' में भी थीं। व्यंग्य की अपेक्षा व्यजना अथवा संकेत अधिक महत्व रखते हैं। व्यंजना जितनी गहरी होगी, व्यंग्य उतना ही तीखा होगा। निम्न पंक्तियों में इसी गहरी व्यंजना को देखिए-

''आजकल पंडितजी देश में विराजते हैं-
माताजी को स्वीजरलैंड के अस्पताल में
तपेदिक के लिए छोड़ा है
बड़े भारी नेता हैं।''

इसकी प्रथम पंक्ति में गहरी व्यंजना है। कवि कहता है कि पंडितजी आजकल देश में रह कर अपने देश की शोभा बढ़ा रहे हैं अर्थात् प्रायः विदेश में ही रहते हैं। ऐसा व्यक्ति अपने देश को और देश की समस्याओं को कैसे समझ सकता है, उस पर ये पंडित जी बड़े भारी नेता भी बन गये हैं।

निराला का सन् 1943 में प्रकाशित 'अणिमा' यथार्थ चित्रण वाली कुछ कविताओं को छोड़कर 'कुकुरमुत्ता', 'बेला' और 'नए पत्ते' से पृथक् दिखाई देता है। उसमें मुख्यतया तीन प्रवृत्तियां दिखाई देती हैं - भक्ति, करुणा तथा प्रशस्तियां। आचार्य शुक्ल, प्रसाद, महादेवी, विजय लक्ष्मी पंडित गौतम बुद्ध आदि पर प्रशस्तिपरक कविताएं हैं।

सन् 1946 में प्रकाशित 'अपरा' काव्य संग्रह निराला की विविध कालों में प्रकाशित-अप्रकाशित कविताओं का संग्रह है। इसमें 'जागो फिर एक बार', 'राम की शक्ति पूजा', 'बादल राग', 'सरोज स्मृति' आदि सुप्रसिद्ध रचनाएं संगृहीत हैं।

इसके अनन्तर सन् 1950 से 1961 तक निराला काव्य का पंचम और अंतिम चरण है। 'अर्चना' (1950) 'आराधना' (1953) और 'गीतगुंज' (1953) – चरण के ग्रंथ हैं। 'अर्चना' में आध्यात्मिक, श्रृंगारिक और प्रकृतिपरक गीत संग्रहीत हैं। 'अर्चना' का मूल स्वर भक्ति है। इन भक्तिपरक गीतों में आराध्य के प्रति भक्ति-कालीन कवियों जैसा समर्पण भाव मिलता है। जीवन-संघर्ष से क्लान्त-श्रान्त कवि ने सान्ध्य-बेला में अपने जीवन की बागडोर ईश्वर के हाथों में सौंप दी है। वे बार-बार भगवान से भवसागर से पार करने की प्रार्थना करते हैं - (क) भवसागर से पार करो हे (ख) सागर से उत्तीर्ण तरी हो (ग) कठिन यह सार (घ) तरणि तार दो (ङ) भजन कर हरि के चरण मन,

जैसे गीतों में भक्त की अवसादमय मनोवृत्ति मुखरित हो उठी है। ''चलता नहीं हाथ, कोई नहीं साथ, उन्नत -नत माथ, दो शरण दो शरण'' जैसी पंक्तियां करुणा की मार्मिक भावना से ओत-प्रोत हैं।

टिप्पणी

'अर्चना' के गीतों में लोक-संगीत की मिठास और लोक-जीवन की सरलता भी अनुस्यूत है। 'बांधों न नाव इस ठांव बंधु' नामक गीत अपनी मार्मिकता में बेजोड़ है। निम्न पंक्तियों में लोक जीवन के साथ कवि के हृदय का तादात्म्य देखिए-

''घन आये घनश्याम न आये।
भले छिन मेरे न कटे दिन,
खुले कमल, मैंने तोड़े तिन,
अमलिन सुख की सभी सुहागिन
मेरे सुख सीधे न समाये।''

आराधना के 'कृष्ण-कृष्ण राम-राम', 'राम के हुए तो बने काम', 'कामरूप हरो काम' आदि भक्तिपरक गीतों में प्राचीन भक्त कवियों की भांति भजन, कीर्तन, जप आदि के भाव निहित हैं। 'गीतगुंज' भी 'अर्चना' और 'आराधना' की परम्परा का काव्य है। इसके कवि प्रकृति की ओर अधिक अकृष्ट हुआ है। इसके गीत सरल और संगीतमय हैं। सन् 1969 में, निराला की मृत्यु के पश्चात् उनका 'सांध्य काकली' नामक अंतिम काव्य संग्रह प्रकाशित हुआ, जिसमें लोक संगीत की मादकता और भावना की सरसता विद्यमान है।

1.2.3 निराला की साहित्यिक दृष्टि एवं काव्यगत विशेषताएं

निराला की काव्य-कृतियों के क्रमिक विकास से उनकी विचारधारा का एक सम्यक परिचय प्राप्त होता है। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी के शब्दों में, ''निराला की काव्य-सृष्टि काव्य के प्रति उनके नि:शेष समर्पण से नि:सृत है। निराला की काव्य-रचना उनके अदम्य साहस, उनकी निर्बाध जीवन अभिलाषाओं से संबंधित है। समस्त युगीन दायित्वों को अपने अन्दर समेटकर रख लेने की तैयारी उनके सिवा किसी अन्य आधुनिक कवि में नहीं पायी जाती। पहले वे आशा के स्वर को लेकर चले हैं तो पीछे आक्रोश के स्वर को, और अन्त में परमसत्ता के आवाहन के स्वर को। अपने व्यक्तित्व और वैयक्तिक साधना के बल पर उनके काव्य में एक सामंजस्य है। यह सामन्जस्य की भूमिका मानवतावादी स्तर पर है, मानव-जीवन के प्रति आस्था पर निर्मित है। यही निराला का मूल्यवान प्रदेश है।''

भाव-पक्ष- निराला के काव्य की चित्रपटी पर जिन बहुरंगी चित्रों का आकलन हुआ है, वे विविध रूपों, रेखाओं और भंगिमाओं से युक्त हैं। निराला का व्यक्तित्व जितना भव्य और गरिमामण्डित था, उनका अन्त:करण जितना विराट और उदार था, उनके काव्य का अनुभूति-पक्ष भी उतना ही अधिक उदात्त और तेजस्वी भावनाओं से आपूरित है। उनका व्यक्तित्व जैसी विसंगतियों का पुंज है, वैसा ही उनका कृतित्व भी है। जीवन की परिस्थितियों और काल-चक्र के थपेड़ों ने भी उनकी कविता की भाव-भूमि को प्रभावित किया है। शैशव में ही स्नेहमयी जननी का बिछोह अल्पकालीन सुखद दाम्पत्य के अनन्तर

टिप्पणी

रूपवती और गुणवती जीवन-सहचरी का अनन्त पथ पर प्रयाण, प्रिय कन्या सरोज की विवाहोपरान्त अकाल मृत्यु आदि घटनाओं ने उनकी कविता में वैयक्तिक करुणा और मानवता के प्रति करुणा के स्वरों को मुखरित किया। दीन-दुखियों के प्रति उनकी संवेदनशीलता सीमातीत थी और दानशीलता में वे कर्ण से किसी प्रकार कम न थे। अपनी कविताओं में भी उन्होंने शोषित वर्ग के प्रति अपनी करुणा व्यक्त की है। जीवन-संगिनी के चिर-वियोग ने उन्हें अनन्त पार की सत्ता के संबंध में जिज्ञासु बनाया और रामकृष्ण मिशन के वेदान्त दर्शन का योग पाकर उनके रहस्यवादी और आध्यात्मिक काव्य का सृजन हुआ। लौकिक प्रेम और शृंगार के गीत, व्यंग्यपरक कविताएं और राष्ट्रीयता से आपूरित रचनाएं भी उन्होंने लिखीं। इस प्रकार उनके काव्य की भाव-भूमि अत्यन्त विस्तृत रही। जिस प्रकार निराला का व्यक्तित्व एक साथ कोमल और कठोर, सरल और दुरूह तथा अहंविरोधी और अहंवादी था, उसी प्रकार उनका काव्य भी एक साथ विरोधी धाराओं का संगम है। डॉ. इंद्रनाथ मदान के शब्दों में, ''यदि निराला के काव्य को आरकेस्ट्रा-संगीत की संज्ञा दी जाए, तो इनमें सम एवं विषम स्वरों की स्थिति को स्वीकार किया जाता है।'' उनकी 'जूही की कली' छायावाद की विशेषताओं से समन्वित उन्मुक्त प्रेम एवं सौंदर्य दृष्टि की रचना है, 'तुम और मैं' रहस्यवादी भावनाओं की अभिव्यक्ति है, 'कुकुरमुत्ता' यथार्थ जीवन का व्यक्तिकरण है, 'गीतिका' भक्ति-भावना का प्रकाशन है, 'बादल-राग' क्रांति की उद्घोषक है, 'यमुना के प्रति' सांस्कृतिक गौरव की परिचायक है, 'राम की शक्ति पूजा' व 'तुलसीदास' उदात्त भावनाओं की प्रतीक है तथा 'शिवाजी का पत्र' राष्ट्रीय-भावना की सूचक है। इस प्रकार निराला के काव्य की भाव-सृष्टि बहुरंगी है। निम्न बिन्दुओं के माध्यम से उनकी कविताओं के अनुभूति-पक्ष का अध्ययन किया जा सकता है-

आध्यात्मिकता- हिन्दी-काव्य के दार्शनिक पक्ष का पल्लवन उपनिषदों के आधार पर हुआ है। उपनिषद् ज्ञान के भण्डार माने गये हैं। उनमें अद्वैत तत्व की सर्वव्याप्ति का प्रतिपादन है। स्वामी विवेकानंद और रामकृष्ण परमहंस आदि के विचारों से गहरे प्रभावित होने के कारण निरालाजी के आध्यात्मिक विचारों का मूलाधार अद्वैतवादी दर्शन बन गया है।

निराला को प्रकृति के कण-कण में एक असीम सत्ता के दर्शन होते हैं और उनका आश्चर्यचकित हृदय पूछ उठता है-

''तुम ही अखिल विश्व में
या यह अखिल विश्व है तुम में
अथवा अखिल विश्व तुम एक,
यद्यपि देख रहा हूं तुममें भेद अनेक?
पाया हाय न अब तक इसका भेद!
सुलझी नहीं ग्रंथि मेरी, कुछ मिटा न खेद।''

इस परम सत्ता को खोजने वे कहीं बाहर नहीं जाते। उनका चिन्तन उसे स्वयं अपने भीतर ढूंढ लेता है। ब्रह्म को दूर-दूर तक खोजने वालों को उनका सन्देश है-

''पास ही रे हीरे की खान,

खोजता कहां और नादान।''

टिप्पणी

इस 'हीरे की खान' को खोजने में व्यवधान डालने का कार्य माया करती है। निराला जी ने इसे शीत की यामिनी, पैनी छुरी, नागिन और विष-वल्लरी कहा है। इसके आकर्षण से मुक्त होते ही जीव को सच्चिदानंद ब्रह्म की प्राप्ति हो जाती है-

''पर, क्या है,

सब माया है - माया है,

बाधा-विहीन - बन्ध छन्द ज्यों,

डूबे आनन्द में सच्चिदानन्द-रूप।

ब्रह्म हो तुम।''

माया का आवरण दूर होते ही जब प्राणी स्वरूप को पहचानता है, तो उसे चतुर्दिक आनन्द की वृष्टि होती दिखाई देती है। आत्मा की इस आनंदमय स्थिति का निरूपण इन पंक्तियों में हुआ है-

''केवल मैं, केवल मैं, केवल

मैं, केवल मैं, केवल ज्ञान।''

निराला ने केवल दार्शनिक विचारधारा से युक्त कविताएं ही नहीं लिखी हैं, अपनी भक्ति-भावना का प्रकाशन भी किया है। कभी वे अपनी दैन्यता और निर्बलता से आपूरित हो प्रभु के समक्ष आर्त पुकार करते हैं-

''विपदा हरण हर हरि हे करो पार।''

तो कभी ''राम के हुए तो बने काम'' रहस्य से अवगत होने के कारण मानव को हरिभजन करने का उपदेश देते हैं। उनकी कविता में स्पष्टत: ऐसी पंक्तियां मिलती हैं-

''हरिभजन करो।''

क्रांति के गायक और ऊर्जस्वित पौरुष के प्रतीक निराला के काव्य का यह भक्तिपरक स्वरूप नितान्त विलक्षण है। जीवन के आरंभ में उन्होंने जिस दर्शन को बुद्धि के आधार पर ग्रहण किया था, उसे बाद में श्रद्धा-समन्वित कर दिया। भक्ति के इन स्वरों ने उसके लिए मुक्ति को सहज प्राप्य बना दिया। 'अर्चना', 'आराधना' और 'गीतगुंज' के गीतों में इसी श्रद्धा समन्वित विश्वास का व्यक्तिकरण हुआ है-

''तुमसे लाग लगी जो मन की

जग की हुई वासना बासी।''

निराला के ऐसे गीतों की एक लम्बी परम्परा है, जो उनका संबंध सगुणवादी भक्त कवियों से जोड़ती है, यथा-

(क) ''डोलती नाव, प्रखर है धार,

संभालो जीवन-खेवनहार।''

(ख) ''दलित जन पर करो करुणा।''

(ग) ''भजन कर हरि के चरण, मन।''

(घ) ''कामरूप, हरो काम,
जपूं नाम, राम, राम।''

टिप्पणी

इस प्रकार निराला के आध्यात्मिक काव्य के दो स्तर परिलक्षित होते हैं- एक में वे दार्शनिक अधिक हैं और उन्होंने रहस्यवादी रचनाएं प्रस्तुत की हैं और दूसरे में वे भक्त अधिक हैं तथा उन्होंने भक्ति का निराला और भावभीना स्वर मुखरित किया है। कबीर और सूर दोनों की भक्ति उनके काव्य में है, परन्तु नितान्त अभिनव और विशिष्ट रूप में तथा पूर्ववर्ती परम्परा से सर्वथा भिन्न।

प्रेम और श्रृंगार- निराला की पूर्ववर्ती कविताओं में प्रेम और श्रृंगार का जो उद्दाम वेग परिलक्षित होता है, वह परवर्ती रचनाओं में नहीं दिखाई देता, जब वे भक्ति और विनय की ओर उन्मुख हो उठे हैं। लौकिक प्रेम की कविताएं उन्होंने कुछ अपनी पत्नी और कुछ प्रेयसी को लक्ष्य कर लिखी हैं। अपनी पत्नी के प्रति उनका नि:सीम प्रेम था। साहित्य जगत में इससे इतद उनकी किसी प्रेयसी की चर्चा नहीं है। अत: यह मानना उचित है कि प्रेम और श्रृंगार के अधिकांश गीतों में वर्णित उनकी पत्नी और प्रेयसी दो भिन्न व्यक्तित्व न होकर एक ही हैं। अपनी प्रेयसी को अपनी काव्य की प्रेरणा मानते हुए वह लिखते हैं-

''तेरे सहज रूप से रंगकर
झरे गान के मेरे निर्झर,
भरे अखिल सर,
स्वर से मेरे सिक्त, हुआ संसार।''

'प्रिया के प्रति' कविता में वह अपनी दिवंगता पत्नी से यह जानने को उत्सुक हैं कि उसके लिए इस लोक का जीवन अधिक सुखकर था, अथवा परलोक का है। मृत्यु से परे जीवन की जिज्ञासा और वियोग-व्यथा का मणि-कांचन संयोग इन पंक्तियों में देखिए-

''एक बार भी यदि अजान के
अन्तर से उठ आ जातीं तुम,
एक बार भी प्राणों की
तम-छाया में आ कह जातीं तुम,
सत्य हृदय का अपना हाल
कैसा था अतीत वह, अब यह
बीत रहा है कैसा काल
मैं न कभी कुछ कहता है
बस तुम्हें देखता रहता।
क्या तुम व्याकुल होतीं?
मेरे दुख पर रोतीं?''

छायावादी युग की प्रवृत्तियों के अनुरूप निराला की कविताओं में भी श्रृंगार का व्यापक, सूक्ष्म और भावपरक चित्रण है। निश्छल, पुनीत प्रेम के गीत उन्होंने भी गाये हैं! कहीं प्रिया के मधुर नूपुरों की झंकार एवं केश-राशि के सौरभ को मलयानिल ढो रही

टिप्पणी

है, कहीं प्रिया का मादक और पुनीत प्रेम जड़ को भी चेतन बनाता हुआ प्रियतम के हृदय को आकर्षित कर रहा है, कहीं यह प्रेम विजन-वन-बल्लरी पर सुहाग भरी सोती हुई 'जूही की कली' के रूप में मुखरित हुआ है। निराला के श्रृंगार-चित्रों में सौन्दर्य के प्रति एक स्वस्थ आकर्षण मिलता है। नारी के रूप-चित्रण में वे उसके अंग-प्रत्यंग का ही नहीं, चेष्टाओं का भी मनोहारी चित्र खींचते हैं। और विशेषता यह है कि स्वयं उससे नितान्त असंपृक्त रहते हैं। अपने श्रृंगार गीतों में उन्होंने प्रणय के मधुर-मन्दिर सुख में आकण्ठ-मग्न हृदय का सजीव चित्र खींचा है। प्रिया का लाजपूरित लावण्य मिलन के क्षणों को रसभीना बना देता है। निम्न संयोग चित्र में इसका वर्णन देखिए-

''स्पर्श से लाज लगी,
अलक-पलक में छिपी छलक
उर से नव राग जगी।
चुम्बन चकित चतुर्दिक चंचल
हेर-फेर मुख, कर बहु सुख छल,
कभी हास, फिर त्रास, सांस बल
उर सरिता उमगी।''

निराला ने सौन्दर्य के मांसल चित्र भी उपस्थित किये हैं और प्रणय को अतीन्द्रिय बनाने की छायावादी कवियों में सबसे कम चेष्टा की है। फिर भी उनकी प्रणय भावना उच्छृङ्खल और निम्नस्तरीय न होकर उदात्त प्रेम की गरिमा से आल्पावित है। प्रेम का दिव्य रूप इन पंक्तियों में देखिए-

''मेरे तप के तुम्हीं अमर वर
हृदय-व्यथा के जलद मंद्र स्वर
मेरी तृष्णा के करुणाकर
तृप्ति प्रेम-सर है।''

प्रेम का एक पक्ष विरह है। संयोग के मधुर क्रीड़ा-क्षणों के अनन्तर प्रिय-वियोग की कष्टकर बेला का स्मरण ही नायिक को विकल बना देता है-

हुआ प्रात प्रियतम, तुम जाओगे चले,
कैसी थी रात, बन्धु, थे गले-गले।''

निराला ने प्रेम और श्रृंगार के संयोग-वियोग पक्षों का अत्यन्त मनोहारी चित्रण किया है। किन्तु उनका हृदय प्रेम और श्रृंगार की मस्ती में आकण्ठ- निमज्जित नहीं हो सका और शनैः-शनैः श्रृंगारिक गीतों की पार्थिव भावना अपार्थिव की ओर उन्मुख होती गई। उनकी दार्शनिक प्रज्ञा निरन्तर उनकी मार्ग- दर्शक बनी रही और वे अलौकिक की ओर अधिक जिज्ञासु रहे। फिर भी यह स्वीकार करना पड़ेगा कि प्रेम और श्रृंगार की लौकिक अनुभूतियों का भी उन्होंने अत्यन्त उदात्त, धवल एवं स्वप्निल चित्रण किया है।

व्यंग्य और विनोद- निराला के व्यंग्य की मार से समाज का कोई वर्ग अछूता नहीं रहा। 'कुकुरमुत्ता', 'बेला', 'अणिमा', 'नये पत्ते' आदि में उनकी व्यंग्यात्मक प्रवृत्ति अधिक प्रखर हो उठी है। 'कुकुरमुत्ता' में उच्च-वर्ग के शोषक पूंजीपतियों पर वे बरस उठे हैं। इस कविता में 'गुलाब' सामन्तवादी सभ्यता का और 'कुकुरमुत्ता' सर्वहारा वर्ग

टिप्पणी

का प्रतीक है। परन्तु इसमें कवि ने गुलाब का ही नहीं, कुकुरमुत्ता का भी उपहास किया है और इसके द्वारा उन्होंने यह व्यंजित करना चाहा है कि मानव-संस्कृति पुराने बन्धनों को तोड़कर प्रगति के नवीन पथ पर अग्रसर हो और इस प्रक्रिया द्वारा वह न गुलाब की भांति सम्पन्न बने और न कुकुरमुत्ता की भांति विपन्न। इस रचना में कवि का व्यंग्य बहुपक्षीय रहा है। उसकी पहली चोट उच्च वर्ग पर है जो गरीबों का शोषण करता है। तत्कालीन प्रगतिवादी लेखकों, आधुनिक कवियों तथाकथित साम्यवादी नेताओं, कुत्सित बुद्धिवादियों आदि पर भी कवि ने व्यंग्य किये हैं। आधुनिक कवि पर व्यंग्य देखिए-

''आगे चली गोली जैसे डिक्टेटर
उसके पीछे बाहर जैसे भुक्कड़ फालोअर
उसके पीछे दुम हिलाता टेरियर
आधुनिक पोएट (Poet)।''

पूंजीपतियों पर कवि का व्यंग्य देखिए-

''जाल भी ऐसा चला
कि थोड़े के पेटे में बहुतों को आना पड़ा।''

'मंहगू महंगा रहा' नामक कविता का व्यंग्य बड़ा तीखा है। पंडितजी कुइरीपुर ग्राम में व्याख्यान देने आते हैं। कांग्रेस के चुनाव पर उनका भाषण होने पर, सभा के विसर्जित होने के बाद लोग भाषण के सम्बन्ध में परस्पर वार्तालाप करते हैं। 'पंडित जी' से कवि का आशय किससे है, यह निम्न पंक्तियों को पढ़ने से स्पष्ट हो जाता है-

''आजकल पंडितजी देश में विराजते हैं।
माताजी को स्वीटजरलैण्ड के अस्पताल,
तपेदिक के इलाज के लिए छोड़ा है।
बड़े भारी नेता हैं।
कुइरीपुर गांव में व्याख्यान देने को
आये हैं मोटर पर
लण्डन के ग्रैज्युएट,
एम.ए. और बैरिस्टर
बड़े बाप के बेटे,
बीसियों भी पर्तों के अन्दर, खुले हुए।
गले का चढ़ाव बोर्झुआजी का नहीं गया।''

'नाम बड़े और दर्शन थोड़े' उक्ति की सत्यता निम्न पंक्तियों में देखिए, जहां 'रानी' और 'कानी' के वर्णन द्वारा कवि ने हास्य प्रस्तुत किया है-

''मां उसको कहती है रानी
लेकिन उसका उलटा रूप
चेचक की दाग, काली, नकचिप्टी
गंजा सर, एक आंख कानी।''

''गर्म पकौड़ी'' नामक कविता में चुभता हुआ व्यंग्य देखिए-

टिप्पणी

''गर्म पकौड़ी
ए गर्म पकौड़ी
मेरी जीभ जल गई
सिसकियां निकल रहीं
* *
पर डाढ़ तले तुझे दबा ही रक्खा मैंने,
कंजूस ने ज्यों कौड़ी।''

करुणा और मानवतावाद- भारतीय विधवा करुणा की जीती-जागती प्रतिमा होती है। इस प्रतिमा का चित्र निराला है। अपने करुणा-कलित अन्त:करण से विपुल संवेदना को संचित कर प्रस्तुत किया है। 'विधवा' नामक इस कविता की पंक्तियां देखिए-

''वह इष्टदेव के मन्दिर की पूजा-सी,
वह दीपशिखा-सी शान्त भाव में लीन,
वह क्रूर काल ताण्डव की स्मृत-रेखा-सी,
वह टूटे तरु की छुटी लता-सी दीन-
दलित भारत की ही विधवा है।''

अन्तिम पंक्ति में कितना कठोर व्यंग्य है। अपने सांस्कृतिक गौरव के अभिमान में चूर भारत आज पतनावस्था को प्राप्त हो चुका है। 'दलित' शब्द द्वारा पहले तो कवि भारत के वर्तमान पतन की ओर इंगित करता है और फिर 'भारत की ही विधवा है' कहकर वहां की विधवा नारियों की करुण और असहायावस्था पर प्रकाश डालता है। विधवा को 'इष्टदेव के मन्दिर की पूजा-सी' कहकर कवि ने उसके पूज्य और वंदनीय स्वरूप की उद्घोषणा की है। पति की मृत्यु के अनन्तर वह निरन्तर त्याग और तपस्या का जीवन व्यतीत करती है और दीपशिखा की भांति दारुण दु:ख की ज्वाला को भी शान्त भाव से झेलती है। टूटे हुए वृक्ष की विच्छिन्न लता की भांति वह करुणा और निराश्रय की भावना का केन्द्र होती है। नि:सन्देह हिन्दू समाज के इस अभिशापग्रस्त प्राणी का कवि ने अतयन्त भावस्नात एवं मार्मिक चित्र खींचा है।

निराला की 'भिक्षुक' शीर्षक कविता भी अपनी अन्तर्निहित संवेदना के कारण हिन्दी साहित्य में पर्याप्त ख्याति अर्जित कर चुकी है। निराला एक ऐसे कवि थे जिन्होंने कल्पना के स्वप्निल पंखों पर सवार होकर स्वर्णिम नभ का भी विचरधा किया और यथार्थ की ठोकरों भरी धरती पर भी अपने पांव रखे। 'सन्ध्या सुन्दरी' और 'जूही की कली' के प्रणेता ने ही 'विधवा' और 'भिक्षुक' जैसी कविताएं लिखी हैं, सहसा विश्वास नहीं होता। यथार्थ की धरती पर उतर कर कवि ने दीन भिखारी पर जो कविता लिखी है, उसकी निम्न पंक्तियां अपनी करुणा में सानी नहीं रखती-

''वह आता-
दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता!
पेट पीठ दोनों मिलकर हैं एक,
चल रहा लकुटिया टेक,
मुट्ठी पर दाने को-भूख मिटाने को

मुंह फटी-पुरानी झोली को फैलाता-
दो टूक कलेजे को करता पछताता पथ पर आता!''

टिप्पणी

यथार्थ के प्रति कवि की जागरुकता के फलस्वरूप ही 'वह तोड़ती पत्थर' नामक कविता भी रची गई है। ऐसी कविताएं अनुभव पर आधृत हैं। इसमें न कल्पना का सतरंगी वैभव है और न कृत्रिमता का वाग्विलास; अपितु है मानवीय दु:ख दैन्य का सहज निश्छल स्पन्दन। इस यथार्थवादी कविता की निम्न पंक्तियां देखिए-

''चढ़ रही थी धूप
गर्मियों के दिन
दिवा का तमतमाता रूप।
उठी झुलसाती हुई लू
रुई ज्यों जलती हुई भू
गर्द चिनगी छा गई,
प्राय: हुई दुपहर
वही तोड़ती पत्थर।''

कवि को धर्म के उन तथाकथित ठेकेदारों पर तीव्र आक्रोश है जो बन्दरों के लिए तो सहृदय हैं पर कंकालप्राय मानव के प्रति पाषाण-हृदय। 'दान' शीर्षक कविता में धर्म के इन ठेकेदारों पर व्यंग्य की मार देखिए-

''झोली से पुर निकाल लिये
बढ़ते कपियों के हाथ दिये
देखा भी नहीं, उधर फिरकर
जिस ओर रहा, वह भिक्षु इतर।''

'सरोज स्मृति' नामक कविता में कवि की अनुभूतियों का निश्च्छल प्रकाशन है। प्रसाद, पन्त और महादेवी की पीड़ा और करुण क्रंदन का भी लौकिक आधार है। इसी परम्परा की एक कड़ी सरोज स्मृति है, जिसमें निराला के अन्दर का पिता अपनी युवा पुत्री की मृत्यु पर वेदना से छटपटा उठा है। दैव पर किसी का वश नहीं है, किन्तु निराला की व्यथा यह सोचकर सीमातीत हो उठी है कि आर्थिक अभावों के कारण वे बेटी के प्रति अपने दायित्वों को भली प्रकार पूरा न कर सके-

''धन्ये, मैं पिता निरर्थक था,
कुछ भी तेरे हित कर न सका।''

इस प्रकार स्पष्ट है कि निराला केवल कोमल कल्पनाओं के कवि ही नहीं है, यथार्थवादी कलाकार भी हैं और करुणा तथा मानवतावाद की भावना का उनकी कविताओं में सुन्दर प्रकाशन हुआ है।

क्रान्ति और आवाहन- निराला क्रांति के अग्रदूत हैं। वे शक्ति के उपासक हैं। कर्ममय जीवन संघर्ष में भाग लेने के लिए वे जनता का आवाहन करते हैं-

''जीवन की तरी खोल दे रे
जग की उत्ताल तरंगों पर।''

'जागो फिर एक बार' कविता में वे कायरता को खुले शब्दों में भर्त्सना करते हैं-

''सिंहों की मांद में आया है आज स्यार।''

निराला की विप्लव और क्रांति की भावनाओं को व्यक्त करने वाली कविताओं में 'बादल राग' का पर्याप्त महत्व है। इस कविता में बादल को कहीं विप्लवकारी, कहीं क्रांतिकारी तथा कहीं आतंकवादी के रूप में चित्रित किया है। बादलों को क्रांति का प्रतीक मानते हुए वे लिखते हैं-

टिप्पणी

''भय के मायामय आंगन पर
गरजो विप्लव ये नव जलधर।''

भारत एक कृषि-प्रधान देश है। यहां की अधिकांश जनसंख्या किसान है। यही किसान आज उत्सुक होकर क्रांति की बाट जोह रहे हैं-

''जीर्ण बाहु, है क्षीण शरीर,
तुझे बुलाता कृषक अधीर,
ऐ विप्लव के वीर।
चूस लिया है उसका सार
हाड़ मात्र ही हैं आधार
ऐ जीवन के पारावार!''

राष्ट्रीयता- निराला की कविता में राष्ट्रीयता का उद्‌बोधन करने वाले गीतों का विशेष स्थान है। भारत-भूमि के विगल गौरव का स्मरण करते हुए उन्होंने जिन गीतों की सर्जना की वे पराधीन देश की जनता में आशा और उत्साह की लहर उत्पन्न करने में विशेष महत्वपूर्ण माने जा सकते हैं। 'महाराज शिवाजी का पत्र', 'जागों जीवन धनि के', 'यमुना के प्रति' आदि भारत के गौरवशाली अतीत का स्मरण कराने वाले गीत हैं। राष्ट्रीय भावना से आप्लावित निम्न गीत में भारत की गौरव-गरिमा का स्मरण है-

''मुकुट शुभ्र हिम तुषार, प्राण प्रणव ओंकार
ध्वनित दिशाएं उदार, शतमुख शतख मुख रे।''

'यमुना के प्रति' नामक कविता की निम्न पंक्तियों में भी एक ओर सांस्कृतिक ध रातल का सौंदर्य उपस्थित है और दूसरी ओर काव्य-सौन्दर्य की मनोहारी छटा भी विद्यमान है-

''बता कहां अब वह वंशीवट, कहां गये नटनागर श्याम?
चल चरणों का व्याकुल पनघट, कहां आज वह वृन्दाधाम?
कभी यहां देखे थे जिनके श्याम विरह से तपे शरीर
किस विनोद की तृषित गोद में आज पोंछतीं वे दृग नीर?''

'यमुना के प्रति' कविता की विशेषता यह है कि इसके उपमान-विधान में कोरी चमत्कारिकता नहीं है, अपितु भावों की मंदाकिनी भी साथ-साथ प्रवाहित हुई है। उपमान-विधान में निहित भाव-धारा उसके सौंदर्य को द्विगुणित कर देती है। लाक्षणिक प्रयोगों द्वारा कविता के आकर्षण में विपुल वृद्धि हुई है। जब कवि 'पनघट' को व्याकुल कहता है तो पनघट पर एकत्र ब्रजाङ्गनाओं की व्याकुलता की ओर संकेत है, क्योंकि पनघट व्याकुल नहीं होता, वहां एकत्र ब्रज-नारियां व्याकुल हुआ करती थीं। लक्षणा का यह प्रयोग काव्योत्कर्ष में सहायक हुआ है।

टिप्पणी

निराला ने न केवल देश के गौरवमय अतीत का गान ही किया है, अपितु उसके निवासियों में नव-जागरण की भावना भी भरी है-

''प्रिय, मुद्रित दृग खोलो!
गत स्वप्न-निशा का तिमिर-जाल
नव किरणों से धो लो।''

कवि देवि सरस्वती से भी याचना करता है कि भारत में स्वतंत्रता की अमर ध्वनि भर दे और भारतवासियों को नव स्वर प्रदान करें-

''वर दे, वीणा वादिनि वर दे!
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत मंत्र नव भारत में भर दे!
× × × × ×
नव गति नव लय ताल छन्द नव, नवल कंठ नव जलद मंद्र रव
नव नभ के नव विहग वृन्द को नव पर नव स्वर दे!''

निराला की राष्ट्रीय भावना किसी संकुचित परिधि में आबद्ध नहीं है। मानवतावाद की विस्तृत भाव-भूमि पर वह अवस्थित है। कवि अपने मानवतावादी विचारों से प्रेरित होकर सोचता है-

''नहीं आज का यह हिन्दू, आज का मुसलमान
आज का ईसाई, सिक्ख, आज का यह मनोभाव
आज की यह रूपरेखा, नहीं यह कल्पना
सत्य है मनुष्य, मनुष्यत्व के लिए,
वन्द हैं जो दल अभी किरण सम्पात से
खुल गये वे सभी।''

इस प्रकार निराला की राष्ट्रीय भावना मानवता-प्रेम के उच्चादर्शों से संपुष्ट है। यह राष्ट्रीयता साम्प्रदायिक अथवा दलगत संकीर्णता से मुक्त है। देश के गौरवशाली अतीत पर कवि के भावुक हृदय को जो अभिमान था तथा पुनः उसे वे जिस विगत गौरव से अभिमण्डित देखना चाहते थे, उससे प्रेरित होकर उन्होंने इन राष्ट्रीयता विषयक गीतों की सर्जना की।

प्रकृति-चित्रण- प्रसाद और पन्त प्रकृति छायावादी कवियों की भांति निराला भी प्रकृति के चतुर चितेरे रहे हैं। जीवन के अंतिम दिनों में वे प्रकृति-प्रांगण में आने जाने वाली रम्य ऋतुओं को अपने शब्दों के पाश में आबद्ध करते रहे। खेतों, नदियों, वन-उपवनों आदि को अपनी कविताओं में वर्ण्य-विषय बनाते रहे। असफलताओं और अभावों से दग्ध तथा छली संसार द्वारा उगा हुआ निश्छल हृदय या तो प्रकृति के मनोरम प्रांगण में सहारा ढूंढता है या भक्ति की पावन सलिला में आकण्ठ निमज्जित हो उठता है। निराला ने भी जीवन के चतुर्थ प्रहर में ये दोनों द्वार खटखटाये। 'अर्चना' से लेकर 'सांध्य काकली' तक के गीतों की प्रेरणाएं प्रधानतः प्रकृति और भगवत् भक्ति रही हैं।

निराला के प्रकृति-परक गीतों में कोमलता एवं सौंदर्य-चेतना का सुन्दर सन्निवेश है। उदाहरण के लिए निम्न पंक्तियां देखिए-

''कौन तुम शुभ्र-किरण-वसना?
सीखा केवल हंसना-केवल हंसना-
शुभ्र-किरण-वसना।''

टिप्पणी

निराला की प्रकृति विषयक कविताओं में प्रकृति के साथ एक गहन तादात्म्य के दर्शन होते हैं। उदाहरण के लिए उनकी 'बादल-राग' शीर्षक अत्यन्त सशक्त रचना देखी जा सकती है। प्रकृति यहां तटस्थ नहीं रहती, अपितु कवि के हृदय में विद्यमान सुख-दुख एवं राग-विराग को प्रतिबिम्बित करने की सामर्थ्य रखती है। प्रकृति में सुख दुख की छाया का यह सगुंफन उनके प्रकृति-चित्रण को श्रेष्ठ बना देता है। 'बादल-राग' कवि के अपने व्यक्तित्व की भांति ही विद्रोह एवं क्रांति की भावना से अनुस्यूत है। प्रकृति से तादात्म्य स्थापित करने की दिशा में इस कविता की निम्न पंक्तियां देखिए-

''अरे वर्ष के हर्ष
बरस तू बरस-बरस रसधार!
पार ले चल तू मुझको
बहा, दिखा मुझको भी निज
गर्जन-भैरव-संसार।''

अन्य छायावादी कवियों की भांति निराला ने प्रकृति का मानवीकरण भी किया है। 'संध्या-सुन्दरी' नामक कविता में मानवीकरण की छटा और प्रकृति का अलंकृत रूप दृष्टव्य है। दिवसावसान की बेला से अर्थ निशा तक के नीरव वातावरण के सजीव स्वाभाविक चित्रांकन में निराला ने अनुपम कौशल का परिचय दिया है। सुन्दर प्राकृतिक बिम्बों की रमणीय योजना ने कविता के सौंदर्य को द्विगुणित कर दिया है। संध्या बेला में मेघरंजित व्योम से उतरने वाली संध्या-सुन्दरी कवि को परी सदृश जान पड़ती है और वह उसके अलौकिक सौंदर्य के अवलोकन में निमग्न हो जाता है-

''दिवसावसान का समय
मेघमय आसमान से उतर रही है
वह सन्ध्या-सुन्दरी परी-सी
धीरे-धीरे-धीरे।
× × ×
अलसता की-सी लता
किन्तु कोमलता की वह कली
सखी नीरवता के कन्धे पर डाले बांह
छांह-सी अम्बर पथ से चली-
नूपुरों में भी रुनझुन-रुनझुन नहीं
सिर्फ एक अव्यक्त शब्द सा ''चुप, चुप, चुप
हैं गूंज रहा सब कहीं--''

आकाश से धरती पर धीरे-धीरे आती हुई संध्या की नीरव पदचाप, सखी नीरवता के कन्धे पर बांह रखकर छाया के समान आकाश-मार्ग से चलना, चरणों की गति से अव्यक्त शब्द ''चुप-चुप'' सुनाई पड़ना, गोधूलि बेला का अत्यन्त मधुरिम चित्र अंकित करते हैं। 'धीरे-धीरे-धीरे' और 'चुप चुप चुप' में गति का धीमापन और नीरवता मुखरित

हो उठी है। 'अलसत्ता की-सी लता' और 'कोमलता की कली' कहकर कवि ने संध्या के अलस और मृदुल सौंदर्य की सजीव व्यंजना की है।

टिप्पणी

प्राकृतिक तत्वों में निराला का जल के प्रति सर्वाधिक आकर्षण है। वर्षा पर उन्होंने अनेकों कविताएं लिखी हैं। 'परिमल', 'नए पत्ते', 'बेला', 'आराधना' और 'गीतिगुंज' में वर्षा और बादल पर जितनी कविताएं हैं, उन्हें संगृहीत करके एक छोटा सा काव्य-ग्रंथ तैयार किया जा सकता है। 'परिमल' में संकलित 'बादल-राग' उनकी सुप्रसिद्ध रचना है, जिसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। वर्षा के अतिरिक्त शरद, शिशिर और बसंत ऋतु का भी उन्होंने वर्णन किया है, किन्तु इनमें वह पूर्णता नहीं जो वर्षा के चित्रों में है। जल के प्रति विशेष आकर्षण के कारण ही निराला ने नदी, प्रपात और तरंगों पर भी सुन्दर कविताएं लिखी हैं।'

'यमुना के प्रति' कविता में कवि यमुना से अनेक प्रश्न भी पूछता है और देश के गौरवमय अतीत के प्रति ललक भरी लालसा भी व्यक्त करता है।

जल के अनन्तर निराला का आकर्षण फूलों के प्रति है। पन्त के समान उनका फूलों से विस्तृत परिचय तो नहीं है, फिर भी जूही, बेला, नर्गिस, शेफालिका आदि फूलों पर उन्होंने स्वतंत्र रचनाएं लिखी है। 'जूही की कली' और 'शेफालिका' में आकांक्षा के माध्यम से प्रकृति चित्रित हुई है और प्रकृति के माध्यम से नायक-नायिका का चित्रण है। जूही का प्रेमी पवन है तो शेफालिका का गगन। प्रेम-भावना दोनों कविताओं में मुखरित हुई है। 'वन-बेला' एक उद्‌बोधन गीत है जिसमें लौकिक और आत्मिक मूल्यों के महत्व की तुलना करते हुए कवि ने आत्मिक मूल्यों की ओर अपना झुकाव व्यक्त किया है। 'नर्गिस' शीर्षक कविता में भी तुलनात्मक मूल्यों का प्रश्न उठाया गया है। इन कविताओं में यौन-भावना के अनुशीलन के लिए 'जूही की कली' की निम्न पंक्तियां देखी जा सकती हैं-

''निर्दय उस नायक ने,
सुन्दर सुकुमार देह सारी झकझोर डाली,
मसल दिये गोरे कपोल गोल।''

निराला ने अपनी कविताओं में पृष्ठभूमि के रूप में भी प्रकृति का उपयोग किया है। इस दृष्टि से लघु गीतों की अपेक्षा 'तुलसीदास' और 'राम की शक्ति पूजा' जैसी लम्बी रचनाएं अधिक सफल हैं। पत्नी से मिलन को ससुराल जाते हुए तुलसीदास की उत्सुक वृत्तियों के लिए प्रकृति केवल पृष्ठभूमि का कार्य ही नहीं करती, उद्दीपन का कार्य भी करती है। 'राम की शक्ति पूजा' में युद्ध के रोमांचक वातावरण और जय-पराजय की दुविधा में झूलते हुए हृदयों के अन्तर्द्वन्द्व की पृष्ठभूमि में अमा-निशा का यह विराट सौंदर्य-चित्र दर्शनीय है-

''है अमा निशा, उगलता गगन घन अन्धकार,
खो रहा दिशा का ज्ञान, स्तब्ध है पवन चार,
अप्रतिहत गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल
भूधर ज्यों ध्यान-मग्न, केवल जलती मशाल।''

इस प्रकार स्पष्ट है कि भाव-वैभव की दृष्टि से निराला का काव्य-पारावार अथाह है। उनका भाव-क्षेत्र इतना व्यापक है कि उनकी कविताओं में राष्ट्रीय भावना से लेकर व्यंग्य-विनोद और आध्यात्मिकता से लेकर मानवीय करुणा तक की सहज व्यंजना उपलब्ध हो जाती है।

टिप्पणी

काव्य-शैली

(क) भाषा- भाषा भावाभिव्यक्ति का प्रधान साधन है। निराला ने अपने अनेक निबंधों और कविताओं में भाषा के महत्व को प्रतिपादित करने वाली पंक्तियां लिखी हैं। उनके शब्दों में, ''जीवित रहने के लिए संसार के प्रत्येक कर्म-चतुर मनुष्य और उसकी भाषा से हमें नाता नहीं तोड़ना है तो हमें उसकी भाषा की प्रगति पर भी वही नजर रखनी चाहिए जो एक जौहरी हीरे पर रखता है।'' 'तरंगों के प्रति' कविता की निम्न पंक्तियां भी द्रष्टव्य हैं-

''भाषा तुम पिरो रही हो शब्द तौलकर
किसका यह अभिनन्दन होगा आज।''

निराला केवल सरल-सुबोध भाषा के ही पक्षपाती न थे। उनका कहना था कि गूढ़ एवं गंभीर भावों की अभिव्यक्ति सरल भाषा में कदापि नहीं हो सकती और उसके लिए तो गूढ़ एवं गंभीर भाषा का ही प्रयोग आवश्यक है। भाषा को स्वेच्छा से सरल और बोलचाल की नहीं बनाया जा सकता, वह भावों के अनुसार स्वयं रूप धारण करती है। भावानुकूल भाषा, भले ही वह गंभीर अथवा कुछ क्लिष्ट हो गई हो, के पक्ष में विचार व्यक्त करते हुए निराला लिखते हैं- ''बड़े-बड़े साहित्यिकों ने प्रकृति के अनुकूल ही भाषा लिखी है। कठिन भावों को व्यक्त करने में प्रायः भाषा भी कठिन हो गई है। जो मनुष्य जितना गहरा है, वह भाव तथा भाषा की उतनी ही गम्भीरता तक पैठ सकता है और पैठता है। साहित्य में भावों की उच्चता का ही विचार रखना चाहिए। भाषा भावों की अनुगामिनी है।''

निराला को इस बात पर बड़ा क्षोभ था कि हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के लिए साहित्यकारों का एक वर्ग उसे जबरन सरल बनाने पर तुला हुआ है और उर्दू-फारसी के शब्दों के अधिकाधिक प्रयोग पर जोर दे रहा है। वे चाहते थे कि बार-बार भाषा की सरलता पर जोर देने के बदले जनता के बौद्धिक स्तर को ऊंचा किया जाय। हिन्दू-मुस्लिम एकता के नाम पर भाषा को जबरदस्ती उर्दू शब्दों से गढ़ना और उसके लालित्य को मिटा देना निराला एक अक्षम अपराध समझते थे। उन्होंने सदैव भावानुकूल भाषा का ही समर्थन किया, भले ही वह कुछ दुरूह क्यों न हो गई हो। भावों की आवश्यकता के अनुसार उन्होंने सरल और बोलचाल की भाषा भी लिखी। निराला की काव्य-भाषा का निम्न बिन्दुओं के माध्यम से अध्ययन किया जा सकता है-

संस्कृत-निष्ठ भाषा- निराला का काव्य संस्कृत-निष्ठ भाषा से भरा हुआ है, जैसे-

''पीताभ अग्निमय, ज्यों दुर्जय
निर्धूम, निरभ्र दिगन्त प्रसर?''

प्रौढ़, सशक्त एवं ओजस्वी भावों की अभिव्यक्ति के लिए निराला ने संस्कृत की तत्सम-बहुला भाषा अपनायी है। निम्न पंक्तियों में संस्कृत की दीर्घ समासान्त, पदावली

टिप्पणी

देखिए। इसमें विशेषण, विशेष्य, क्रिया, कर्त्ता, कर्म और कारकों का समाहार कर केवल एक शब्द बन गया है-

''विच्छुरित-वह्नि-राजीवनयन-हतलक्ष्य-वाण
उद्धत-लंकापति-मर्दित-कपि-दल-बल-विस्तर
राघव-लाघव-रावण-वारण-गत-युग्म-प्रहर,
रावण-प्रहार-दुर्वार-विकल वानर-दल-बल।।''

तथा-

''नन्दन-कुसुम-सुरभि-मधु-मदिर-समीर।।''

समासों एवं अनुप्रासों के हिंडोले में निराला का काव्य प्रायः झूलता हुआ दिखाई देता है। अनुप्रासमयता की दृष्टि से निम्न पंक्तियां दृष्टव्य हैं-

''निःस्पृह, निःस्व, निरामय, निर्मम,
निराकांक्ष, निर्लेप, निरुदगम
निर्भरय, निराकार, निःसम, शम
माया आदि पदों की दासी।''

इस प्रकार निराला की भाषा की सामासिकता नितान्त संस्कृतमयी है।

निराला की प्रेम और यौवन की मदिरा से छलकती हुई कविताएं माधुर्यगुण-युक्त भाषा का उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। कोमल भावों की अभिव्यक्ति के लिए कवि ने इनमें कोमल कान्त पदावली का प्रश्रय लिया है और अपनी लाक्षणिकता और संगीतमयता के कारण ये कविताएं रसिक हृदयों के गले का हार बनी हुई हैं। यौवन के उद्दाम वेग से छलकती हुई 'जूही की कली' की निम्न पंक्तियां अपने माधुर्य में बेजोड़ हैं-

''सोती थी,
जाने कहो कैसे प्रिय-आगमन वह?
नायक ने चूमे कपोल,
डोल उठी वल्लरी की लड़ी जैसे हिंडोल।
इस पर भी जागी नहीं,
चूक क्षमा मांगी नहीं,
निद्रालस बंकिम विशाल नेत्र मूंदे रही-
किंवा मतवाली थी यौवन की मदिर पिये,
कौन कहे?''

सरल-सुबोध एवं व्यावहारिक भाषा- यथार्थ की संघर्ष भरी धरती पर उतर आने के समय निराला ने सरल-सुबोध भाषा का प्रयोग किया है। सर्वसाधारण पर लिखी गई ये कविताएं सर्वसाधारण की ही भाषा में हैं। 'तोड़ती पत्थर' नामक कविता में इस भाषा का स्वरूप देखिए-

''वह तोड़ती पत्थर

देखा मैंने उसे इलाहाबाद के पथ पर।''

'भिक्षुक' शीर्षक कविता में भी इसी भाषा का स्वरूप परिलक्षित होता है जिसमें एक भिक्षुक के दैन्य भरे जीवन का सजीव चित्र उपस्थित है-

टिप्पणी

''वह आता-

दो टूक कलेजे के करता, पछताता पथ पर आता।

पेट पीठ दोनों मिलकर हैं एक,

चल रहा लकुटिया टेक,

मुट्ठी पर दाने को-भूख मिटाने को

मुंह फटी-पुरानी झोली का फैलाता।''

अपनी व्यंग्यपरक कविताओं को निराला ने चलती हुई जन-भाषा में लिखा है। अरबी, फारसी, हिन्दी, अंग्रेजी के मिश्रित शब्दों से निर्मित इस भाषा का उदाहरण देखिए-

''अबे, सुन बे गुलाब

भूल मत जो पायी है खुशबू, रंगो आब

खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट

डाल पर इतरा रहा है कैपिटलिस्ट।''

इस प्रकार की भाषा में निराला ने कहीं-कहीं उर्दू शब्दों का इतना अधिक प्रयोग किया है कि वे पूर्णतः उर्दू के कवि प्रतीत होते हैं।

निराला की भाषा में चित्रोपमता के भी दर्शन होते हैं। शब्दों का ऐसा प्रयोग, जिससे वर्ण्य-विषय का सजीव चित्र उपस्थित हो जाय, भाषा सामर्थ्य का द्योतक है। कुछ उदाहरण देखिए-

(क) ''अलस पग मग में ठगी-सी रह गई।''

(ख) ''झुक-झुक तन-तन, फिर झूम-झूम, हंस-हंस झकोर।''

(ग) ''पेट-पीठ दोनों मिलकर हैं एक

चल रहा लकुटिया टेक।''

निराला के सम्पूर्ण काव्य में ध्वन्यात्मक शब्दों की योजना मिलती है। नूपुरों का निःशब्द स्वर इन पंक्तियों में देखिए-

''नूपुरों में भी रुनझुन-रुनझुन नहीं

सिर्फ एक अव्यक्त शब्द-सा चुप, चुप, चुप।''

निर्झर की ध्वनि निम्न पंक्ति में मुखरित हो उठी है-

''झरझर रव भूधर का मधुर प्रताप।''

शब्द-चित्रों को प्रस्तुत करने में, ध्वन्यात्मकता उत्पन्न करने में, तथा बात को बल देने में निराला ने शब्द का दो बार और यहां तक की तीन बार भी प्रयोग किया है, जैसे-

(क) 'काले काले बालों से।'

(ख) 'गाती यमुना, मुझे सुनाती धीरे धीरे धीरे।'

टिप्पणी

कवि जब अपने अन्तर में उद्‌भूत भाव-राशि को शब्दों के माध्यम से व्यक्त करने की चेष्टा करता है, तो ऐसे विलक्षण क्षण भी आते हैं, जब अभिधा शब्द-शक्ति हार मान जाती है और लक्षणा तथा व्यंजना को अपना चमत्कार दिखाने की आवश्यकता पड़ती है। प्रातिभ कवि व्यंजना के माध्यम से शब्दों की गागर में अर्थ का अथाह सागर भरने में सफल होते हैं। 'सन्ध्या-सुन्दरी' कविता की निम्न पंक्तियों में निराला ने व्यंजना का जादू दिखाया है-

''सखी नीरवता के कन्धे पर डाले बांह
छांह-सी अम्बर-पथ से चली।''

इन पंक्तियों में शब्द अपने अभिप्रेत अर्थ की अपेक्षा कुछ विशेष अर्थों का द्योतन कर रहे हैं इसीलिए इस शब्द-योजना को ध्वनि-काव्य के अन्तर्गत परिगणित किया जा सकता है। संध्या की सखी नीरवता है। यह ध्वनित होता है कि संध्या स्वभाव से शान्त प्रकृति की है, क्योंकि मित्रता एक से स्वभाव के व्यक्तियों में हुआ करती है। सखी के साथ आना यह व्यंजित करता है कि संध्या कुमारी है। क्योंकि विवाहिता नारियों को सखी की उतनी आवश्यकता नहीं रहती है। सखी के कन्धे पर बांह रखने से संध्या की अल्हड़ता और सुकुमारता व्यक्त होती है। इस प्रकार यह पंक्तियां निराला के ध्वनिपरक चित्रण की उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

उपर्युक्त विवेचन के अनन्तर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि प्रसाद, पंत और महादेवी तीनों ही एक भाव-क्षेत्र के शिल्पी थे तथापि उनकी भाषागत अपनी विशेषताएं हैं जो उन्हें सबसे भिन्न सिद्ध कर देती हैं किन्तु निराला जी के समान शब्द-सर्जन और भाषा-शिल्प तथा भाषा पर असामान्य अधिकार रखने वाला कोई नहीं है, निश्चय ही इस क्षेत्र में वे अन्यतम है।

छायावादी कवियों में उन जैसा शब्द-शिल्पी और शब्द-कोश का धनी अन्य कवि नहीं है। शब्द-कोश की अधिकता के कारण ही उनकी भाषा ''मेघमन्द्र ध्वनि और घटाओं की गम्भीर गति, पौरुषपूर्ण नाद-स्फोट, शैल-प्रपात-सी क्षिप्त पदचाप, संगीत की कम्पन और झंकार'', से सम्पन्न हो उठी है अतः अपनी भाषा के समान केवल आप ही हैं। निराला शब्दों के ज्ञाता थे। उन्हें विदित था कि पर्यायवाची शब्द भी श्रोता के मानस-पटल पर पृथक् प्रभाव डालते हैं। 'रवि' शब्द से माधुर्य का बोध होता है, जबकि उसी का पर्यायवाची 'मार्तण्ड' शब्द ओज को प्रकट करता है। 'तुम और मैं' शीर्षक कविता में उन्होंने शब्दों की आत्मा को पहचान कर एक साथ ओज और माधुर्य के प्रतीक शब्दों का प्रयोग किया है-

''तुम रण ताण्डव उन्माद नृत्य,
मैं मुखर मधुर नूपुर ध्वनि।
तुम नाद वेद ओङ्‌कार सार,
मैं कवि शृंगार शिरोमणि।''

टिप्पणी

निराला की कविताओं में शैली की विविधता परिलक्षित होती है। उनका भाव-क्षेत्र अत्यन्त व्यापक होने के कारण शैलियों का वैविध्य भी काव्य में स्वत: आ गया है। ओज और उदात्त गुणों से युक्त शैली का प्रयोग उन्होंने सर्वाधिक किया है। यह शैली भी अनेक रूपों में दिखाई देती है। 'छत्रपति शिवाजी का पत्र', 'तुलसीदास' के आरम्भिक अंश आदि में भावना का ओज प्रकट हुआ है तो 'बादल राग' जैसी कविताओं में नाद की उदात्तता मुखरित हुई है।

निराला की कविताओं में ललित, सुकुमार शैली के दर्शन भी होते हैं। गीतों और प्रकृतिपरक रचनाओं में यह शैली प्राय: मिलती है। शब्दों का मधुरिम सुगुंफन इस शैली की विशेषता है। उदाहरण के लिए देखिए-

''अलि, घिर आये घन पावस के।
लख, ये काले-काले बादल
नील-सिन्धु में खुले कमल-दल,
हरित ज्योति चपला अति चंचल,
सौरभ के, रस के।''

निराला की कविताओं में हास्य-व्यंग्य शैली भी मिलती है, जिसका उदाहरण उनकी 'कुकुरमुत्ता' नामक सुप्रसिद्ध व्यंग्य-रचना में देखा जा सकता है। बोल-चाल की सहज स्वाभाविक भाषा इस शैली की विशेषता है।

निराला के शैली-शिल्प की दो अन्य विशेषताएं यह हैं - (1) निर्बाध वर्णन तथा भाव का अजस्त्र प्रवाहमान स्रोत (2) विशेषण-बहुलता। 'जूही की कली' तथा 'संध्या सुन्दरी' नामक उनकी सुप्रसिद्ध कविताओं में पहली विशेषता मिलती है। 'संध्या-सुन्दरी' में नीरवता का निर्बाध वर्णन है तथा 'जूही की कली' में प्रिया का स्मरण आते ही नायक पवन जिस तीव्र गति से चलता है, उसमें प्रवाहमयता विद्यमान है। विशेषण-बहुलता निराला के प्रकृति-परक गीतों, चरित्र-चित्रण विषयक कविताओं तथा सम्बोधन गीतों में विशेष रूप से मिलती है और यह केवल निराला को ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण छायावादी कवियों की विशेषता है।

मानवीकरण- छायावादी कवियों का बहुप्रयुक्त अलंकार है। इसके माध्यम से निराला ने भी अचेतन एवं जड़ प्राणियों के अत्यन्त सुन्दर, सचेतन तथा गत्यात्मक चित्र प्रस्तुत किये हैं। कहीं सुरभि को उन्होंने बातें करता दिखाया है तो कहीं तरंगों को अपना नीला अंचल हिला-हिला कर गीत गाता हुआ प्रदर्शित किया है। कहीं यामिनी एक तरुण युवती की भांति जागती है तो कहीं मेघरंजित आकाश से संध्या-सुन्दरी परी के समान धीरे-धीरे नीचे उतर रही है। एक सुन्दरी के रूप में संध्या का यह मानवीकरण नि:सन्देह अत्यन्त मोहक बन पड़ा है जिसे उपमा और रूपक ने और अधिक रमणीय बना दिया है -

''दिवसावसान का समय
मेघमय आकाश से उतर रही है
वह सन्ध्या-सुन्दरी परी-सी
धीरे-धीरे-धीरे।''

टिप्पणी

निराला की कविताओं में अन्योक्ति अलंकार की भरमार है। 'कुकुरमुत्ता' में अन्योक्ति और व्यंग्य का प्राधान्य है, जहां गुलाब पूंजीपति शोषकों का और कुकुरमुत्ता सर्वहारा वर्ग का प्रतीक है। 'गीतिका' के मौन रही हार-प्रिय पथ पर चलती, सब कहते श्रृंगार' नामक गीत में अभिसारिका की प्रिय मिलन की आतुरता के माध्यम से जीवात्मा की परमात्मा के प्रति व्याकुलता का चित्रण किया है। 'जूही की कली' नामक कविता में जूही और पवन के माध्यम से किसी वियोगिनी नायिका और उसके प्रवासी प्रियतम के पुनर्मिलन को लेकर अन्योक्ति की गई है। इसी कविता की कुछ पंक्तियां इस प्रकार हैं-

''विजन-वन-वल्लरी पर
सोती थी सुहाग-भरी, स्नेह-स्वप्न मग्न
अमल-कोमल-तनु तरुणी-जुही की कली,
दृग बन्द किए, शिथिल पत्रांक में,
वासन्ती निशा थी;
विरह-विधुर-प्रिया संग छोड़
किसी दूर देश में था पवन
जिसे कहते हैं मलयानिल।''

'परिमल' की 'माया' शीर्षक कविता में कवि ने संदेह अलंकार की सुन्दर छटा प्रदर्शित की है। इसमें माया के संबंध में विभिन्न सन्देहात्मक उक्तियों का वर्णन है। इसी संग्रह की 'नयन' शीर्षक कविता भी सन्देह का सुन्दर उदाहरण है जिसमें नेत्रों के संबंध में संदेहात्मक उक्तियां वर्णित हैं-

''मद भरे ये नलिन-नयन मलीन हैं;
अल्प जल में या विकल लघु मीन हैं?
या प्रतीक्षा में किसी की शर्वरी;
बीत जाने पर हुए ये दीन हैं?''

निराला की कविता में और भी अलंकार मिलते हैं। ''आज मन पावन हुआ है, जेठ में सावन हुआ है'' पंक्ति में 'विरोधाभास' की योजना है। ''बता कहां अब वह वंशीवट, कहां गए नटनागर श्याम'' में 'स्मरण' अलंकार की छटा है, जिसमें यमुना की लोल लहरियों को देख कवि को कृष्ण का स्मरण हो आता है। शूर्पणखा के निम्न कथन में अपने रूप-लावण्य का अत्युक्तिपूर्ण वर्णन करने के कारण अत्युक्ति अलंकार है-

''सृष्टि-भर की सुन्दर प्रकृति का सौंदर्य भाग
खींचकर विधाता ने भरा है इस अंग में।''

ध्वन्यर्थ-व्यंजना नामक अलंकार का प्रयोग निम्न पंक्तियों में अत्यन्त सुन्दर हुआ है, जहां ध्वनियों से ही अभिसारिका की मधुर चेष्टाओं की व्यंजना हो रही है-

''कण-कण कर कङ्कण, प्रिय,
किण-किण रव किङ्किणी,

रणन रणन नूपुर, उर लाज,

लौट रङ्गिणी।''

अतएव स्पष्ट है कि निराला का काव्य-रत्नाकर अलंकार-रत्नों की मंजुल प्रभा से उद्भासित हो रहा है। अलंकारों के भावानुकूल प्रयोग के कारण उनकी अलंकार-योजना अत्यंत उत्कृष्ट कोटि की बन पड़ी है।

टिप्पणी

मुक्त छन्द- इस छन्द का निराला की कविताओं में सर्वाधिक प्रयोग है। उनकी पहली कविता 'जूही की कली' भी इसी छंद में है, जिसके प्रकाशन के साथ ही साहित्य जगत में इस छंद को लेकर उथल-पुथल मच गई। किसी ने इसे रबर छंद कहा तो किसी ने केंचुआ छंद। आचार्य शुक्ल ने इसके चरणों की स्वच्छंद विषमता का उल्लेख किया कि कोई चरण बहुत लंबा, कोई बहुत छोटा और कोई मझोला है। साहित्य जगत में निराला को अपने क्रांतिकारी भावों के लिए जिस विरोध को सहन करना पड़ा, उससे कहीं अधिक मुक्त छंद को लेकर झेलना पड़ा।

अपनी प्रगति जांचिए

1. निम्न में से कौन–सी कृति निराला की नहीं है?

   (क) सरोज–स्मृति (ख) कुल्ली भाट

   (ग) बादल को घिरते देखा है (घ) लिलि

2. 'वह तोड़ती पत्थर' कविता से हिन्दी कविता की किस महत्वपूर्ण प्रवृत्ति की नींव पड़ी?

   (क) प्रयोगवाद (ख) प्रगतिवाद

   (ग) छायावाद (घ) हालावाद

1.3 'दिमागी गुलामी' (निबन्ध) : राहुल सांकृत्यायन

राहुल जी का जन्म उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले के पन्दाहा गांव में 9 अप्रैल, 1893 ई. और मृत्यु 14 अप्रैल, 1963 ई. को दार्जलिंग में हुई। उनके बाल्यकाल का नाम केदारनाथ पाण्डेय था। कुछ वर्षों तक वह रामोदर स्वामी के नाम से भी जाने गए। प्राथमिक शिक्षा अपने गांव के मदरसे से ही प्राप्त की। इच्छा के विरुद्ध बचपन में ही विवाह हो जाने के कारण प्रतिक्रिया स्वरूप उन्होंने किशोरावस्था में ही घर छोड़ दिया। घर से अलग होकर ये एक मठ में साधु हो गए। परंतु अपने घुमक्कड़ी स्वभाव के कारण वहां भी अधिक दिन टिक नहीं पाये, जिससे इनकी शिक्षा–दीक्षा नियमित ढंग से न हो सकी। संस्कृत की उच्च शिक्षा के लिए राहुल सांकृत्यायन काशी, आगरा व लाहौर गए तथा वहीं अरबी–फारसी का अध्ययन भी किया।

राहुल जी की घुमक्कड़ी वृत्ति बाल्यावस्था से ही थी। वे एक महान पर्यटक थे जिसके फलस्वरूप वह महान अध्येता बने। जीवन के प्रारंभ से जो उनके घूमने का सिलसिला शुरू हुआ तो फिर उसका अंत भी इनके जीवन के साथ ही हुआ। ज्ञानार्जन

के उद्देश्य से प्रेरित उनकी यात्राओं में श्रीलंका, तिब्बत, जापान और रूस की यात्राएं विशेष उल्लेखनीय हैं।

टिप्पणी

वे एशिया और यूरोप की छत्तीस भाषाओं के ज्ञाता थे। घुमक्कड़ और पर्यटनशील होने के कारण इनका जीवन अनुभव व्यापक एवं व्यावहारिक था। इस संबंध में उन्होंने स्वयं लिखा है कि– "यात्रा ने ही मेरे हाथ में जबरदस्ती कलम पड़का दी और स्वयं ही लेखन शैली बनती गई, कलम के दरवाजे को खोलने का काम मेरे लिए यात्राओं ने ही किया, इसलिए मैं उनका बहुत कृतज्ञ हूं।" (एशिया के दुर्गम भूखंडों में–भूमिका) इनके लेखनीय व्यक्तित्व को हम इन विभिन्न स्तरों पर देख सकते हैं–

यायावरी वृत्ति, इतिहास बोध, आर्य समाजी व्यक्तित्व, बौद्ध दर्शन की अभिरुचि तथा साम्यवादी दर्शन। घुमक्कड़ी को लेकर राहुल जी का विचार था कि–

"मेरी समझ में दुनिया की सर्वश्रेष्ठ वस्तु है घुमक्कड़ी। घुमक्कड़ से बढ़कर व्यक्ति और समाज का कोई हितकारी नहीं हो सकता। दुनिया दुःख में हो चाहे सुख में, सभी समय यदि सहारा पाती है तो घुमक्कड़ों की ही ओर से।"

कृतित्व

उन्होंने हिंदी साहित्य को अपनी रचनाओं का विपुल भंडार दिया है। मात्र हिंदी साहित्य के लिए ही नहीं बल्कि भारत की अन्य भाषाओं के लिए भी महत्वपूर्ण शोध कार्य किये हैं तथा साहित्य की विभिन्न विधाओं में भी अपना बहुमूल्य योगदान दिया है। जिसमें उपन्यास, कहानी, निबंध, नाटक, जीवनी, आत्मकथा, यात्रा–साहित्य, अनुवाद प्रमुख हैं। अपनी कृति 'जीवन यात्रा' में राहुल जी ने यह स्वीकार किया है कि उनका साहित्यिक जीवन सन् 1927 से प्रारंभ होता है पर वास्तविकता तो यह है कि उन्होंने किशोरावस्था को पार करने के पश्चात ही रचना कर्म प्रारंभ कर दिया था। उन्होंने विभिन्न विषयों पर लगभग 150 ग्रंथ रचे जिनमें से लगभग 130 ग्रंथ प्रकाशित हुए।

प्रमुख कृतियां

- **यात्रा साहित्य**– मेरी तिब्बत यात्रा, मेरी यूरोप यात्रा, तिब्बत में सवा वर्ष, रूस में पच्चीस मास, किन्नर देश की ओर आदि।
- **कहानी संग्रह**– वोल्गा से गंगा, सप्तमी के बच्चे, कनैला की कथा, बहुरंगी मधुपुरी।
- **उपन्यास**– जय यौधेय, सिंह सेनापति, भागो नहीं, दुनिया को बदलो, बाईसवीं सदी, अनाथ, विस्मृति के गर्भ में, सोने की ढाल, दिवोदास, विस्मृत यात्री, राजस्थानी रनिवास आदि।
- **जीवनी**– कार्ल मार्क्स, माऊ चे तुंग, लेनिन, सिन्हल के वीर, बचपन की स्मृतियां, मेरे असहयोग के साथी, वीर चन्द्र सिंह गढ़वाली, घुमक्कड़ स्वामी, महामान व बुद्ध जिनका मैं कृतज्ञ, अकबर आदि।
- **दर्शन/धर्म**– दर्शन दिग्दर्शन, बौद्ध दर्शन, इस्लाम की रूपरेखा, तिब्बत में बौद्ध धर्म, वैदिक आर्य, वैज्ञानिक भौतिकवाद, मज्झिमनिकाय, विनय पिटक, दीर्घ निकाय आदि।

टिप्पणी

- **आत्मकथा**– मेरी जीवन यात्रा।
- **साहित्यलोचन**– हिंदी काव्यधारा, दक्खिनी हिंदी काव्यधारा।
- **इतिहास ग्रंथ**– विश्व की रूपरेखा, पुरातत्व निबंधावली, मध्य एशिया का इतिहास।
- **अनुवाद ग्रंथ**– मज्झिम निकाय, दीर्घ निकाय, संयुक्त निकाय, धम्म पद आदि।
- **निबंध**– साम्यवाद ही क्यों, आज की समस्याएं, तुम्हारी क्षय, दिमागी गुलामी, साहित्य निबंधावली, बौद्ध संस्कृति आदि।

महापंडित की उपाधि से अलंकृत राहुल सांकृत्यायन आदि शंकराचार्य के बाद अब तक के सबसे बड़े घुमक्कड़ हुए। उन्होंने अपनी यात्राओं के माध्यम से देश तथा इसके कई पड़ोसी देशों के इतिहास एवं संस्कृति को पहचाना, उसका अध्ययन किया तथा उसका ज्ञान सुधी पाठकों तक पहुंचाया। उनका यात्रा साहित्य हिंदी की अमूल्य धरोहर है। उनकी यात्रा विषयक सर्वाधिक उल्लेखनीय कृतियां हैं– 'तिब्बत में सवा साल'–1933, 'मेरी यूरोप यात्रा'–1935, 'मेरी तिब्बत यात्रा'–1937, 'मेरी लद्दाख यात्रा'–1939, 'मेरी जीवन यात्रा'–1946, 'किन्नर देश में'– 1948, 'राहुल यात्रावली'–1949, 'घुमक्कड़ शास्त्र'–1949, 'एशिया के दुर्गम भूखंडों में यात्रा के पन्ने'– 1952, 'रूस में पच्चीस मास'–1952।

विभिन्न देशों के इतिहास, प्रकृति, समाज, जीवन और संस्कृति का पूर्ण अन्वेषण राहुल जी के यात्रा साहित्य से हमें मिलता है। इनके यात्रा साहित्य में सहजता एवं बोधगम्य भाषा के दर्शन होते हैं। इस विधा की रचना में सभी प्रचलित शैलियों का प्रयोग इन्होंने किया है। फिर भी वर्णनात्मक शैली की प्रधानता है।

'ब्रह्मसूत्र' के प्रसिद्ध वाक्य– 'अथातो ब्रह्म जिज्ञासा' की तर्ज पर 'अथातो घुमक्कड़ जिज्ञासा' नामक निबंध के रचनाकार राहुल सांकृत्यायन ने अपनी घुमक्कड़ी प्रवृत्ति को इस निबंध में व्यक्त किया है। इस निबंध में उन्होंने ब्रह्म जिज्ञासा को न जानकर घुमक्कड़ी जिज्ञासा को अधिक जानने की बात कही है। यहां जिज्ञासा इस श्रेष्ठ वस्तु विशेष को जानने की इच्छा को कहा गया है जो व्यक्ति और समाज दोनों के लिए हितकारी हो। इस आधार पर महामुनि व्यास ने 'वृक्ष' को तथा उनके शिष्य जैमिनी ने 'धर्म' को अपनी जिज्ञासा का विषय चुना। किंतु महायायावर राहुल सांकृत्यायन की दृष्टि ब्रह्म पर न जाकर घुमक्कड़ी पर पड़ी जो उनके अनुसार विश्व का सर्वश्रेष्ठ धर्म है। उनका यह मानना है कि एक घुमक्कड़ व्यक्ति, समाज और संस्कृति का सर्वाधिक हित कर सकता है।

1.3.1 'दिमागी गुलामी' निबंध का मूल पाठ

जिस जाति की सभ्यता जितनी पुरानी होती है, उसकी मानसिक दासता के बन्धन भी उतने ही अधिक होते हैं। भारत की सभ्यता पुरानी है, इसमें तो शक ही नहीं और इसलिए इसके आगे बढ़ने के रास्ते में रुकावटें भी अधिक हैं। मानसिक दास प्रगति में सबसे अधिक बाधक होती है। हमारे कष्ट, हमारी आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक समस्याएँ इतनी अधिक और इतनी जटिल हैं कि हम तब तक उनका कोई हल सोच

टिप्पणी

नहीं सकते जब तक कि हम साफ–साफ और स्वतत्रंतापूर्वक इन सोचने का प्रयत्न न करें। वर्तमान शताब्दी के आरम्भ में भारत में राष्ट्रीयता की बाढ़–सी आ गई, कम से कम तरुण शिक्षितों में यह राष्ट्रीयता बहुत अंशों में श्लाध्य रहने पर भी कितने ही अंशों में अंधी राष्ट्रीयता थी। झूठ–सच जिस तरीके से भी हो, अपने देश के इतिहास को सबसे अधिक निर्दोष और गौरवशाली सिद्ध करने अर्थात् अपने ऋषि–मुनियों, लेखकों और विचारकों, राजाओं और राज–संस्थाओं में बीसवीं शताब्दी की बड़ी से बड़ी राजनैतिक महत्व की चीजों को देखना हमारी इस राष्ट्रीयता का एक अंग था। अपने भारत को प्राचीन और उसके निवासियों को हमेशा से दुनिया के सभी राष्ट्रों से ऊपर साबित करने की दुर्भावना से प्रेरित हो हम जो कुछ भी अनाप–शनाप ऐतिहासिक खोज के नाम पर लिखें, उसको यदि पाश्चात्य विद्वान न मानें तो झट से फतवा पास कर देना कि सभी पश्चिमी ऐतिहासिक अंग्रेजी और फ्रांसीसी, जर्मन और इटालियन, अमेरिकन और रूसी, डच और जेकोस्लाव सभी बेईमान हैं, सभी षड्यंत्र करके हमारे देश के इतिहास के बारे में झूठी–झूठी बातें लिखते हैं। वे हमारे पूजनीय वेद को साढ़े तीन और चार हजार वर्षों से अधिक पुराना नहीं होने देते (हालाँकि वे ठीक एक अरब बानवे वर्ष पहले बने थे)। इन भलेमानसों के ख्याल में आता है कि अगर किसी तरह से हम अपनी सभ्यता, अपनी पुस्तकों और अपने ऋषि–मुनियों को दुनिया में सबसे पुराना साबित कर दें, तो हमारा काम बन गया। शायद दुनिया हमारे अधिकारों की प्राचीनता को देखकर बिना झगड़ा–झंझट के ही हमें आजाद हो जाने दें, अन्यथा हमारे तरुण अपनी नसों में उस प्राचीन सभ्यता के निर्माताओं का रक्त होने के अभिमान में मतवाले हो जायें और फिर अपने राष्ट्र की उन्नति के लिए बड़ी–से–बड़ी कुर्बानी भी उनके बाएँ हाथ का खेल बन जाए और तब हमारे देश को आज़ाद हो जाने में कितने दिन लगेंगे? आज हमारे हाथ में चाहे आग्नेय अस्त्र न हों, नई–नई तोपें और मशीनगन न हों, समुन्दर के नीचे और हवा के ऊपर से प्रलय का तूफान मचाने वाले पनडुब्बियाँ और जहाज न हों, लेकिन यदि हम राजा भोज के काठ के उड़ने वाले घोड़े और शुक्रनीति में बारूद साबित कर दें तो हमारी पाँचों अँगुलियाँ घी में। इस बेवकूफी का भी कहीं ठिकाना है कि बाप–दादों के झूठ–मूठ के ऐश्वर्य से हम फूले न समायें और हमारा आधा जोश उसी की प्रशंसा में खर्च हो जाए।

अपने प्राचीन काल के गर्व के कारण हम अपने भूत के स्नेह में कड़ाई के साथ बँध जाते हैं और इसमें हमें उत्तेजना मिलती है कि अपने पूर्वजों की धार्मिक बातों को आँख मूँदकर मानने के लिये तैयार हो जाएँ। बारूद और उड़नखटोला में तो झूठ–साँच पकड़ने की गुंजाइश है, लेकिन धार्मिक क्षेत्र में तो अँधेरे में काफी बिल्ली देखने के लिए हरेक आदमी स्वतंत्र है। न यहाँ सोलहों आना बत्तीसों रत्ती ठीक–ठीक तौलने के लिए कोई तुला है और न झूठ–साँच की कोई पक्की कसौटी। एक चलता–पुर्जा बदमाश है। उसने अपने कौशल, रुपये–पैसे और धोखे–धड़ी तथा और तरह–तरह के प्रलोभन से कुछ स्वार्थियों या आँख के अंधे गाँठ के पूरों को मिलकर एक नकटा पंथ कायम कर दिया और फिर हजारों छोटी–मोटी, शिक्षित और मूर्ख, काली और सफेद भेड़ें हा–हा कर नाक कटाने। जिन्दगी भर वह बदमाश मौज करता रहा। मरने के बाद उसके अनुयायियों ने उसे और ऊँचा बढ़ाना शुरू किया। अगर उस जमात को कुछ शताब्दियों

तक अपने इस प्रचार में कामयाबी मिली तो फिर वह धूर्त दुनिया का महान् पुरुष और पवित्र आत्मा प्रसिद्ध हो गया।

टिप्पणी

पुराने वक्त की बातों को छोड़ दीजिये। मैंने अपनी आँखों से ऐसे कुछ आदमियों को देखा है जिनमें कुछ मर गये हैं और कुछ अभी तक जिन्दा हैं। उनका भीतरी जीवन कितना घृणित, स्वार्थपूर्ण और असंयत था। लेकिन बाहर भक्त लोग उनके दर्शन, सुमधुर आलाप से अपने को अहोभाग्य समझने लगते थे। नजदीक से देखिए, ये धार्मिक महात्माओं के मठ और आश्रम ढोंग के प्रचार के लिए खुली पाठशालाएँ हैं और धर्म–प्रचार क्या, पूरे सौ सैकड़े नफे का रोजगार है। अधिकांश लोग इसमें अपने व्यवसाय के ख्याल से जुटे हुए हैं। अयोध्या में एक महात्मा थे। उनसे रामजी इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने स्वयं बैकुण्ठ से आकर उनका पाणिग्रहण किया। हाँ, पाणिग्रहण किया। पुरुष थे पहले, पीछे तो भगवान की कृपा से वह उनकी प्रियतमा के रूप में परिवर्तित कर दिये गये। रामजी के लिए क्या मुश्किल है। जब पत्थर मनुष्य के रूप में बदल सकता है तो पुरुष को स्त्री के रूप में बदल देना कौन–सी बड़ी बात? ऐसा–ऐसा परिवर्तन तो आजकल भी अनायास कितनी बार देखा गया है।

एक नया मत इधर 50–60 वर्ष से चला है। वह दुनिया भर की सारी बेवकूफियों, भूत–प्रेत, जादू–मंत्र सबको विज्ञान से सिद्ध करने के लिए तुला हुआ है। बेवकूफ हिन्दुस्तानी समझते हैं कि ऑक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज से गदहे नहीं निकलते और सभी जैक और जान्सन साइन्स छोड़कर दूसरी बात ही नहीं करते। इन अधकचरे पंडितों ने अपने अधूरे ज्ञान के आधार पर भूत–प्रेत, देवी–देवता, साधु–पूजा सबको तीस बरस पहले निकले वैज्ञानिक 'सिद्धान्तों' से सिद्ध करना शुरू किया। हालाँकित उन सिद्धान्तों में अब 75 फीसदी गलत साबित हो गये हैं, लेकिन अभी अन्धे भक्तों के लिए उस पुराने विज्ञान के पुट से तैयार किए हुए ग्रंथ ब्रह्मवाक्य बन रहे हैं। हिन्दुस्तान का इतिहास बहुत लम्बा–चौड़ा ही, काल और देश दोनों के ख्याल से। हमारी बेवकूफियों की लिस्ट भी उसी तरह बहुत लम्बी–चौड़ी है अंधी राष्ट्रीयता और उसके पैगम्बरों में हममें अपने भूत के प्रति अत्यन्त भक्ति पैरदा कर दी है और फिर हमारी उन सभी मूर्खताओं के पोषण के लिए सड़ी–गली विज्ञान की थ्योरियाँ और दिवालिये श्वेतांग तैयार ही हैं। फिर क्यों न हम अपनी अक्ल बेच खाने के लिए तैयार हो जाएँ? जिनके यहाँ वायुयान ही नहीं काठ के घोड़े भी आकाश में अड़ते हों, जिनके यहाँ बारूद और आग्नेयास्त्र ही नहीं, मुख से निकली हुई ज्वाला में करोड़ों शत्रु एक क्षण में जलकर राख हो जाते हों, जिनकी सूक्ष्म दार्शनिक विवेचनाओं और आत्मकथाओं को सुनकर आज भी दुनिया दंग हो गए, वह भला किसी बात का झूठा लिख सकता है? तिपाई पर भूत बुलाना, मेस्मेरिज्म, हेप्नाटिज्म आदि के द्वारा पहले वैज्ञानिक ढंग से हमें अपनी विस्तृत होती जाती बेवकूफियों के पास ले जाया गया और अब तो विज्ञान पारितोषिक विजेता लोग सरे मैदान हरसुराम और हरिराम ब्रह्म की विभूति बाँट रहे हैं। आखिर जब नोबुल पुरस्कार विजेता आलिवर आज भूतों–प्रेतों पर पुस्तकें लिख रहा है और कसम खा–खा कर लोगों में उनका प्रचार कर रहा है तो हमारे इन स्वदेशी भाइयों का कसूर ही क्या?

अभी तक शिक्षित लोग फलित ज्योतिष को झूठ समझते थे, लेकिन अब उसके भी काफी अधिक हिमायती हो चले हैं। वह इसे पक्का विज्ञान मानते हैं। ज्योतिषियों की भविष्यवाणी को छापने के लिए हमारे अखबार एक–दूसरे से होड़ लगा रहे हैं। 27

टिप्पणी

अगस्त की 'सर्चलाइट' एक ज्योतिषी महाराज की मौसम संबंधी भविष्यवाणी को एक प्रधान पृष्ठ पर स्थान देती है। फिर पूना में लाखों रुप्ये खर्च करके इसके लिए यन्त्र और विशेषज्ञ रखने की क्या जरूरत है? स्वदेशी का जमाना है, कांग्रेस का मंत्रिमण्डल भी हो गया है। ज्योतिषियों को चाहिये कि एक बड़ा–सा डेपुटेशन लेकर प्रधान–मंत्रियों से मिले। उनको विश्वास रखना चाहिये कि कांग्रेस के छह प्रान्तों में ऐसे मंत्री बहुत कम ही होंगे जिनका ज्योतिष में विश्वास न होगा। ज्योतिषी लोग देश–सेवा के ख्याल से अपना वेतन कम करने को तैयार होंगे ही, फिर क्या जरूरत है कि स्वदेशी साधन के रहते ऋतु–भविष्य–कथन के यंत्र, भूकम्प के सिस्मोग्राफ आदि का बखेड़ा और उस पर हजार–हजार, पन्द्रह–पन्द्रह सौ रुपये महीना लेने वाले विशेषज्ञ को रखा जाये? ज्योतिषी लोग अपने काम को बड़ी सफलता के साथ कर सकते हैं। उन्हें न यंत्रों की आवश्यकता है और न बाहर से सूचनाओं के माँगने की। एक स्थान पर बैठे ही वह सभी बातें बतला दिया करेंगे। फिर तारीफ यह कि एक ही आदमी अतिवृष्टि और अनावृष्टि को भी बतला देगा और भूकम्प को भी। स्वराज की किश्त आने–जाने में अगर कुछ देर होगी तो उसे भी नेताओं की जन्म–पत्री देखकर बता देगा। अभी इसी साल एक महाराज बादशाह की गद्दी देखने विलायत जाना चाहते थे। दुष्ट ग्रहों की उन्हें बड़ी फिक्र थी और उनसे भी अधिक फिक्र थी उनकी माँ की। एक ज्योतिषी जी ने आकर मेष–मिथुन गिनकर महाराज को भी संतुष्ट कर दिया कि कोई ग्रह खिलाफ नहीं है और माँ को भी खम ठोककर कह दिया कि महाराज का कोई अनष्टि नहीं है, मैं जिम्मेवारी लेता हूँ। सब लोग प्रसन्न हो गए। ज्योतिषी जी को 5,000 रुपये मिले। भसला इतना सस्ता जिन्दगी का बीमा कहीं हो सकता है? ऐसा होने पर एक और फायदा होगा। हरेक प्रांतीय सरकार में एक सरकारी ज्योतिषी और 10–5 सहायक ज्योतिषी होने पर मंत्रियों और पदाधिकारियों को भी ज्योतिषियों के पीछे गली–गली की खाक न छाननी पड़ेगी। अपनी बीवी और छोटे–मोटे बबुआ–बबुनी सबाक वर्ष–फल साल का साल पहुँचता रहेगा। स्वदेशी व्यवसाय को जरूर आपको प्रोत्साहन देना चाहिये और इससे बढ़कर शुद्ध स्वदेशी व्यवसाय और क्या हो सकता है जिसके दिल, दिमाग, शरीर और परिश्रम सभी चीजें सोलहो आने स्वदेशी हैं।

हम लोगों के मिथ्या विश्वास क्या एक–दो हैं कि जिन्हें एक छोटे से लेख में लिखा जा सके? हमारे यहाँ तो इसके मिसिल के मिसिल और फाइल की फाइल तैयार हैं और तारीफ यह है कि इन बेवकूफियों के भारी–भरकम बोझ को सिर पर लादे हुए हमारे नेता लोग समुन्दर पार कर जाना चाहते हैं। उन्हें पूरा विश्वास है कि बैकुण्ठ के भगवान, आकाश के नवग्रह और पृथ्वी के ज्योतिषी और ओझा–सयाने उनकी यात्रा में जरूर कुछ हाथ बँटायेंगे।

हमारी जाति–पाँति की व्यवस्था को ही ले लीजिए। यह हमारे ऋषि–मुनियों के उन बड़े आविष्कारों में है जिन पर हमें बड़ा अभिमान है। राष्ट्रीय भावनाओं की जागृति के साथ–साथ यद्यपि कुछ इने–गिने नेता लोग जाति–पाँति के खिलाफ बोलने लगे, लेकिन अब भी हमारे उच्चकोटि के नेताओं का अधिकांश भाग अपने ऋषियों की इस अद्‌भुत विशेषता की कद्र करने को तैयार है। नेताओं ने देख लिया कि यह जाति–पाँति, आपस के फूट, भेद–भाव के बढ़ाने का एक सबसे बड़ा कारण बन रहा है। कुछ साल पहले तो भीतर–भीतर जातीय संगठन भी इन्होंने कर रखा था और अब

टिप्पणी

भी बहुतों को उसे छोड़ने में मोह लगता है। मैं अन्य नेताओं की बात नहीं कहता। मैं खास कांग्रेस के नेताओं की बात करता हूँ। उन बेचारों को इसी कोशिश में मरना पड़ रहा है कि कैसे राष्ट्रीयता और जाति–पाँति दोनों साथ दाहिने–बायें कन्धे पर वहन किये जा सकते हैं। उनमें से कुछ ने तो जरूर समझ लिया होगा कि यह असंभव है। शुद्ध राष्ट्रीयता तब तक आ ही नहीं सकती जब तक आप जाति–पाँति तोड़ने को तैयार न हों। अगर आप जाति–पाँति तोड़े हुए नहीं हैं, तो आपका वास्तविक संसार आपकी जाति के भीतर है। बाहर वालों के साथ तो सिर्फ कामचलाऊ समझौता है। जब आप किसी पद पर पहुँचेंगे तो ईमानदारी रहने पर आपकी राय को प्रभावित करने में सफलता सबसे अधिक आपके जाति–भाइयों की होगी। नौकरी–चाकरी दिलाने, कमेटी, सब–कमेटी में भेजने और सिफारिशी चिट्ठी लिखने में मजबूरन आपको अपनी जाति का ख्याल करना होगा। आदमी के दिल में हजारों कोठरियाँ जरूर हैं लेकिन यहाँ ऐसी फर्क–फर्क कोठरियाँ नहीं हैं जिनमें एक में जाति–पाँति का भाव पड़ा रहे और दूसरे में उससे अछूती राष्ट्रीयता बनी रहे। जैसे किसानों के आंदोलन में आने वाले समझदार आदमियों को पहले से ही तैयार होकर आना चाहिये कि उन्हें साम्यवाद में पैर रखना है, वैसे ही राष्ट्रीयता के पथ पर पैर रखने वालों को भी समझना चाहिये कि उन्हें जाति–पाँति की दीवारों को तोड़ गिराना होगा। यदि कोई आदमी राष्ट्रीय नेता रहना चाहता है और साथ ही अपने जाति–भाइयों की घनिष्ठता को कायम रखना चाहता है तो या तो वह ईमानदार नहीं रहेगा या उसे असफल होकर रहना पड़ेगा। अपनी जाति के साथ घनिष्ठता रखकर कैसे दूसरी जाति का विश्वासपात्र कोई हो सकता है? मंत्रियों को तो खासतौर से सावधान रहना पड़ेगा। क्योंकि जाति–भाइयों की घनिष्ठता उन्हें आसानी से बदनाम कर सकती है। मेरी समझ में प्रान्त के लिए, राष्ट्र के लिए, कांग्रेस के लिए और व्यक्तिगत तौर से नेताओं के लिए अच्छी यही है कि हरेक प्रधान नेता तुरंत से तुरंत अपने लड़के–लड़कियों, भतीजे–भतीजियों अथवा भांजा–भांजियों या नाती–नातनियों में से कम से कम एक की शादी जाति–पाँति तोड़कर दिखला दे, जैसा कि महात्मा गांधी जी तथा राजगोपालाचारी ने करके दिखाया।

आँख मूँदकर हमें समय की प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिये। हमें अपनी मानसिक दासता की बेड़ी की एक–एक कड़ी को बेदर्दी के साथ तोड़कर फेंकने के लिए तैयार होना चाहिये। बाहरी क्रान्ति से कहीं ज्यादा जरूरत मानसिक क्रान्ति की है। हमें दाहिने–बायें, आगे–पीछे दोनों हाथ नंगी तलवार नचाते हुए अपनी सभी रूढ़ियों को काटकर आगे बढ़ना चाहिये। क्रान्ति प्रचण्ड आग है, वह गाँव के एक झोपड़े को जलाकर चली नहीं जायेगी। वह उसके कच्चे–पक्के सभी घरों को जलाकर खाक कर देगी और हमें नये सिरे से नये महल बनाने के लिए नींव डालनी पड़ेगी।

1.3.2 'दिमागी गुलामी' निबंध का सार

किसी जाति की सभ्यता जितनी ही पुरानी होती है उतनी ही उसकी मानसिक गुलामी गहरी होती है और यही कारण है कि भारतीय सभ्यता के लिए भी आगे बढ़ने के रास्ते आसान नहीं हैं। आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक समस्याओं सहित हमारे सभी कष्ट इतनी आसानी से तब तक नहीं सुलझ सकते जब तक इनपर गहराई से विचार न किया जाए, वह भी स्वतंत्रतापूर्वक। वर्तमान सदी में यूं तो हमारे युवाओं में राष्ट्रीयता की

टिप्पणी

बाढ़–सी आ गई परंतु यह एक अंधी राष्ट्रीयता थी। हम सच–झूठ हर तरीके से अपनी सभ्यता व संस्कृति को विश्व में सबसे पुराना साबित करके अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करना चाहते थे और पश्चिमी देश यदि इसकी पुष्टि नहीं करते थे तो यह मान लिया जाता था कि वे भारत के प्रति किसी पूर्वाग्रह या दुर्भावना से ग्रस्त थे। इसके पीछे इन युवाओं की सोच संभवतः यह थी कि यदि विश्व हमारी उत्कट वैभवशाली प्राचीनता को इस तरह स्वीकार कर लेगा तो उसके प्रभाव से या तो हमें बड़ी सरलता से आजादी मिल जाएगी या फिर हमारा भारतीय जन इतने प्रचंड व अपरिमित जोश से उठ खड़ा होगा कि उसके लिए संघर्ष करके स्वतंत्रता पा लेना बाएं हाथ के खेल जैसा हो जाएगा। आज भले ही हमारे पास आधुनिक ज्ञान–विज्ञान, उन्नत तकनीक व बेहतरीन अस्त्र–शस्त्र न हों लेकिन फिर भी यदि हम अपनी कल्पना से अपना वैभवशाली अतीत सिद्ध कर दें तो यह भी हमारे लिए कम गर्व की बात नहीं। हालांकि ऐसा सोचना भी हमारी निरी मूर्खता है। प्राचीन काल का गर्व हमें अपने अतीत के मोह में बांधता है और वास्तविकता से आंखें मूंद लेने को प्रेरित करता है। आज हम सच और झूठ का मूल्यांकन करना ही नहीं चाहते। अंधी राष्ट्रीयता और धर्मांधता ने हमारी बुद्धि और विवेक को नकटे पंख के कर्ता–धर्ताओं की तरह हर लिया है। यह दृष्टिहीन वर्ग आज चारों ओर बढ़ता ही जा रहा है। मैंने ऐसे कई लोगों को देखा है जो बाहर तो धर्मात्मा के रूप में पूजे जाते थे लेकिन घर के भीतर असल में एक घृणित, असंयत और स्वार्थी जीवन जीते थे। अध्यात्म का यह बाजार हम सभी को उन्मत कर रहा है।

धर्म आजकल एक बाजार में परिवर्तित हो गया है। अयोध्या के एक महात्मा ने अपने बारे में झूठी अफवाह फैलाई कि भगवान राम ने स्वयं आकर उनका पाणिग्रहण (विवाह) किया जिसके बाद वे उनकी प्रियतमा हो गए। इधर एक और मूर्खता पर जोर दिया जा रहा है और वह है भूत–प्रेत, जादू–टोना को वैज्ञानिक सिद्धांतों के आधार पर सिद्ध करना। इस तरह जितना हमारा इतिहास पुराना है उसी अनुपात में हमारी मूर्खता भी बढ़ती चली गई है। हमारे यहां काठ के घोड़े उड़ना, मुख से भयानक ज्वाला प्रकट करना, आग्नेयास्त्र जैसे तमाम दिव्यास्त्र हमारी झूठी कल्पना की उपज हैं। लेकिन अब तो जैसे शिक्षित वैज्ञानिक वर्ग भी इससे अछूता नहीं रह पाया है। नोबेल पुरस्कार विजेता ऑलिवर जैसे लोग भी आज भूत–प्रेतों पर पुस्तकें लिख रहे हैं। फलित ज्योतिष पर इधर पढ़े–लिखे लोग भी विश्वास करने लगे हैं और 'सर्चलाइट' जैसे पत्र इसके लिए विशेष पृष्ठ दे रहे हैं। आखिर पूना में लाखों रुपए खर्च करके आधुनिक वैज्ञानिक यंत्र रखने की क्या जरूरत है? ज्योतिषियों को सरकार से मिलकर उसे मनाना चाहिए कि वे आधुनिक वैज्ञानिक संस्थानों, यंत्रों व विशेषज्ञों को हटाकर मौसम, महामारी, आपदा की पूर्व भविष्यवाणी के लिए ज्योतिषियों को नियुक्त कर दे जिससे देश के अमूल्य संसाधन की बचत हो।

एक महाराज इसी साल बादशाह की गद्दी देखने विलायत जाना चाह रहे थे लेकिन पीछे कुछ अनिष्ट होने की आशंका थी तो उन्होंने एक ज्योतिषी से संपर्क किया। जब ज्योतिषी ने तमाम ग्रहों–नक्षत्रों की गणना करके उनकी यात्रा को निष्कंटक बता दिया तो न केवल वे बहुत प्रसन्न हुए बल्कि उसे पांच हजार रुपये भी दे दिए। इस तरह देखा जाए तो हमारे मिथ्या विश्वासों की कोई गिनती नहीं है। जाति–व्यवस्था में हमारा विश्वास ऐसी ही एक और बेड़ी है जिससे हम मुक्त नहीं होना

चाहते। यहां तक कि हमारे राष्ट्रीय नेता भी इसका मोह छोड़ने को तैयार नहीं है। लेकिन अधिकांश इस बात को समझ चुके हैं कि राष्ट्रीयता और जाति–व्यवस्था साथ–साथ नहीं चल सकते। बिना जाति से ऊपर उठे राष्ट्र की सच्ची सेवा संभव नहीं है। अन्यथा किसी पद पर पहुंच जाने पर राष्ट्र से पहले जाति की सेवा ही मन–मस्तिष्क पर हावी रहेगी। मंत्रियों को इस बारे में खास तौर पर सावधान रहने की जरूरत है अन्यथा जाति के चक्कर में पड़ना उन्हें अपयश का ही भागी बनाएगा। इन नेताओं व मंत्रियों को चाहिए कि अपने परिवार के युवाओं का विवाह जाति–पांति त्यागते हुए कराएं और समाज में प्रमाणित करें कि वे सचमुच जाति–व्यवस्था को नहीं मानते। इससे लोक व समाज में उनके प्रति विश्वास बढ़ेगा।

टिप्पणी

आज हमें उपरोक्त सभी प्रकार की मानसिक गुलामियों से एक–एक करके आजाद होने की आवश्यकता है। हमें एक मानसिक क्रांति की जरूरत है? हमें अपनी सभी रूढ़ियों, कुरीतियों, अंध–विश्वासों को ध्वस्त करते हुए नए पक्के महलों के निर्माण की जरूरत है।

1.3.3 'दिमागी गुलामी' निबंध का व्याख्यांश

1. शायद दुनिया हमारे अधिकारों की प्राचीनता ..... आधा जोश उसी की प्रशंसा में खर्च हो जाए।

प्रसंग– उपरोक्त गद्यांश राहुल सांकृत्यायन के प्रसिद्ध लेख 'दिमागी गुलामी' से लिया गया है जिसमें लेखक ने भारत की रुग्न मानसिकता को तीव्रता से प्रखरता के साथ उजागर किया है।

व्याख्या– लेखक ने इस गद्यांश में कहा है कि हम अपनी पुरातन संस्कृति और मिथकीय आविष्कारों के प्रति इस कदर आसक्त हैं कि लगता है हमारे भीतर यह मान्यता घर कर गई है कि हम इसी से दुनिया को जीत लेना चाहते हैं। संभव है कि दुनिया हमारी इसी पुरातनता की भव्यता के प्रभाव से हमें दासता की बेड़ियों से मुक्त हो जाने दो। अथवा यह भी हो सकता है कि इससे हमारे युवा वर्ग में इतना आत्मसम्मान व क्षमता जागृत हो जाए कि वे क्रांति से इस दासता के कुचक्र को पलट दें। भारत विश्व की तमाम सभ्यताओं का जनक है, यह बोध हमारे युवाओं को जागृत करने तथा उनके अभिमान को उठाने के लिए पर्याप्त है। यह अहसास संभव है कि उन्हें बड़े से बड़े आत्मबलिदान के लिए प्रेरित कर सकता है। तब भारतीय दासता के दिन और अधिक कहां टिकने वाले हैं? लेखक ने इस ओर व्यंग्य से इशारा करते हुए स्पष्ट किया है कि अतीत के झूठे व निराधार अभिमान से न तो दासता की कालिख छुड़ाई जा सकती है और न ही सुनहरे भविष्य की ओर आगे बढ़ा जा सकता है।

आज हमारे पास गर्व करने लायक वर्तमान में कुछ भी नहीं है, तो इसकी कमी हम अतीत की काल्पनिक डींगे मारकर कभी नहीं पूरी कर सकते। आज हमारे पास न आधुनिक कल–कारखाने व मशीनें हैं न ही आत्मरक्षा के लिए सुविकसित हथियार; किन्तु तब भी हम अपने पुराणों व धर्मग्रंथों की कपोल कल्पित कथाओं में आविष्कारों को देख सुनकर प्रसन्न होते रहते हैं और सोचते हैं कि इतना ही हमारे लिए पर्याप्त है। हमारी यह सोच न प्रवृत्ति हमें आगे बढ़ने से रोक रही है।

टिप्पणी

विशेष–

- इस गद्यांश में भारतीय मानसिकता की गुलाम, पिछलग्गू व अवैज्ञानिक सोच पर व्यंग्यात्मक प्रहार किया गया है।
- व्यंग्यात्मक भाषा का सुंदर प्रयोग है जो पिछड़ी सोच पर गहरा कुठाराघात करती है।
- भाषा का सहज व सरल प्रयोग है तथा उसका तीव्र प्रवाह भाषा के विषय को बखूबी अभिव्यंजित करता है।

2. हम लोगों को मिथ्या विश्वास क्या एक–दो हैं ..... उनकी यात्रा में जरूर कुछ हाथ बंटाएंगे।

प्रसंग– प्रस्तुत गद्यांश राहुल सांकृत्यायन के प्रसिद्ध निबंध 'दिमागी गुलामी' से लिया गया है जिसमें उन्होंने भारतीय मानसिकता की रूढ़िवादी व पुरातनवादी सोच पर कड़ा प्रहार किया है।

व्याख्या– लेखक ने भारतीय लोगों के मिथ्या विश्वासों का जिक्र करते हुए बताया है कि हमारे झूठ–मूठ के अंधविश्वासों की कोई गिनती ही नहीं है। हम जिधर भी सर उठाकर देखते हैं, यही पाते हैं कि हमारा जीवन झूठे आडंबरों, विश्वासों व मान्यताओं से बुरी तरह घिरा हुआ है और हम उससे चाहकर भी बाहर नहीं निकल पा रहे हैं, लेखक के अनुसार इनकी संख्या इतनी है कि सबका इस छोटे से लेख में जिक्र कर पाना भी संभव नहीं है। लेकिन यह कितनी विडंबनापूर्ण बात है कि एक ओर तो हम अपने सर–माथे इन अंधविश्वासों को उठाए चलते जाना चाहते हैं तो वहीं दूसरी ओर तेजी से विकास भी करना चाहते हैं। उनकी यह सोच मूर्खतापूर्ण है कि इस विकासयात्रा में धर्मांधता किसी तरह हाथ बंटा सकती है। यह मानवीय विकास सिर्फ ज्ञान और विज्ञान के सहारे ही प्राप्त किया जा सकता है।

लेखक की ये पंक्तियां हालांकि स्वाधीनता आंदोलन के समय लिखी गई थी किंतु आज यदि हम इन्हें अपने समकाल में भी पढ़ें तो पूरी तरह समीचीन व प्रासंगिक पाएंगे। हम आज भी धार्मिक आडंबरों व अंधविश्वासों में जकड़े हुए हैं। हम ईश्वर की आराधन–अर्चना करके सूखे के संकट को हल करने की कोशिश करते हैं, ग्रह–शांति का व्यापार आज करोड़ों–अरबों में फल फूल रहा है, अखबारों में पंचांग, शुभ–मुहूर्त और राशिफल का प्रकाशन होता है, गाड़ियों घरों की सुरक्षा के लिए नींबू व मिर्च की मालाएं लटकाई जाती हैं, छोटे–मोटे कामों के लिए भी शुभ–मुहूर्तों की खोज की जाती है। आज 21वीं सदी में जैसे लेखक की लिखी ये पंक्तियां और भी अधिक प्रासंगिक हो उठी हैं। हमें अंधविश्वास और धर्मांधता की इस कूपमंडूकता से यथाशीघ्र मुक्त होने की आवश्यकता है।

विशेष–

- भारतीय मानस की रूढ़िवादी, धर्मांध व अवैज्ञानिक सोच पर इस गद्यांश में कड़ा प्रहार किया गया है तथा भारतीय लोगों की विकास व उन्नति की चाह की विडंबना पर कड़ा प्रहार किया गया है।

टिप्पणी

- भाषा व्यंग्यात्मक है तथा पाठक के हृदय पर अपना अर्थपूर्ण प्रभाव छोड़ने में सक्षम है।
- भाषा का सहज व सरल प्रयोग है तथा उसका तीव्र प्रवाह भाषा के विषय को बखूबी अभिव्यंजित करता है।

3. आंख मूंदकर हमें समय की प्रतीक्षा ..... हमें नये सिरे से नये महल बनाने के लिए नींव डालनी पड़ेगी।

प्रसंग– यहां प्रस्तुत गद्यांश राहुल सांकृत्यायन के प्रसिद्ध निबंध 'दिमागी गुलामी' से लिया गया है जिसमें लेखक ने भारतीय मानसिकता की गुलाम व पिछड़ी स्थिति पर कठोर प्रहार किया है।

व्याख्या– लेखक के अनुसार अब हमें अपनी मानसिक गुलामी की जंजीरों से अविलंब मुक्त होने की आवश्यकता है। अब इसके लिए और अधिक प्रतीक्षा नहीं की जा सकती क्योंकि वक्त बहुत तेजी से आगे बढ़ रहा है। यूरोप सहित समूचा पश्चिम ज्ञान और विज्ञान के सहारे तेजी से प्रगति के पथ पर आगे बढ़ रहा है। वहां आविष्कार पर आविष्कार हो रहे हैं; निरंतर नई खोजें हो रही हैं जो मनुष्य को चांद–तारों की ओर ले जाने में सक्षम होंगी। हमें धर्मांधता, मिथ्या विश्वास और रूढ़ियों से मुक्त होकर ज्ञान और विज्ञान की राह पकड़नी होगी। निश्चय ही इस क्रम में हमें अपने सुरक्षित वातावरण से बाहर निकलने का कष्ट व जोखिम भी उठाना होगा। अतः अब बाहरी क्रांति से काम नहीं चलेगा। हमें मानसिक व बौद्धिक स्तर पर क्रांति की जरूरत है। हमें ज्ञान व विज्ञान के सहारे अपनी सभी रूढ़ियों व अंधविश्वासों के जाल को काट फेंकने की जरूरत है। यह क्रांति उस ताकतवर आग की भांति है जो पूरे गांव भर को जलाकर राख कर देने की क्षमता रखती है। यहां गांव से अभिप्राय उस समूची व्यवस्था से है जो पुरानी सोच, रूढ़ियों, अंधविश्वासों व मिथ्या अभिमानों के आधार पर टिकी हुई है। लेखक के अनुसार जब तक हम इसे पूरी तरह नष्ट नहीं कर देते तब तक ज्ञान व विज्ञान पर आधारित नव समाज का सृजन नहीं कर सकते और न ही देश को विकास, उन्नति व प्रगति के पथ पर आगे ले जा सकते हैं।

विशेष–

- इस गद्यांश में पुरानी रूढ़ियां, अंधविश्वासों, मान्यताओं व मिथ्या अभिमानों की व्यवस्था पर मानसिक–बौद्धिक क्रांति द्वारा चोट पहुंचाने तथा ज्ञान–विज्ञान के साथ राष्ट्र व समाज को उन्नति के पथ पर ले जाने का आह्वान है।
- भाषा में व्यंग्यात्मक का प्रभाव है तथा वह पाठक के मन–मस्तिष्क पर अपना प्रभाव छोड़ने में सक्षम है।
- भाषा का सहज व सरल प्रयोग है तथा उसका तीव्र प्रवाह भाषा के विषय को बखूबी अभिव्यंजित करता है।

1.3.4 'दिमागी गुलामी' निबंध का समीक्षात्मक अध्ययन

यदि हम लेखक की तमाम विधाओं की बात करें तो उनमें निबंध एक ऐसी विधा है जो पूरी तरह से वैयक्तिक भावों की विशुद्ध अभिव्यक्ति है। यहां तक कि यह कहना गलत न होगा कि यदि हम लेखक के वास्तविक व्यक्तित्व को उससे बिना मिले जानना चाहते

टिप्पणी

हैं तो उसके लिखे निबंध इसका एक श्रेष्ठ माध्यम हो सकते हैं। कुछ लोग लेख व निबंध को एक ही विधा मानकर चलते हैं जो कि निबंध की गहरी भावभूमि को देखते हुए अनुचित ही है। निबंध के कई महत्वपूर्ण तत्व हैं जो उसे निबंध बनाते हैं। राहुल सांकृत्यायन के उक्त निबंध 'दिमागी गुलामी' की समीक्षा आइये इन्हीं आधारों पर करते हैं–

1. **विषय प्रतिपादन**– पूरे निबंध में एक ही केंद्रीय विषय आद्योपांत व्याप्त रहता है। एक वृक्ष की भांति उसकी जड़ें, शाखाएं–प्रशाखाएं भले ही दूर तक व्याप्त हों लेकिन उसका मूल तना भूमि के ऊपर व नीचे दोनों ओर उसे एक स्थिर आधार प्रदान करता है, जिसके अभाव में निबंध गुल्म–लताओं की भांति बेवजह फैलकर उलझ जाता है। इस दृष्टि से देखा जाए तो यह एक मजबूत निबंध है जो अपने मूल विषय से रत्ती भी नहीं भटकता। लेखक ने जिस 'दिमागी गुलामी' को अपने निबंध के मूल में रखा है उसका शायद ही ऐसा कोई पक्ष हो जो उनसे छूटा रह गया हो। उन्होंने भारतीय संदर्भों में मानसिक अधीनता की पड़ताल ऐतिहासिकता में भी गहरे पैठकर की है तो आने वाले वैज्ञानिक युग में भी उसकी भीषण कमियों को रेखांकित किया है। छात्रों, नवयुवाओं से लेकर राजनेताओं, बुद्धिजीवियों व वैज्ञानिकों तथा सभी के दृष्टिकोण से इन मानसिकता को परखने का गहरा प्रयास हमें इस निबंध में नजर आता है। समाज के बाह्याचारों–आडंबरों, मिथ्या प्रवंचनाओं, अंध–विश्वासों आदि के बाहक धार्मिक नेताओं व धर्म–गुरुओं की तो अच्छी खबर इस निबंध में ली ही गई है। साथ ही उन मूढ़ समाज धारियों की भी कटु व्यंग्यात्मक आलोचना इस निबंध में की गई हो जो अपनी स्वयं की बुद्धि, चेतना व विवेक का प्रयोग किए बिना आंखें मूंदे उनकी ओर भागे चले जा रहे हैं। इस प्रकार यह निबंध अपने विषय को आद्योपांत इतना गहराई से जकड़े रखता है कि कहीं भी तनिक भटकने नहीं पाता और यही उस निबंध के प्रभाव को कई गुणा बढ़ा देता है।
2. **भाव तत्व**– जैसा कि हमने आरंभ में ही चर्चा की निबंध में भाव–पक्ष अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है अन्यथा निबंध एक नीरस लेख भर बनकर रह जाएगा। निबंध लेखक की वास्तविक भावपूर्ण अभिव्यक्ति है जिसमें उसके निज की व्यथा, चिंता, उत्साह, आनंद खुलकर व्यक्त होते हैं। 'दिमागी गुलामी' निबंध को ध्यान से पढ़ने पर ऐसा प्रतीत होता है मानो लेखक ने अपनी सारी झुंझलाहट बिना किसी लाग–लपेट के व्यक्त कर दी है, वह भी ऐसी भाषा में जिसमें किसी प्रकार का कोई आवरण नहीं है। लेखक व बुद्धिजीवी अपने आसपास के समाज से बहुत अधिक प्रभावित होता है और जब उसे वहां किसी प्रकार का अनुचित व्यवहार नजर आता है तो इससे उसे गहरा कष्ट पहुंचता है। लेखक की अपने परिवेश व समाज के फलस्वरूप जन्मने वाली कुंठा उसे जनहितवादी साहित्य रखने को प्रेरित करती है। लेखक ने अपने आसपास मानसिक गुलामी का जो व्यापक परिदृश्य महसूस किया है वह उसे राष्ट्र के विकास में चिंताजनक प्रतीत होता है। किंतु मुट्ठीभर प्रगतिशील लेखकों व बुद्धिजीवियों का कुछ खास असर इस परिदृश्य पर पड़ता दिखाई नहीं देता। यही कारण है कि पूरे निबंध में यह बेबस झुंझलाहट व्याप्त दिखाई देती है जिसे लेखक की रोषपूर्ण व तीक्ष्ण व्यंग्यात्मक

भाषा में बखूबी महसूस किया जा सकता है। यही व्यंग्यात्मक भाव विधान इस निबंध के प्रभाव को कई गुणा बढ़ा देनेवाला सिद्ध हुआ है। निःसंदेह यह पाठक की मानस भूमि में गहरे व्याप्त गुलामी की मानसिकता पर कड़ा प्रहार करता है।

टिप्पणी

3. **भाषा शैली**– 'दिमागी गुलामी' की भाषा सहज संप्रेषणीय है। यह सहज संप्रेषणीयता ही इसकी सबसे बड़ी विशेषता है जिसे हिंदी का आम पाठक भी बड़ी सहजता से ग्रहण कर सकता है। इस निबंध की भाषा शैली पर निम्नलिखित आधारों पर चर्चा की जा सकती है।

   – **सहज भाषा**– इस भाषा की सहजता इसके पाठकवर्ग की सीमा को बढ़ाने वाली है। साधारण हिंदी समझने वाले पाठक भी इसे सरलतापूर्वक ग्रहण कर सकते हैं, हालांकि कुछेक स्थानों पर तत्समनिष्ठ शब्द अपवाद स्वरूप भी नजर आते हैं लेकिन निबंध के व्यंग्यात्मक प्रभाव को निर्मित करने के लिए उन पदों का प्रयोग आवश्यक सा प्रतीत होता है। अंग्रेजी, अरबी व फारसी आदि अनेक भाषा के शब्दों का लेखक ने यथोचित प्रयोग किया है।

   – **व्यंग्यात्मक भाषा**– निबंध की भाषा अति–व्यंग्यात्मक है। अधिकांश बातें व तर्क व्यंजना के साथ प्रस्तुत किए गए हैं। इस निबंध की सबसे बड़ी विशेषता इसकी व्यंग्यात्मक भाषा ही है। उदाहरण के लिए देश में ज्योतिषियों की स्थिति पर लेखक की टिप्पणी बहुत ही मारक है। वे ज्योतिष को विज्ञान न मानते हुए खारिज नहीं करते बल्कि उसका उपहास उड़ाते हुए बखूबी यह सिद्ध करते हैं कि इस तरह की आधारहीन व तर्कहीन बात को हमें कतई नहीं अपनाना चाहिए।

   – **प्रवाह व सुसंबद्धता**– इस निबंध की भाषा में आद्योपांत एक वेगात्मक प्रवाह नजर आता है। यद्यपि निबंध में काफी लंबे–लंबे वाक्यों का प्रयोग किया गया है तथापि पढ़ते समय उनके प्रवाह में कहीं कोई व्यवधान नहीं महसूस होता। सभी वाक्य एक के बाद एक ऐसे सुसंबद्ध रूप से रचे गए प्रतीत होते हैं जिससे वे अपने केंद्रीय कथ्य को बारंबार रेखांकित व व्याख्यायित करते चले जाते हैं। गद्यांशों में व्यंग्य के साथ–साथ तार्किकता की मजबूती देखते ही बनती है। यही कारण है कि प्रगतिशील मुद्दों पर लिखे गए निबंधों में यह एक कालजयी निबंध के रूप में याद किया जा सकता है।

   – **स्वच्छंदता**– निबंध लेखक की स्वच्छंद अभिव्यक्ति होती है जहां वह पूरी स्वतंत्रता से अपने मन के भाव व विचार अभिव्यक्त करता है। 'दिमागी गुलामी' में लेखक ने अपने विचार पूरी स्वच्छंदता से बेलौस अंदाज में व्यक्त किए हैं। ऐसा करते हुए उनपर अभिव्यक्ति के सीमांकन का कोई प्रभाव नजर नहीं आताः यदि हम निबंध में स्वच्छंदता के गुण को नजरअंदाज कर दें तो वह कृत्रिम ही बनकर रह जाएगा। लेखक की पारदर्शी व ईमानदार भावाभिव्यक्ति ने इस निबंध की प्रामाणिकता में वृद्धि करने का काम किया है।

टिप्पणी

यात्रावृत्त लेखन में राहुल जी का स्थान अन्यतम है, पर निबंध लेखन में हमें राहुल जी के वैचारिक सरोकारों का अधिक समग्रता में परिचय मिलता है। उनका अध्ययन जितना व्यापक था, साहित्य–सृजन भी उतना ही विराट एवं विपुल था। संस्कृत के प्रकांड विद्वान होकर भी उन्होंने जनसाधारण की भाषा में लिखा। राहुल जी की भाषा समग्रतः तत्सम शब्दावली से युक्त खड़ी बोली हिन्दी है, जिसकी छटा हमें पठित निबंध 'दिमागी गुलामी' में भी दिखायी पड़ती है।

अपनी प्रगति जांचिए

3. 'वोल्गा से गंगा' राहुल सांकृत्यायन की एक श्रेष्ठ रचना है। यह किस विधा के अंतर्गत रखी जाती है?

   (क) दर्शन (ख) जीवनी

   (ग) यात्रा साहित्य (घ) कहानी संग्रह

4. निम्न में से कौन उत्तर द्विवेदी युग के यात्रा–साहित्य लेखक नहीं हैं?

   (क) सत्यदेव परिव्राजक (ख) जवाहरलाल नेहरू

   (ग) राहुल सांकृत्यायन (घ) भारतेन्दु हरिश्चंद्र

1.4 वर्ण विचार (स्वर–व्यंजन, वर्गीकरण, उच्चारण स्थान)

वे मूल ध्वनियां वर्ण कहलाती हैं, जिनके खंड न हो सकें। जैसे, पुस्तक में– प्+उ+स्+त्+अ+क्+अ– इन सात ध्वनियों में किसी का भी खंड नहीं हो सकता, अतः ये वर्ण हैं।

वर्णमाला– किसी भाषा के समस्त वर्ण–समूह को वर्णमाला कहा जाता है। हिंदी भाषा की वर्णमाला में जो वर्ण हैं, उन्हें स्वर और व्यंजन दो वर्ण–समूहों में विभाजित किया गया है।

स्वर– वे वर्ण जो अन्य वर्णों की सहायता के बिना बोले जाते हैं वे स्वर कहलाते हैं। स्वर वर्ण निम्नलिखित हैं–

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ए ऐ ओ औ – (11)

इनमें से आ (अ+अ), ई (इ+इ), तथा ऊ (उ+उ) दीर्घ स्वर कहलाते हैं और ए (अ+इ), ऐ (अ+ए), ओ (अ+उ), तथा औ (अ+ओ) संयुक्त स्वर कहलाते हैं।

व्यंजन– वे वर्ण जिनका उच्चारण स्वरों की सहायता के बिना भलीभांति नहीं होता, वे व्यंजन कहलाते हैं। निम्नलिखित वर्ण व्यंजन हैं–

स्पर्श	क् ख् ग् घ् ङ्	(क वर्ग)
	च् छ् ज् झ् ञ्	(च वर्ग)
	ट् ठ् ड् ढ् ण्	(ट वर्ग)
	त् थ् द् ध् न्	(त वर्ग)
	प् फ् ब् भ् म्	(प वर्ग)
	य् र् ल् व्	(अंतःस्थ)
	श् ष् स् ह्	(ऊष्म) (33)

इसके अतिरिक्त हिंदी में छः चिह्नों का प्रयोग होता है–

अयोगवाह– अनुस्वार (ं) और विसर्ग (ः)– ये दो चिह्न अयोगवाह कहलाते हैं।

अनुस्वार और विसर्ग का भी स्वरों के बिना प्रयोग नहीं होता, अर्थात स्वरों की सहायता से ही उनका उच्चारण हो सकता है।

अनुस्वार– स्वर के ऊपर जो बिंदी लगायी जाती है, उसे अनुस्वार कहा जाता है। जैसे– अंग, कंघी, चंद्रमा, टंकार, तंदूर, पंखा।

अनुनासिक– अनुस्वार का कोमल रूप अनुनासिक कहलाता है। जैसे– आंखें, अंगूठी, हंसना।

विसर्ग– स्वर से परे जो बिदियां लगायी जाती हैं, वे विसर्ग कहलाती हैं। जैसे– अतः, प्रातः, छः। विसर्ग का उच्चारण आधे 'ह्' जैसा होता है।

निम्न बिंदु– फारसी तथा अंग्रेजी से हिंदी में आये कुछ शब्दों तथा हिंदी के भी कुछ शब्दों के कुछ वर्णों की मूल ध्वनियों का उच्चारण कोमल बनाने के लिए उनके नीचे एक बिंदी लगायी जाती है, इसे निम्न बिंदु कहते हैं। जैसे–

क़	ख़	ग़	ज़
(क़लम)	(ख़ाकी)	(ग़म)	(कागज़)
फ़	ड़	ढ़	
(फ़ासला)	(पड़ा)	(पढ़ी)	

अर्धचंद्र– हिंदी में अंग्रेजी के कुछ शब्दों को लिखते हुए उनके कुछ स्वरों पर (ॅ) ऐसा चिह्न लगाया जाता है। इसे अर्धचंद्र (अर्धवृत्त) कहते हैं, जैसे– डॉक्टर, कॉलिज।

इस चिह्न से 'आ' तथा 'ओ' के बीच की ध्वनि सूचित होती है।

हल् का चिह्न– स्वर से रहित व्यंजनों का ठीक रूप जिस चिह्न से सूचित होता है, उसे हल् का चिह्न कहते हैं, जैसे– महान्, विद्वान्, राजन्, ओ3म्, चित् आदि।

वर्णमाला और लिपि

किसी भाषा के समस्त वर्णों के समूह को वर्णमाला कहते हैं। वर्णमाला का लिखित रूप लिपि कहलाता है।

टिप्पणी

टिप्पणी

लिपियां अनेक हैं, जैसे– देवनागरी लिपि, रोमन लिपि, अरबी लिपि इत्यादि।

हिंदी भाषा देवनागरी लिपि में लिखी जाती है। इस समय देवनागरी लिपि का प्रयोग संस्कृत, हिंदी तथा मराठी में लिखने में होता है। नेपाली, गढ़वाली के लिए भी देवनागरी लिपि ही काम आती है। देवनागरी में पंजाबी भाषा के भी कुछ ग्रंथ लिखे मिलते हैं। कहा जाता है कि देवनागरी लिपि संसार की सब लिपियों से श्रेष्ठ है क्योंकि इसमें हर प्रकार की ध्वनि को प्रकट करने की शक्ति है तथा जैसा लिखा हो वैसा बोला जाता है और जैसा बोला जाता है, वैसा लिखा जाता है। अंग्रेजी (रोमन लिपि) में But बट है और Put पुट। देवनागरी लिपि में यह बात नहीं है।

लिपि पर विचार करते समय लिपि में आबद्ध करके व्यक्त की जाने वाली वाणी का प्रसंग भी आवश्यक है।

मुख द्वारा शब्द बोलकर अपने भाव या विचार प्रकट करने को वाणी कहते हैं और वाणी वर्णों का समूह है। वर्ण वह मौखिक ध्वनि है जिसके खंड न हो सकें। वर्ण केवल मुख और कान का विषय है। इन वर्णों के रेखा आदि से बनाए हुए चिह्नों को अक्षर कहते हैं। इन अक्षरों का समूह ही लिपि है, जो आंख और हाथ का विषय होते हैं (हाथ से लिखे जाते और आंखों से पढ़े जाते हैं)।

प्राचीन काल में भारत की प्रधान भाषा संस्कृत थी और प्रधान लिपि ब्राह्मी थी। विद्वानों के प्रयास से धीरे–धीरे इस लिपि को शुद्धतापूर्वक लिखने के लिए सब प्रकार से समर्थ हो बनाया गया, अर्थात् उसमें प्रत्येक वर्ण के लिए केवल एक अक्षर निश्चित हो गया और प्रत्येक अक्षर केवल एक वर्ण का द्योतक हो गया। न कोई ऐसा अक्षर रहा, जिसका द्योतक वर्ण भाषा में न मिले और न कोई ऐसा वर्ण रहा जिसका सूचक अक्षर लिपि में न मिले।

जिस तरह देश और काल के प्रभाव से संस्कृत भाषा शनैः– शनैः हिंदी, बंगला, उड़िया, मराठी, गुजराती, पंजाबी आदि के रूप में आ गयी, इसी प्रकार ब्राह्मी लिपि ने बदलते–बदलते देवनागरी, बंगला, उड़िया, द्राविड़ी, गुजराती, मौड़ी, कैथी, शारदा, टांकरी, गुरुमुखी, मुंडी (महाजनी) आदि का रूप धारण कर लिया।

भाषा के रूप–परिवर्तन के साथ उसकी वर्ण–संख्या में पर्याप्त न्यूनता हो जाती है। कई वर्णों का लोप हो जाता है; कुछ वर्ण नये आ जाते हैं, शेष वर्ण वैसे ही रहते हैं। इसके विपरीत लिपि– परिवर्तन से अक्षरों के आकार में तो भेद (अंतर) पड़ जाता है, परंतु उनकी संख्या प्रायः वही रहती है, जो पहले थी।

हिंदी (खड़ी बोली) में बहुत से ऐसे वर्ण हैं, जिनको देवनागरी लिपि द्वारा हम प्रकट नहीं कर सकते। जैसे– 'चैन' के 'ऐ' का उच्चारण 'चैत्र' के उच्चारण से भिन्न है। इसी प्रकार 'गौना' के 'औ' का उच्चारण 'गौण' के 'औ' के उच्चारण से भिन्न है। इस सूक्ष्म भेद को प्रकट करने के लिए नागरी लिपि में कोई साधन नहीं। श और ष का उच्चारण समान है। ऋ का उच्चारण रि के समान ही है। ज्ञ का उच्चारण ग्य किया जाता है जबकि वास्तव में ज्ञ–ज्+अ का द्योतक है।

टिप्पणी

इसी तरह के और बहुत से स्थल हैं जहां नागरी लिपि हिंदी के उच्चारण को पूर्णतया प्रकट नहीं करती।

इनके अतिरिक्त हिंदी (खड़ी बोली) में बहुत से अंग्रेजी और अरबी–फारसी शब्द प्रयुक्त होते हैं। उनमें कुछ वर्णों के उच्चारण को प्रकट करने के लिए, उनके नीचे बिंदु लगा दिया जाता है या ऊपर अर्धचंद्र लगाकर उन्हें प्रकट किया जाता है। लेकिन कई के लिए अभी तक कोई संकेत नहीं बना। उदाहरणतः मराठी ळ के उच्चारण के लिए नागरी लिपि में कोई साधन नहीं है।

इसी प्रकार भारत की अन्य भाषाओं– पंजाबी, बंगाली, गुजराती, मराठी आदि को नागरी लिपि में लिखने के लिए कुछ अन्य संकेतों के सृजन की आवश्यकता है।

देवनागरी की श्रेष्ठता इसके अक्षरों के क्रम के कारण है। यह क्रम वास्तव में संस्कृत की वर्णमाला के वर्णों का है। संस्कृत– वर्णमाला के वर्णों का क्रम संसार–भर की उपलब्ध पुरानी और नयी सभी वर्णमालाओं में श्रेष्ठ है। इस बात की प्रशंसा यूरोप के समग्र विद्वानों ने की है। इस बात को ध्यान में रखकर हम देवनागरी को सर्वोत्तम लिपि कह सकते हैं।

नागरी की प्रतियोगी लिपि है, रोमन लिपि (अंग्रेजी भाषा इसी में लिखी जाती है)।

नागरी तथा रोमन की तुलना निम्नलिखित दृष्टिकोणों से होनी चाहिए– (1) लिपि में अक्षरों का क्रम, (2) अक्षरों के नाम, (3) अक्षरों की संख्या, (4) अक्षरों के वैकल्पिक रूप, (5) अक्षरों की आकृति में आंतरिक समानता, (6) अक्षरों की लेखनगति, (7) अक्षर कितनी जगह घेरते हैं, (8) लिपि के प्रचार का क्षेत्र, (9) लिपि में विद्यमान साहित्य, (10) टाइप और प्रिंटिंग की सुविधा, (11) मिश्रित रूप, (12) इटालिक, (13) द्रुत लिपि (शार्ट हैंड)।

1. **अक्षर क्रम**– नागरी अक्षर क्रम सर्वोत्तम है क्योंकि यह वर्णों की उच्चारण विधि के अनुसार है। जैसे– पहले स्वर आते हैं (उनमें भी पहले ह्रस्व और फिर दीर्घ)– उनके पश्चात् व्यंजन आते हैं। वे भी कंठ, तालु आदि स्थानों के क्रम से रखे गये हैं, फिर (क वर्ग से प वर्ग तक) प्रत्येक वर्ग में अघोष, अल्पप्राण, महाप्राण, घोष, अल्पप्राण तदनंतर नासिक्य।

   रोमन लिपि का अक्षर क्रम न वर्णोच्चारण के अनुसार है और न ही अक्षरों की आकृति के अनुसार। रोमन का यह क्रम सर्वथा अनियमित है।

2. **अक्षर–नाम**– देवनागरी अक्षरों के नाम वही हैं जो उनके उच्चारण हैं। रोमन लिपि के अक्षरों का नाम कुछ है और उच्चारण कुछ, जैसे–रोमन लिपि में ए (उच्चारण 'अ'), डब्ल्यू (उच्चारण 'व') इत्यादि।

3. लिपि का एक गुण यह बताया गया है कि उसमें उतने ही अक्षर होने चाहिए जितने उस भाषा में वर्ण हैं जिसके लिए वह लिपि काम में आती है क्योंकि सब भाषाओं की वर्ण– संख्या एक समान नहीं होती, इसलिए स्पष्ट है कि एक भाषा की लिपि दूसरी भाषा के काम नहीं आ सकती लेकिन व्यवहार में एक ही लिपि

कई–कई भाषाओं में काम आती है। ऐसा करने में दूसरी भाषा के जो वर्ण किसी लिपि में प्रकट नहीं होते उनके लिए अक्षरों में ऊपर नीचे बिंदु आदि लगाकर नये रूप बना लिये जाते हैं।

टिप्पणी

4. वैकल्पिक रूपों की दृष्टि से रोमन लिपि उत्तम है क्योंकि इसके अक्षरों के रूप सब अवस्थाओं में एक–से रहते हैं। इसके विपरीत नागरी लिपि में आगे–पीछे आने वाले अक्षरों के अनुसार अक्षरों का आकार बदल जाता है। जैसे– नागरी में शब्द के आदि में अथवा किसी दूसरे स्वर के परे स्वरों की आकृति पूर्ण होती है लेकिन व्यंजन के परे आने पर स्वर अपनी मात्रा की आकृति धारण कर लेते हैं। यथा– गयी, तीन, लीन। इसी प्रकार व्यंजनों के रूप भिन्न हो जाते हैं। जैसे– क+ष = क्ष। जिसमें क् और ष् के रूप का कोई आभास नहीं रहा। यही हाल र् का है– रजत्, अगर, अग्र, मार्ग आदि।
5. प्रायः सभी लिपियों में कई अक्षरों की आकृति आपस में इतनी मिलती–जुलती है कि जरा–सी असावधानी से लिखा हुआ लेख संदिग्ध हो जाता है। जैसे– नागरी में ख–रव, ए–रा, ध–घ, ध्य–ध्य, थ–ध, ब–व आदि।
6. अक्षरों की लेखन गति (स्पीड) लेखक के अभ्यास और उसके भाषा ज्ञान पर निर्भर करती है।
7. लिखने में कौन–सी लिपि कितनी जगह घेरती है, इस दृष्टि से तुलना करने पर नागरी लिपि रोमन की अपेक्षा कम जगह घेरती है। रोमन सबसे अधिक जगह घेरती है। इसका कारण है कि रोमन वर्णात्मक लिपि है।
8. इस समय समस्त भारत में नागरी या तत्संबंधी बांगला, उड़िया, गुजराती, पंजाबी गुरुमुखी, शारदा आदि लिपियां काम में आती हैं। दक्षिण की लिपियां भी देवनागरी से घनिष्ठ संबंध और समानता रखती हैं किंतु नागरी को छोड़कर अन्य लिपियां अपने–अपने प्रदेश तक ही सीमित रहती हैं। नागरी चिरकाल से भारत की मुख्य लिपि रही है।
9. नागरी लिपि में लिखा हुआ प्राचीन साहित्य प्रचुर मात्रा में मिलता है। यह बात भी नागरी की श्रेष्ठता, उपयोगिता और श्रेष्ठता की द्योतक है। लिखित ग्रंथों के अतिरिक्त नागरी में शिलालेख, ताम्रपत्र, ताम्रशासन भित्तिलेख आदि बहुत सामग्री मिलती है। नागरी के एक प्राचीन रूप के आधार पर तिब्बत की लिपि में बहुत साहित्य विद्यमान है। मंचूरिया, मंगोलिया आदि सुदूर देशों में अभी तक बालक नागरी अक्षर सीखते हैं। वहां दो या दो से अधिक अक्षरों के बने हुए बड़े सुंदर–सुंदर मोनोग्राम मिलते हैं। इस दृष्टि से भी नागरी का स्थान बहुत ऊंचा है।
10. टाइप और प्रिंटिंग की सुविधा नागरी और रोमन दोनों लिपियों को प्राप्त है। इनमें भी रोमन को अधिक सुविधा है, क्योंकि एक तो रोमन के अक्षरों की संख्या कम है और दूसरे उनका कोई वैकल्पिक रूप नहीं। यद्यपि प्रिंटर के टाइप–केस में

नागरी टाइप की संख्या रोमन की अपेक्षा दुगुनी–तिगुनी होती है, तथापि भारतीयों की दृष्टि में नागरी के मुकाबले में रोमन का आदर कम है।

टिप्पणी

11. रोमन के दो रूप हैं– 1. मिलित रूप, 2. पृथक रूप। मिलित रूप लिखने में काम आता है और पृथक रूप टाइप करने और प्रिंटिंग (मुद्रण) में। ध्यान से देखा जाये तो उनमें काफी अंतर है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक अक्षर के छोटे और बड़े (कैपिटल) दो आकार होते हैं। जिसने केवल एक ही रूप सीखा हो, उसके लिए दूसरे रूप को पढ़ना–लिखना आसान काम नहीं है। रोमन के मिलित रूप में यह गुण है कि इसका प्रत्येक अक्षर साथ वाले अक्षर के साथ मिलाकर लिखा जाता है। बार–बार कलम नहीं उठानी पड़ती। केवल आई (i) का डाट और (t) का डैश देने के लिए कलम उठाई जाती है। इस कारण रोमन को शीघ्रता से लिखा जा सकता है परंतु रोमन की एक लिपि नहीं बल्कि चार लिपियां छात्रों–छात्राओं को सीखनी पड़ती है, जबकि नागरी की केवल एक ही लिपि सीखनी पड़ती है।

    कुछ व्यक्ति शीघ्रता के निमित्त नागरी अक्षरों को भी मिलाकर लिखते हैं। यहां शिरोरेखा द्वारा मिलाने का तात्पर्य नहीं, बल्कि बिना कलम उठाए एक अक्षर के साथ अगले अक्षर को मिलाने का है लेकिन ऐसा करने में किसी समान नियम का पालन नहीं किया जाता, इस प्रकार यह मिलित लिपि व्यक्तिगत आकृति–भेद लिए रहती है। जिसे जैसी सुविधा हुई अक्षर का आकार बदल दिया। उर्दू के शिकस्ता और रोमन के मिलित रूप की भांति नागरी का कोई स्थिर परिनिष्ठित–निश्चित मिलित रूप नहीं है जिसमें व्यक्तिगत सूक्ष्म भेदों को छोड़कर स्थूलतया आकार की समानता पाई जाए।

12. इटालिक– जब लेखक अपने लेख में किसी शब्द या वाक्य पर विशेष बल देना चाहता है तो उसे मोटा लिख देता है या उसके नीचे लकीर डाल देता है ताकि पढ़ने वाले की दृष्टि अनायास ही उस शब्द या वाक्य पर पड़ जाए। छपाई के दौरान बहुधा यह प्रथा है कि उस शब्द या वाक्य को मोटा न करके टेढ़े टाइप में कम्पोज करते हैं। इस टेढ़े टाइप (की शैली) को 'इटालिक' कहते हैं। यह प्रथा अंग्रेजी से आयी है लेकिन नागरी में भी रोमन की देखादेखी इटालिक (टेढ़े टाइप) बना लिये गये हैं।

13. आजकल शीघ्रता के युग में सामान्य लिपि के अतिरिक्त एक विशेष लिपि की आवश्यकता है जिसके द्वारा सभा–समाज में वक्ता के भाषण को, संसद या विधान सभा की कार्यवाही को, अथवा कार्यालय में अधिकारी के कथन को उसके बोलते–बोलते लिखा जा सके। सामान्य लिपि से यह काम सिद्ध नहीं हो सकता क्योंकि उसकी लेखन गति (स्पीड) भाषण और वार्तालाप की गति से काफी अलग होती है। इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए द्रुतलिपि (शॉर्टहैंड) का आविष्कार हुआ है। अंग्रेजी में शॉर्टहैंड की कई शैलियां प्रचलित हैं जिनमें से पिटमैन की प्रणाली सबसे अधिक प्रसिद्ध है। हिंदी के लिए भी तीन–चार द्रुतलिपियां अब तक बनी हैं परंतु उनका प्रचार पर्याप्त परिमाण में नहीं हुआ है।

टिप्पणी

नागरी लिपि के अक्षर बहुत सुंदर हैं। भारत की प्रादेशिक लिपियां इससे मिलती–जुलती हैं। देवनागरी में सैकड़ों वर्षों से संस्कृत, हिंदी, मराठी आदि साहित्य लिखे मिलते हैं। हमारी लाइब्रेरियां इनसे भरी पड़ी हैं। पुराने सिक्कों, ताम्रपत्रों, ताम्रशासनों, शिलालेखों आदि पर नागरी लिपि बहुतायत से मिलती है। अमेरीका, रूस और यूरोप में भी जितना नागरी का प्रचार है, उतना अन्य किसी भारतीय लिपि का नहीं। स्वयं भारत में इसके बराबर दूसरी कोई लिपि इतनी व्यापक नहीं।

उच्चारण–स्थान

ध्वनि व उच्चारण

भाषा का अर्थ है– बोली। जब हम मन में सोचते हैं, तब भी भाषा का प्रयोग करते हैं, जैसे– हिमालय के बारे में सोचते हुए हिमालय, उसकी चोटियों, सड़कों, नदियों, झरनों, जंगल, पेड़ आदि के बारे में सोचते हैं। शब्दों के बिना अर्थात भाषा के अभाव में हम किसी वस्तु या व्यक्ति के विषय में सोच नहीं सकते परंतु वास्तव में भाषा व्यक्त वाणी को कहते हैं। बोलने वाला इस तरह बोले कि उसे सुनने वाला सुन सके। बोलने वाले के मुंह और स्वर–यंत्र द्वारा उत्पन्न की गयी कुछ आवाजें (ध्वनियां) ही भाषा हैं। किसी भी वस्तु से किसी भी तरह की कुछ ऐसी क्रिया हो, जिसे कानों से सुना जा सके, उसे ध्वनि कहते हैं।

प्रकृति में कई तरह की ध्वनियां होती हैं। पशु–पक्षी अपने मुंह से कई प्रकार की ध्वनियां करते हैं, जैसे– कौए का कांव–कांव, चिड़िया की चीं–चीं, कबूतर का गुटरगूं, मुर्गे का कुकड़ूकू इत्यादि। हवा की सन्–सन् ध्वनि, मेघों का गर्जन, झरने की झरझर ध्वनि भी ध्वनि है। मनुष्य भी अपने मुंह से सी–सी, ऊंह–ऊंह, चीं–चीं आदि कर सकता है परंतु यहां हमारा तात्पर्य उन ध्वनियों से नहीं है। हमारा प्रयोजन उन ध्वनियों से है जो मिलकर भाषा का रूप धारण करती है। इन्हें हम भाषायी ध्वनियां कहते हैं। प्रत्येक भाषा की अपनी– अपनी तथा भिन्न–भिन्न ध्वनियां होती हैं।

भौतिक विज्ञान में ध्वनि को एक प्रकंपन की प्रक्रिया माना गया है। कोई भी पदार्थ जब गति में होता है, तब ध्वनि करता है। विद्यालय में जब घंटे (घड़ियाल) पर लोहे या लकड़ी की हथौड़ी की चोट पड़ती है तब टन–टन की ध्वनि उत्पन्न होती है। उस समय यदि उस घड़ियाल को छूकर देखा जाए तो स्पष्ट पता चलता है कि उसमें कंपन, हलचल या गति हो रही है। इसी गति या प्रकंपन की लहर से ध्वनि उत्पन्न होती है। ऐसा ही प्रकंपन जब मानव शरीर की क्रिया से श्वास–प्रश्वास द्वारा सार्थक रूप से किया जाता है, तब उसे भाषाई ध्वनि कहते हैं। विश्व की समस्त भाषाएं मानव–फुफ्फुस से चलकर, स्वर–यंत्र से होती हुई मुख– नासिका से प्रकट हुई सार्थक ध्वनियां ही हैं।

भाषाई ध्वनि वाणी का वह उच्चारण–अंश है, जो कम से कम एक तथा अधिक–से–अधिक दो खंडों से मिलकर बनता है।

भाषा की ध्वनियां वे सार्थक ध्वनियां होती हैं; जिनका उच्चारण करने के लिए– मुख, कंठ, स्वर–यंत्र आदि अवयवों को कोई निश्चित, ऐच्छिक तथा विशिष्ट रूप धारण करना पड़ता है।

टिप्पणी

भाषाई ध्वनि की उत्पत्ति

भाषाई ध्वनियों का उच्चारण प्रायः उस वायु से किया जाता है, जिसे हम फेफड़ों से बाहर निकालते हैं, यह प्रश्वास वायु कहलाती है। अमरीकी, अफ्रीकी तथा सिंधी भाषाओं में कुछ ऐसी ध्वनियां भी मिलती हैं जिनका उच्चारण मनुष्य के द्वारा अंदर ली जाने वाली वायु से उत्पन्न होता है परंतु भारत में प्रायः सभी भाषाओं का उच्चारण उस वायु की सहायता से किया जाता है जिसे हम फेफड़ों से बाहर निकालते हैं। शारीरिक रचना की दृष्टि से श्वास नलिका के ऊपरी भाग में तथा कंठ के नीचे स्वर–यंत्र के दो पर्दे (झिल्लियां) हैं। प्रश्वास की वायु उन पर्दों में से होकर कंठ में आती है। स्वर–वायु के दोनों पर्दे एक–दूसरे से बहुत दूर होने के कारण उस प्रश्वास वायु के आने में कोई रूकावट नहीं डालते। यह स्थिति तब होती है, जब हम कोई ध्वनि नहीं करते परंतु जब हम किसी ध्वनि का उच्चारण करना चाहते हैं तब ध्वनि के स्वरूप के अनुसार स्वर–यंत्र के पर्दे थोड़े पास, कभी अधिक पास, या एक–से हो जाते हैं तथा इससे प्रश्वास उन पदों के साथ रगड़ खाकर या वहां कुछ रूकने के बाद कंठ में आता है। इस स्थिति में ध्वनि उत्पन्न होती है।

दूसरे शब्दों में, किसी ध्वनि को व्यक्त करने की इच्छा होने पर हम फुफ्फुसों (फेफड़ों) से श्वास बाहर को फेंकते हैं। स्वर–यंत्र के पर्दों की सहायता से मनचाहा रूप दे देते हैं। मनचाहा रूप देने के लिए स्वर–यंत्र के पर्दों से पार हुए उस प्रश्वास को कभी हम मुख के मार्ग से, कभी नासिका के मार्ग से या कभी थोड़ा–थोड़ा करके दोनों मार्गों से बाहर निकालते हैं। इन भिन्न–भिन्न स्थितियों के कारण अलग–अलग ध्वनियां व्यक्त होती है। जब हम प्रश्वास को मुख के मार्ग से बाहर निकालते हैं, तब हम कंठ, जिह्वा, तालु, दंत, ओष्ठ आदि की भिन्न–भिन्न स्थितियां बनाकर उस प्रश्वास पर मनचाहा प्रभाव डालते हैं जिससे कई प्रकार की ध्वनियां उत्पन्न होती है। ध्वनि उत्पन्न करने की इच्छा से फेफड़ों द्वारा बाहर निकाला हुआ प्रश्वास कंठ के अंदर स्थित ध्वनि–यंत्र से प्रकंपित होने के कारण बाहर वायु में भिन्न–भिन्न प्रकार की लहरें उत्पन्न कर देता है ये लहरें एक निश्चित सीमा तक उपस्थित दूसरे मनुष्य के श्रवण (कान) के पर्दे पर प्रकंपन उत्पन्न करती हैं। उस कंपन का असर कान की मध्यवर्ती हड्डियों के माध्यम से भीतरी कान के द्रव पर पड़ता है इससे उस द्रव में लहरें उत्पन्न होती हैं। वे लहरें सुनने वाले के मस्तिष्क तक पहुंचती हैं। परिणाम यह होता है कि वह ध्वनियों को सुनता है।

जब कोई मनुष्य अपने विचारों या भावों को, दूसरों को सुनाने की इच्छा करता है, तब वह अपने ध्वनि–यंत्र से सार्थक ध्वनियों को उत्पन्न करता है। ध्वनियों का यही मौखिक उच्चरित रूप भाषा का मुख्य रूप है। भाषा (व्यक्त वाणी) को उत्पन्न करने वाला यंत्र श्रवण यंत्र (वाक् वाणी) है तथा भाषा को ग्रहण करने (सुनने) वाला यंत्र कान

है। चिट्ठी में, पुस्तक में, समाचार पत्र आदि में भाषा के जिस (लिपि–चिह्न द्वारा प्रकटित) रूप को देखकर हम आंखों द्वारा पढ़ते हैं, वह मौखिक, उच्चरित भाषा का गौण रूप है।

टिप्पणी

वाक् –यंत्र या ध्वनि–यंत्र

शरीर के जिन अंगों से भाषाई ध्वनियों का उच्चारण किया जाता है उन्हें वाक्–यंत्र, ध्वनि–यंत्र अथवा उच्चारण–अवयव कहा जाता है।

कंठ से लेकर ओष्ठ तथा नासिका तक जिस–जिस स्थान पर प्रश्वास वायु रोकी जाती है, वह स्थान उच्चरित ध्वनि का स्थान (उच्चारण–स्थान) कहलाता है। जो अवयव उस प्रश्वास को रोकता है, वह करण कहलाता है। उदाहरणतः जब जिह्वा की नोक ऊपर वाले दांतों से मिलकर उनके पीछे प्रश्वास वायु को रोक देती है, तब 'त' का उच्चारण होता है। अतः 'त' का उच्चारण–स्थान दंत हुआ तथा 'त' का उच्चारण–करण जिह्वा की नोक (जिह्वाग्र) हुआ।

1. उच्चारण–स्थान

ये निम्नलिखित हैं–

स्वर–यंत्र, मुख, कंठ, जिह्वामूल, कोमल तालु, मूर्द्धा, कठोर तालु, वर्त्स, ऊपर के दांत, ऊपर का ओष्ठ, नासिका।

उच्चारण–करण

ये निम्नलिखित हैं–

स्वर–यंत्र के पर्दे, काकल, जिह्वा, निचला ओष्ठ।

हिंदी की ध्वनियों का वर्गीकरण

फेफड़ों से श्वास–नली में होकर मुख तथा नासिका के मार्ग से बाहर निकलने वाला प्रश्वास वायु की ध्वनियों को उत्पन्न करता है। हिंदी भाषा में प्रत्येक ध्वनि के लिए एक भिन्न वर्ण का प्रयोग होता है। प्रश्वास को मुख में जिह्वा द्वारा नहीं रोकने तथा रोकने के आधार पर ध्वनियां दो प्रकार की मानी गयी हैं–

1. स्वर, 2. व्यंजन

हिंदी भाषा की वर्तमान स्वीकृत ध्वनियों में ग्यारह स्वर तथा अन्य व्यंजन हैं।

1. स्वर

जिन ध्वनियों के उच्चारण में जिह्वा प्रश्वास को मुख में किसी भी तरह नहीं रोकती– प्रश्वास बिना किसी रुकावट के बाहर निकलता है– वे स्वर 'ध्वनियां' कहलाती हैं। इनका उच्चारण बिना किसी वर्ण की सहायता के स्वतंत्र रूप से किया जा सकता है।

स्वर ये हैं–

अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ अं ।

टिप्पणी

इनमें भी मुख्य स्वर तीन हैं–

अ इ उ

इन्हीं का दीर्घ रूप आ ई ऊ है। चार संयुक्त (संधि) स्वर हैं– अ+इ = ए, अ+ए = ऐ, अ + उ = ओ, अ + ओ = औ

संस्कृत के ऋ का उच्चारण अब लुप्त हो चुका है– उसका उच्चारण अब हिंदी वाले 'रि' र्+इ की तरह करते हैं। फिर भी हमने इसे स्वरों में दिखाया है क्योंकि संस्कृत से आये शब्दों में इसका लिखित रूप अब भी प्रयोग में आता है। जैसे– ऋषि, ऋण, कृपा, कृषक, कृष्ण इत्यादि। ऐ और औ की ध्वनियां भी हिंदी में नयी विकसित ध्वनियां हैं, जो इनके संस्कृत उच्चारण से भिन्न हैं।

'और' (हिंदी उच्चारण) है और 'कौमुदी' संस्कृत उच्चारण। इनके उच्चारण स्थान भिन्न होने के कारण ये पृथक–पृथक ध्वनियां ही हैं।

2. व्यंजन

जिन ध्वनियों के उच्चारण में प्रश्वास मुख में जिह्वा द्वारा रोका जाता है और इधर–उधर रगड़ खाता हुआ बाहर निकलता है, वे ध्वनियां 'व्यंजन' कहलाती हैं।

हिंदी में वर्तमान में प्रयुक्त व्यंजन ध्वनियां ये हैं–

(क वर्ग) क् ख् ग् घ् ङ्

(च वर्ग) च् छ् ज् झ् ञ् ज्

(ट वर्ग) ट् ठ् ड् ढ् ण् ड् ढ़्

(त वर्ग) त् थ् द् ध् न् न्ह्

(प वर्ग) प् फ् ब् भ् म् म्ह् फ

(अंतःस्थ) य् र् ल् व्

(ऊष्म) श् ष् स् ह् : विसर्ग

इसमें ये य् व्यंजन ध्वनियों में अन्य व्यंजन ध्वनियों के मुकाबले प्रश्वास मुख में कम रूकता है, अतएव इन्हें 'अर्ध स्वर' अथवा 'अर्ध व्यंजन' कहते हैं।

संस्कृत की ञ् ष् ध्वनियां प्रायः समाप्त हो गयी हैं (केवल लिखने में इनका पृथक रूप देखने को मिलता है)। क ़् ख् ग् ध्वनियां अरबी से तथा ज् फ् ध्वनियां फारसी से हिंदी में आयी हैं। ड् ढ् व् न्ह् म्ह ध्वनियां हिंदी में विभिन्न क्षेत्रीय बोलियों से आयी हैं।

स्वरों तथा व्यंजनों के उच्चारण के उच्चारण–स्थान, करण तथा प्रयत्न आवश्यक होते हैं। उच्चारण–स्थानों तथा करणों के नाम पहले बताये जा चुके हैं।

जिस समय ध्वनियों का उच्चारण करना होता है, उस समय प्रश्वास को रोककर उसे कई प्रकार से विकृत करना पड़ता है। इस प्रक्रिया को प्रयत्न कहा जाता है। प्रयत्न दो प्रकार के होते हैं–

टिप्पणी

1. बाह्य प्रयत्न,
2. आभ्यंतर प्रयत्न

1. **बाह्य प्रयत्न**– मुख–विचार तथा नासिका से बाहर अर्थात् कंठ के नीचे श्वास–नलिका में किये गये स्वर–यंत्र के प्रयत्न बाह्य प्रयत्न कहलाते हैं।
2. **आभ्यंतर प्रयत्न**– मुख–विचार तथा नासिका के ही अंदर जिह्वा , तालु, दंत आदि द्वारा उच्चारण के लिए किये गये प्रयत्न आभ्यंतर कहे जाते हैं।

स्वरों का वर्गीकरण

स्वरों का वर्गीकरण छः आधारों पर किया गया है–

बाह्य प्रयत्न की दृष्टि से

1. **स्वर यंत्र**– जिन ध्वनियों के उच्चारण के समय स्वर–यंत्र के पर्दे एक–दूसरे के इतने समीप आ जाते हैं कि इनके ऊपरी तथा निचले सिरे परस्पर मिल जाते हैं, अतः बीच में से प्रश्वास इन्हें प्रकंपित करता हुआ निकलता है– वे ध्वनियां घोष कहलाती हैं। हिंदी भाषा के सभी स्वरों का इसी स्थिति में उच्चारण किया जाता है तथा वे घोष कहलाते हैं।
2. **मात्रा काल**– किसी एक सार्थक ध्वनि के उच्चारण में जितना समय लगता है, वह मात्रा–काल कहलाता है। इसके आधार पर भी स्वरों का वर्गीकरण किया जाता है, जो इस प्रकार हैं–

   (क) **ह्रस्व स्वर**– जिन स्वरों के उच्चारण में एक मात्रा–काल लगता है, ह्रस्व स्वर हैं– अ, इ, उ।

   (ख) **दीर्घ**– जिन स्वरों के उच्चारण में दो मात्राओं का काल लगता है, दीर्घ स्वर हैं– आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, ऑ।

   (ग) **प्लुत स्वर**– जिन स्वरों के उच्चारण में तीन मात्राओं का काल लगता है। जैसे आऽ, ओऽ, उऽ। इनका प्रयोग पुकारने (बुलाने) में होता है। लिखते समय प्लुत का संकेत करने के लिए स्वर के अंत में 3 का अंक लिख दिया जाता था। जैसे– ओ3म्, आइए3, आओ3, अरे3 परंतु अब यह 3 का अंक लगाने की प्रथा नहीं रही।

आभ्यंतर प्रयत्न की दृष्टि से

1. **जिह्वा**– (क) जिह्वा के अग्र, मध्य तथा पश्च– तीनों भाग पृथक–पृथक ध्वनियां उत्पन्न करने में सहायता करते हैं। जिस भाग की सहायता से जो ध्वनि उच्चरित होती है, वह उसी नाम से जानी जाती है। इसके आधार पर स्वरों का वर्गीकरण इस प्रकार किया गया है–

   अग्र स्वर– इ, ई, ए, ऐ।

मध्य स्वर– अ।

पश्च स्वर– आ, उ, ऊ, औ, ऑ।

टिप्पणी

उच्चारण के समय जिह्वा कितनी ऊपर उठती है, इस आधार पर भी स्वरों का वर्गीकरण किया गया है–

(क) **संवृत्त**– जब जिह्वा इतनी ऊपर उठती है कि मुख से प्रश्वास निकलने में रूकता तो नहीं किंतु उसके निकलने का कम–से–कम स्थान रह जाता है, तब संवृत्त स्वर का उच्चारण किया जाता है। ये हैं– इ, ई, उ, ऊ।

(ख) **अर्द्ध संवृत्त**– जब जिह्वा संवृत्त की स्थिति से भी कुछ कम उठती है, तब अर्द्ध संवृत्त स्वरों का उच्चारण किया जाता है। ये हैं– ए, ओ।

(ग) **अर्द्ध विवृत्त**– जब जीभ अर्द्ध–संवृत्त की स्थिति से भी कुछ कम उठती है, तब अर्द्ध विवृत्त स्वरों का उच्चारण किया जाता है। ये हैं– ऐ, औ, अ, ऑ।

(घ) **विवृत्त**– विवृत्त स्वर के उच्चारण में जिह्वा बहुत कम उठती है। मुख–मार्ग खुला रहता है। विवृत स्वर 'आ' है।

2. **ओष्ठ**– उच्चारण के समय ओष्ठों (होंठों) की कैसी आकृति बनती है, इस विचार से भी स्वरों का वर्गीकरण किया गया है, जैसे–

(क) **वृत्ताकार स्वर**– जिन स्वरों के उच्चारण–समय में ओष्ठ गोलाकार हो जाते हैं। वे हैं– उ, ऊ, ओ, औ, ऑ।

(ख) **अवृत्ताकार स्वर**– जिन स्वरों के उच्चारण–समय में ओष्ठ दोनों ओर फैल जाते हैं। वे हैं– अ, आ, इ, ई, ए, ऐ।

3. **नासिका**– जिन स्वरों के उच्चारण–समय में जब प्रश्वास मुख के साथ–साथ नासिका से भी बाहर निकलती है, वे स्वर अनुनासिक कहलाते हैं। जैसे– अँ, ऑ, इँ, ईं, उँ, ऊँ, एँ, ऐं, ओं, औं (लिखने में ईं, ओं, औं में प्रायः ँ की जगह ं का ही प्रयोग होता है)।

4. **स्थान**– ध्वनियों का उच्चारण विशेष प्रयत्न से होता है परंतु यह विशेष स्थान पर प्रश्वास के रूकने से होता है।

स्वरों के उच्चारण स्थान तथा प्रयत्न इस प्रकार हैं–

स्वर	स्थान	बाह्य प्रयत्न	आभ्यंतर प्रयत्न
आ	कोमल तालु (कंठ)	घोष	विवृत्त
अ,ऑ	कोमल तालु (कंठ)	घोष	अर्द्ध विवृत्त
इ,ई	कठोर ताल	घोष	संवृत्त
उ,ऊ	ओष्ठ	घोष	संवृत्त

टिप्पणी

ए	कोमल तालु, कठोर तालु	घोष	अर्द्ध संवृत्त
ओ	कोमल तालु, ओष्ठ	घोष	अर्द्ध संवृत्त
ऐ	कोमल तालु, कठोर तालु	घोष	अर्द्ध विवृत्त
औ	कोमल तालु, ओष्ठ	घोष	अर्द्ध विवृत्त

व्यंजनों का वर्गीकरण

प्रयत्न, घोषत्व, मात्रा तथा स्थान के आधार पर व्यंजनों का वर्गीकरण किया जाता है।

आभ्यंतर प्रयत्न के आधार पर

1. **स्पर्श**– जब जिह्वा अथवा निचला ओष्ठ उच्चारण–स्थान को स्पर्श करके ध्वनि का उच्चारण करते हैं, तो वह स्पर्श आभ्यंतर प्रयत्न कहलाता है। उदाहरण–

स्पर्श व्यंजन	प्रयत्न
क् ख् ग् घ्	जिह्वा का पिछला भाग कठोर तालु को छूता है।
च् छ् ज् झ्	जिह्वा का अग्र भाग तालु को स्पर्श करता है।
ट् ठ् ड् ढ्	जिह्वा का अग्र भाग मूर्द्धा को छूता है।
त् थ् द् ध्	जिह्वा का अग्र भाग ऊपरी दांतों को छूता है।
प् फ् ब् भ्	निचला ओष्ठ ऊपर के ओष्ठ को छूता है।

2. **स्पर्श संघर्षी**– जिनके उच्चारण में जिह्वाग्र तथा कोमल तालु इतने निकट हो जाते हैं कि मुख मार्ग कुछ संकरा हो जाने से प्रश्वास कुछ रगड़ खाता हुआ बाहर निकलता है। स्पर्श–संघर्षी व्यंजन ये हैं– च् छ् ज् झ्।
3. **संघर्षी**– जिनके उच्चारण में वायुमार्ग किसी एक स्थान पर इतना अधिक संकीर्ण हो जाता है कि श्वास रगड़ खाकर बाहर निकले एवं सर्प की सीत्कार जैसी ध्वनि होती है, वे संघर्षी व्यंजन हैं। जैसे– स्, श्, ष् ज आदि।
4. **अनुनासिक**– जिनके उच्चारण के समय प्रश्वास मुख के साथ नासिका से भी बाहर निकलता है। वे हैं– ङ्, ञ्, ण्, न्, म्, न्ह्, म्ह्।
5. **पार्श्विक**– जिसमें जिह्वा का अग्र भाग वर्त्स को इस प्रकार दबाता है कि प्रश्वास जिह्वा की अगल–बगल से होकर निकलता है। पार्श्विक व्यंजन 'ल्' है।
6. **लुंठित प्रकंपी**– जिसके उच्चारण में जिह्वा की नोक वर्त्स के समीप इस तरह प्रश्वास को रोकती है कि उससे जिह्वा में प्रकंपन होता है। लुंठित व्यंजन 'र' है।
7. **उत्क्षिप्त**– जिनमें जिह्वा की नोक उलटकर मूर्द्धा से इस प्रकार टकराती है कि प्रश्वास द्वारा मुख–द्वार के साथ खोल दिया जाता है। उत्क्षिप्त ध्वनियां 'ड़' तथा 'ढ़' हैं।

टिप्पणी

8. **अर्द्ध स्वर**– जिनमें जिह्वा या निचला ओष्ठ ऊपरी ओष्ठ से इस प्रकार मिलते हैं कि प्रश्वास रूकता तो नहीं किंतु संकरे मार्ग से निकल जाता है। वे हैं– य् और व्। 'य्' में जिह्वा का अग्र भाग कोमल तालु के पास आता है और 'व्' में दोनों ओष्ठ गोल होकर पास–पास आते हैं।

बाह्य प्रयत्न के आधार पर

1. **अघोष**– जिन व्यंजनों के उच्चारण के समय स्वर–यंत्र में कंपन नहीं होता है। वे हैं– क्, ख्, च्, छ्, ट्, ठ्, त्, थ्, प्, फ्, श्, ष्, स्।
2. **घोष (सघोष)**– जिन व्यंजनों के उच्चारण–समय में स्वर–यंत्र में कंपन होता है। वे हैं– ग्, घ्, ङ्, ज्, झ्, ञ्, ट्, ठ्, ड्, ढ्, ण्, द्, ध्, न्, ब्, भ्, म्, य्, र्, ल्, व्, ह्।
3. **अल्पप्राण**– जिन व्यंजनों के उच्चारण में प्रश्वास की कम मात्रा लगती है। वे हैं– वर्गों के प्रथम, तृतीय तथा पंचम व्यंजन।
4. **महाप्राण**– जिसके उच्चारण में प्रश्वास की मात्रा अधिक लगती है। वे है– वर्गों के द्वितीय तथा चतुर्थ व्यंजन।

उच्चारण स्थान की दृष्टि से वर्गीकरण

उच्चारण स्थान की दृष्टि से व्यंजनों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जाता है–

व्यंजन	उच्चारण स्थान
क् ख् ग् घ् ङ् विसर्ग	कंठ
च् छ् ज् झ् ञ् श्	कोमल तालु
ट् ठ् ड् ढ् ण् र् श	मूर्द्धा
त् थ् द् ध्	दंत (दन्त्य)
प् फ् ब् भ्	निम्न ओष्ठ
ल् स्	वर्त्स
व्	दंतोष्ठ
क् ख् ग्	कंठ व जिह्वामूल
ङ्	कंठ–नासिका
ञ्	कोमल तालु व नासिका
ण्	मूर्द्धा व नासिका
न्	वर्त्स व नासिका
म्	ओष्ठ व नासिका

टिप्पणी

विशेष–

- ड् ञ् का उच्चारण अब स्वतंत्र रूप से नहीं होता। इनसे कोई शब्द आरंभ नहीं होता।
- ष का उच्चारण अब श की तरह होता है।
- यद्यपि क् ख् ग् फ् का प्रयोग हिंदी में होने लगा है तथापि लिखने तथा बोलने में लोग बिंदी लगाने या उच्चारण भिन्नता की परवाह नहीं करते।
- क्ष (क्+ष), त्र (त्+र), ज्ञ (ज+ज्ञ), का विशिष्ट रूप ही लिखने में प्रचलित है। ज्+ञ = ज्ञ का उच्चारण अब 'ग्य' की तरह अधिक प्रचलित है।
- ध्वनि के मूल तत्व हैं– स्पष्टता, सुश्राव्यता और तरंगता– उच्चारण के समय इनका ध्यान अवश्य रखना चाहिए।

वर्णों का उच्चारण और वर्तनी

1. आ, ई, ऊ, ए, ओ, औ– ये संधि–स्वर हैं परंतु इनका उच्चारण एक स्वर के रूप में किया जाता है। जैसे– गैया, कौआ।

   किंतु यदि एक शब्द में एक से अधिक स्वर साथ–साथ आ जायें, तो उनका उच्चारण अलग–अलग ही करना चाहिए– एक स्वर के रूप में नहीं। जैसे–

(क)	अ इ–ई	कइयों ने, कई, नई।
	अ ए	गए, हुए।
	आ ओ	आओ, जाओ, गाओ, खाओ।
	आ ई	आई, भाई, माई, नाई, खाई।
	आ ऊ	कमाऊ, उड़ाऊ, जड़ाऊ, खाऊ।
	आ ए	आए, खाए, पढ़ाए, दिखाए।
	आ इ ए	आइए, खाइए, दीजिए, लीजिए।
	उ आ	जुआ, नाडुआ, पुआल।
	उ ई	सुई, रुई, उई, छुई, मुई।
	उ ए	जुए, जुएं।
	ए ई	लेई, धनदेई।
	ओ ई	कोई, खोई, रोई।

(ख) शब्द या शब्दांश के अंतिम अ का प्रायः उच्चारण नहीं होता। जैसे– आप (आप्), कल (कल्), पढ़ (पढ्), अनबन (अनबन्)।

(ग) **अनुस्वार का उच्चारण–**

प, फ, ब, भ, म, व से पहले आये अनुस्वार का उच्चारण म् के समान होता है। जैसे–

टिप्पणी

लिखित रूप	उच्चारण
समान (सम्मान)	सम्मान्

(घ) त थ द ध न र श स से पहले आये अनुस्वार का उच्चारण 'न्' की तरह होता है। जैसे–

'अंत'	अंत्

(ड.) ट ठ ड ढ से पूर्व आये अनुस्वार का उच्चारण 'ण्' की तरह होता है। जैसे–

टंटा	टण्टा
अंडा	अण्डा

(च) क ख ग घ ह से पहले आये अनुस्वार का उच्चारण 'ङ्' की तरह होता है। जैसे–

पंक	पङ्क
अंग	अङ्ग

(छ) च छ ज झ य से पहले आये अनुस्वार का उच्चारण 'ञ्' की तरह होता है। जैसे–

पंच (पच्च)	पञ्च
संयम	सञ्यम

(ज) फारसी शब्दों के अंत में आये 'ह' का उच्चारण भी विसर्ग (:) की भांति होता है। जैसे–

बादशाह	बादशाः

(झ) ठेठ हिंदी तथा क्षेत्रीय शब्दों के अंत वाले ह् का उच्चारण भी विसर्ग ही तरह होता है। जैसे–

बारह	बारः

(ञ) शब्दों के अंत में यदि संयुक्त व्यंजन हो तो अंतिम अ का पूर्ण उच्चारण होता है। जैसे–

रक्त, भक्त, सत्य, यत्न।

(ट) जिन शब्दों के अंत में व हो, उनमें 'व', 'उ' में परिवर्तित होकर पिछले स्वर में मिल जाता है और 'औ' जैसा उच्चारण होता है। जैसे–

दानव	दानौ
मानव	मानौ

टिप्पणी

(ठ) जिन शब्दों के अंत में य हो, परंतु वह संयुक्त न हो तो वह 'य' बदल कर 'इ' हो जाता है तथा अंतः से पहले स्वर में मिलकर अइ 'ऐ' जैसा उच्चारण होता है। जैसे–

समय समै

(ड) नासिक्य व्यंजन के बाद आये 'ह' का उच्चारण 'घ' की तरह होता है। जैसे–

सिंह सिंघ

(ढ) नासिक्य स्वर के बाद 'ह' का उच्चारण स्पष्ट होता है। जैसे–

सौंह सौंह

(ण) शब्दों के आरंभ में ड़, ढ़ का कभी प्रयोग नहीं होता। जैसे–

डर, डाकू, डोल, ढकना डाल।

(त) ड्, ड्ढ, ढ्य– इनमें सदा ड्, ढ् का ही प्रयोग होता है। बिंदी वाले ड़्, ढ़् का कभी प्रयोग नहीं होता। जैसे–

गड्ड, अड्डा, गड्डी, गड्ढा, धनाढ्य।

(थ) अंग्रेजी के 'D' वर्ण के लिए सदा 'ड' का प्रयोग होता है– ड़ का नहीं। जैसे–

गॉड, गार्ड, डायरी, डेट।

(द) ठेठ हिंदी शब्दों के अंत में ड़, ढ़ का उच्चारण होता है। कभी–कभी ड़, ढ़ शब्द के बीच में भी आते हैं। जैसे–

जड़, बड़ा, लड़ैत, बढ़िया, बुढ़ापा, ढूंढना।

स्वराघात या बल

उच्चारण करते समय शब्द के किसी स्वर पर अधिक बल देना 'स्वराघात' कहलाता है।

1. अनुच्चरित 'अ' से पहले वर्ण को जोर से बोला जाता है, इसे स्वराघात कहते हैं। जैसे– कल्, खट्पट्।
2. संयुक्त व्यंजन से पहला स्वर जोर से बोला जाता है, जैसे– भक्ति, बद्ध।
3. अनुस्वार युक्त स्वर पर जोर दिया जाता है। जैसे– कंठ, कंस, मंद।
4. विसर्ग युक्त वर्ण पर बल दिया जाता है। जैसे– दुःख।

संगम

वाक्य के अंत में विराम, वाक्यांशों के मध्य में अल्पविराम, शब्दों के मध्य में अल्पतर विराम और शब्दों में भी अक्षरों के बीच अल्पतम विराम रहता है। विराम की विभिन्न स्थितियों का विवेक ही संगम है। जब दो पद समीप आते हैं तो पहले पद का अंत वाला

भाग तथा दूसरे पद का आदि भाग जुड़ जाता है। यह मिलन ही संगम की स्थिति है। शब्दों के मध्य में विराम होने या न होने से वाक्य अर्थ में अंतर हो जाता है। जैसे–

रोको, मत जाने दो। (=रोक लो)

रोको मत, जाने दो। (=जाने दो)

टिप्पणी

अनुतान

बोलते समय मनोभावों के अनुसार सुर में जो उतार–चढ़ाव रहता है, उसे अनुतान या सुर–लहर कहते हैं। जैसे–

1. अच्छा। (सामान्य कथन)
2. अच्छा? (प्रश्नवाचक)
3. अच्छा! (विस्मयबोधक)

अपनी प्रगति जांचिए

5. निम्न में से कौन–सी भाषा देवनागरी लिपि में नहीं लिखी जाती?

(क) संस्कृत (ख) मराठी

(ग) नेपाली (घ) बांग्ला

6. 'य् र् ल् व्' आदि व्यंजन ध्वनियां किस वर्ग में आती हैं?

(क) अंतःस्थ (ख) ऊष्म

(ग) प वर्ग (घ) त वर्ग

1.5 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ग)
2. (ख)
3. (घ)
4. (घ)
5. (घ)
6. (क)

1.6 सारांश

महाप्राण सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' वास्तव में अपने नाम के ही अनुरूप निराले रचनाकार थे। वे हिन्दी साहित्याकाश के सबसे देदीप्यमान नक्षत्रों में से एक थे। इस महान साहित्यशिल्पी का जन्म बंगाल के मेदिनीपुर में 21 फरवरी, 1896 को उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले के मूल निवासी पंडित रामसहाय त्रिपाठी के घर हुआ जो उस समय

मेदिनीपुर के राजा की नौकरी कर रहे थे। बचपन में ही उनकी माता का देहान्त हो गया था। सैनिक स्वभाव वाले पिता के कठोर अनुशासन में बालक सूर्यकांत का लालन–पालन हुआ।

टिप्पणी

निराला वास्तव में ओज, औदात्य एवं विद्रोह के कवि हैं। उन पर वेदांत और रामकृष्ण परमहंस तथा विवेकानंद के दर्शन का प्रभाव रहा है। यही कारण है कि उनकी कविताओं में रहस्यवाद भी मिलता है। निराला अकुंठ एवं वयस्क शृंगार दृष्टि तथा तृप्ति के कवि हैं। वे सुख और दुःख दोनों को भरपूर देख कर तथा उससे ऊपर उठ कर चित्रण करने की क्षमता रखते हैं। उनकी कविता में बौद्धिकता का भरपूर दबाव और तर्कसंगति है। अपने युग का विषय, यथार्थ और उससे उबरने की साधना उनकी तीन प्रबंधात्मक दीर्घ कविताओं– तुलसीदास, सरोज स्मृति और राम की शक्तिपूजा में प्रकट हुई है। निराला हिन्दी में मुक्त छंद के लिये प्रसिद्ध हैं। वे स्थितियों के संश्लेष से कम से कम शब्दों द्वारा अधिक से अधिक भाव पक्ष प्रकट करते हैं। नाद–योजना का उनकी काव्यात्मकता में विशिष्ट स्थान है। यही कारण है कि उनकी कविता में कभी कभी दुरूहता आ जाती है।

महाप्राण कवि सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की कालजयी कविता 'वह तोड़ती पत्थर' सन् 1935 में लिखी गई थी। हिंदी साहित्य में प्रगतिवाद का उदय यद्यपि 1936 से माना जाता है तथापि इस कविता को देखने पर यह कहने में संकोच नहीं होना चाहिए कि प्रगतिवादी कविता की नींव डालने वाले कवि निराला ही थे। 'वह तोड़ती पत्थर' की मज़दूरिन के पत्थरों से उस नींव को जो मजबूती मिली है, वही प्रगतिवाद का ठोस आधार है।

'वह तोड़ती पत्थर' में कवि की दृष्टि ने एक स्त्री को ही चुना, इस तथ्य के गांभीर्य को भी समझना आवश्यक है। 'वह तोड़ती पत्थर' के स्थान पर 'वह तोड़ता पत्थर' भी संभव था, किंतु बंधनों का सर्वाधिक भार प्रायः एक स्त्री पर रहता है। निराला की प्रगतिवादी दृष्टि की यह विशेषता है कि 'नारी मुक्ति' पर वे अधिक बल देते हैं। उनकी एक कविता 'मुक्ति' में भी उन्होंने घरों की चारदीवारियों में बंधी नारी की मुक्ति का आह्वान किया है। दार्शनिक किंतु यथार्थ सौंदर्य के अलावा परतंत्रता और स्वतंत्रता के संघर्ष को भी आलोचकों ने इस कविता में देखा है, उसे भी नकारा नहीं जा सकता। कवि को 'क्रांतिद्रष्टा' कहा ही जाता है। अतः निराला की क्रांतिकारी दृष्टि से अनेक भावों में संक्रमण करने वाली अनुभूति के बल पर इस कविता में अनेक अर्थों को खोजने में कोई दोष नहीं। अपितु विभिन्न दृष्टियों को जो संतोष दे सके उसी में कविता का सौंदर्य अपार होता है। अतः निष्कर्ष में कहा जा सकता है कि इस कविता का अपार सौंदर्य अपने में संपूर्णतः 'सत्य शिव और सुंदर' से परिपूर्ण है।

राहुल जी का जन्म उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले के पन्दाहा गांव में 9 अप्रैल, 1893 ई. और मृत्यु 14 अप्रैल, 1963 ई. को दार्जलिंग में हुई। उनके बाल्यकाल का नाम केदारनाथ पाण्डेय था। कुछ वर्षों तक वह रामोदर स्वामी के नाम से भी जाने गए। प्राथमिक शिक्षा अपने गांव के मदरसे से ही प्राप्त की। इच्छा के विरुद्ध बचपन में ही विवाह हो जाने के कारण प्रतिक्रिया स्वरूप उन्होंने किशोरावस्था में ही घर छोड़ दिया। घर से अलग होकर ये एक मठ में साधु हो गए। परंतु अपने घुमक्कड़ी स्वभाव के कारण वहां भी अधिक दिन टिक नहीं पाये, जिससे इनकी शिक्षा–दीक्षा नियमित ढंग से न हो

सकी। संस्कृत की उच्च शिक्षा के लिए राहुल सांकृत्यायन काशी, आगरा व लाहौर गए तथा वहीं अरबी–फारसी का अध्ययन भी किया।

उन्होंने हिंदी साहित्य को अपनी रचनाओं का विपुल भंडार दिया है। मात्र हिंदी साहित्य के लिए ही नहीं बल्कि भारत की अन्य भाषाओं के लिए भी महत्वपूर्ण शोध कार्य किये हैं तथा साहित्य की विभिन्न विधाओं में भी अपना बहुमूल्य योगदान दिया है। जिसमें उपन्यास, कहानी, निबंध, नाटक, जीवनी, आत्मकथा, यात्रा–साहित्य, अनुवाद प्रमुख हैं। अपनी कृति 'जीवन यात्रा' में राहुल जी ने यह स्वीकार किया है कि उनका साहित्यिक जीवन सन् 1927 से प्रारंभ होता है पर वास्तविकता तो यह है कि उन्होंने किशोरावस्था को पार करने के पश्चात ही रचना कर्म प्रारंभ कर दिया था। उन्होंने विभिन्न विषयों पर लगभग 150 ग्रंथ रचे जिनमें से लगभग 130 ग्रंथ प्रकाशित हुए।

टिप्पणी

लेखक ने भारतीय लोगों के मिथ्या विश्वासों का जिक्र करते हुए बताया है कि हमारे झूठ–मूठ के अंधविश्वासों की कोई गिनती ही नहीं है। हम जिधर भी सर उठाकर देखते हैं, यही पाते हैं कि हमारा जीवन झूठे आडंबरों, विश्वासों व मान्यताओं से बुरी तरह घिरा हुआ है और हम उससे चाहकर भी बाहर नहीं निकल पा रहे हैं, लेखक के अनुसार इनकी संख्या इतनी है कि सबका इस छोटे से लेख में जिक्र कर पाना भी संभव नहीं है। लेकिन यह कितनी विडंबनापूर्ण बात है कि एक ओर तो हम अपने सर–माथे इन अंधविश्वासों को उठाए चलते जाना चाहते हैं तो वहीं दूसरी ओर तेजी से विकास भी करना चाहते हैं।

लेखक के अनुसार अब हमें अपनी मानसिक गुलामी की जंजीरों से अविलंब मुक्त होने की आवश्यकता है। अब इसके लिए और अधिक प्रतीक्षा नहीं की जा सकती क्योंकि वक्त बहुत तेजी से आगे बढ़ रहा है। यूरोप सहित समूचा पश्चिम ज्ञान और विज्ञान के सहारे तेजी से प्रगति के पथ पर आगे बढ़ रहा है। वहां आविष्कार पर आविष्कार हो रहे हैं; निरंतर नई खोजें हो रही हैं जो मनुष्य को चांद–तारों की ओर ले जाने में सक्षम होंगी। हमें धर्मांधता, मिथ्या विश्वास और रूढ़ियों से मुक्त होकर ज्ञान और विज्ञान की राह पकड़नी होगी। निश्चय ही इस क्रम में हमें अपने सुरक्षित वातावरण से बाहर निकलने का कष्ट व जोखिम भी उठाना होगा।

हिंदी भाषा देवनागरी लिपि में लिखी जाती है। इस समय देवनागरी लिपि का प्रयोग संस्कृत, हिंदी तथा मराठी में लिखने में होता है। नेपाली, गढ़वाली के लिए भी देवनागरी लिपि ही काम आती है। देवनागरी में पंजाबी भाषा के भी कुछ ग्रंथ लिखे मिलते हैं। कहा जाता है कि देवनागरी लिपि संसार की सब लिपियों से श्रेष्ठ है क्योंकि इसमें हर प्रकार की ध्वनि को प्रकट करने की शक्ति है तथा जैसा लिखा हो वैसा बोला जाता है और जैसा बोला जाता है, वैसा लिखा जाता है। अंग्रेजी (रोमन लिपि) में But बट है और Put पुट। देवनागरी लिपि में यह बात नहीं है।

मुख द्वारा शब्द बोलकर अपने भाव या विचार प्रकट करने को वाणी कहते हैं और वाणी वर्णों का समूह है। वर्ण वह मौखिक ध्वनि है जिसके खंड न हो सकें। वर्ण केवल मुख और कान का विषय है। इन वर्णों के रेखा आदि से बनाए हुए चिह्नों को अक्षर कहते हैं। इन अक्षरों का समूह ही लिपि है, जो आंख और हाथ का विषय होते हैं (हाथ से लिखे जाते और आंखों से पढ़े जाते हैं)।

टिप्पणी

जब कोई मनुष्य अपने विचारों या भावों को, दूसरों को सुनाने की इच्छा करता है, तब वह अपने ध्वनि–यंत्र से सार्थक ध्वनियों को उत्पन्न करता है। ध्वनियों का यही मौखिक उच्चरित रूप भाषा का मुख्य रूप है। भाषा (व्यक्त वाणी) को उत्पन्न करने वाला यंत्र श्रवण यंत्र (वाक् वाणी) है तथा भाषा को ग्रहण करने (सुनने) वाला यंत्र कान है। चिट्ठी में, पुस्तक में, समाचार पत्र आदि में भाषा के जिस (लिपि–चिह्न द्वारा प्रकटित) रूप को देखकर हम आंखों द्वारा पढ़ते हैं, वह मौखिक, उच्चरित भाषा का गौण रूप है।

1.7 मुख्य शब्दावली

- **देदीप्यमान** – चमकता हुआ
- **नाद** – ध्वनि
- **प्राकार** – भवन, ऊंची, इमारत
- **सुघर** – सुन्दर, सुडौल
- **गुरु** – भारी
- **संगुंफन** – एकसूत्रीकरण, मिलन
- **अथाह** – सीमाहीन, अनंत
- **आग्नेय** – आग जैसे सुलगते
- **मिथ्याचार** – आडंबर

1.8 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. कवि निराला महामानव की संज्ञा को किस प्रकार सही सिद्ध करते हैं?
2. 'वह तोड़ती पत्थर' कविता का मूलभाव क्या है?
3. निराला की आध्यात्मिक दृष्टि क्या थी?
4. 'निराला क्रांति के अग्रदूत हैं' – इसे दो उदाहरणों से सिद्ध कीजिए।
5. राहुल सांकृत्यायन के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का परिचय देते हुए समकालीन यात्रा–साहित्य लेखकों के नाम बताइए।
6. 'दिमागी गुलामी' निबंध का मूल स्वर क्या है?
7. अनुस्वार, अनुनासिक और विसर्ग में अंतर स्पष्ट कीजिए।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. छायावादी कवियों में निराला का स्थान निश्चित करते हुए उनके योगदान पर प्रकाश डालिए।
2. निराला की काव्य–कला के क्रमिक विकास का विवरण लिखिए।

3. निराला की साहित्यिक दृष्टि पर प्रकाश डालिए।
4. 'वह तोड़ती पत्थर' कविता के आधार पर निराला की काव्यगत विशेषताओं का विवेचन कीजिए।
5. विभिन्न कृतियों के आधार पर निराला की मूल विचारधारा और काव्य–संवेदना का परिचय दीजिए।
6. 'वह तोड़ती पत्थर' कविता की व्याख्या कीजिए।
7. 'दिमागी गुलामी' निबंध की विषयवस्तु और संवेदना पर प्रकाश डालिए।
8. 'दिमागी गुलामी' निबंध का समीक्षात्मक विश्लेषण कीजिए।
9. वर्ण विचार का अर्थ स्पष्ट करते हुए स्वर एवं व्यंजन वर्णों का वर्गीकरण कीजिए।

टिप्पणी

1.9 सहायक पाठ्य सामग्री

1. रामविलास शर्मा, *निराला की साहित्य साधना*, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1990
2. नन्द दुलारे वाजपेयी, *कवि निराला*, मैकमिलन, नयी दिल्ली, 1979
3. डॉ. रमेशचन्द्र साह– संपादक, *निराला संचयिता*, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली–02, प्रथम संस्करण : 2001
4. रेखा खरे, *निराला की कविताएं और काव्य भाषा*, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण : 2015
5. गुणाकर मुले, *महापंडित राहुल सांकृत्यायन : जीवन और कृतित्व*, नेशनल बुक ट्रस्ट : 1993
6. उर्मिलेष, राहुल सांकृत्यायन : *सृजन और संघर्ष*, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली : 1984
7. डॉ. मीनाक्षी अग्रवाल, *आदर्श हिन्दी व्याकरण*, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली : 2008

इकाई 2 हिन्दी भाषा

टिप्पणी

संरचना

2.0 परिचय
2.1 उद्देश्य
2.2 नारीत्व का अभिशाप (निबन्ध) : महादेवी वर्मा
  2.2.1 'नारीत्व का अभिशाप' निबन्ध का मूल पाठ
  2.2.2 'नारीत्व का अभिशाप' निबन्ध का सार
  2.2.3 व्याख्यांश
  2.2.4 'नारीत्व का अभिशाप' (निबन्ध) का समीक्षात्मक अध्ययन
2.3 चीफ की दावत (कहानी) : भीष्म साहनी
  2.3.1 'चीफ की दावत' (कहानी) का मूल पाठ
  2.3.2 चीफ की दावत' (कहानी) का सार
  2.3.3 व्याख्यांश
  2.3.4 'चीफ की दावत' (कहानी) का समीक्षात्मक अध्ययन
2.4 विराम चिह्न : (संकलित)
2.5 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
2.6 सारांश
2.7 मुख्य शब्दावली
2.8 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.9 सहायक पाठ्य सामग्री

2.0 परिचय

हिंदी साहित्य में छायावादी युग के चार स्तंभों में से एक महादेवी आधुनिक मीरा के नाम से भी जानी जाती हैं। महाकवि निराला ने उन्हें हिंदी के विशाल मन्दिर की सरस्वती भी कहा है। महादेवी ने स्वतंत्रता के पहले का भारत भी देखा और उसके बाद का भी। वे उन कवियों में से एक हैं जिन्होंने व्यापक समाज में काम करते हुए भारत के भीतर विद्यमान हाहाकार, रुदन को देखा–परखा और करुण होकर अन्धकार को दूर करने वाली दृष्टि देने की कोशिश की। उनका काव्य ही नहीं बल्कि उनके समाजसुधार के कार्य और महिलाओं के प्रति चेतना भावना भी इस दृष्टि से प्रभावित रहे। उन्होंने मन की पीड़ा को इतने स्नेह और श्रृंगार से सजाया कि दीपशिखा में वह जन–जन की पीड़ा के रूप में स्थापित हुई और उसने केवल पाठकों को ही नहीं समीक्षकों को भी गहराई तक प्रभावित किया।

भीष्म साहनी को हिन्दी साहित्य में प्रेमचंद की परंपरा का अग्रणी लेखक माना जाता है। वे मानवीय मूल्यों के लिए हिमायती रहे। उन्होंने विचारधारा को अपने ऊपर कभी हावी नहीं होने दिया। वामपंथी विचारधारा के साथ जुड़े होने के साथ–साथ वे मानवीय मूल्यों को कभी आंखों से ओझल नहीं करते थे। आपाधापी और उठापटक के युग में भीष्म साहनी का व्यक्तित्व बिल्कुल अलग था। उन्हें उनके लेखन के लिए तो स्मरण किया ही जाएगा लेकिन अपनी सहृदयता के लिए भी वे चिरस्मरणीय रहेंगे। भीष्म साहनी हिन्दी फिल्मों के जाने–माने अभिनेता बलराज साहनी के छोटे भाई थे।

टिप्पणी

प्रत्येक भाषा के लिए विराम चिह्नों की महती उपयोगिता है। इनके अभाव में भाषा अपूर्ण है, क्योंकि विराम चिह्नों के समुचित प्रयोग द्वारा ही लेखक का मंतव्य पाठक पर पूर्णतः व्यक्त हो पाता है। वस्तुतः विराम चिह्न लिपि के आवश्यक अंग हैं। जिस प्रकार हम ध्वनियों को लिपि चिह्नों से व्यक्त करते हैं, उसी प्रकार भाषा में कथन–पद्धति का स्पष्टीकरण विराम चिह्नों से किया जाता है।

इस इकाई में महादेवी वर्मा के व्यक्तित्व, कृतित्व एवं उनके निबंध 'नारीत्व का अभिशाप' का विश्लेषण हुआ है। साथ ही भीष्म साहनी का लेखकीय परिचय देते हुए उनकी कहानी 'चीफ की दावत' का समीक्षात्मक अध्ययन और व्याकरण के अंतर्गत विराम चिह्नों के प्रयोग का विवरण दिया गया है।

2.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- 'नारीत्व का अभिशाप' निबंध का पाठ कर उसकी समीक्षा कर पाएंगे;
- 'चीफ की दावत' कहानी से अवगत हो पाएंगे व कहानी कला के तत्वों के आधार पर इसकी समीक्षा कर पाएंगे;
- विराम चिह्नों के प्रकार एवं प्रकृति व उपयोग को जान पाएंगे।

2.2 नारीत्व का अभिशाप (निबन्ध) : महादेवी वर्मा

हिंदी की सर्वाधिक प्रतिभाशाली कवयित्रियों में से एक महादेवी वर्मा का जन्म 26 मार्च, 1907 को उत्तर प्रदेश के फर्रुखाबाद के एक प्रतिष्ठित परिवार में हुआ था। उनके परिवार में लगभग 200 वर्षों या सात पीढ़ियों के बाद पहली बार पुत्री का जन्म हुआ था। अतः इन्हें घर की देवी–महादेवी मानते हुए पुत्री का नाम महादेवी रखा गया। अपना जीवन इंदौर और नरसिंहगढ़ की रियासतों में बिताने वाले इनके पिता श्री गोविन्द प्रसाद बड़े विद्वान् व्यक्ति थे। वे इंदौर के डेली कॉलेज में अध्यापन करते थे। उनकी माता का नाम हेमरानी देवी था। हेमरानी देवी बड़ी धर्मपरायण, कर्मनिष्ठ, भावुक एवं शाकाहारी महिला थीं। वे प्रतिदिन कई घंटे पूजा–पाठ तथा रामायण, गीता एवं विनय पत्रिका का पारायण करती थीं और संगीत में भी उनकी अत्यधिक रुचि थी। महादेवी वर्मा के मानस बंधुओं में सुमित्रानंदन पन्त एवं निराला का नाम लिया जा सकता है, जो उनसे जीवनपर्यन्त राखी बंधवाते रहे।

उन्होंने खड़ी बोली हिंदी की कविता में उस कोमल शब्दावली का विकास किया जो अभी तक केवल ब्रजभाषा में संभव मानी जाती थी। इसके लिए उन्होंने अपने समय के अनुकूल संस्कृत और बंगला के कोमल शब्दों को चुनकर हिंदी का जामा पहनाया। संगीत की जानकार होने के कारण उनके गीतों का नाद–सौंदर्य और पैनी उक्तियों की व्यंजना शैली अन्यत्र दुर्लभ है। उन्होंने अध्यापन से अपने कार्यजीवन की शुरुआत की और अंतिम समय तक वे प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्रधानाचार्य बनी रहीं। उनका बाल–विवाह हुआ परंतु उन्होंने अविवाहित की भांति जीवन–यापन किया। प्रतिभावान कवयित्री और गद्य लेखिका महादेवी वर्मा साहित्य और संगीत में निपुण होने के

साथ–साथ कुशल चित्रकार और सृजनात्मक अनुवादक भी थीं। उन्हें हिंदी साहित्य के सभी महत्वपूर्ण पुरस्कार प्राप्त करने का गौरव प्राप्त है। भारत के साहित्य आकाश में महादेवी वर्मा का नाम ध्रुव तारे की भांति प्रकाशमान है। गत शताब्दी की सर्वाधिक लोकप्रिय महिला साहित्यकार के रूप में वे जीवन भर पूजनीय बनी रहीं।

टिप्पणी

महादेवी जी की शिक्षा इंदौर के मिशन स्कूल से प्रारम्भ हुई। साथ ही संस्कृत, अंग्रेजी, संगीत तथा चित्रकला की शिक्षा अध्यापकों द्वारा घर पर ही दी जाती रही। विवाहोपरान्त महादेवी जी ने 1919 में क्रास्टवेथ गर्ल्स कॉलेज, इलाहाबाद में प्रवेश लिया और कॉलेज के छात्रावास में रहने लगीं। 1921 में महादेवी जी ने आठवीं कक्षा में प्रान्त भर में प्रथम स्थान प्राप्त किया। यहीं पर उन्होंने अपने काव्य जीवन की शुरुआत की। वे सात वर्ष की अवस्था से ही कविता लिखने लगी थीं और 1925 तक जब उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की, वे एक सफल कवयित्री के रूप में प्रसिद्ध हो चुकी थीं। विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में आपकी कविताओं का प्रकाशन होने लगा था। कालेज में सुभद्रा कुमारी चौहान के साथ उनकी घनिष्ठ मित्रता हो गई। सुभद्रा कुमारी चौहान महादेवी जी का हाथ पकड़कर सखियों के बीच में ले जातीं और कहतीं–*''सुनो, ये कविता भी लिखती हैं।''* 1932 में जब उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम.ए. पास किया तब तक उनके दो कविता संग्रह 'नीहार' तथा 'रश्मि' प्रकाशित हो चुके थे।

महादेवी का कार्यक्षेत्र लेखन, संपादन और अध्यापन रहा। उन्होंने इलाहाबाद में प्रयाग महिला विद्यापीठ के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान किया। यह कार्य अपने समय में महिला–शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी कदम था। इसकी वे प्रधानाचार्य एवं कुलपति भी रहीं। 1932 में उन्होंने महिलाओं की प्रमुख पत्रिका 'चांद' का कार्यभार संभाला। 1930 में नीहार, 1932 में रश्मि, 1934 में नीरजा, तथा 1936 में सांध्यगीत नामक उनके चार कविता संग्रह प्रकाशित हुए। 1939 में इन चारों काव्य संग्रहों को उनकी कलाकृतियों के साथ वृहदाकार में 'यामा' शीर्षक से प्रकाशित किया गया। उन्होंने काव्य, गद्य, शिक्षा एवं चित्रकला सभी क्षेत्रों में नए आयाम स्थापित किए। इसके अतिरिक्त उनकी 18 काव्य और गद्य कृतियां हैं जिनमें मेरा परिवार, स्मृति की रेखाएं, पथ के साथी, शृंखला की कड़ियां, अतीत के चलचित्र प्रमुख हैं। सन 1955 में महादेवी जी ने इलाहाबाद में 'साहित्यकार संसद' की स्थापना की और पं. इलाचंद्र जोशी के सहयोग से साहित्यकार का संपादन संभाला। यह इस संस्था का मुखपत्र था। उन्होंने अपने जीवन का अधिकांश समय उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद नगर में बिताया। 11 सितम्बर, 1987 को इलाहाबाद में रात 9 बजकर 30 मिनट पर उनका देहांत हो गया।

महादेवी वर्मा की प्रमुख रचनाएं

कविता संग्रह

1. नीहार (1930)
2. रश्मि (1932)
3. नीरजा (1934)
4. सांध्यगीत (1936)
5. दीपशिखा (1942)

टिप्पणी

6. सप्तपर्णा (अनुदित–1959)

7. प्रथम आयाम (1974)

8. अग्निरेखा (1990)

महादेवी वर्मा के अन्य अनेक काव्य संकलन भी प्रकाशित हैं, जिनमें उपर्युक्त रचनाओं में से चुने हुए गीत संकलित किये गये हैं, जैसे आत्मिका, परिक्रमा, सन्धिनी, यामा, गीतपर्व, स्मारिका, नीलाम्बरा आदि।

गद्य साहित्य

- रेखाचित्र : अतीत के चलचित्र (1941) और स्मृति की रेखाएं (1943),
- संस्मरण : पथ के साथी (1956) मेरा परिवार (1972) और संस्मरण (1983)
- चुने हुए भाषणों का संकलन : संभाषण (1974)
- निबंध : शृंखला की कड़ियां (1942), विवेचनात्मक गद्य (1942), साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध (1962), संकल्पिता (1969)
- ललित निबंध : क्षणदा (1956)
- कहानियां : गिल्लू
- संस्मरण, रेखाचित्र और निबंधों का संग्रह : हिमालय (1963)

वे अपने समय की लोकप्रिय पत्रिका 'चांद' तथा 'साहित्यकार' मासिक की भी संपादक रहीं।

बाल साहित्य

- ठाकुरजी भोले हैं
- आज खरीदेंगे हम ज्वाला।

प्रमुख सम्मान

काव्य संग्रह 'यामा' के लिये 1982 में ज्ञानपीठ सम्मान, मंगलाप्रसाद पारितोषिक, पद्मभूषण, सक्सेरिया पुरस्कार, द्विवेदी पदक, भारत भारती (1943), पद्म विभूषण (1988, मरणोपरांत) आदि अनेक सम्मानों से सम्मानित।

2.2.1 'नारीत्व का अभिशाप' निबन्ध का मूल पाठ

चाहे हिन्दू की गौरव–गाथा से आकाश गूँज रहा हो, चाहे उसके पतन से पाताल काँप उठा हो, परंतु उसके लिए 'न सावन सूखे न भादों हरे' की कहावत ही चरितार्थ होती रही है। उसे अपने हिमालय को लजा देने वाले उत्कर्ष तथा समुद्र–तल की गहराई से स्पर्धा करने वाले अपकर्ष दोनों का इतिहास आँसुओं से लिखना पड़ा है और सम्भव है, भविष्य भी लिखना पड़े। प्राचीन–से–प्राचीनतम काल में जब उसने त्याग, संयम तथा आत्मदान की आग में अपना सारा व्यक्तित्व, सारी सजीवता और मनुष्य–स्वभावोचित इच्छाएँ तिल–तिल गलाकर उन्हें कठोर आदर्श के साँचे में ढालकर एक देवता की मूर्ति गढ़ डाली तब भी क्या संसार विस्मित हुआ या मनुष्यता कातर हुई? क्या नारी के बड़े–से–बड़े त्याग को, आत्म–निवेदन को, संसार ने अपना अधिकार नहीं किन्तु

उसका अद्‌भुत दान समझकर नम्रता से स्वीकार किया है? कम–से–कम इतिहास तो नहीं बताता कि उसके किसी बलिदान को पुरुष ने उसकी दुर्बलता के अतिरिक्त कुछ और समझने का प्रयत्न किया।

टिप्पणी

अग्नि में बैठकर अपने–आपको पतिप्राणा प्रमाणित करने वाली स्फटिक–सी स्वच्छ सीता में नारी की अनन्त युगों की वेदना साकार हो गयी है। कौन कह सकता है, उस भागते हुए युग ने अपनी उस अलौकिक कृति, अपने मनुष्यत्व की क्षुद्र सीमा में बँधे विशाल देवत्व की ओर एक बार मुड़कर देखने का भी कष्ट सहा! मनुष्य की साधारण दुर्बलता से युक्त दीन माता का वध करते हुए न पराक्रमी परशुराम का हृदय पिघला, न मनुष्यता की असाधारण गरिमा से गुरु सीता को पृथ्वी में समाहित करते हुए राम का हृदय विदीर्ण हुआ। मानो पुरुष–समाज के निकट दोनों जीवनों का एक ही मूल्य था। एक जीवित व्यक्ति का इतना कठोर त्याग, इतना निर्मम बलिदान दूसरा हृदयवान व्यक्ति इतने अकातर भाव से स्वीकार कर सकता है, यह कल्पना में भी क्लेश देती है, वास्तविकता का तो कहना ही क्या!

इस विषमता का युगान्तरदीर्घ कारण केवल एक ही कहा जा सकता है दुर्बलता, जिसका प्रायः कोमलता के नाम से नामकरण किया जाता है। नारी के स्वभाव में कोमलता के आवरण में जो दुर्बलता छिप गयी है वही उसके शरीर में सुकुमारता बन गयी। यह सत्य नहीं है कि वह इस दुर्बलता पर विजय नहीं पा सकती, पर यह निर्विवाद सिद्ध है कि वह अनादि काल से उसे अपना अलंकार समझती रहने के कारण त्यागने पर उद्यत ही नहीं होती। उसके विचार में इसके बिना नारीत्व अधूरा है। दुर्बलता मनुष्य–जीवन का अभिशाप रही है और रहेगी, परंतु शरीर और मन दोनों से संबंध रखने वाली दुर्बलताओं में कौन घोरतर अभिशाप है, यह कहना कठिन है। समय–विशेष तथा अवस्था विशेष के अनुसार हम पशुबल तथा मानसिक बल प्रयोग करने पर विवश होते हैं और समय तथा अवस्था के अनुसार ही हमारे लिए मानसिक और शारीरिक दुर्बलताएँ अभिशाप सिद्ध होती रही हैं। जीवन में इन दोनों शक्तियों का समन्वय ही सफलता का विधायक रहा है अवश्य, परंतु यह कहना असत्य न होगा कि प्रायः एक शक्ति की न्यूनता दूसरी की अधिकता से भर जाती है। विशेषकर नारी के लिए पशुबल की न्यूनता को आत्मबल से पूर्ण कर लेना स्वभाव सिद्ध है। वह यदि सम्मुख युद्ध में अस्त्र–संचालन द्वारा प्रद्विन्द्वियों को विस्मित कर सकी है तो बिना अस्त्र के या बलदर्शन के असंख्य विपक्षियों से घिरी रहकर भी अपने सम्मान की रक्षा कर चुकी है।

नारी ने अपनी शक्ति को कभी जाना और कभी नहीं जाना। वर्तमान युग तो उसके न जानने की ही करुण कहानी है। नारीत्व की कोमलता नाम से पुकारी जाने वाली दुर्बलता के साथ सदा से बँधी हुई वेदना और तज्जनित आपत्ति प्रत्येक युग तथा प्रत्येक परिस्थिति में नवीन रूप में आती रही है, परंतु उसकी वर्तमान दशा करुणतम है। उसके आज के और अतीत के बलिदानों में उतना ही अंतर है जितना स्वेच्छा से स्वीकृत नारीत्व की गरिमा से गौरववती के जौहरव्रत और बलात् लाठियों से घेर–घार कर बलिपशु के समान झोंकी जाने वाली नारी के अग्निप्रवेश में। आज की मातृशक्ति की वेदना–भार से जर्जर परंतु अपने कष्ट के कारण या निराकरण के साधनों से एकदम अनभिज्ञ मूक पशु के करुण नेत्रों से बहती हुई अश्रुधारा के समान ही निरंतर प्रवाहित हो रही है। वह स्वयं अपनी वेदना के कारण नहीं जानती और न अपने असह्य कष्ट

टिप्पणी

के प्रतिकार की भावना से परिचित है। जिन कष्टों से उसके जीवन का एक बार भी संस्पर्श हो जाता है उन्हें वह अपने कर्तव्य की परिधि में रख लेती है। कष्ट सहते–सहते उसमें क्लेश की तीव्रता के अनुभाव करने की चेतना भी नहीं रही, उसकी उपयुक्तता–अनुपयुक्तता पर विचार करना तो दूर की बात है। हमारे समाज ने उसे पाषाण प्रतिमा के समान सर्वदा एकरूप, एकरस, जीवित मनुष्य के स्पन्दन, कम्पन और विकास से रहित होकर जीने की आज्ञा दी है, अतः युगों से इसी प्रकार जीवित रहने का प्रयास करते–करते यदि वह निर्जीव–सी हो उठी तो आश्चर्य की क्या बात है! हम जब बहुत समय तक अपने किसी अंग से उसकी शक्ति से अधिक कार्य लेते रहते हैं तो वह शिथिल और संज्ञाहीन–सा हुए बिना नहीं रहता। नारी जाति भी समाज को अपनी शक्ति से अधिक देकर अपनी सहन–शक्ति से अधिक त्याग को दहला देने वाली, कठोर–से–कठोर व्यक्ति को रुला देने वाली यन्त्रणाएँ वह इतने मूक भाव से सहती रह सकती!

हिन्दू नारी का, घर और समाज इन्हीं दो से विशेष सम्पर्क रहता है। परंतु इन दोनों ही स्थानों में उसकी स्थिति कितनी करुण है इसके विचारमात्र से ही किसी भी सहृदय का हृदय काँपे बिना नहीं रहता। अपने पितृगृह में उसे वैसा ही स्थान मिलता है जैसा किसी दुकान में उस वस्तु को प्राप्त होता है जिसके रखने और बेचने दोनों ही में दुकानदार को हानि की सम्भावना रहती है। जिस घर में उसके जीवन को ढालकर बनाना पड़ता है, उसके चरित्र को एक विशेष रूप–रेखा धारण करनी पड़ती है, जिस पर वह अपने शैशव का सारा स्नेह ढलकाकर भी तृप्त नहीं होती उसी घर में वह भिक्षुक के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। दुःख के समय अपने आहत हृदय और शिथिल शरीर को लेकर वह उसमें विश्राम नहीं पाती, भूल के समय वह अपना लज्जित मुख उसके स्नेहांचल में नहीं छिपा सकती और आपत्ति के समय एक मुट्ठी अन्न की भी उस घर से आशा नहीं रख सकती।ऐसी ही है उसकी वह अभागी जन्मभूमि, जो जीवित रहने के अतिरिक्त और कोई अधिकार नहीं देती। पतिगृह, जहाँ इस उपेक्षित प्राणी को जीवन का शेष भाग व्यतीत करना पड़ता है, अधिकार में उससे कुछ अधिक परन्तु सहानुभूति में उससे बहुत कम है इसमें संदेह नहीं। यहाँ उसकी स्थिति पलभर में आशंका से रहित नहीं। यदि वह विद्वान पति की इच्छानुकूल विदुषी नहीं है तो उसका स्थान दूसरी को दिया जा सकता है, यदि वह सौन्दर्योपासक पति की कल्पना के अनुरूप अप्सरा नहीं है तो उसे अपना स्थान रिक्त कर देने का आदेश दिया जा सकता है, यदि वह पति–कामना का विचार करके सन्तान या पुत्रों की सेना नहीं दे सकती, यदि यह रुग्ण है या दोषों का नितान्त अभाव होने पर भी पति की अप्रसन्नता की दोषी है तो भी उसे उस घर में दासत्व स्वीकार करना पड़ेगा।

इस विषय में उसके 'क्यों' का उत्तर देने को गृहस्वामी बाध्य नहीं, समाज बाध्य नहीं और धर्म भी बाध्य नहीं। यदि स्त्री ऐसे घर को, ऐसी अस्थायी स्थिति को संतोषजनक न समझे तो उसे इन सबके निकट दोषी होना पड़ेगा। उसे अपने विषय में कुछ सोचने–समझने का अधिकार नहीं, क्योंकि उसका जीवन 'वृद्धा रोगवश जड़ धन हीना' में से जो पिता का बोझ हल्का करने में समर्थ हो गया उसी का जन्म–जन्मांतर के लिए निवेदित हो गया। चाहे वह स्वर्णपिंजर की बंदिनी हो चाहे लौहपिंजर की, परंतु बन्दिनी तो वह है ही ओर ऐसी कि जिसके निकट स्वतंत्रता का विचार तक

टिप्पणी

पाप कहा जाएगा। 'स्त्री न स्वातन्त्र्यम् अर्हति' शास्त्र ने कहा है न! जिसके चरणों में उसका जीवन निवेदित है यदि वह उसे सन्दूक में बन्द बालक की गुड़िया के समान संसार की दृष्टि से, सूर्य की धूप और पवन के स्पर्श से बचाकर रखना चाहता है तो भी वह इस कार्य के लिए उसे साधुवाद ही देना उचित समझेंगे। उनके विचार में नारी मानवी नहीं, देवी है और देवताओं को मनुष्य के लिए आवश्यक सुविधाओं का करना ही क्या है! नारी के देवत्व की कैसी विडम्बना है!

यदि दुर्भाग्य से स्त्री के मस्तक का सिन्दूर धुल गया तब तो उसके लिए संसार ही नष्ट हो गया। यह ऐसा अपराध है जिसके कारण उसे मृत्यु–दण्ड से भी भीषणतर दण्ड भोगते हुए तिल–तिल घुलकर जीवन के शेष, युग बन जाने वाले क्षण व्यतीत करने होते हैं। ऐसी परिस्थिति में यदि दीर्घकाल तक गुड़िया बनी रहने वाली स्त्री मानव के उत्तरदायित्व से युक्त होती है तो उसे अपने अभिशापमय जीवन के साथ अनेक दुधमुँहे बालकों को लेकर ऐसे अन्धकार में मार्ग ढूँढना पड़ता है जिसमें प्रत्येक यात्री दूसरे को भ्रान्ति में डाल देना अपराध ही नहीं समझता। यदि वह अबोध बालिका है तो भी समाज और परिवार, सनातन नियम के पालन में अपने–आपको राजा हरिश्चन्द्र से अधिक दृढ़प्रतिज्ञ प्रमाणित करने में पीछे न रहेंगे। जिन मानवीय दुर्बलताओं को वे स्वयं अविरत संयम और अटूट साधना से भी जीवन के अन्तिम क्षणों तक न जीत सकेंगे उन्हीं दुर्बलताओं को, किसी भूली हुई अस्पष्ट सुधि द्वारा जीत लेने का आदेश वे उन अबोध बालिकाओं को दे डालेंगे जो जीवन से अपरिचित हैं। उनकी आज्ञा है, उनके शास्त्रों की आज्ञा है और कदाचित् उनके निर्मम ईश्वर की भी आज्ञा है कि वे जीवन की प्रथम अँगड़ाई को अन्तिम प्राणायाम में परिवर्तित कर दें, आशा की पहली सुनहली किरण को विषाद के निविड़ अन्धकार में समाहित कर दें और सुख के मधुर पुलक को आँसुओं में बहा डालें। इस विराग की साधना के लिए उन्हें अनन्त प्रलोभनों से भरे हुए, वैभव से सजे हुए और बधिकों से पूर्ण स्थान के अतिरिक्त कोई एकान्त स्थान भी मिल नहीं पाता।

इतने प्रकार की शारीरिक और मानसिक कष्टों को देखकर भी स्त्री के दुर्भाग्य को संतोष नहीं हुआ, इसका प्रमाण आज की नारी–अपहरण की समस्या है। नारी–जीवन की उस करुण कहानी का इससे घोरतर उपसंहार हो भी क्या सकता था? जिस रूप से, जिन साधनों के द्वारा इस लोमहर्षक कार्य का सम्पादन हो रहा है उसे सुनकर निर्जीव भी जाग जाते, परंतु हमारी निद्रा तो मृत्यु की महानिद्रा को भी लजा देने वाली हो गई है, बिना सर्वनाश के उसका टूटना सम्भव नहीं। अपहृत हिन्दू स्त्रियों में कुछ तो ऐसी रहती हैं जिनका जीवन गृह और समाज की अमानुषिक यातनाओं से इतना दुर्वह हो जाता है कि छुटकारे का कोई भी द्वार उन्हें बुरा नहीं लगता और वे बहकावे में आकर एक नरक से बचने के लिए दूसरे नरक की शरण लेने की उद्यत हो जाती हैं। उनका आहत हृदय इतना चेतनाशून्य हो उठता है कि उसमें मानापमान का अनुभव करने की शक्ति ही नहीं रह जाती है। उन्हें तो घायल के समान क्षणभर के लिए ऐसा स्थान चाहिए जहाँ उसके शीर्ण शरीर को कुछ विश्राम मिल सके, अतः सहानुभूति के, चाहे वह सच्ची हो या झूठी, दो शब्द उन्हें बेदाम खरीद सकते हैं। यदि ऐसे हृदयों को समय पर हमीं से आश्वासन तथा सान्त्वना मिल सकती, यदि हमीं इन्हें मनुष्य समझ सकते, वर्षों से जम–जमकर इनके जीवन को पाषाण बनाने वाली आँसुओं

टिप्पणी

की करुण कहानी सुन लेते और इनके असह्य दुःखभार को अपनी सहानुभूति से हल्का करने का प्रयत्न कर सकते तो आज का इतिहास कुछ और ही हो जाता। परंतु हम पशु–पक्षियों को, पाषाणों को, अपनी सहानुभूति बाँट सकते हैं, नारी को निर्मम आदेश के अतिरिक्त और कुछ नहीं दे पाते। देवता की भूख हम समझते हैं, परंतु मानवीय ही नहीं! इसके अतिरिक्त ऐसी महिलाओं की संख्या भी कम नहीं, जिनका बलात अपहरण किये जाने पर भी खोज के लिए विशेष प्रयत्न नहीं होता। पत्रों में प्रकाशित ऐसी घटनाओं की संख्या भी कम नहीं, अप्रकाशित अपहरण कहानियों के विषय में तो कुछ कहना ही व्यर्थ है। इन अभागिनियों के उद्धार के लिए जो उपाय किया जा रहा है वह तो बहुत सराहनीय नहीं जान पड़ता। जिस समाज में ऐसी घटनाएँ 12–13 की संख्या में प्रतिदिन घटित होती हों उसके युवकों को सुख की नींद आना संसार का आठवाँ आश्चर्य है।

कुछ अधिक तर्कशील पुरुषों का कहना है कि स्त्रियों को स्वयं अपनी रक्षा करने से कौन रोकता है? इस कथन पर हँसना चाहिए या रोना, यह नहीं कहा जा सकता। युगों की कठोर यातना और निर्मम दासत्व ने स्त्रियों को अपनापन भी भुला देने पर विवश न किया होता तो क्या आज ये अपने सम्मान की रक्षा में समर्थ न हो सकतीं? आज विवश पशु के समान इन्हें हाँक ले जाना इसलिए सहज है कि ये पशुओं की श्रेणी में बैठा दी गईं और ज्ञानशून्य कर्म के अतिरिक्त और किसी वस्तु का इन्हें बोध नहीं है। आज भी इनमें जो मनुष्य कहलाने की अधिकारी हैं उन्हें अपनी रक्षा के लिए शस्त्र या सैनिक नहीं रखने पड़ते! पृथ्वी के एक छोर से दूसरे छोर तक उनकी गति अबाध है। उनके जीवन में साहस की शक्ति और आत्मसम्मान की गरिमा, प्राणों में आशा और सुनहली कल्पना है, परंतु ऐसी सजीव नारियाँ उँगलियों पर गिनने योग्य हैं। इच्छा और प्रयत्न से अन्य बहनें भी अपनी रक्षा में स्वयं समर्थ हो सकती हैं इसमें सन्देह नहीं, परन्तु इस इच्छा और प्रयत्न का जन्म उनके हृदय में सहज ही न हो सकेगा। वे तो आत्मनिर्भरता भूल ही चुकी हैं, फिर उसकी उपयोगिता कैसे समझ सकेंगी। उनके जीवन को सुव्यवस्थित करने तथा उन्हें मनुष्यता की परिधि में लौटा लाने का प्रयत्न कुछ विदुषी बहिनें तथा पुरुष समाज ही कर सकता है। परंतु यह न भूलना चाहिए कि जिस समय घर में आग लती है उसी समय कुआँ खोदने–वाले को राख के अतिरिक्त और कुछ नहीं मिलता, इसी से आपत्ति का धर्म सम्पत्ति के धर्म से भिन्न कहा गया है। इस समय आवश्यकता है एक ऐसे देशव्यापी आन्दोलन की जो सबको सजग कर दे, उन्हें इस दिशा में प्रयत्नशीलता दे और नारी की वेदना का यथार्थ अनुभव करने के लिए लगने वाले इन अत्याचारों का तुरंत अन्त हो जाए, अन्यथानारी के लिए नारीत्व अभिशाप तो है ही।

('शृंखला की कड़ियां' से)

2.2.2 'नारीत्व का अभिशाप' निबन्ध का सार

छायावादी प्रकृति, सरल, तरल सौन्दर्य व प्रेम, विरह और वेदना का स्वर संघटन कर उस विरह वेदना की रहस्यमयी अध्यात्म चेतना की अंतरंग अनुभूतियों से सजा–संवार कर, अपने को काव्यमय स्वरों में जिसने महनीय, काम्य एवं ग्राह्य बना दिया, उन महान भूति का नाम है– श्रीमती महादेवी वर्मा। इनका साहित्यिक व्यक्तित्व बहुआयामी है,

टिप्पणी

क्योंकि वह काव्य, रेखाचित्र, निबंन्ध और आलोचना साहित्य से निर्मित हुआ है। वस्तुतः इनके द्वारा सृजित साहित्य की दो धुरियां हैं– एक धुरी उनका काव्य है, जिसमें करुणा और वेदना की अजस्र धारा प्रवाहित हुई है। दूसरी धुरी गद्य साहित्य है जिसमें उनकी सामाजिक यथार्थ दृष्टि एवं सामाजिक चिंतनधारा है,जिसमें भारतीय नारी विषयक चिंतन व्यवस्थित है।

इनके निबन्धों में से एक प्रमुख निबंध है 'नारीत्व का अभिशाप' जिसमें भारतीय नारी की परवश्ता का रेखांकन दृष्टिगोचर होता है किंतु उन्होंने जिन सवालों को उठाया है वह आक्रोश नहीं वरन एक प्रकार की शालीनता है। इसलिए कि वे सृजन पर विश्वास करती है और उनका ध्वंस द्वारा पुनर्सृजन पर विश्वास नहीं है। इससे स्पष्ट होता है कि वे भारतीय समाज की विकृतियों को सृजन के द्वारा मिटाना चाहती है, जिसमें भारतीय नारी प्रारंभ से ही अनेक कठिनाइयों का सामना कर रही है।

उनका निबन्ध 'नारीत्व का अभिशाप' समाज केन्द्रित है फलतः तटस्थ और निष्पक्ष है। वे नारी जीवन की विडम्बनाओं के लिए केवल पुरुषों को ही दोषी नहीं ठहरातीं, बल्कि महिलाओं को भी समान रूप से उत्तरदायी ठहराती हैं। 'अपनी बात' में वह कहती हैं, "समस्या का समाधान समस्या के ज्ञान पर निर्भर करता है और वह ज्ञान ज्ञाता की अपेक्षा रखता है। अतः अधिकार के इच्छुक व्यक्ति को अधिकारी भी होना चाहिए। सामान्यतः भारतीय नारी में इसी विशेषता का अभाव मिलेगा। भारतीय नारी की अदृष्ट विडम्बना को उजागर करते हुए उन्होंने लिखा है कि एक ओर तो वह देवी के प्रतिष्ठापूर्ण पद पर शोभित है तो दूसरी ओर परवश भी। उनका कथन है, "वह पवित्र देव मन्दिर की अधिष्ठात्री देवी भी बन चुकी है और अपने गृह के मलिन कोने की बन्दिनी भी।"

महादेवी जी ने इस निबन्ध में समाज की पूर्णता हेतु पुरुष एवं नारी के स्वतंत्र व्यक्तित्व को आवश्यक माना। उनकी दृष्टि में नारी को पुरुष की छाया मात्र मानना नारी जाति के लिए अभिशाप है। उन्होंने नारियों को पुरुषोचित अनुकरण वृत्ति को उचित नहीं माना, क्योंकि इससे सामाजिक श्रृंखला शिथिल तथा व्यक्तिगत बंधन और संकुचित होते हैं। इसीलिए वे भारतीय समाज में नारी की दयनीय स्थिति के लिए नारी के अर्थहीन अनुकरण को जिम्मेदार ठहराती हैं– "पुरुष के अंधानुकरण ने स्त्री के व्यक्तित्व को अपना दर्पण बनाकर उसकी उपयोगिता तो सीमित कर दी, साथ ही समाज को भी अपूर्ण बना दिया।" दोनों की तुलना करती हुई वे कहती है कि "पुरुष समाज का न्याय है, स्त्री दया, पुरुष प्रतिशोधमय क्रोध है, स्त्री क्षमा, पुरुष शुष्क कर्तव्य है, स्त्री सरस सहानुभूति और पुरुष बल, स्त्री हृदय की प्रेरणा।" इस प्रकार उनकी दृष्टि में स्त्री पुरुष के प्राकृतिक मानसिक वैपरीत्य द्वारा ही समाज सामंजस्यपूर्ण व अखण्ड हो सकता है।

महादेवी जी ने सामाजिक बंधनों को उनके वैयक्तिक विकास में बाधक माना। चूंकि वह भी समाज का आधा हिस्सा है अतः उसकी उपेक्षा के प्रति सचेत करते हुए लिखा– "जो देश के भावी नागरिकों की विधाता हैं, उनकी प्रथम और परम गुरु हैं, जो जन्म भर अपने आपको मिटाकर, दूसरों को बनाती रहती हैं, वे केवल तभी तक आदरहीन मातृत्व तथा अधिकार शून्य पत्नीत्व स्वीकार करती रह सकेंगी, जब तक उन्हें अपनी शक्तियों का बोध नहीं होता।"

टिप्पणी

नारी के महान से महान त्याग को भी संसार ने उच्च दृष्टि से स्वीकार न कर उसे उसकी दुर्बलता माना। 'नारीत्व का अभिशाप' निबन्ध में अपने विचार प्रकट करते हुए कहा, "क्या नारी के बड़े से बड़े त्याग को, आत्मनिवेदन को संसार ने अपना अधिकार नहीं, किंतु उसका अद्‌भुत दान समझकर नम्रता से स्वीकार किया है? कम से कम इतिहास तो नहीं बताता कि उसके किसी बलिदान को पुरुष ने उसकी दुर्बलता के अतिरिक्त कुछ और समझने का प्रयत्न किया।" उन्हें इस बात का भी क्षोभ है कि नारी ने अपनी शक्ति को समझने का कभी प्रयास ही नहीं किया। वह स्वयं अपनी वेदना के कारणों को नहीं जानती और न अपने असह्य कष्ट के प्रतिकार की भावना से परिचित है। वे नारी की कोमलताजनित दुर्बलता को भी अभिशाप मानती हैं, जिसके कारण वह उसे जीवन की स्वाभाविकता मान लेती है– "वह अपनी प्रकृतिजनित कोमलता को त्रुटि चाहे मानती हो, परंतु उसे स्वाभाविक अवश्य समझती है, अन्यथा उसके इतने प्रयास का कोई अर्थ न होता।" आधुनिक नारियों की स्वच्छन्द प्रवृत्ति व निरूद्देश्य गंतव्य को अनुचित ठहराते हुए उन्होंने प्राचीन नारियों के योगदान को तुलनात्मक दृष्टि से प्रस्तुत किया। आधुनिक नारी और प्राचीन नारी के बारे में वे कहती हैं, "आज की सुंदर नारी भी पुरुष के निकट और कोई विशेष महत्व नहीं रखती। उसे स्वयं भी इस कटु सत्य का बोध होता है, परंतु वह उसे परिस्थिति का दोष मात्र समझती है।... पहले की नारी जाति केवल रूप और वय का पाथेय लेकर संसार यात्रा के लिए नहीं निकली थी। उसने संसार को वह दिया जो पुरुष नहीं दे सकता था, अतः उसके अक्षय वरदान का वह आज तक कृतज्ञ है।"

महादेवी जी ने नारी के घर और बाहर के कर्तव्यों एवं अधिकारों की कठिनाइयों पर भी चिंतन किया है। उनका मानना है कि युगों से नारी का कार्यक्षेत्र घर तक सीमित रहा है, किंतु आधुनिक काल में उसके कर्तव्यों का विस्तार हुआ है। वे कहती हैं "वास्तव में स्त्री भी अब केवल रमणी या भार्या नहीं रही, वरन् घर के बाहर भी समाज का एक विशेष अंग तथा महत्वपूर्ण नागरिक है, अतः उसका कर्तव्य भी अनेकाकार हो गया है, जिसके पालन में कभी–कभी ऐसे संघर्ष के अवसर आ पड़ते हैं जिसमें किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाना पड़ता है।" महादेवी जी ने पुरुषों की इस धारणा को नकार दिया है कि आधुनिक शिक्षा प्राप्त स्त्रियां अच्छी गृहणियों का बाहर आकर इस क्षेत्र में कुछ करने की स्वतंत्रता देनी होगी। जब तक हम अपने यहां गृहणियों को बाहर आकर इस क्षेत्र में कुछ करने की स्वतंत्रता न देंगे, तब तक हमारी शिक्षा में व्याप्त विष बढ़ता ही जाएगा। यहां वे समाज से प्रश्न करती हैं– "समाज की स्थिति के लिए मातृत्व पूज्य है, व्यक्ति की पूर्णता के लिए सहधर्मिणीत्व भी श्लाघ्य है, परन्तु क्या यह माना जा सकता है कि सौ में से सौ स्त्रियों की शारीरिक तथा मानसिक स्थिति केवल इन्हीं दो उत्तरदायित्वों के उपयुक्त होगी?

2.2.3 व्याख्यांश

1. अग्नि में बैठाकर अपने आपको पतिप्राणा ..... वास्तविकता का तो कहना ही क्या!

टिप्पणी

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यांश महादेवी वर्मा के प्रसिद्ध निबंध 'नारीत्व का अभिशाप' से लिया गया है। अपने इस निबंध में लेखिका ने भारतीय महिला की दुर्दशा को रेखांकित किया है।

प्रसंग– हमारे पुराणों व मिथकों में नारी के प्रति जो दुर्भावना व्याप्त नजर आती है वह हजारों साल से होकर वास्तविक जीवन में भी चली गई है। जिस तरह स्वच्छ व निर्मल चरित्र की सीता को अग्नि में चरित्र परीक्षा के नाम पर झोंका गया, उसका वर्णन हमारे समाज में स्त्रियों के प्रति चिर क्रूरता को दर्शाता है।

व्याख्या– लेखिका के अनुसार यह कितनी विडंबनापूर्ण बात है कि समाज के कर्णधारों ने मनुष्य में छिपे देवत्व को पहचानने की बजाय उसे एक सीमित व संकुचित दायरे में ही समेट देना बेहतर समझा। हम अपनी सीमाओं को लांघ नहीं पाए। हम सोच–विचार व चिंतन की उन ऊंचाइयों को छूने में असमर्थ रहे जहां प्रेम, न्याय, समानता की सहज सिद्धि हो जाती है और हमारे समाज में स्त्री की दुर्दशा का यही कारण है।

हमारे पुराण ऐसे उदाहरणों से भरे पड़े हैं जहां पिता की आज्ञा पर परशुराम अपनी माता का वध कर देते हैं और जरा भी विचलित नहीं होते; जहां सीता राम के सामने भूमि में समा जाती हैं लेकिन मर्यादापुरुषोत्तम राम को इससे तनिक भी फर्क नहीं पड़ता। हमें इस स्थिति पर विचार करने की जरूरत है। किंतु यह आश्चर्य की बात है कि राम सरीखा एक उदात्त चरित्र व हमारा समाज एक पवित्र स्त्री का जीवन परित्याग बिना विचलित हुए कैसे स्वीकार कर सकता है? आश्चर्य की बात तो यह भी है कि आज भी इन प्रसंगों पर उँगली उठाने वालों को धर्म विरोधी करार दिया जाता है।

विशेष

- इस गद्यांश में मिथकीय नारी चरित्रों की दुर्दशा के माध्यम से भारतीय नारी की चिर दारूण अवस्था को रेखांकित किया गया है।
- व्यंग्यात्मक भाषा का प्रयोग है जो नारी दुर्दशा के प्रति सार्थक रूप से करूणा जगाती है।
- तत्समनिष्ठ शब्दावली का प्रवाहपूर्ण प्रयोग है।

2. यदि दुर्भाग्य से स्त्री के मस्तक का ..... कोई एकांत स्थान भी मिल नहीं पाता।

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यांश महादेवी वर्मा के प्रसिद्ध निबन्ध 'नारीत्व का अभिशाप' से लिया गया है। अपने इस निबन्ध में लेखिका ने भारतीय महिला की दुर्दशा को रेखांकित किया है।

प्रसंग– स्त्री के दारूण वैधव्य को रेखांकित करते हुए कहा है कि स्त्री की दशा यूं ही बदतर है किंतु यदि कहीं दुर्भाग्य से उसके पति की मृत्यु हो जाए और वह विधवा हो जाए तब तो उसके दुर्भाग्य की कोई सीमा ही नहीं रह जाती। उसके वैधव्य को समाज ऐसे देखता है जैसे वह कोई अनहोनी न होकर उस स्त्री द्वारा किया गया कोई भीषण अपराध हो।

व्याख्या– लेखिका ने अपराध भी ऐसा जिसका दंड उसे आजीवन भोगते रहना है। पूरे जीवन वह रसहीन, अलंकारहीन, आनंद व प्रसन्नता से कोसों दूर ऐसा जीवन जीने के लिए बाध्य कर दी जाती है जिसकी तुलना मृत्यु से ही की जा सकती है।

टिप्पणी

बहुधा उसकी स्थिति दर–दर की ठोकरें खानेवाली हो जाती है क्योंकि न तो उसे ससुराल पक्ष में अपेक्षति मान–सम्मान व स्थान मिलता है और न ही उसे अपने पैतृक घर–परिवार में शरण मिलती है। उसे सब जगह दुत्कारा जाता है और हेय दृष्टि से देखा जाता है। यहां तक कि बाल विवाह का शिकार हुई छोटी बच्चियों के साथ भी हमारा समाज इतनी क्रूरता से पेश आता है कि आज वे यंत्रवत घर की चौखट के भीतर कामकाज में खटती रहती हैं। न उनमें जान की उपस्थिति बची है न ही शोषण से लड़ने की ताकत। आज हमें स्त्री को पुनः सशक्त करने की जरूरत है और इसके लिए हमें उसके साथ खड़ा होना होगा।

विशेष

- इस गद्यांश में लेखिका ने शिक्षित पुरुष समाज पर व्यंग्यात्मक प्रहार किया है और उनके संकीर्ण सोच को उजागर किया है।
- प्रभावपूर्ण व ओजस्वी भाषा का प्रयोग है जो कथ्य को धारपूर्ण अर्थ प्रदान करने में सक्षम है।
- भाषा का प्रवाह देखते ही बनता है।

3. कुछ अधिक तर्कशील पुरुषों का कहना है ..... किसी वस्तु का इन्हें बोध नहीं है।

संदर्भ– उपरोक्त गद्यांश महादेवी वर्मा के प्रसिद्ध निबन्ध 'नारीत्व का अभिशाप' से लिया गया है। अपने इस निबन्ध में लेखिका ने भारतीय महिला की दुर्दशा को रेखांकित किया है।

प्रसंग– कुछ पढ़े–लिखे लोग ये आक्षेप करते हैं कि स्त्रियां स्वयं अपनी रक्षा क्यों नहीं करतीं? लेकिन वे भूल जाते हैं कि सदियों से लगातार स्त्रियों की स्थिति इतनी अशक्त और निःसहाय बना दी गई है कि उनकी पुनः खड़ा हो पाने की शक्ति क्षीण हो चुकी है और इसके लिए पूरी तरह से पुरुष समाज जिम्मेदार है।

व्याख्या– लेखिका का कहना है कि जब वे स्त्रियों की दुर्दशा की बात करती हैं तो कुछ तथाकथित शिक्षित जन तर्क देते हैं कि उन्हें अपनी रक्षा स्वयं करनी चाहिए जबकि वे यह बात भूल जाते हैं कि सहस्राब्दियों की दासता ने उन्हें अशक्त कर दिया है।

अतः उनका ऐसा कहना स्त्री का क्रूर उपहास करना है। स्त्रियों ने न जाने कितने युगों की क्रूर यातना झेली है, कितना अपमान सहा है, कितना शोषण सहा है, इसकी कोई तुलना नहीं की जा सकती। आज स्त्रियों की इस दशा की जिम्मेदार क्या वे खुद हैं? यदि नहीं तो पुरुष समाज इससे आज मुख नहीं मोड़ सकता। आज जिस स्थिति में स्त्रियों को पहुंचा दिया गया है वह किसी पशु से अधिक बेहतर नहीं है। आज उसने अपना आत्मसम्मान, आत्मविश्वास, स्वावलंबन खो दिया है; उसकी सारी शक्ति, सारी ऊर्जा बर्बर पुरुष समाज द्वारा सोख ली गई है, जिसे किसी भी तरह से जायज नहीं ठहराया जा सकता और मानवीय तो किसी भी दृष्टि से नहीं कहा जा सकता।

टिप्पणी

उन अबोध, मासूम लड़कियों से ऐसे कठोर जप–तप और नियम के पालन की अपेक्षा कर ली जाती है कि जिसके पालन की वे खुद कल्पना तक नहीं कर सकते। इसके लिए वे शास्त्रों व धर्मग्रंथों का बहाना बनाते हैं तथा इस कर्मकांड को शास्त्र का आदेश बताकर प्रचारित करते हैं। उन्हें यह कठोर तपस्वी जीवन इसी कुत्सित, लालची, ढोंगी और धर्मांध समाज के भीतर रहकर ही पूरा करना पड़ता है। इसके लिए उनके पास कोई एकांतिक स्थान भी नहीं है। अर्थात् इस तरह का तपस्वी जीवन जीने वाले योगी भी घर–परिवार, गांव–शहर छोड़कर दुर्गम पहाड़ों और जंगलों में चले जाते हैं जहां माया से उनका मन डांवाडोल न हो लेकिन विधवा स्त्री को इसी समाज में रहकर कठोरतम जीवन जीना पड़ता है। यह बेहद दुखद व शर्मनाक है।

विशेष

- विधवा स्त्री के जीवन की विडंबनाओं तथा उसकी दारूण दशा का कारुणिक वर्णन इस गद्यांश में किया गया है।
- व्यंग्यात्मक भाषा में सामाजिक विद्रूपता व विडंबना को रेखांकित किया गया है।
- प्रभावपूर्ण व प्रभावी भाषा है जिसका तीव्र प्रवाह देखते ही बनता है।

2.2.4 'नारीत्व का अभिशाप' (निबन्ध) का समीक्षात्मक अध्ययन

स्त्री, विशेषकर भारतीय समाज में स्त्रियों की दशा पर लिखे गए सभी लेखों व निबन्धों में महादेवी वर्मा के निबन्ध 'नारित्व का अभिशाप' का स्थान अप्रतिम व अभूतपूर्व है। निबन्ध के तत्वों के आधार पर इसकी समीक्षा निम्न प्रकार की जा सकती है–

विषय प्रतिपादन

विषय प्रतिपादन किसी निबंध का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष होता है। लेखक अपने निबन्ध के माध्यम से वस्तुतः किसी विषय के बारे में ही अपने विचार व भाव अभिव्यक्त करने का प्रयास करता है। ऐसे में यदि इस विषय के प्रतिपादन में किसी प्रकार का उलझाव या भटकाव आ जाए तो निबन्ध अपना प्रभाव खो देता है। अतः लेखक के लिए आवश्यक है कि वह मूल विषय से हटे बिना उसके तमाम पक्षों को उजागर करे। महादेवी वर्मा के इस निबन्ध का मूल विषय है– भारतीय समाज में स्त्री की दुर्दशा। यदि विषय प्रतिपादन की दृष्टि से देखें तो इस निबन्ध का कसाव देखते ही बनता है। लेखिका ने विषय से जुड़े तमाम पक्षों को अपने निबन्ध में एकाकार कर लिया है। धार्मिक, आध्यात्मिक, सामाजिक, पौराणिक दृष्टिकोणों से लेकर वर्तमान युग के मूल्यों के आधार पर लेखिका ने स्त्री दुर्दशा को कसौटियों पर कसा है तथा उसकी शोचनीय स्थिति को निष्कर्ष के रूप में प्रस्तुत किया है।

आत्माभिव्यंजना

आत्माभिव्यंजना निबन्ध का मूल स्वर है, जिसके बिना कोई भी निबन्ध, निबन्ध नहीं कहा जा सकता। वस्तुतः निबन्ध में लेखक का शुद्ध आत्मिक स्वरूप ही अभिव्यंजित होता है; निबन्ध लेखक के मानस स्वरूप का वास्तविक प्रतिबिंबन है। लेखिका ने भी स्वयं स्त्री होकर अपने आसपास के जनसमाज में स्त्री की शोचनीय स्थिति को करीब से न केवल देखा–सुना है बल्कि स्वयं स्त्री होने के नाते उसकी पीड़ा को व्यक्तिगत स्तर पर भी

टिप्पणी

गहराई से अनुभव किया है। यही कारण है कि पूरे निबन्ध में हमें लेखिका की प्रामाणिक उपस्थिति की अनुगूंज सुनाई देती है। अतः आत्माभिव्यंजना के आधार पर देखा जाए तो यह निबन्ध हिन्दी के उन गिन–चुने निबन्धों में शामिल किया जा सकता है जो लेखक की प्रामाणिक आत्माभिव्यक्ति के दस्तावेज हैं।

परिवेश

निबन्ध का लेखक जो कुछ भी निबन्ध के रूप में रचता है वह कल्पना के आधार पर लिखा गया गल्प नहीं होता, बल्कि वह उसके परिवेश का आत्मिक व निजी अंकन होता है। 'नारीत्व का अभिशाप' निबन्ध में भी लेखिका ने अपने परिवेश में चहुंओर व्याप्त नारी की दुर्दशा को प्रामाणिक रूप से अंकित किया है। यदि हम तत्कालीन समाज की बात करें तो स्वाधीनता संग्राम के समय में भारतीय नारी की स्थिति बहुत ही दारूण अवस्था में थी जिसका निरंतर अनुभव लेखिका द्वारा किया जा रहा था। हालांकि, आज भी इस स्थिति में बहुत क्रांतिकारी बदलाव नहीं हुआ है, तथापि उस समय नारी की स्थिति नारकीय ही कही जा सकती है।

भारतीय धर्मग्रंथों पर जीनेवाला सामाज स्त्री को हाशिए पर रखकर जी रहा था। उसके कर्तव्यों की जहां एक ओर कोई सीमा नहीं थी, वहीं अधिकार के नाम पर उसके पास कुछ भी नहीं था; फिर चाहे वह अधिकार संपत्ति का हो, संतान को हो अथवा जीवन का। वैधव्य जीवन तो जैसे पीड़ा की पराकाष्ठा थी जब उसे समाज चारों ओर से दुत्कारता था। धार्मिक आडंबर, बाह्याचार आदि हमारे समाज के मूल आधार थे जहां शास्त्रों की आज्ञा का निर्मम पालन किया जाता था। पुरुष समाज द्वारा रचे गए इन ग्रंथों में स्त्री के अधिकारों व आत्मसम्मान आधारित जीवन की कोई चर्चा तक नहीं थी। अतः स्वाभाविक ही हमारा परिवेश स्त्री के प्रति एक नकारात्मक उपेक्षा से ग्रसित था जहां उसका नाना प्रकार से शोषण किया जाता था। 'नारीत्व का अभिशाप' निबन्ध में परिवेश का बहुत ही प्रामाणिक चित्रण किया गया है जो पाठकों को सोच–विचार करने के लिए प्रेरित करता है।

भाषा शैली

महादेवी वर्मा अपने पद्य की भांति गद्य की भाषा के लिए भी लेखक समाज में विशेष रूप से प्रतिष्ठित हैं। उन्होंने गद्य भाषा को एक नया परिमार्जित रूप प्रदान किया तथा उसे एक गरिमामयी ऊंचाई तक ले गईं। उन्होंने जिस हिन्दी भाषा का प्रयोग अपने निबन्ध 'नारीत्व का अभिशाप' में किया है वह आम बोलचाल वाली हिन्दी भाषा का शुद्ध, साहित्यिक व परितिष्ठित रूप है। इस निबन्ध में संस्कृतनिष्ठ तत्सम शब्दावली का प्रयोग है जिन्हें लंबे वाक्यों में खूबसूरती से प्रयोग किया गया है। इस निबन्ध में भाषा का बड़े कलात्मक ढंग से प्रयोग किया गया है। कहीं–कहीं निबन्ध की भाषा में बिंबात्मक व प्रतीकात्मक प्रयोग भी देखे जा सकते हैं। निबन्ध की भाषा शैली न केवल विषय के प्रवाह को बढ़ाती है बल्कि उसे प्रभावशाली भी बनाती है। यही कारण है कि पाठक के मन–मस्तिष्क पर यह निबन्ध लंबे समय तक अपना प्रभाव जमाए रखता है।

टिप्पणी

महादेवी वर्मा की निबन्ध शैली

महादेवी वर्मा हिन्दी साहित्य की प्रतिष्ठित निबन्धकारों में से जानी जाती हैं जिसके पीछे प्रमुख कारण यह है कि उन्होंने हिन्दी निबन्ध को कथ्य, भाषा व प्रयोग के आधार पर एक नई ऊंचाई प्रदान की। एक पाश्चात्य लेखन विधा के रूप में जाना जाने वाला निबन्ध, महादेवी वर्मा के यहां एक नए भारतीय शैली में प्रस्तुत होता है। मूल रूप से कवि मानी जाने वाली महादेवी वर्मा के निबन्ध इसलिए भी खूब प्रचलित व प्रसिद्ध हुए क्योंकि उन्होंने निबन्ध को एक नई काव्यात्मक ताजगी प्रदान की जिसने निबन्ध की रसात्मक अनुभूति व साहित्यिक प्रभाव को कई गुणा बढ़ा दिया था। महादेवी वर्मा की निबन्ध शैली की कुछ खास विशेषताएं इस प्रकार हैं–

विषय की भावात्मक अभिव्यक्ति

महादेवी वर्मा के निबन्ध अपने मूल विषय की गहन भावात्मक अभिव्यक्ति करते हैं। उनके निबन्ध चाहे किसी भी विषय पर हों किंतु पाठक उस विषय से भावात्मक रूप से जुड़ जाता है। यदि हम 'नारीत्व का अभिशाप' निबन्ध को ही लें तो इस निबन्ध की प्रस्तुति शुष्क न होकर भावात्मक है। यह हमारे मानस को कोमल व संवेदनशील बनाता है तथा स्त्री की दुर्दशा से भावात्मक तादात्म्य बिठा पाने के लिए भी प्रेरित करता है। इसका स्वर तथ्यात्मक व व्यंग्यात्मक न होकर आत्मिक है। हमारी दृष्टि समाज की क्रूरता से अधिक स्त्री की दारूण दशा की ओर केंद्रित होती है जिससे हमारा पाठक मन विचलित होता है। महादेवी के अन्य निबन्ध की विषय की भावात्मक अभिव्यक्ति करते हैं, विशेषकर श्रृंखला की कड़ियां के निबन्ध।

परिवेश व आत्माभिव्यंजनात्मक अंकन

निबन्ध में परिवेश का अंकन प्रामाणिक रूप से होता है किंतु प्रत्येक निबन्ध की दृष्टि परिवेश के प्रति भिन्न–भिन्न ही होती है। महादेवी वर्मा के निबन्ध में परिवेश का अंकन बड़े ही आत्माभिव्यंजनात्मक रूप में होता प्रतीत होता है। वे पहले विषय के तमाम पक्षों की जांच–पड़ताल परिवेश में करती हैं तथा उसके उपरांत उसे अपने स्वयं के अनुभव से जोड़कर आत्माभिव्यंजनात्मक रूप से प्रस्तुत करती हैं। दूसरे शब्दों में, महादेवी वर्मा के निबन्धों का यथार्थ उनके स्वयं द्वारा भोगा गया यथार्थ है जिसे उन्होंने निरंतर अनुभूत भी किया है।

आत्म की गहन अभिव्यक्ति

महादेवी वर्मा के निबन्धों में उनके आत्म की गहन अभिव्यक्ति हुई है। निबन्ध में लेखक का मानसिक–बौद्धिक स्वरूप प्रामाणिक रूप से प्रस्तुत होता है क्योंकि निबन्ध का स्वरूप विशुद्ध रूप से विचारात्मक ही होता है। अतः निबन्ध ही वह विधा है जो लेखक को अभिव्यक्ति के समय गहरे उतरने तथा स्वयं को खोजने–जानने का अवसर मुहैया कराती है। इस मायने में महादेवी वर्मा के निबन्ध उनके आत्म की गहन अभिव्यक्ति करते प्रतीत होते हैं।

काव्यात्मक गद्य भाषा

महादेवी वर्मा के निबन्धों की गद्य भाषा काव्यात्मक है। उन्होंने भाषा का बड़े ही कलात्मक रूप से प्रयोग किया है; शब्दों का चयन बड़ी ही सावधानी से किया गया है;

कहीं–कहीं निबन्ध में बिंबात्मक व प्रतीकात्मक प्रयोग भी देखे जा सकते हैं। निबन्ध के गद्य में भी जिस तरह एक साथ कई तथ्यों को बुना जाता है वह निबन्ध को एक काव्यात्मक ध्वनि प्रदान करता है जिस अर्थ को स्वरूप भी मिलते हैं।

टिप्पणी

परिनिष्ठित शब्दावली का प्रयोग

महादेवी वर्मा के निबन्धों में शब्दों का चयन बड़ी ही खूबसूरती व कलात्मक तरीके से किया गया है। कहना न होगा कि लेखिका ने शब्दों के चयन में अतिरिक्त सावधानी बरती है। शब्दों का प्रांजल प्रयोग निबन्ध को और अधिक प्रभावी बनाता है। यद्यपि संस्कृतनिष्ठ तत्सम शब्दावली का प्रयोग बहुलता से किया गया है किंतु वह पाठ को क्लिष्टता प्रदान नहीं करता बल्कि उसे अर्थवान सौंदर्य प्रदान करता है। अधिकांशतः शब्दों का प्रयोग सामासिक है जहां एक ही शब्द से कई शब्दों व वाक्यों के बराबर अर्थ ध्वनित होते हैं।

'नारीत्व का अभिशाप' आज के संदर्भ में

भारतीय नारी की दशा सदा से शोचनीय ही रही है फिर चाहे वह कोई भी कालखंड क्यों न रहा हो। और इस दशा में आगे भी कोई सुधार होगा, इसकी कम ही संभावना है। यद्यपि नारी अपनी ओर से हर प्रकार का त्याग करती आई है और उसने परिवार व समाज के लिए तमाम तरह के कष्ट व परिताप भोगे हैं तथापि नारी की दशा में कोई उल्लेखनीय सुधार नहीं हुआ है। बल्कि यह नारी की कमजोरी ही समझी गई। हमारी किंवदंतियां भी ऐसे अनेक उदाहरणों से भरी हुई हैं जहां हम देखते हैं कि सीता की अग्निपरीक्षा से लेकर पृथ्वी समाधि तक राम विचलित नहीं होते और न ही परशुराम की भर्त्सना मातृ हत्या के लिए की जाती है। यह सोचना भी कितना पीड़ादायक है। इस स्थिति के पीछे स्त्री की कोमलता के पीछे छिपी दुर्बलता है। वह अपनी सुकुमारता को स्त्रीत्व का गहना मानकर ढोती रही जो कालांतर में उसकी कमजोरी और पांव की बेड़ी दोनों बन गई।

मनुष्य में शुबल व मानसिक बल, दो शक्तियां होती हैं जिनका संतुलन आवश्यक है किंतु स्त्री ने मानसिक बल को ही सर्वस्व मान लिया और इस तरह उसने शक्ति का एक आवश्यक रूप लगभग गंवा दिया। नारी की कोमलतामय दुर्बलता ने उसकी दुर्गति की कोई सीमा न रख छोड़ी; और इस तरह जहां पहले वह स्वेच्छा से जौहर अथवा सती व्रत के नाम पर स्वयं को अग्नि में झोंकती रही तो वहीं दूसरी ओर वर्तमान में जबरन चिता में झोंकी जा रही है।

आज वह अज्ञान के कारण अपने दुखों, कष्टों के कारणों तथा उनके निराकरण को जान पाने में पूरी तरह से असमर्थ है। वस्तुतः अपार कष्ट सह लेने की उसमें इतनी अधिक क्षमता जाग चुकी है कि न्याय व अन्याय के बीच अंतर को भी समझ पाने में असमर्थ हो चुकी है। आज उसकी स्थिति निरीह व मूक पशु के समान हो चुकी है। जिस प्रकार हमारे द्वारा किसी शारीरिक अंग का अत्यधिक प्रयोग करने पर वह शिथिल व संज्ञाहीन हो जाता है उसी प्रकार हमारे भारतीय समाज की स्त्री भी अत्यधिक शोषण के फलस्वरूप शिथिल व संज्ञाहीन हो चुकी है।

टिप्पणी

आज हिंदू स्त्री घर और समाज तक ही सीमित है और दोनों ही स्थानों पर उसकी स्थिति दयनीय हो चुकी है। न तो उसे अपने पितृ स्थान पर कोई सम्मान मिलता है और न ही विवाहोपरांत ससुराल पक्ष में। जिस घर में वह जन्म लेती है वहां उसकी स्थिति एक भिक्षुक से अधिक नहीं है। उससे कोई भूल हो जाने पर उसे अपने ही घर से क्षमा की आशा पाना निरर्थक साबित होता है। यहां तक कि विपत्ति के समय वह अपने ही घर में मुट्ठी भर अनाज पा सकेगी इसमें भी सदा संदेह बना रहता है। वहीं दूसरी ओर पतिगृह भी उपेक्षा का स्थान ही सिद्ध होता है जहां पति की इच्छानुरूप सुंदरी व आकर्षक न होने पर, विदुषी न होने पर, पुत्रहीना होने पर, रूग्ण होने पर आदि अनेक स्थितियों में उसकी आत्मसम्मानजनक स्थिति पर एक तलवार सी लटकी रहती है। इन सब स्थितियों के अनंतर यदि स्त्री के पति की मृत्यु हो जाए तब तो उसके ऊपर जैसे विपत्तियों का पहाड़ ही टूट पड़ता है। फिर तो समाज को उसकी कोमलता–निरीहता का भी तनिक ध्यान नहीं रहता और वह उस पर कठोर से कठोर कर्तव्य आरोपित कर देने में भी जरा नहीं हिचकिचाता। सहसा उसके जीवन से आनंद, उल्लास और आशा का एक–एक रेशा खींचकर उसे रसहीन, प्राणहीन और भविष्यहीन बना दिया जाता है।

नारी की ऐतिहासिक दुर्भाग्य यात्रा यहीं खत्म नहीं होती बल्कि वर्तमान में उसे अपहरण जैसी भयानक वृत्ति का भी शिकार होना पड़ रहा है जिसके विरोध में हमारे आसपास के परिवेश और समाज में कोई आंदोलन नहीं दिखाई देता। प्रायः अत्यधिक व बारंबार नाना प्रकार के कष्ट व यातनाएं सहने के कारण वे भूलवश दूसरे नरक की शरण लेने पर उद्यत हो जाती हैं। समाज भी जैसे खुली आंखों सब देखता–समझता रहता है और अपनी ओर से इसकी रोकथाम के लिए कोई प्रयास करता हुआ नहीं दिखाई देता। आज स्थिति यह है कि अनवरत उपेक्षा और अपमान से गुजरती स्त्री को कोई झूठे भी दो प्रेम व आश्वासन के बोल कह दे तो वे निःस्वार्थ न्यौछावर होने को प्रस्तुत हो जाती हैं। उनकी यह शोचनीय स्थिति और दारूण दशा समाज की चिर उपेक्षा व लापरवाही का ही परिणाम है।

कुछ तर्कशील पुरुषों का मानना है कि स्त्री को स्वयं ही अपनी रक्षा के लिए उठ खड़ा होना चाहिए किंतु समाज द्वारा लंबे समय से बंदी बनाकर रखी गई निर्बल व असहाय स्त्री अचानक शक्ति से भरकर अपनी रक्षा के लिए उठ खड़ी हो जाएगी ऐसा सोचना न केवल मूर्खता है बल्कि स्त्री वर्ग के प्रति अन्याय भी है। उन्हें ज्ञानशून्य कर्म का जो अभ्यास कराते हुए पशु में बदल दिया गया है। उसके चलते ही बड़ी सरलता से उन्हें पशुओं की भांति न केवल हांका जा सकता है बल्कि नियंत्रित भी किया जा सकता है।

स्त्री अपनी शक्ति, स्वाधीनता व आत्मनिर्भरता भूल चुकी है। इस स्थिति को ज्ञानवान स्त्रियां व पुरुष ही ठीक कर सकते हैं। नारी जागरण का यह कार्य जितना जल्दी हो सके, करने की जरूरत है अन्यथा हमारी स्थिति एक दिन आग लगने पर कुंआ खोदनेवाले व्यक्तित्व के समान हो जाएगी जब हमारे पास राख के सिवा कुछ नहीं बचेगा।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

1. महादेवी वर्मा का निबंध 'नारीत्व का अभिशाप' उनके किस निबंध संकलन में संकलित है?

   (क) शृंखला की कड़ियां (ख) स्मृति की रेखाएं

   (ग) चिंतामणि (घ) संकल्पिता

2. समाज में नारी की दुर्दशा के लिए महादेवी जी किसका दोष मानती हैं?

   (क) स्त्रियों की कोमलता (ख) स्त्रियों की कोमलताजन्य दुर्बलता

   (ग) पुरुष–प्रधान समाज–व्यवस्था (घ) पुरुष

2.3 चीफ की दावत (कहानी) : भीष्म साहनी

भीष्म साहनी का जन्म 8 अगस्त, सन् 1915 को रावलपिंडी पाकिस्तान में हुआ था। उनके पिता का नाम हरबंस लाल साहनी और माता का नाम श्रीमती लक्ष्मी देवी था। वे अपने माता–पिता की सातवीं संतान थे। सन् 1944 में उनका विवाह शीला जी से हुआ। भीष्म जी आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रमुख स्तंभों में से थे। सन् 1937 में लाहौर गवर्नमेन्ट कॉलेज, लाहौर से अंग्रेजी साहित्य में एम.ए. करने के बाद साहनी जी ने सन् 1958 में पंजाब विश्वविद्यालय से पी–एच.डी. की उपाधि हासिल की। भारत पाकिस्तान विभाजन के पूर्व अवैतनिक शिक्षक होने के साथ–साथ वे व्यापार भी करते थे। विभाजन के बाद उन्होंने भारत आकर समाचारपत्रों में लिखने का काम किया। बाद में भारतीय जन नाट्य संघ (इप्टा) से जा मिले। इसके पश्चात् अंबाला और अमृतसर में भी अध्यापक रहने के बाद दिल्ली विश्वविद्यालय में साहित्य के प्रोफेसर बने। सन् 1957 से 1963 तक मास्को में विदेशी भाषा प्रकाशन गृह (फॉरेन लॅग्वेजेस पब्लिकेशन हाउस) में अनुवादक का काम किया। यहां उन्होंने करीब दो दर्जन रूसी किताबें, यथा–टालस्टॉय आस्ट्रोवस्की इत्यादि लेखकों की किताबों का हिंदी में रूपांतर किया। सन् 1965 से 1967 तक दो सालों में उन्होंने 'नयी कहानियां' नामक पत्रिका का सम्पादन किया। वे प्रगतिशील लेखक संघ और एफ्रो–एशियायी लेखक संघ (एफ्रो एशियन राइटर्स एसोसिएशन) से भी जुड़े रहे। सन् 1993 तक वे साहित्य अकादमी के कार्यकारी समिति के सदस्य रहे।

जहां तक प्रगतिवादी कथा आन्दोलन और भीष्म साहनी के कथा साहित्य का प्रश्न है तो इसे काल की सीमा में बद्ध कर देना उचित नहीं है। मार्क्सवाद ने उनमें केवल एक और आयाम जोड़ा था। इसी मार्क्सवादी चिन्तन को मानवतावादी दृष्टिकोण से जोड़कर उसे जन–जन तक पहुंचाने वालों में एक नाम भीष्म साहनी जी का है। स्वातन्त्र्योत्तर लेखकों की भांति 'भीष्म साहनी' सहज मानवीय अनुभूतियों और तत्कालीन जीवन के अंतर्द्वंद्व को लेकर सामने आए और उसे रचना का विषय बनाया। जनवादी चेतना के लेखक भीष्म जी की लेखकीय संवेदना का आधार जनता की पीड़ा है। जनसामान्य के प्रति समर्पित साहनी जी का लेखन यथार्थ की ठोस जमीन पर अवलम्बित है।

टिप्पणी

भीष्म जी एक ऐसे साहित्यकार थे जो बात को मात्र कह देना ही नहीं बल्कि बात की सच्चाई और गहराई को नाप लेना भी उतना ही उचित समझते थे। वे अपने साहित्य के माध्यम से सामाजिक विषमता व संघर्ष के बन्धनों को तोड़कर आगे बढ़ने का आह्वान करते थे। उनके साहित्य में सर्वत्र मानवीय करूणा, मानवीय मूल्य व नैतिकता विद्यमान है।

उनकी पहली कहानी 'अबला' इण्टर कालेज की पत्रिका 'रावी' में तथा दूसरी कहानी 'नीली आंखें' अमृतराय के सम्पादकत्व में 'हंस' में छपी। साहनी जी ने 'झरोखे', 'कड़ियां, 'तमस', 'बसन्ती', 'मय्यादास की माड़ी', 'कुंतो', 'नीलू नीलिमा नीलोफर' नामक उपन्यासों के अतिरिक्त भाग्यरेखा, पटरियां, पहला पाठ, भटकती राख, वाङचू, शोभायात्रा, निशाचर, पाली, प्रतिनिधि कहानियां व मेरी प्रिय कहानियां नामक दस कहानी संग्रहों का सृजन किया। नाटकों के क्षेत्र में भी उन्होंने हानूश, कबिरा खड़ा बजार में, माधवी, मुआवजे जैसे प्रसिद्धि प्राप्त नाटक लिखे। जीवनी साहित्य के अन्तर्गत उन्होंने मेरे भाई बलराज, अपनी बात, मेरे साक्षात्कार तथा बाल साहित्य के अन्तर्गत 'वापसी', 'गुलेल का खेल' का सृजन कर साहित्य की हर विधा पर अपनी कलम आजमायी।

स्वतंत्र व्यक्तित्व वाले भीष्म जी गहन मानवीय संवेदना के सशक्त हस्ताक्षर थे, जिन्होंने भारत के सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक यथार्थ का स्पष्ट चित्र अपने उपन्यासों में प्रस्तुत किया। उनकी यथार्थवादी दृष्टि उनके प्रगतिशील व मार्क्सवादी विचारों का प्रतिफल थी। भीष्म जी की सबसे बड़ी विशेषता थी कि उन्होंने जिस जीवन को जिया, जिन संघर्षों को झेला, उसी का यथावत् चित्र अपनी रचनाओं में अंकित किया। इसी कारण उनके लिए रचना कर्म और जीवन धर्म में अभेद था। वह लेखन की सच्चाई को अपनी सच्चाई मानते थे। कथाकार के रूप में भीष्म जी पर यशपाल और प्रेमचन्द की गहरी छाप है। उनकी कहानियों में अन्तर्विरोधों वे जीवन के द्वंद्वों, विसंगतियों से जकड़े मध्यवर्ग के साथ ही निम्नवर्ग की जिजीविषा और संघर्षशीलता को उद्घाटित किया गया है। जनवादी कथा आन्दोलन के दौरान भीष्म साहनी ने सामान्य जन की आशा, आकांक्षा, दुःख, पीड़ा, अभाव, संघर्ष तथा विडम्बनाओं को अपने उपन्यासों से ओझल नहीं होने दिया। नई कहानी में भीष्म जी ने कथा साहित्य की जड़ता को तोड़कर उसे ठोस सामाजिक आधार दिया। एक भोक्ता की हैसियत से भीष्म जी ने विभाजन के दुर्भाग्यपूर्ण खूनी इतिहास को भोगा है। जिसकी अभिव्यक्ति 'तमस' में हम बराबर देखते हैं। जहां तक नारी मुक्ति समस्या का प्रश्न है, भीष्म जी ने अपनी रचनाओं में नारी के व्यक्तित्व विकास, स्वातन्त्र्य, एकाधिकार, आर्थिक स्वतन्त्रता, स्त्री शिक्षा तथा सामाजिक उत्तरदायित्व आदि की सम्मानजनक स्थिति का समर्थन किया है। एक तरह से देखा जाए तो साहनी जी प्रेमचन्द के पदचिन्हों पर चलते हुए उनसे भी कहीं आगे निकल गए हैं। भीष्म जी की रचनाओं में सामाजिक अन्तर्विरोध पूरी तरह उभकर आया है।

उनके साहित्य में जहां एक ओर सहृदयता व सहानुभूति है वहीं दूसरी ओर जातीय तथा राष्ट्रीय स्वाभिमान की आग भी है। वे पूंजीवादी आधुनिकताबोध और यथार्थवादी विचारधारा के अन्तर्विरोधों को खोलते चलते हैं। निम्न मध्यवर्ग के समर्थ

टिप्पणी

रचनाकार भीष्म जी भारतीय समाज के आधुनिकीकरण के फलस्वरूप विश्व साम्राज्यवाद और देशी पूंजीवाद में व्याप्त भ्रष्टाचार का पर्दाफाश करते हैं।

मानवीय मूल्यों पर आधारित उनकी धर्म भावना इंसान को इंसान से जोड़ती है न कि उन्हें पृथक करती है। उनके उपन्यासों में शोषणविहीन समतामूलक प्रगतिशील समाज की स्थापना के साथ समाज में व्याप्त आर्थिक विसंगतियों के त्रासद परिणाम, धर्म की विद्रूपता व खोखलेपन को उद्घाटित किया गया है।

मार्क्सवाद से प्रभावित होने के कारण भीष्म जी समाज में व्याप्त आर्थिक विसंगतियों के त्रासद परिणामों को बड़ी गंभीरता से अनुभव करते थे। पूंजीवादी व्यवस्था के अंतर्गत वह जनसामान्य के बहुआयामी शोषण को सामाजिक विकास में सर्वाधिक बाधक और अमानवीय मानते थे।

एक शिल्पी के रूप में भी वे सिद्धहस्त कलाकार थे। कथ्य और वस्तु के प्रति यदि उनमें सजगता और तत्परता का भाव था तो शिल्प सौष्ठव के प्रति भी निरन्तर सावधान रहते थे।

भीष्म जी प्रेमचन्द के समान जीवन की विसंगतियों और विडम्बनाओं को अपनी रचनाओं में अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं, भले ही वे प्रेमचन्द की भांति ग्रामीण वस्तु को नहीं पकड़ पाये किन्तु परिवेश की समग्रता में वस्तु और पात्र के अन्तः–सम्बन्धों को जिस प्रकार खोलते हैं और इन सम्बन्धों में जनता के मुक्तकामी संघर्षों को रूपायित करते हैं वह निश्चित रूप से उन्हें न केवल प्रेमचन्द के निकट पहुंचाता है अपितु उसमें नया भीष्म भी जुड़ जाता है। अपनी रचनाओं में उन्होंने जहां जीवन के कटुतम यथार्थों का प्रामाणिक चित्रण किया है वहीं जनसामान्य का मंगलविधान करने वाले लोकोपकारक आदर्शों को भी रेखांकित किया है। अपनी इन्हीं कालजयी रचनाओं के कारण वह हिन्दी साहित्य में युगान्तकारी उपन्यासकार के रूप में चिरस्मरणीय रहेंगे।

उन्हें सन् 1975 में तमस के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार, सन् 1975 में शिरोमणि लेखक अवार्ड (पंजाब सरकार), सन् 1980 में एफ्रो एशियान राइटर्स एसोसिएशन का लोटस अवार्ड, सन् 1983 में सोवियत लैंड नेहरू अवार्ड तथा सन् 1998 में भारत सरकार के पद्मभूषण अलंकरण में विभूषित किया गया। उनके उपन्यास **तमस** पर सन् 1986 में एक दूरदर्शन फिल्म का निर्माण भी किया गया था।

अपनी मृत्यु के कुछ दिन पहले उन्होंने 'आज के अतीत' नामक आत्मकथा का प्रकाशन करवाया। 11 जुलाई, सन् 2003 को इनका देहावसान हो गया।

2.3.1 'चीफ की दावत' (कहानी) का मूल पाठ

आज मिस्टर शामनाथ के घर चीफ की दावत थी।

शामनाथ और उनकी धर्मपत्नी को पसीना पोंछने की फुर्सत न थी। पत्नी ड्रेसिंग गाउन पहने, उलझे हुए बालों का जूड़ा बनाए, मुँह पर फैली हुई सुर्खी और पाउडर को मले और मिस्टर शामनाथ सिगरेट–पर–सिगरेट फूँकते हुए, चीजों की फेहरिस्त हाथ में थामे, एक कमरे से दूसरे कमरे में आ–जा रहे थे।

टिप्पणी

आखिर पाँच बजते–बजते तैयारी मुकम्मल होने लगी। कुर्सियाँ, मेज, तिपाइयाँ, नैपकिन, फूल सब बरामदे में पहुँच गए। ड्रिंक का इंतजाम बैठक में कर दिया गया। अब घर का फालतू सामान अलमारियों के पीछे और पलंगों के नीचे छिपाया जाने लगा, तभी शामनाथ के सामने सहसा एक अड़चन खड़ी हो गई, माँ का क्या होगा?

इस बात की ओर न उनका और न उनकी कुशल गृहिणी का ध्यान गया था। मिस्टर शामनाथ, श्रीमती की ओर घूमकर अंग्रेजी में बोले– 'माँ का क्या होगा।'

श्रीमती काम करते–करते ठहर गईं और थोड़ी देर तक सोचने के बाद बोलीं, "इन्हें पिछवाड़े इनकी सहेली के घर भेज दो, रात–भर बेशक वहीं रहें। कल आ जाएँ।"

शामनाथ सिगरेट मुँह में रखे, सिकुड़ी आँखों से श्रीमती के चेहरे की ओर देखते हुए पल–भर सोचते रहे, फिर सिर हिलाकर बोले, "नहीं, मैं नहीं चाहता कि उस बुढ़िया का आना–जाना यहाँ फिर से शुरू हो। पहले ही बड़ी मुश्किल से बंद किया था। माँ से कहें कि जल्दी खाना खा के शाम को ही अपनी कोठरी में चली जाएँ। मेहमान कहीं आठ बजे आएँगे। इससे पहले ही अपने काम से निबट लें।"

सुझाव ठीक था। दोनों को पसंद आया। मगर फिर सहास श्रीमती बोल उठीं, "जो वह सो गईं और नींद के खर्राटे लेने लगीं, तो? साथ ही तो बरामदा है, जहाँ लोग खाना खाएँगे।"

"तो इन्हें कह देंगे कि अंदर से दरवाजा बंद कर लें। मैं बाहर से ताला लगा दूँगा या माँ को कह देता हूँ कि अंदर जाकर सोएँ नहीं, बैठी रहें और क्या?"

"और जो सो गईं, तो? डिनर का क्या मालूम कब तक चले। ग्यारह–ग्यारह बजे तक तो तुम ड्रिंक ही करते रहते हो।"

शामनाथ कुछ खीज उठे, हाथ झटकते हुए बोले, "अच्छी–भली यह भाई के पास जा रही थीं। तुमने यूँ ही खुद अच्छा बनने के लिए बीच में टाँग अड़ा दी!"

"वाह! तुम माँ और बेटे की बातों में मैं क्यों बुरी बनूँ? तुम जानो और वह जानें।"

मिस्टर शामनाथ चुप रहे। यह मौका बहस का न था, समस्या का हल ढूँढ़ने का था। उन्होंने घूमकर माँ की कोठरी की ओर देखा। कोठरी का दरवाजा बरामदे में खुलता था। बरामदे की ओर देखते हुए झट से बोले, "मैंने सोच लिया है" और उन्हीं कदमों से माँ की कोठरी के बाहर जा खड़े हुए। माँ दीवार के साथ एक चौकी पर बैठी, दुपट्टा में मुँह–सिर लपेटे, माला जप रही थीं। सुबह से तैयारी होती देखते हुए माँ का भी दिल धड़क रहा था। बेटे के दफ्तर का बड़ा साहब घर पर आ रहा है, सारा काम सुभीते से चल जाए।

"माँ, आज तुम खाना जल्दी खा लेना। मेहमान लोग साढ़े सात बजे आ जाएँगे।"

माँ ने धीरे–से मुँह पर से दुपट्टा हटाया और बेटे को देखते हुए कहा, "आज मुझे खाना नहीं खाना है, बेटा, तुम जानते तो हो, माँस–मछली बने, तो मैं कुछ नहीं खाती।"

"जैसे भी हो, अपने काम से जल्दी निबट लेना।"

"अच्छा बेटा!"

"और माँ, हम लोग पहले बैठक में बैठेंगे। उतनी देर तुम यहाँ बरामदे में बैठना। फिर जब हम यहाँ आ जाएँ, तो तुम गुसलखाने के रास्ते बैठक में चली जाना।"

माँ अवाक् बेटे का चेहरा देखने लगीं। फिर धीरे–से बोलीं, "अच्छा बेटा!"

टिप्पणी

"और माँ, आज जल्दी सो नहीं जाना! तुम्हारे खर्राटों की आवाज दूर तक जाती है।"

माँ लज्जित–सी आवाज में बोलीं, "क्या करूँ बेटा, मेरे बस की बात नहीं है। जब से बीमारी से उठी हूँ, नाक से साँस नहीं ले सकती।"

मिस्टर शामनाथ ने इंतजाम तो कर दिया, फिर भी उनकी उधेड़बुन खत्म नहीं हुई। जो चीफ अचानक उधर आ निकला तो? आठ–दस मेहमान होंगे, देसी अफसर, उनकी स्त्रियाँ होंगी, कोई भी गुसलखाने की तरफ जा सकता है। क्षोभ और क्रोध में वह फिर झुंझलाने लगे। एक कुर्सी को उठाकर बरामदे में कोठरी के बाहर रखते हुए बोले, "आओ माँ, इस पर जरा बैठो तो।"

माँ माला संभालती, पल्ला ठीक करते उठी और धीरे–से कुर्सी पर आकर बैठ गईं।

"यूँ नहीं, माँ, टाँगे ऊपर चढ़ाकर नहीं बैठते। यह खाट नहीं है।"

माँ ने टाँगें नीचे उतार लीं।

"और खुदा के वास्ते नंगे पाँव नहीं घूमना। न ही वह खड़ाऊँ पहनकर सामने आना। किसी दिन तुम्हारी यह खड़ाऊँ उठाकर मैं बाहर फेंक दूँगा।"

माँ चुप रही।

"कपड़े कौन–से पहनोगी, माँ?"

"जो हैं, वही पहनूँगी बेटा! जो कहो, पहन लूँ।"

मिस्टर शामनाथ सिगरेट मुँह में रखे, फिर अधखुली आँखों से माँ की ओर देखने लगे और माँ के कपड़ों की सोचने लगे। शामनाथ हर बात में तरतीब चाहते थे। घर का सब संचालन उनके अपने हाथ में था। खूँटियाँ कमरों में कहाँ लगाई जाएँ, बिस्तर कहाँ पर बिछें, किस रंग के पर्दे लगाए जाएँ, श्रीमती कौन–सी साड़ी पहनें, मेज किस साइज की बनें। शामनाथ की चिंता थी कि अगर चीफ का साक्षात् माँ से हो गया, तो कहीं लज्जित न होना पड़े। माँ को सिर से पाँव तक देखते हुए बोले, "तुम सफेद कमीज और सफेद सलवार पहन लो, माँ। पहन के आओ तो, जरा देखूँ।"

माँ धीरे–से उठीं और अपनी कोठरी में कपड़े पहनने चली गईं।

"यह माँ का झमेला ही रहेगा," उन्होंने फिर अंग्रेजी में अपनी स्त्री से कहा, "कोई ढंग की बात हो, तो भी कोई कहे। अगर कहीं कोई उल्टी–सीधी बात हो गई, चीफ को बुरा लगा, तो सारा मजा जाता रहेगा।"

माँ सफेद कमीज और सफेद सलवार पहनकर बाहर निकलीं, छोटा–सा कद, सफेद कपड़ों में लिपटा, छोटा–सा सूखा हुआ शरीर, धुंधली आँखें, केवल सिर के आधे झड़े हुए बाल पल्ले की ओट में छिप पाए थे। पहले से कुछ ही कम कुरूप नजर आ रही थीं।

"चलो, ठीक है। कोई चूड़ियाँ–वूड़ियाँ हों, तो वह भी पहन लो। कोई हर्ज नहीं।"

"चूड़ियाँ कहाँ से लाऊँ, बेटा? तुम तो जानते हो, सब जेवर तुम्हारी पढ़ाई में बिक गए।"

टिप्पणी

यह वाक्य शामनाथ को तीर की तरह लगा। तिनक कर बोला, "यह कौन–सा राग छेड़ दिया, माँ! सीधा कह दो, नहीं है जेवर, बस! इससे पढ़ाई–वढ़ाई का क्या ताल्लुक है? जो जेवर बिका, तो कुछ बनकर ही आया हूँ, निरा लंडूरा तो नहीं लौट आया। जितना दिया था, उससे दुगना ले लेना।"

"मेरी जीभ जल जाए, बेटा, तुमसे जेवर लूँगी?" मेरे मुँह से यूँ ही निकल गया। जो होते, तो लाख बार पहनती।"

साढ़े पाँच बज चुके थे। अभी मिस्टर शामनाथ को खुद भी नहा–धोकर तैयार होना था। श्रीमती कब की अपने कमरे में जा चुकी थीं। शामनाथ जाते हुए एक बार फिर माँ को हिदायत करते गए, "माँ, रोज की तरह गुमसुम बनके नहीं बैठी रहना। अगर साहब इधर आ निकलें और कोई बात पूछें, तो ठीक तरह से बात का जवाब देना।"

"मैं न पढ़ी, न लिखी, बेटा, मैं क्या बात करूँगी। तुम कह देना, माँ अनपढ़ हैं, कुछ जानती–समझती नहीं। वह नहीं पूछेगा।"

सात बजते–बजते माँ का दिल धक्–धक् करने लगा। अगर चीफ सामने आ गया और उसने कुछ पूछा, तो वह क्या जवाब देंगी, अंग्रेज को तो दूर से ही देखकर वह घबरा उठती थीं, वह तो अमेरिकी है। न मालूम क्या पूछे। मैं क्या कहूँगी। माँ का जी चाहा कि चुपचाप पिछवाड़े विधवा सहेली के घर चली जाएँ। मगर बेटे के हुक्म को कैसे टाल सकती थीं। चुपचाप कुर्सी पर से टाँगे लटकाए वहीं बैठी रहीं।

एक कामयाब पार्टी वह है, जिसमें ड्रिंक कामयाबी से चल जाए। शामनाथ की पार्टी सफलता के शिखर चूमने लगी। वार्तालाप उसी रौ में बह रहा था, जिस रौ में गिलास भरे जा रहे थे। कहीं कोई रुकावट न थी, कोई अड़चन न थी। साहब को व्हिस्की पसंद आई थी। गोरा साहब को पर्दे पसंद आए थे, सोफा–कवर का डिजाइन पसंद आया था, कमरे की सजावट पसंद आई थी। इससे बढ़कर क्या चाहिए। साहब तो ड्रिंक के दूसरे दौर में ही चुटकुले और कहानियाँ कहने लग गए थे। दफ्तर में जितना रौब रखते थे, यहाँ पर उतने ही दोस्त–परवर हो रहे थे और उनकी स्त्री, काला गाउन पहने, गले में सफेद मोतियों का हार, सेण्ट और पाउडर की महक से ओत–प्रोत, कमरे में बैठी सभी देसी स्त्रियों की आराधना का केन्द्र बनी हुई थीं। बात–बात पर हँसती, बात–बात पर सिर हिलातीं और शामनाथ की स्त्री से तो ऐसे बातें कर रही थीं, जैसे उनकी पुरानी सहेली हों।

और इसी रौ में पीते–पिलाते साढ़े दस बज गए। वक्त गुजरते पता ही न चला।

आखिर सब लोग अपने–अपने गिलासों में से आखिरी घूँट पीकर खाना खाने के लिए उठे और बैठक से बाहर निकले। आगे–आगे शामनाथ रास्ता दिखाते हुए, पीछे चीफ और दूसरे मेहमान।

टिप्पणी

बरामदे में पहुँचते ही शामनाथ सहसा ठिठक गए। जो दृश्य उन्होंने देखा, उससे उनकी टाँगें लड़खड़ा गईं और क्षण–भर में सारा नशा हिरन होने लगा। बरामदे में ऐन कोठरी के बाहर माँ अपनी कुर्सी पर ज्यों–की–त्यों बैठी थीं। मगर दोनों पाँव कुर्सी की सीट पर रखे हुए और सिर दायें से बायें और बायें से दायें झूल रहा था और मुँह में से लगातार गहरे खर्राटों की आवाजें आ रही थीं। जब सिर कुछ देर के लिए टेढ़ा होकर एक तरफ को थम जाता, तो खर्राटे और भी गहरे हो उठते और फिर जब झटके से नींद टूटती, तो सिर फिर दायें से बायें झूलने लगता। पल्ला सिर पर से खिसक आया था और माँ के झरे हुए बाल, आधे गंजे सिर पर अस्त–व्यस्त बिखर रहे थे।

देखते ही शामनाथ क्रुद्ध हो उठे। जी चाहा कि माँ को धक्का देकर उठा दें और उन्हें कोठरी में धकेल दें, मगर ऐसा करना संभव न था, चीफ और बाकी मेहमान पास खड़े थे।

माँ को देखते ही अफसरों की कुछ स्त्रियाँ हँस दीं कि इतने में चीफ ने धीरे–से कहा– "पुअर डियर!"

माँ हड़बड़ा के उठ बैठी। सामने खड़े इतने लोगों को देखकर ऐसी घबरायीं कि कुछ कहते न बना। झट–से पल्ला सिर पर रखती हुई खड़ी हो गईं और जमीन को देखने लगीं। उनके पाँव लड़खड़ाने लगे और हाथों की उंगलियाँ थर–थर काँपने लगीं।

"माँ, तुम जाके सो जाओ, तुम क्यों इतनी देर तक जाग रही थीं?" और खिसियायी हुई नजरों से शामनाथ चीफ के मुँह की ओर देखने लगे।

चीफ के चेहरे पर मुस्कराहट थी। वह वहीं खड़े–खड़े बोले, "नमस्ते"

माँ ने झिझकते हुए, अपने में सिमटते हुए दोनों हाथ जोड़े, मगर एक हाथ दुपट्टे के अंदर माला को पकड़े हुए था, दूसरा बाहर। ठीक तरह से नमस्ते भी न कर पाईं। शामनाथ इस पर भी खिन्न हो उठे।

इतने में चीफ ने अपना दायाँ हाथ, हाथ मिलाने के लिए माँ के आगे किया। माँ और भी घबरा उठीं।

"माँ, हाथ मिलाओ।"

पर हाथ कैसे मिलातीं? दायें हाथ में तो माला थी। घबराहट में माँ ने बायाँ हाथ ही साहब के दायें हाथ में रख दिया। शामनाथ दिल–ही–दिल में जल उठे। देसी अफसरों की स्त्रियाँ खिलखिलाकर हँस पड़ीं।

"यूँ नहीं, माँ!" तुम तो जानती हो, दायाँ हाथ मिलाया जाता है। दायाँ हाथ मिलाओ।"

मगर तक तक चीफ माँ का बायाँ हाथ ही बार–बार हिलाकर कह रहे थे– "हौ डू यू डू?"

"कहाँ माँ, मैं ठीक हूँ, खैरियत से हूँ।"

माँ कुछ बड़बड़ाई।

"माँ कहती हैं, मैं ठीक हूँ, कहो माँ, हौ डू यू डू!"

माँ धीरे से सकुचाते हुए बोलीं– "हौ डू डू..."

एक बार फिर कहकहा उठा।

वातावरण हल्का होने लगा। साहब ने स्थिति संभाल ली थी। लोग हँसने–चहकने लगे थे। शामनाथ के मन का क्षोभ भी कुछ–कुछ कम होने लगा था।

टिप्पणी

साहब अपने हाथ में माँ का हाथ अब भी पकड़े हुए थे और माँ सिकुड़ी जा रही थीं। साहब के मुँह से शराब की बू आ रही थी।

शामनाथ अंग्रेजी में बोले, "मेरी माँ गाँव की रहने वाली हैं। उमर–भर गाँव में रहीं हैं। इसलिए आपसे लजाती हैं।"

साहब इस पर खुश नजर आए। बोले, "सच? मुझे गाँव के लोग बहुत पसंद हैं, तब तो तुम्हारी माँ गाँव के गीत और नाच भी जानती होंगी?" चीफ खुशी से सिर हिलाते हुए माँ को टिकटिकी बाँधे देखने लगे।

"माँ, साहब कहते हैं, कोई गाना सुनाओ। कोई पुराना गीत, तुम्हें तो कितने ही याद होंगे।"

माँ धीरे–से बोलीं, "मैं क्या गाऊँगी बेटा! मैंने कब गाया है?"

"वाह माँ! मेहमान का कहा भी कोई टालता है?"

"साहब ने इतनी रीझ से कहा है, नहीं गाओगी, तो साहब बुरा मानेंगे।"

"मैं क्या गाऊँ, बेटा, मुझे क्या आता है?"

"वाह! कोई बढ़िया टप्पे सुना दो। दो पत्तर अनारां दे...."

देसी अफसर और उनकी स्त्रियों ने इस सुझाव पर तालियाँ पीटीं। माँ कभी दीन दृष्टि से बेटे के चेहरे को देखती, कभी पास खड़ी बहू के चेहरे को।

इतने में बेटे ने गंभीर आदेश–भरे लहजे में कहा, "माँ!"

इसके बाद हाँ या न का सवाल ही न उठता था। माँ बैठ गई और क्षीण, दुर्बल, लरजती आवाज में एक पुराना विवाह का गीत गाने लगीं–

हरिया नी माये, हरिया नी भैणे

हरिया ते भागी भरिया है!

देसी स्त्रियाँ खिलखिला के हँस उठी। तीन पंक्तियाँ गा माँ चुप हो गईं।

बरामदा तालियों गूँज उठा। साहब तालियाँ पीटना बंद ही न करते थे। शामनाथ की खीज प्रसन्नता और गर्व में बदल उठी थी। माँ ने पार्टी में नया रंग भर दिया था।

तालियाँ थमने पर साहब बोले, "पंजाब के गाँवों की दस्तकारी क्या है?"

शामनाथ खुशी में झूम रहे थे। बोले, "ओ, बहुत कुछ साहब! मैं आपको एक सेट उन चीजों का भेंट करूँगा। आप उन्हें देखकर खुश होंगे।"

मगर साहब ने सिर हिलाकर अंग्रेजी में फिर पूछा, "नहीं, मैं दुकानों की चीज नहीं माँगता, पंजाबियों के घरों में क्या बनता है, औरतें खुद क्या बनाती हैं?"

शामनाथ कुछ सोचते हुए बोले, "लड़कियाँ गुड़ियाँ बनाती हैं, औरतें फुलकारियाँ बनाती हैं।"

"फुलकारी क्या है?"

शामनाथ फुलकारी का मतलब समझाने की असफल चेष्टा करने के बाद माँ को बोले, "क्यों, माँ, कोई पुरानी फुलकारी घर में है?"

टिप्पणी

माँ चुपचाप अंदर गईं और अपनी पुरानी फुलकारी उठा लाई।

साहब बड़ी रुचि से फुलकारी देखने लगे। पुरानी फुलकारी थी, जगह–जगह से उसके तागे टूट रहे थे और कपड़ा फटने लगा था। साहब की रुचि को देखकर शामनाथ बोले, "यह फटी हुई है, साहब, मैं आपको नई बनवा दूँगा। माँ बना देंगी। क्यों, माँ, साहब को फुलकारी बहुत पसंद है, इन्हें ऐसी ही फुलकारी बना दोगी न?"

माँ चुप रहीं। फिर डरते–डरते धीरे–से बोलीं, "अब मेरी नजर कहाँ है, बेटा?" बूढ़ी आँखें क्या देखेंगी।"

मगर माँ का वाक्य बीच ही में तोड़ते हुए शामनाथ साहब को बोले, "वह जरूर बना देंगी, आप उसे देखकर खुश होंगे।"

साहब ने सिर हिलाया, धन्यवाद किया और हल्के–हल्के झूमते हुए खाने की मेज की ओर बढ़ गए। बाकी मेहमान भी उनके पीछे–पीछे हो लिए।

जब मेहमान बैठ गए और माँ पर से सबकी आँखें हट गईं, तो माँ धीरे–से कुर्सी पर से उठीं, और सबसे नजरें बचाती हुई अपनी कोठरी में चली गईं।

मगर कोठरी में बैठने की देर थी कि आँखों से छल–छल आँसू बहने लगे। वह दुपट्टे से बार–बार उन्हें पोंछती पर वह बार–बार उमड़ आते, जैसे बरसों का बाँध तोड़कर उमड़ आए हों। माँ ने बहुतेरा दिल को समझाया, हाथ जोड़े, भगवान का नाम लिया, बेटे के चिरायु होने की प्रार्थना की, बार–बार आंखें बंद कीं, मगर आँसू बरसात के पानी की तरह जैसे थमने में ही न आते थे।

आधी रात का वक्त होगा। मेहमान खाना खाकर एक–एक करके जा चुके थे। माँ दीवार से सटकर बैठी आँखें फाड़े दीवार को देखे जा रही थी। घर के वातावरण में तनाव ढीला पड़ चुका था। मुहल्ले की निस्तब्धता शामनाथ के घर पर भी छा चुकी थी, केवल रसोई में प्लेटों के खनकने की आवाज आ रही थी। तभी सहसा माँ की कोठरी का दरवाजा जोर से खटकने लगा।

"माँ, दरवाजा खोलो।"

माँ का दिल बैठ गया। हड़बड़ाकर उठ बैठी। क्या मुझसे फिर कोई भूल हो गई? माँ कितनी देर से अपने–आपको कोस रही थी कि क्यों उन्हें नींद आ गई, क्यों वह ऊँघने लगी। क्या बेटे ने अभी तक क्षमा नहीं किया? माँ उठीं और काँपते हाथों से दरवाजा खोल दिया।

दरवाजा खुलते ही शामनाथ झूमते हुए आगे बढ़ आए और माँ को आलिंगन में भर लिया।

"ओ अम्मी! तुमने तो आज रंग ला दिया!... साहब तुमसे इतना खुश हुआ कि क्या कहूँ। ओ अम्मी! अम्मी!"

माँ की छोटी–सी काया सिमटकर बेटे के आलिंगन में छिप गई। माँ की आँखों में फिर आँसू आ गए। उन्हें पोंछती हुई धीरे–से बोली, "बेटा, तुम मुझे हरिद्वार भेज दो। मैं कब से कह रही हूँ।"

टिप्पणी

शामनाथ का झूमना सहसा बंद हो गया और उनकी पेशानी पर फिर तनाव के बल पड़ने लगे। उनकी बाहें माँ के शरीर पर से हट आईं।

"क्या कहा, माँ? यह कौन–सा राग तुमने फिर छेड़ दिया?"

शामनाथ का क्रोध बढ़ने लगा था, बोलते गए– तुम मुझे बदनाम करना चाहती हो, ताकि दुनिया कहे कि बेटा माँ को अपने पास नहीं रख सकता।

"नहीं बेटा, अब तुम अपनी बहू के साथ जैसा मन चाहे रहो। मैंने अपना खा–पहन लिया। अब यहाँ क्या करूँगी। जो थोड़े दिन जिंदगानी के बाकी हैं, भगवान का नाम लूँगी, तुम मुझे हरिद्वार भेज दो।"

"तुम चली जाओगी, तो फुलकारी कौन बनाएगा? साहब से तुम्हारे सामने ही फुलकारी देने का इकरार किया है।"

"मेरी आँखें अब नहीं हैं, बेटा, जो फुलकारी बना सकूँ। तुम कहीं और से बनवा लो। बनी–बनाई ले लो।"

"माँ, तुम मुझे धोखा देके यूँ चली जाओगी। मेरा बनता काम बिगाड़ोगी? जानती नहीं, साहब खुश होगा, तो मुझे तरक्की मिलेगी।"

माँ चुप हो गईं। फिर बेटे के मुँह की ओर देखती हुई बोलीं,– "क्या तेरी तरक्की होगी? क्या साहब तेरी तरक्की कर देगा? क्या उसने कुछ कहा?"

"कहा नहीं, मगर देखती नहीं, कितना खुश गया है। कहता था, जब तेरी माँ फुलकारी बनाना शुरू करेंगी, तो मैं देखने आऊँगा कि कैसे बनाती हैं। जो साहब खुश हो गया, तो मुझे इससे बड़ी नौकरी भी मिल सकती है, मैं बड़ा अफसर बन सकता हूँ।"

माँ के चेहरे का रंग बदलने लगा, धीरे–धीरे उसका झुर्रियों–भरा मुँह खिलने लगा, आँखों में हल्की–हल्की चमक आने लगी।

"तो तेरी तरक्की होगी, बेटा?"

"तरक्की यूँ ही हो जाएगी? साहब को खुश रखूँगा, तो कुछ करेगा, वर्ना उसकी खिदमत करने वाले और थोड़े हैं?"

"तो मैं बना दूँगी, बेटा, जैसा बन पड़ेगा, बना दूँगी।"

और माँ दिल–ही–दिल में फिर बेटे के उज्ज्वल भविष्य की कामनाएँ करने लगीं और मिस्टर शामनाथ, "अब सो जाओ मां!" कहते हुए तनिक लड़खड़ाते हुए अपने कमरे की ओर घूम गए।

2.3.2 चीफ की दावत' (कहानी) का सार

कहानी स्वार्थ, प्रदर्शन, समर्पण और निस्वार्थ आदि बिन्दुओं पर अपनी यात्रा तय करती प्रतीत होती है। बेटा अपने स्वार्थ के लिए अपनी मां का किस प्रकार उपयोग करता है, यह बात इस कहानी में उठायी गई है। फिर भी मां का व्यवहार बेटे के प्रति क्या होता

है, यह देखकर बड़ों के प्रति आदर भाव जागृत हो उठता है। चीफ का चरित्र भी प्रेरक बन पड़ा है। कुल मिलाकर 'चीफ की दावत' कहानी भी भीष्म साहनी की प्रतिभा को ऊंचाइयों पर ले जाती प्रतीत होती है।

टिप्पणी

भीष्म साहनी की यह कहानी चीफ की दावत अत्यन्त मार्मिक और हृदयस्पर्शी कहानी है। अच्छाइयों–बुराइयों, स्वार्थ और निस्वार्थ, संस्कृति और वातावरण को उदघाटित करती यह कहानी अद्वितीय है। आज की पीढ़ी के स्वार्थ का पर्दाफाश करती कहानी है ये। बड़ों के प्रति भावनाओं की पोल–पट्टी खोलती कहानी है ये। प्रदर्शन की भावना के दर्शन कराती कहानी है। अफसरों, के साथ आयी स्त्रियों की हंसी कहीं–कहीं खटकती है।

2.3.3 व्याख्यांश

1. आखिर पांच बजते–बजते तैयारी मुकम्मल ..... सहसा एक अड़चन खड़ी हो गई, मां का क्या होगा?

संदर्भ–ये पंक्तियां भीष्म साहनी की कहानी 'चीफ की दावत' से ली गई हैं।

प्रसंग–मिस्टर शामनाथ के यहां चीफ की दावत की तैयारियां कुछ यूं चल रही थीं, उसी का चित्र देखें–

व्याख्या–मिस्टर शामनाथ के यहां आज शाम को चीफ की दावत का होना निश्चित हुआ था। सो, मिस्टर शामनाथ और उनकी पत्नी सिर से चोटी तक का जोर लगाकर तैयारियों में जुटे थे। परिणाम, पांच बजे के आस–पास तैयारियां पूर्ण होने को हुईं। पीने–पिलाने का प्रबंध बैठक में किया गया। फर्नीचर, नैपकिन, फूलादि सब बरामदे में एक तरफ रख दिए गए। घर का फालतू सामान इधर–उधर छिपा दिया गया। तभी शामनाथ की निगाह यकायक अपनी बूढ़ी मां पर गई, वे सोचने लगे मां का क्या होगा? मां को चीफ की निगाहों से कैसे, कहां छिपाया जाएगा। यही सब सोच–सोचकर उनका दिमाग चकराने लगा।

विशेष

- स्थिति व वातावरण के अनुकूल शब्द–चयन ने कथा को जीवंत कर दिया है।
- वाक्य रचना लघु व सरल है।
- शब्दों के माध्यम से चित्र उकेर देने की कला में भीष्म साहनी सिद्धहस्त हैं।

2. मिस्टर शामनाथ चुप रहे। यह मौका बहस का न था ..... बड़ा साहब घर पर आ रहा है, सारा काम सुभीते से चल जाय।

संदर्भ–पूर्ववत।

प्रसंग–मां को लेकर कि 'मां का क्या किया जाये' पति–पत्नी के बीच कहा–सुनी होने लगी। ऐसे में चीफ के आने का समय होता जानकर शामनाथ बोले–

व्याख्या–पत्नी के मत्थे न लगना उचित समझकर शामनाथ ने चुप ही रहना अच्छा समझा। वह सोचने लगे कि ये अवसर बहस में समय खराब करने का नहीं है–सो वे समस्या के समाधान में फिर लग गए। उनकी निगाह अचानक मां की कोठरी की ओर

टिप्पणी

चली गई। कोठरी का द्वार बरामदे की तरफ खुलता था। सो, बरामदे की तरफ देखकर तुरंत बोले–'मैंने सोच लिया है, ये कहते हुए वे कोठरी के सामने जाकर रुक गए। उन्होंने देखा मां दीवार के साथ चौकी पर बैठी माला जप रही थी। उन्होंने मुंह और सिर अपने दुपट्टे से ढक रखा था। मां सारी तैयारियां होती देख, सोच रही थी; कि कोई बात तो अवश्य है, तभी तो ये दोनों चकरघिन्नी बने हुए हैं। इससे मां के दिल की धड़कन भी तेज हो रही थी। उनको इतनी भनक तो लग ही गई थी कि बेटे का बड़ा साहब दफ्तर से उनके घर आ रहा है। ऐसे में वेशुभ मना रही थी कि सारा कार्य खुशी–खुशी ही हो जाये तो भगवान भली करें।

विशेष

- एक बूढ़ी अनपढ़ माँ का चित्रण बहुत ही सहज और वास्तविक रूप में किया गया है।
- 'यह मौका बहस का न था', इस एक पंक्ति में गिरते मूल्यों की विद्रूपता प्रदर्शित होती है कि किस प्रकार एक पुत्र अपनी बूढ़ी माँ को घर के किसी सामान के दर्जे में रख देता है।

3. सात बजते–बजते मां का दिल धक्–धक् करने लगा। ..... चुपचाप कुर्सी पर से टांगें लटकाये वहीं बैठी रहीं।

संदर्भ–पूर्ववत।

प्रसंग–'चीफ घर आने वाले हैं', यही सब सोच–सोचकर मिस्टर शामनाथ की अनपढ़ बूढ़ी देहाती मां अपनी ही उधेड़–बुन में लगी थी।

व्याख्या–शामनाथ की बूढ़ी मां सोच रही थी। मैं ठहरी बूढ़ी, अनपढ़, अंग्रेजी का फूटा अक्षर न जानने वाली खूसट बूढ़ी। अगर चीफ सामने पड़ ही गया और कुछ पूछ बैठा तो क्या होगा। कारण वह न तो अंग्रेजी जानती और न कभी अंग्रेजों के सामने ही पड़ी थी। यह चीफ ठहरा अमेरिकी तो क्या होगा–कडुवा और नीम चढ़ा। ऐसे में उनका दिल घबराने लगा। ऐसे में उन्होंने सोचा/चाहा कि क्यों न वे चुपचाप पिछवाड़े जाकर विधवा सहेली के यहां ही बैठ जाएं। न होगा बांस, न बजेगी बांसुरी। लेकिन फिर वे सोचने लगी कि वे अपने बेटे के आदेश को कैसे टाल सकती हैं। सो चुपचाप कुर्सी पर टांगें लटकाकर बैठ गईं।

विशेष

- माँ के मनोभावों को बहुत ही सहजता और प्रभावोत्पादकता के साथ लेखक ने कलमबद्ध किया है।
- 'बजते–बजते' और 'धक्–धक्' में पुनरुक्ति ने स्थिति की गंभीरता को यथावत प्रस्तुत किया है।

4. बरामदे में पहुंचते ही शामनाथ सहसा ठिठक गए। ..... और मां के झरे हुए बाल, आधे गंजे सिर पर अस्त–व्यस्त बिखर रहे थे।

संदर्भ–पूर्ववत।

टिप्पणी

प्रसंग–चीफ घर दावत पर आ चुके हैं। पीने–पिलाने के दौर के बाद चीफ बैठक से बाहर आ गए। शामनाथ उनके संग हैं। चीफ के साथ बरामदे में आकर जो दृश्य शामनाथ ने देखा तो वे ठिठक गए, अब आगे–

व्याख्या–बरामदे का दृश्य देखकर मिस्टर शामनाथ की टांगें लड़खड़ा गईं। उनका सारा नशा छू–मन्तर हो गया। मां ठीक कोठरी के सामने कुर्सी पर बैठी थीं। उनके दोनों पांव कुर्सी पर थे। सिर दाएं से बाएं और बाएं से दाएं घूमे जा रहा था। खर्राटों की आवाजें आ रही थीं। सिर रुकते ही खर्राटे और ज्यादा आने लगते। शोर करने लगते। क्षण भर बाद सिर झटके से फिर हिलना शुरू कर देता। ये ही होते–होते बूढ़ी मां का आंचल सिर से खिसक गया। ऐसा हो गया तो मां के झरे हुए बालों के कारण उनका गंजा सिर और उस पर हल्के अस्त–व्यस्त खिचडी बाल दिखायी देने लगे। ये सब दृश्य देखकर मिस्टर शामनाथ का क्रोध आसमान को छूने लगा।

विशेष

- शब्दों से दृश्य को जीवंत रूप इस प्रकार दिया गया है कि पाठक के सम्मुख स्थिति बिल्कुल साफ चित्रित हो जाती है।
- भाषा में मुहावरे के प्रयोग में लेखक की चतुराई द्रष्टव्य है। यथा– 'नशा हिरन होने लगा।

5. साहब बड़ी रुचि से फुलकारी देखने लगे। ..... इन्हें ऐसी ही एक फुलकारी बना दोगी न?''

संदर्भ–पूर्ववत।

प्रसंग–चीफ साहब पुरानी फुलकारी को देखने में व्यस्त हैं। उसी का वर्णन इन पंक्तियों में है–

व्याख्या–चीफ साहब पुरानी फुलकारी को आश्चर्य से निहार रहे हैं। हालांकि पुरानी फुलकारी थी। सो जगह–जगह से उसके तागे निकल रहे थे। कपड़ा भी फट रहा था। लेकिन चीफ साहब की रुचि में कोई कमी न दिखलायी दे रही थी। ये देख शामनाथ चीफ साहब से बोले–साहब, मैं आपको नई बनवा दूंगा। मां बना देंगी। फिर मां से पूछने लगे– "मां ऐसी फुलकारी तो बना दोगी न?'' ये सुनकर मां चुप रही।

विशेष

- लेखक ने शामनाथ का स्वार्थी चरित्र इस प्रकार दिखाया है कि पाठक को अनायास ही शामनाथ से कोफ्त होने लगे।
- छोटे–छोटे लेकिन अपने में पूर्ण वार्तालापों ने कहानी को अद्‌भुत कसाव दिया है।

2.3.4 'चीफ की दावत' (कहानी) का समीक्षात्मक अध्ययन

भीष्म साहनी की कहानी 'चीफ की दावत' एक मार्मिक और हृदयस्पर्शी कहानी है। इसमें कहानी कला की सभी विशेषताएं विद्यमान हैं, यथा–

कथानक–इस कहानी का कथानक कसा हुआ है। 'चीफ की दावत' को लेकर इस कहानी के मुख्य पात्र मिस्टर शामनाथ अपने चीफ के घर आने पर क्या कुछ नहीं

करना चाहते। उनके स्वागत में जमीन–आसमान एक किए हुए हैं। घर सजावट से लेकर अपने कपड़े, अपनी पत्नी के लिबास से लेकर अंदर–बाहर तक की सब चीजों को, बातों को वे आसमान पर बैठाने को आतुर हैं।

टिप्पणी

खैर, सब कुछ उन्होंने कर लिया। बस एक कसर बाकी रह गई–मां का क्या करेंगे। उन्हें कहां छिपाएंगे। उनका व्यवहार क्या होगा। यह सब सोच–सोचकर वे हलकान हुए जा रहे हैं। इस बारे में पत्नी से भी सलाह–मशवरा कर लेते हैं। उधर चीफ के आने का समय हो गया है, ये देखकर वे मां को हिदायतें देकर अपने मन को तसल्ली से भर देते हैं।

जिस मां को वे छिपाकर रखना चाहते थे उसी मां ने उनकी इज्जत रख ली थी। यह देखकर उन्हें मां की अहमियत मालूम हो जाती है। उधर जब मां स्वयं को हरिद्वार भेजने के लिए बेटे को कहती है, तब भी स्वार्थी बेटा कहता है, 'तुम चली जाओगी, तो फुलकारी कौन बनाएगा? साहब से तुम्हारे सामने ही फुलकारी देने का इकरार किया है।' उधर मां का दिल जब बेटे की तरक्की की बात सोचता है, तब निःस्वार्थी मां कहती है; ''तो मैं बना दूंगी बेटा, जैसे, बन पड़ेगा बना दूंगी।"

सार में कहें तो इस कहानी का कथानक आज के स्वार्थी बेटों पर कटाक्ष करता प्रतीत होता है।

चरित्र चित्रण–इस कहानी के मुख्य पात्रों के चरित्र का चित्रण काफी सशक्त बन पड़ा है। इसके प्रमुख पात्रों में–मिस्टर शामनाथ, उनकी पत्नी, चीफ, देसी अफसर और उनकी स्त्रियां तथा शामनाथ की मां हैं। चरित्र चित्रण की दृष्टि से देखें–

शामनाथ सिगरेट मुंह में रखे मां के बारे में कहते हैं–

शामनाथ सिगरेट मुंह में रखे, सिकुड़ी आंखों से श्रीमती के चेहरे की ओर देखते हुए पलभर सोचते रहे, फिर सिर हिलाकर बोले, ''नहीं, मैं नहीं चाहता कि उस बुढ़िया का आना–जाना यहां फिर से शुरू हो। पहले ही बड़ी मुश्किल से बन्द किया है। मां से कहें कि जल्दी ही खाना खा के शाम को ही अपनी कोठरी में चली जाएं। मेहमान कहीं आठ बजे आएंगे, इससे पहले ही अपने काम से निबट लें।''

शामनाथ साहब को गांव के विषय में बतलाते हुए कहते हैं–

साहब अपने हाथ में मां का हाथ अब भी पकड़े हुए थे, और मां सिकुड़ी जा रही थीं। साहब के मुंह से शराब की बू आ रही थी। शामनाथ अंग्रेजी में बोले, ''मेरी मां गांव की रहने वाली हैं। उमर–भर गांव में रही हैं। इसलिए आपसे लजाती हैं।''

साहब इस पर खुश नजर आए। बोले, ''सच? मुझे गांव के लोग बहुत पसन्द हैं, तब तो तुम्हारी मां गांव के गीत और नाच भी जानती होंगी?'' चीफ खुशी से सिर हिलाते हुए मां को टिकटिकी बांधे देखने लगे।

मां से जब फुलकारी दिखाने की बात कही गई, उस प्रसंग को इन पंक्तियों में देखें–

मां चुपचाप अन्दर गईं और अपनी पुरानी फुलकारी उठा लाईं।

टिप्पणी

साहब बड़ी रुचि से फुलकारी देखने लगे। पुरानी फुलकारी थी, जगह–जगह से उसके तागे टूट रहे थे और कपड़ा फटने लगा था। साहब की रुचि को देखकर शामनाथ बोले, ''यह फटी हुई है, साहब, मैं आपको नई बनवा दूंगा। मां बना देंगी। क्यों, मां साहब को फुलकारी बहुत पसन्द है, इन्हें ऐसी ही एक फुलकारी बना दोगी न?''

मां चुप रहीं। फिर डरते–डरते धीरे से बोलीं, ''अब मेरी नजर कहां है बेटा? बूढ़ी आंखें क्या देखेंगी?''

मगर मां का वाक्य बीच ही में तोड़ते हुए शामनाथ साहब को बोले, ''वह जरूर बना देंगी। आप उसे देखकर खुश होंगे।''

कथोपकथन–कथोपकथन की दृष्टि से ये कहानी अत्यन्त सशक्त बन पड़ी है। इसमें स्वार्थी बेटे और निःस्वार्थी मां के मुद्दे को बड़े ही प्रभावी ढंग से उठाया गया है। बड़े–बूढ़ों के महत्व को भी प्रकट किया गया है, लेकिन, आधुनिक दौड़ का परिणाम भी छोड़ा गया है।

देशकाल, वातावरण योजना– देशकाल, वातावरण योजना की दृष्टि से भी कहानी सशक्त बन पड़ी है। कहानी का पूरा माहौल/वातावरण पाठकों को अपने वातावरण में बांधने में पूरी तरह सफल है। भारतीय संस्कृति की छटा के भी दर्शन होते हैं। पंजाब की संस्कृति को देखें–मां से बेटा बढ़िया टप्पा सुनाने को आदेश रूप में कहता है, तब मां के विचार देखें–

''मैं क्या गाऊं, बेटा! मुझे क्या आता है?''

''वाह! कोई बढ़िया टप्पे सुना दो। दो पत्तर अनारां दे...''

देसी अफसर और उनकी स्त्रियों ने इस सुझाव पर तालियां पीटीं। मां कभी दीन दृष्टि से बेटे के चेहरे को देखतीं, कभी पास खड़ी बहू के चेहरे को।

इतने में बेटे ने गम्भीर आदेश भरे लहजे में कहा, ''मां!''

इसके बाद हां या ना का सवाल ही न उठता था। मां बैठ गईं और क्षीण, दुर्बल, लरजती आवाज में एक पुराना विवाह का गीत गाने लगीं–

हरिया नी माये, हरिया नी भैणे

हरिया ते भागी भरिया है!

देसी स्त्रियां खिलखिला के हंस उठीं। तीन पंक्तियां गा के मां चुप हो गईं।

बरामदा तालियों से गूंज उठा। साहब तालियां पीटना बन्द ही न करते थे। शामनाथ की खीज प्रसन्नता और गर्व में बदल उठी थी। मां ने पार्टी में नया रंग भर दिया था।

तालियां थमने पर साहब बोले, ''पंजाब के गांवों की दस्तकारी क्या है?''

शामनाथ खुशी से झूम रहे थे। बोले, ''ओ, बहुत कुछ, साहब! मैं आपको एक सेट उन चीजों का भेंट करूंगा। आप उन्हें देखकर खुश होंगे।''

मगर साहब ने सिर हिलाकर अंग्रेजी में फिर पूछा, ''नहीं, मैं दुकानों की चीज नहीं मांगता। पंजाबियों के घरों में क्या बनता है, औरतें खुद क्या बनाती हैं?''

शामनाथ कुछ सोचते हुए बोले, ''लड़कियां गुड़ियां बनाती हैं, औरतें फुलकारियां बनाती हैं।''

''फुलकारी क्या ?''

टिप्पणी

शामनाथ फुलकारी का मतलब समझाने की असफल चेष्टा करने के बाद मां को बोले, ''क्यों मां, कोई पुरानी फुलकारी घर में है?''

मां चुपचाप अन्दर गईं और अपनी पुरानी फुलकारी उठा लाईं।

देशकाल और वातावरण योजना का इससे अच्छा उदाहरण और क्या हो सकता है।

भाषा–शैली–कहानी की भाषा शैली कहानी के कथानक और कथोपकथन तथा परिवेश के अनुकूल अत्यन्त प्रभावी बन पड़ी है। पंजाबी शब्दों का प्रयोग लहजा और शैली देखते ही बनती है–

हरिया नी माये, हरिया नी भैणे

हरिया ते भागी भरिया है!

उद्देश्य–चीफ की दावत अपने उद्देश्य में पूरी तरह खरी उतरती है। यह एक बोलती जीवंत कहानी है।

अपनी प्रगति जांचिए

3. शामनाथ का बड़ा साहब माँ से किस चीज की मांग करता है?

(क) गीत (ख) फुलकारी

(ग) टप्पे (घ) कुर्सी

4. 'चीफ की दावत' कहानी का केंद्र–बिंदु कौन–सा पात्र है?

(क) मिस्टर शामनाथ (ख) मिसेज शामनाथ

(ग) बड़े साहब (घ) माँ

2.4 विराम चिह्न : (संकलित)

'विराम' का अर्थ है 'रुकना' या 'ठहरना'। लिखित भाषा में भावों की अभिव्यक्ति एवं अर्थ की सुस्पष्टता के लिए विराम चिह्नों का प्रयोग किया जाता है। बोलने की भाषा में वक्ता अंग संचालन, कंठ ध्वनि एवं अन्य हाव–भावों से अपनी अभिव्यक्ति को पूर्णता प्रदान करता है, परन्तु लिखित भाषा में यह कार्य विराम चिह्नों से लिया जाता है।

विराम–चिह्नों की एकमात्र उपयोगिता है– वक्ता या लेखक के कथन को पूर्णतः स्पष्ट करना। विराम चिह्नों का अभाव होने से एक ओर तो अर्थ में अस्पष्टता आने की सम्भावना रहती है, तो दूसरी ओर अभिव्यक्ति में अपूर्णता का समावेश हो जाता है। एक उदाहरण से हम अपने कथन को स्पष्ट करेंगे–

चौराहे पर खड़े यातायात–नियन्त्रक (सिपाही) को अपने अधिकारी का यह लिखित सन्देश मिला–

"कार नं, UP 38 AB 4456 को रोको मत जाने दो।"

टिप्पणी

वस्तुतः यह सन्देश विराम चिह्नों के अभाव में अस्पष्ट है। इस सन्देश से सिपाही यह नहीं समझ पाया कि कार को रोकना है या कि उसे जाने देना है; क्योंकि इस वाक्य के दो अर्थ हो सकते हैं। यथा– 1. रोको, मत जाने दो। (कार को रोको, (उसे) जाने मत दो) 2. रोको मत, जाने दो। (कार को रोको नहीं (उसे) जाने दो)। हिन्दी में विराम चिह्नों का प्रयोग आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के सद्प्रयत्नों का परिणाम है। उन्होंने विराम चिह्नों की उपयोगिता प्रतिपादित करते हुए हिन्दी में इनके प्रयोग को अपरिहार्य बताया और अंग्रेजी में प्रचलित प्रायः सभी चिह्नों को ग्रहण कर लिया।

हिन्दी में प्रयुक्त विराम चिह्न

हिन्दी में प्रयुक्त होने वाले प्रमुख विराम चिह्न निम्नवत् हैं–

अल्पविराम	,	(Comma)
अर्द्धविराम	;	(Semicolon)
पूर्णविराम	।	(Full stop)
प्रश्नवाचक चिह्न	?	(Sign of Interrogation)
विस्मयादिबोधक	!	(Sign of Exclamation)
योजक चिह्न	-	(Hyphen)
निर्देश चिह्न	–	(Dash)
विवरण चिह्न	:–	(Colon and Dash)
उद्धरण चिह्न	" " "	(Inverted Commas)
कोष्ठक चिह्न	() {})	(Brackets)
संक्षेप चिह्न	.	(Dot)
लोप सूचक	XXX	(Cross)
हंस पद चिह्न	'	()

अल्पविराम (,)

अल्पविराम का शाब्दिक अर्थ है 'थोड़ा ठहरना'।

हिन्दी वाक्यों में इसका प्रयोग सभी विराम चिह्नों की अपेक्षा अधिक होता है, अतः यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण चिह्न है। अल्पविराम के प्रयोग में पर्याप्त सावधानी की अपेक्षा रहती है, क्योंकि इसके गलत प्रयोग से अर्थ का अनर्थ होने की सम्भावना रहती है। भाषा में अर्थगत स्पष्टता लाने के लिये भी अल्पविराम की महती आवश्यकता रहती है। इस चिह्न का प्रयोग निम्नलिखित स्थितियों में किया जाना चाहिए–

1. यदि किसी वाक्य में दो या अधिक समान पद एक साथ होते हैं, तो उनके बीच अल्पविराम प्रयोग होता है। यथा–

टिप्पणी

(i) राधा, सीता, गीता, माधुरी और लतिका साथ–साथ रहती हैं।

(ii) वह कहानी, कविता, नाटक और एकांकी में बराबर रुचि रखता है।

2. संयुक्त वाक्यों में दूसरे वाक्य का प्रारम्भ संयोजकों से होता है। समुच्चयबोधक संयोजकों के अतिरिक्त अन्य संयोजकों– अतः, परन्तु, अतएव आदि से पूर्व अल्पविराम का प्रयोग होता है। यथा–

(i) वह गरीब जरूर है, पर बेईमान नहीं।

(ii) उसने परिश्रम नहीं किया, अतः अनुत्तीर्ण हो गया।

3. यदि किसी वाक्य का प्रारम्भ हां, नहीं, अच्छा आदि अव्ययों से हुआ हो, तो इनके बाद अल्पविराम का प्रयोग होता है। यथा–

(i) हां, मैं कल जाऊंगा।

(ii) नहीं, वह मेरे साथ नहीं आएगा।

(iii) अच्छा, अब चलता हूं।

4. हिन्दी वाक्य रचना कहीं–कहीं अंग्रेजी वाक्य रचना से प्रभावित है। कभी–कभी मुख्य वाक्य के बीच में विशेषण या क्रिया विशेषण उपवाक्य होते हैं। इनमें दोनों ओर त होता है। यथा–

(i) विभीषण, जो लंका के राजा रावण का भाई था, राम की शरण में आ गया।

(ii) आने वाले समय में, जब भारत प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अग्रणी होगा, विष्व में भारत की तूती बोलेगी।

5. किसी उक्ति या उद्धरण से पूर्व भी अल्पविराम का प्रयोग किया जाता है। यथा–

(i) गांधी ने कहा, "हमारा आंदोलन अहिंसक रहेगा।"

(ii) तिलक ने कहा, "स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।"

अर्द्धविराम (;)

अर्द्धविराम में अल्पविराम की तुलना में कुछ अधिक ठहरना होता है, परन्तु पूर्णविराम को तुलना में कम। इसका प्रयोग हिन्दी वाक्यों में निम्न स्थितियों में किया जाता है। यथा–

1. यदि किसी वाक्य में अनेक उपवाक्य स्वतन्त्र रूप से प्रयुक्त हुए हों, तो प्रत्येक उपवाक्य के बाद अर्द्धविराम का प्रयोग होता है। यथा–

बाढ़ के कारण फसलें नष्ट हो गई हैं; मार्ग अवरुद्ध हो गए हैं; सड़कें टूट गई हैं; महामारी फैलने लगी है और जन–धन की भारी हानि हुई है।

2. सभी उपाधियों के लेखन में दो उपाधियों के बीच अर्द्धविराम का प्रयोग किया जाता है। यथा–

(i) एम.ए.; पी–एच.डी.

(ii) बी.ए.; बी.एड.

3. एक वाक्यांश को दूसरे से पृथक् दिखाने के लिए अल्पविराम का प्रयोग होता है। यथा–

मेले में हमारी जेब कट गई; हमें पता तक न चला।

टिप्पणी

पूर्णविराम (।)

पूर्ण विराम का अर्थ है–'पूरी तरह रुकना'। जब कोई कथन अर्थ की दृष्टि से पूर्ण हो जाता है, तब पूर्ण विराम का प्रयोग किया जाता है। प्रायः इसका प्रयोग प्रत्येक वाक्य के अन्त में किया जाता है, क्योंकि वक्ता के कथन की दृष्टि से एक वाक्य अपने अर्थ को प्रकट करता है। मूलतः किसी वाक्य की समाप्ति पर इसका प्रयोग होता है। यथा–

(i) सोहन पढ़ने गया।

(ii) तुम मेरे घर आये।

कभी–कभी व्यक्ति या वस्तु का सजीव चित्र प्रस्तुत करते समय जिस शैली का प्रयोग किया जाता है, उसमें वाक्यांश ही होते हैं, फिर भी उन वाक्यांशों के बाद इस चिह्न का प्रयोग किया जाता है। यथा–

- गौर मुख–मण्डल पर हरिण–सी आंखें। सावनी घटाओं जैसी बिखरी अलकावलि। गठा हुआ बदन।
- दूर–दूर तक उमड़ती–घुमड़ती कजरारी घटाएं। रह–रहकर बिजली का चमकना। पुरवैया बयार। सावनी मल्हार और गीतों की मधुर ध्वनि।

किन्तु निम्नलिखित वाक्यों में इस चिह्न का प्रयोग अशुद्ध और दोषपूर्ण है–

जब वह मेरे घर आया। तभी मैंने उससे बातें कीं।

तुम कहते हो। कि वह आज नहीं जाएगा। यहां 'तभी' तथा 'कि' के पहले पूर्ण विराम का प्रयोग ठीक नहीं।

दोहा, चौपाई, कवित्त, सवैया आदि छन्दों में एक पंक्ति के बाद पूर्ण विराम (।) तथा द्वितीय पक्ति के पश्चात दोहरा पूर्ण विराम (।।) लगाया जाता है–

रघुकुल रीति सदा चलि आई।
प्रान जाहिं पर वचन न जाई।।

कबिरा आप ठगाइये, और न ठगिये कोइ।
आप ठगे सुख होत है, और ठगे दुःख होइ।।

पूर्ण विराम के प्रयोग में विशेष सावधानी की जरूरत होती है। यह देखा गया है कि लोग '।' अथवा 'था' के तुरन्त बाद पूर्ण विराम का अनावश्यक प्रयोग बिना यह विचार किये हुए करते हैं कि वाक्य पूर्ण हुआ है या नहीं। इस प्रवृत्ति पर रोक लगाने का अभ्यास बना लेना चाहिए। विराम का प्रयोग तभी उचित माना जाता है जब वाक्य में अर्थगत पूर्णता आ गयी हो।

इसी प्रकार 'और' से पहले कभी पूर्णविराम का प्रयोग नहीं होता। संयोजकों से पूर्व पूर्णविराम का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

प्रश्नवाचक चिह्न (?)

इसका प्रयोग वाक्य के अन्त में होता है। जिन वाक्यों में प्रश्न करने या पूछे जाने का भाव रहता है, अथवा जहां वाक्य में अनिश्चितता रहती है अथवा व्यंग्योक्ति होती है, वहां इसका प्रयोग किया जाता है। वे वाक्य जिनमें कोई प्रश्न पूछा गया हो और जिसके

उत्तर की अपेक्षा की गयी है, प्रश्नवाचक वाक्य कहलाते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि ऐसे वाक्यों में प्रश्नसूचक शब्द का प्रयोग हुआ हो। यथा–

टिप्पणी

तुम्हारे भाई कहां रहते हैं?

आप वहां गये थे?

बैंक से रुपये ले आये?

हमारे घर कौन आया है?

क्या वह पढ़ रहा है।

शायद आपकी ही शादी हुई है?

आप ही बनारस के रहने वाले हैं?

आज देश में नेता ही तो ईमानदार हैं?

विशेष– जहां प्रश्न सीधा पूछा गया हो और उत्तर की अपेक्षा न हो, वहां प्रश्नसूचक चिह्न नहीं लगता है। यथा–

मैंने समझ लिया कि देर से क्यों आये थे।

सब जानते हैं कि तुम कहां थे।

विस्मयादिबोधक चिह्न (!)

जहां हर्ष, विषाद, विस्मय, घृणा, करुणा, भय आदि का भाव हो, वहां इसका प्रयोग होता है। यथा–

(अ) अरे! तुम तो तड़के ही आ गये। (विस्मय)

(ब) आह! वह संसार से उठ गया। (विषाद)

(स) छिः छिः! शहरी जीवन तो नरक है। (घृणा)

(द) आहा ! बड़ा आनन्द आया। (हर्ष)

(य) वाह! खूब खेल जमा। (हर्ष)

इनके अतिरिक्त प्रार्थना, व्यंग्य, उपहास आदि के भाव को व्यक्त करने के लिए भी इसका प्रयोग किया जाता है। यथा–

(अ) हे भगवान् ! सबका कल्याण करो।

(ब) तुम तो पूरे गधे हो।

(स) अरे दुष्ट! अन्याय मत करो।

विस्मयादिबोधक चिह्न का प्रयोग भावसूचक शब्द के बाद करना चाहिए।

योजक चिह्न (–)

योजक चिह्न का प्रयोग निम्न स्थितियों में किया जाता है–

(i) सामासिक पदों में

माता–पिता, चरण–कमल, धन–दौलत, भाई–बहिन, मार्ग–व्यय, रात–दिन।

टिप्पणी

(ii) विपरीतार्थक शब्दों में

हानि–लाभ, यश–अपयश, आदि–अन्त।

(iii) पुनरुक्ति में

बार–बार, जब–जब, जहां–जहां।

(iv) अनिश्चित संख्यावाचक विशेषणों में

दस–बीस, साठ–सत्तर, थोड़ा–सा।

(अ) जब कोई शब्द किसी पंक्ति में अधूरा रह जाये, तो उसके बाद नयी पंक्ति का प्रारम्भ भी योजक चिह्न से ही करते हैं।

निर्देश चिह्न (––)

यह योजक चिह्न से बड़ा होता है। इसका प्रयोग विवरण देने के लिए तथा प्रस्तुत करते समय एक विचार के बीच में दूसरे विचार के आ जाने पर होता है। यथा–

(अ) गद्य–साहित्य के अनेक रूप हैं–कहानी, उपन्यास, नाटक आदि।

(ब) बापू ने दो बातें– सत्य बोलना और हिंसा न करना–सभी को सिखाई।

(स) अमेरिका धन के दर्प में डूबा है– एक दिन पछतायेगा।

(द) भारत में सभी खनिज–लोहा, सोना, तांबा, कोयला मिलते हैं।

विवरण चिह्न (:)

जब वाक्य या उपवाक्य की व्याख्या की जाये या विस्तार से उसका विवरण दिया जाये, वहां इसका प्रयोग होता है। कुछ लोग तो निर्देशक (–) को भी इसके स्थान पर प्रयुक्त करते हैं। इन दोनों में कोई सूक्ष्म अन्तर नहीं होता है। यथा–

(अ) बढ़ती हुई महंगाई को रोकने के लिए निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत हैं–

(i) अनाज तथा अन्य खाद्य पदार्थों के ऊपर से प्रतिबन्ध हटा दिया जाये।

(ii) काले धन तथा चोरबाजारी पर अंकुश लगाया जाये।

(iii) उद्योग–धन्धों का विस्तार हो।

(ब) निम्नलिखित शब्दों के विलोम लिखिए–

पक्ष, दिन, ज्ञान, पाप, अच्छा, स्त्री।

कोष्ठक

वाक्यों में किसी पद या शब्द को अधिक स्पष्ट करने के लिए इनका प्रयोग होता है। कोष्ठकों में प्रयुक्त शब्दों का वाक्य से कोई सम्बन्ध नहीं होता। विशेषतः नाटकों में अभिनय सम्बन्धी निर्देश का संकेत इस रूप में किया जाता है। कभी–कभी हिन्दी का कोई शब्द प्रचलित न हो, तो उसके प्रयोग के साथ कोष्ठक में प्रचलित अंग्रेजी शब्द को भी लिख दिया जाता है। यथा–

अपने लिये दूसरों को कष्ट देना (चाहे वह लेख पढ़ने का ही क्यों न हो) अक्षम्य दोष है।

इनके शरीर में नाल–तन्त्र (Canal system) होता है।

उद्धरण चिह्न (' ' ' ')

ये दो प्रकार के होते हैं– इकहरे और दोहरे।

इकहरे उद्धरण चिह्न (')का प्रयोग पुस्तक, समाचार–पत्र, लेखक के उपनाम, लेख के अथवा किसी वाक्य–विशेष को अपने शब्दों में अवतरित करने के लिए होता है। यथा–

(अ) 'अमर उजाला' उत्तर भारत का लोकप्रिय समाचार–पत्र है।

(ब) 'भारत में बेरोजगारी' विषय पर निबन्ध लिखो।

(स) 'प्रसाद' छायावाद के जन्मदाता थे।

(द) 'रामचरितमानस' धार्मिक तथा साहित्यिक ग्रन्थ है।

इसके विपरीत दुहरे उद्धरण–चिह्न का प्रयोग किसी महत्त्वपूर्ण कथन, कहावत, सूक्ति अथवा पुस्तक के अवतरण को ज्यों का त्यों उद्धृत करते समय किया जाता है। यथा–

(अ) "श्रद्धा और प्रेम के योग का नाम भक्ति है।"

(ब) "दर्शन में जो अद्वैत है, काव्य में उसे ही रहस्यवाद कहा जाता है।"

(स) "परोक्तं न मन्यते" का गुण या अवगुण पण्डितों और मूर्खों में समान रूप से रहता है।

(द) "परहित निरत निरन्तर मन क्रम वचन नेम निबहौंगौ" के संकल्प को आलस और स्वार्थवश न निभा सका।

लोपसूचक चिह्न (XXX)

जब हम पूरा उद्धरण न देकर अधूरा उद्धरण देते हैं, तो लोपसूचक चिह्न लगा देते हैं। जैसे– या अनुरागी चित्त की गति समुझै नहिं कोय।

X X X

संक्षेप चिह्न (.)

जब हम किसी शब्द को पूरा न लिखकर संक्षिप्त रूप में लिखते हैं, तब इस चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे–

रा. च. मानस	=	रामचरितमानस
जी. के. अग्रवाल	=	गोपाल कृष्ण अग्रवाल
पी. के. बनर्जी	=	प्रेम कुमार बनर्जी

हंसपद चिह्न

कभी–कभी हाथ से लिखते समय कोई शब्द छूट जाता है, तब पंक्ति के दो शब्दों के बीच हंसपद चिह्न लगाकर उस छूटे हुए शब्द को पंक्ति के ऊपर लिख दिया जाता है। जैसे–

टिप्पणी

पुत्र

(i) दशरथ के ^ राम ने रावण को मारा।

पुत्री

(ii) सीता जनक की ^ थी।

यहां पहले वाक्य में पुत्र शब्द छूट गया था जिसे लिखने के लिए उस स्थान पर हंसपद चिह्न लगाकर ऊपर छूटा शब्द (पुत्र) को लिखा गया है।

अपनी प्रगति जांचिए

5. ";" चिह्न क्या कहलाता है?
   (क) कॉमा (ख) पूर्ण–विराम
   (ग) अर्द्ध–विराम (घ) विस्मयादि बोधक चिह्न
6. हर्ष, विस्मय, भय आदि भावों को प्रकट करने के लिए कौन–सा चिह्न प्रयुक्त होता है?
   (क) अल्पविराम (ख) विस्मयादिबोधक
   (ग) योजक (घ) कोष्ठक

2.5 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (क)
2. (ग)
3. (ख)
4. (घ)
5. (ग)
6. (ख)

2.6 सारांश

महादेवी जी ने 'नारीत्व का अभिशाप' निबन्ध में समाज की पूर्णता हेतु पुरुष एवं नारी के स्वतंत्र व्यक्तित्व को आवश्यक माना। उनकी दृष्टि में नारी को पुरुष की छाया मात्र मानना नारी जाति के लिए अभिशाप है। उन्होंने नारियों को पुरुषोचित अनुकरण वृत्ति को उचित नहीं माना, क्योंकि इससे सामाजिक श्रृंखला शिथिल तथा व्यक्तिगत बंधन और संकुचित होते हैं। इसीलिए वे भारतीय समाज में नारी की दयनीय स्थिति के लिए नारी के अर्थहीन अनुकरण को जिम्मेदार ठहराती हैं– "पुरुष के अंधानुकरण ने स्त्री के व्यक्तित्व को अपना दर्पण बनाकर उसकी उपयोगिता तो सीमित कर दी, साथ ही समाज को भी अपूर्ण बना दिया।" दोनों की तुलना करती हुई वे कहती है कि "पुरुष समाज का न्याय है, स्त्री दया, पुरुष प्रतिशोधमय क्रोध है, स्त्री क्षमा, पुरुष शुष्क कर्तव्य

है, स्त्री सरस सहानुभूति और पुरुष बल, स्त्री हृदय की प्रेरणा।" इस प्रकार उनकी दृष्टि में स्त्री पुरुष के प्राकृतिक मानसिक वैपरीत्य द्वारा ही समाज सामंजस्यपूर्ण व अखण्ड हो सकता है।

टिप्पणी

भीष्म साहनी की कहानी 'चीफ की दावत' अत्यन्त मार्मिक और हृदयस्पर्शी है। अच्छाइयों–बुराइयों, स्वार्थ और निस्वार्थ, संस्कृति और वातावरण को उदघाटित करती यह कहानी अद्वितीय है। आज की पीढ़ी के स्वार्थ का पर्दाफाश करती कहानी है ये। बड़ों के प्रति भावनाओं की पोल–पट्टी खोलती कहानी है ये। प्रदर्शन की भावना के दर्शन कराती कहानी है। अफसरों, के साथ आयी स्त्रियों की हंसी कहीं–कहीं खटकती है।

लिखित भाषा में भावों की अभिव्यक्ति एवं अर्थ की सुस्पष्टता के लिए विराम चिह्नों का प्रयोग किया जाता है। बोलने की भाषा में वक्ता अंग संचालन, कंठ ध्वनि एवं अन्य हाव–भावों से अपनी अभिव्यक्ति को पूर्णता प्रदान करता है, परन्तु लिखित भाषा में यह कार्य विराम चिह्नों से लिया जाता है।

2.7 मुख्य शब्दावली

- **नारीत्व** – नारी होने का भाव।
- **पतिप्राणा** – पति के प्राणों को ही अपना प्राण समझने वाली।
- **शीर्ण** – थका हुआ।
- **परवश** – दूसरे के अधीन।
- **जिजीविषा** – जीने की इच्छा।
- **टप्पे** – पंजाब के लोकगीतों का एक प्रकार।

2.8 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. 'नारीत्व का अभिशाप' निबंध का केंद्रीय बिंदु क्या है?
2. 'नारीत्व का अभिशाप' निबंध की भाषा–शैली किस प्रकार की है?
3. 'चीफ की दावत' कहानी की केंद्रीय समस्या क्या है?
4. मिस्टर शामनाथ के सामने घर की व्यवस्था सम्यक करने में सबसे बड़ी समस्या क्या थी?
5. अर्द्धविराम व अल्पविराम चिह्नों के प्रयोग के दो–दो उदाहरण दीजिए।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. 'नारीत्व का अभिशाप' निबंध की समीक्षा निबंध के तत्वों के आधार पर कीजिए।
2. आज के समाज के संदर्भ में 'नारीत्व का अभिशाप' निबंध की क्या प्रासंगिकता है? स्पष्ट कीजिए।

3. 'चीफ की दावत' कहानी का सार अपने शब्दों में लिखिए।
4. कहानी के तत्वों के आधार पर 'चीफ की दावत' कहानी की समीक्षा लिखिए।
5. विराम चिन्हों के अर्थ, प्रकार एवं उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।

टिप्पणी

2.9 सहायक पाठ्य सामग्री

1. महादेवी वर्मा, *निबंधों की दुनिया*, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली : 2009
2. विमला सिन्हा, *महादेवी वर्मा का गद्य साहित्य*, संजय बुक सेन्टर, नयी दिल्ली : 1986
3. श्याम कश्यप, *भीष्म साहनी*, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली : 2016
4. राजेश्वर सक्सेना, प्रताप ठाकुर, *भीष्म साहनी : व्यक्ति और रचना*, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली : 1982
5. डॉ. मीनाक्षी अग्रवाल, *आदर्श हिन्दी व्याकरण*, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली : 2008

इकाई 3 हिन्दी भाषा

टिप्पणी

संरचना

3.0 परिचय
3.1 उद्देश्य
3.2 चली फगुनाहट बौरे आम (ललित निबन्ध) : विवेकी राय
  3.2.1 चली फगुनाहट बौरे आम (ललित निबन्ध) : मूल पाठ
  3.2.2 चली फगुनाहट बौरे आम : निबंध का सार
  3.2.3 चली फगुनाहट बौरे आम : व्याख्यांश
  3.2.4 'चली फगुनाहट बौरे आम' निबंध का समीक्षात्मक अध्ययन
3.3 इन्द्रधनुष का रहस्य (वैज्ञानिक लेख) : डॉ. कपूरमल जैन
  3.3.1 इन्द्रधनुष का रहस्य (वैज्ञानिक लेख) : मूल पाठ
  3.3.2 आलेख का महत्व एवं प्रासंगिकता
3.4 संधि (संकलित)
3.5 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
3.6 सारांश
3.7 मुख्य शब्दावली
3.8 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
3.9 सहायक पाठ्य सामग्री

3.0 परिचय

विवेकी राय हिन्दी और भोजपुरी भाषा के प्रसिद्ध साहित्यकार थे। विवेकी राय ने 50 से अधिक पुस्तकों की रचना की थी। वे ललित निबंध, कथा साहित्य और कविताकर्म में समभ्यस्त थे और मूलतः गंवई सरोकार के रचनाकार थे। बदलते समय के साथ गांवों में होने वाले परिवर्तनों की सूक्ष्म पकड़ एवं आंचलिक चेतना विवेकी राय के कथा साहित्य की एक विशेषता थी। इन्होंने अपने उपन्यासों एवं कहानियों में किसानों, मज़दूरों, स्त्रियों तथा उपेक्षितों की पीड़ा को अभिव्यक्ति प्रदान की थी। डॉ. विवेकी राय को हम प्रेमचन्द और फणीश्वरनाथ रेणु के बीच का स्थान दे सकते हैं। विवेकी राय के ललित–निबंधों में पग–पग पर पाठकों को उल्लास–उमंग भरी शब्द–सुगंध का प्रसार मिलता है, और वह भी वैचारिक छुअन के साथ। वे टूटते–बिखरते और सिमटते हताश जनों को जीने के प्रति आश्वस्त करते हैं। देश–काल और जीवन–दर्शन के साथ अपनी कृषि–संस्कृति, अपनी जमीन, गांव–घर और इनसे जुड़े हुए पर्यावरणीय संदेश, संबंधित चिंतन–मंथन उनके निबंधों को गंभीरता प्रदान करते हैं। आस्था, सकारात्मक भाव और सुलझाव रचनाओं के केंद्रीय भाव–तत्त्व हैं। इन्हीं के साथ चलकर लेखक अपने प्रिय गांवों की विस्तार से सुधि लेता है।

मध्य प्रदेश के चर्चित भौतिक विज्ञानी और लेखक डॉ. कपूरमल जैन निष्णात विज्ञान–संचारक और राष्ट्रभाषा हिंदी में विज्ञान के सुविख्यात लेखक थे। उन्होंने उत्कृष्ट शिक्षा संस्थान भोपाल व महात्मा गांधी विश्वविद्यालय चित्रकूट में भौतिकी के प्राध्यापक के अलावा शासकीय महाविद्यालय आष्टा के प्राचार्य पद का दायित्व भी

टिप्पणी

संभाला था। उनके द्वारा प्रस्तावित अनेक नवाचारी कार्यक्रमों को मध्यप्रदेश के उच्च शिक्षा विभाग ने लागू किया। वे मध्य प्रदेश में उच्च शिक्षा विभाग के संयुक्त संचालक की भूमिका निभाते हुए लेखन में भी लगातार सक्रिय रहे। डॉ. कपूरमल जैन के भौतिक शास्त्र पर लिखे सौ से अधिक शोध पत्र देश–विदेश के प्रतिष्ठित शोध जर्नलों में प्रकाशित हुए। 'जिज्ञासाओं के गर्भ में वैज्ञानिक चेतना', 'प्रायोगिक भौतिकी', 'महाविद्यालय भौतिकी', 'बेसिक्स आफ थर्मल एंड स्टेटिस्टिकल फिजिक्स', 'इंट्रोडक्टरी क्वांटम मैकेनिक्स एंड स्पेक्ट्रोस्कोपी' तथा '1905 में भौतिकी की क्रांति' और 'घर–घर में विज्ञान एवं भौतिकी की विकास यात्रा' जैसी पुस्तकें लिख कर उन्होंने भारतीय भाषा में विज्ञान लेखन को समृद्ध किया। उनका लेखन विज्ञान की गुत्थियों को सहजता से समझा देता है।

इस इकाई में विवेकी राय के व्यक्तित्व का परिचय देते हुए उनके ललित निबंध 'चली फगुनाहट बौरे आम' तथा डॉ. कपूरमल जैन के वैज्ञानिक लेख 'इन्द्रधनुष का रहस्य' का महत्व और प्रासंगिकता बताते हुए उनका अध्ययन किया गया है। व्याकरण के अंतर्गत सन्धि और उसके विभिन्न नियमों को भी उदाहरण सहित समझाया गया है।

3.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- साहित्यसेवी विवेकी राय के व्यक्तित्व एवं योगदानों से परिचय प्राप्त करेंगे;
- विवेकी राय के ललित निबंध 'चली फगुनाहट बौरे आम' के मूल पाठ का अध्ययन करते हुए उसके सार एवं व्याख्यांशों को परिभाषित कर पाएंगे;
- 'चली फगुनाहट बौरे आम' का समीक्षात्मक विश्लेषण कर पाएंगे;
- डॉ. कपूरमल जैन के वैज्ञानिक–लेख 'इन्द्रधनुष का रहस्य' का मूल पाठ पढ़ते हुए उसके महत्व एवं प्रासंगिकता का विवेचन कर पाएंगे;
- व्याकरण के अंतर्गत संधि के अर्थ, आशय एवं प्रकारों का सोदाहरण अध्ययन कर पाएंगे।

3.2 चली फगुनाहट बौरे आम (ललित निबन्ध) : विवेकी राय

डॉ. विवेकी राय हिन्दी के वरिष्ठ साहित्यकार हैं। वे ग्रामीण भारत के प्रतिनिधि रचनाकार हैं। प्रेमचंद की परंपरा को आगे बढ़ाने वाले विवेकी राय का जन्म 19 नवंबर, 1924 को भरौली (बलिया) नामक ग्राम में हुआ था। इनकी आरंभिक शिक्षा इनके पैतृक गांव सोनवानी (गाजीपुर) में हुई। स्वाध्याय के बल पर आपने स्नातकोत्तर परीक्षा बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी से प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। सन् 1970 ई. में 'स्वांत्र्योत्तर हिन्दी का कथा साहित्य और ग्राम जीवन' विषय पर काशी विद्यापीठ वाराणसी से आपको पी–एच.डी. की उपाधि मिली।

विवेकी जी स्वयं में शैक्षिक मूल्यों की प्राप्ति और प्रदेय का अनूठा उदाहरण है। नवंबर माह की 22 तारीख 2016 को आपने इस दुनिया को अलविदा कह दिया।

साहित्य सृजन

टिप्पणी

इन्हें रचनाक्रम का शौक मिडिल क्लास के समय ही पैदा हो गया। जब ये सातवीं कक्षा में अध्ययन कर रहे थे, उसी समय से आपने लिखना शुरू कर दिया। उनके लेखन का प्रारंभ सन् 1945 से माना जा सकता है, जब विवेकी की कहानी 'पाकिस्तानी' वाराणसी के एक दैनिक पत्र में प्रकाशित हुई। इसके बाद घर–गृहस्थी के उत्तरदायित्वों को निभाते हुए विवेकी राय की लेखनी हर विधा पर चलने लगी। पारिवारिक रोग–शोक, राग–विद्वेष, हृदयरोग और महारोगों के कोप, मातृशोक और युवा पुत्रशोक जैसे कष्टों के बीच भी इनकी लेखनी अनवरत रूप से चलती रही। उनकी प्रकाशित पुस्तकों में विभिन्न विधाओं की 74 पुस्तकें शामिल हैं। इनमें 6 काव्य–संग्रह, 12 कहानी संग्रह, 10 उपन्यास, 13 निबंध– शोध समीक्षा, 2 व्यक्तित्व कृतित्व, 2 संस्मरण, 9 भोजपुरी ललित निबंध, 5 भाषान्तर, 3 विविध, 5 पुस्तकों का संपादन तथा 10 ललित निबंध–व्यंग्य रेखाचित्र हैं।

प्रकाशित निबंध संग्रह

1. फिर बैतलवा डाल पर
2. मनबोध मास्टर की डायरी
3. गंवई गंध गुलाब
4. आस्था और चिन्तन
5. जुलूस रुका है
6. नया गॉवनाम
7. जगत तपोवन सो कियो
8. यह आम रास्ता नहीं है
9. जीवन अज्ञात का गणित है
10. चली फगुनाहट।

कृतित्व

डॉ. विवेकी राय का जीवन बहुत सादगीपूर्ण रहा। स्वभावतः वे गंभीर एवं खुशमिजाज रचनाकार थे। सीधे–सच्चे, उदार एवं कर्मठ व्यक्ति थे। आचार–विचार से परम सात्विक और संपूर्णतः एक अराजनीतिक व्यक्ति थे। अधिकांशतः खादी के धवल वस्त्रों में दिखने वाले, खुले दिल से अतिथियों का सत्कार करने वाले, सत्पथ पर दृढ़ निश्चय के साथ बढ़ते रहने की सतत् प्रेरणा देने वाले विवेकी राय संत प्रकृति के व्यक्ति थे। साहित्य–सृजन हेतु नवयुवकों को प्रेरणा देने वाले विवेकी राय बहुत के लिए आदरणीय व परमपूज्य बने रहे।

भारतीय संस्कृति की साक्षात प्रतिमूर्ति डॉ. विवेकी राय मूलतः गंवई सरोकार के रचनाकार हैं। आंचलिक चेतना विवेकी राय के कथा साहित्य की एक विशेषता है। स्वातंत्र्योत्तर भारतीय ग्रामीण जीवन में परिलक्षित परिवर्तनों को इन्होंने अपने उपन्यासों

एवं कहानियों में सशक्त ढंग से प्रस्तुत किया है। इनका रचनाकर्म नगरीय जीवन के ताप से तपाई गई मनोभूमि पर ग्रामीण जीवन के प्रति सहज राग की रस–वर्षा के समान है। गांव की माटी की सौंधी महक इनकी खास पहचान है।

टिप्पणी

डॉ. विवेकी राय एकनिष्ठ विद्याव्रती एवं समर्पित साहित्य–साधक थे। होश संभालने से लेकर जीवन के आखिरी सोपान तक घर–गृहस्थी के प्रपंचों तथा उत्तरदायित्वों से दबे–दबे लेखनी चलाते रहने के लिए विवेकी राय सदा विवश रहे। आधा जीवन अपने छोटे–से संचार–साधनहीन अविकसित धुर देहाती गांव में अध्यापक जीवन और किसानों के बीच बीता। बाद में एक शहर गाजीपुर मिला भी तो वह शहर पूर्वी उत्तर प्रदेश के अति पिछड़े शहरों में से एक निकला। अवरोधक नियति सदा विवेकी राय के पीछे तो लगी रही, लेकिन उनकी रचनाधर्मिता को रोक नहीं सकी। अपने समस्त शोक–विषाद और तज्जन्य वेदना को कलम में डुबोकर उन्होंने 'दीक्षा' नामक काव्य–पुस्तक की रचना की। शोक–संदर्भों को लेकर 'देहरी के पार' नामक उपन्यास लिखा। विवेकी राय का सृजन संयोगाधीन है, वह धर्म–कर्म विपाक है। विवेकी जी ने पूरी तरह आम मानव का जीवन निर्वाह कर अपने मर्मस्पर्शी साहित्य–सृजन की बदौलत साहित्य में एक अलग विलक्षण स्थान प्राप्त किया। समाज की अधिव्याधि के दुर्निवार उपद्रवों पर भी विवेकी राय ने खूब लिखा। इनकी रचनाधर्मिता के कारण हम इन्हें प्रेमचंद और फणीश्वरनाथ रेणु के बीच का स्थान दे सकते हैं।

पुरस्कार एवं सम्मान

1. हिन्दी संस्थान (उ.प्र.) द्वारा 'सोनामाटी' उपन्यास पर दिया गया प्रेमचंद पुरस्कार।
2. हिन्दी संस्थान लखनऊ (उ.प्र.) द्वारा दिया गया साहित्य भूषण पुरस्कार।
3. बिहार सरकार द्वारा प्रदान किया गया आचार्य शिवपूजन सहाय सम्मान।
4. 'आचार्य शिवपूजन सहाय' पुरस्कार।
5. मध्य प्रदेश सरकार द्वारा प्रदत्त 'शरदचन्द्र जोशी' सम्मान।
6. केन्द्रीय हिन्दी संस्थान एवं मानव संसाधन विकास मंत्रालय, नई दिल्ली के संयुक्त तत्वावधान में दिया गया 'महापंडित राहुल सांकृत्यायन' सम्मान, 2001.
7. जगद्गुरु रामानन्द आचार्य एवार्ड (1912)
8. उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा महात्मा गांधी सम्मान एवं प्रेमचंद पुरस्कार।
9. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा 'साहित्य महोपाध्याय' सम्मान।
10. 2006 में यश भारती सम्मान।
11. 2016 में शार्प रिपोर्टर 'आंचलिक पत्रकारिता युग पुरुष' सम्मान।

3.2.1 चली फगुनाहट बौरे आम (ललित निबन्ध) : मूल पाठ

वह बेकारी–बेरोजगारी से नहीं डरी, भ्रष्टाचार–महंगाई से नहीं मरी। वह नयी जनचेतना की भांति फिर उमड़ आयी और छा गई–कलिन में, कूलन में, केलिन में और

टिप्पणी

पद्माकर के कछारन में! जैसे कोई फर्क नहीं पड़ा। वातावरण ऐसा कि बिहारी की नायिका के नयन की नयी रुखाई बनकर और 'चित चीकने' का संदेश लेकर पत्ते खड़खड़ाकर उड़ने लगे। दिल धक्–धक् कर धड़कने लगा। वह हाहा... हूहू करती खड़जंग पछिमा आखिर ऐसी बगटुट होकर काहे धवाठी मार रही है? कौन–सी आंखें देख ली हैं? एक बांस ऊपर पतंग टंगते–टंगते कमल वनों से लौटी सुरभि–सेना उखड़ गई! सनकी–से नये–नये शरीफ बवंडर पता नहीं, धूल उड़ाते किधर चले?

जब भी बदलता है, तगड़े में बदलता है यह मौसम भीतरवाला। नशा चढ़ता है तो फागुन में बुढ़वा...। यही क्रान्ति है। संक्रान्ति कितनी पीछे छूट गई, जिस दिन लोगों ने बैठकर ताल ठोंक समहुत किया 'होरी खेलत रंग बनाय...!' फिर धीरे–धीरे जकड़न छूटी। दुबके लोगों ने अंगड़ाई ली। फूल खिले, सोने की बाल हिली, वन चहके, बाग महके। नये सूरज ने नयी सेंक दी, तो क्या हुआ कि उमड़े मधु, अंध भौर झौर!' वह ऊखस दिन की अजीब सुनहट, चली सनसनाहट, चली फगुनाहट, बौरे आम! (खास ही क्यों?)

आपने ठीक कहा, ऋतुएं तो और–और भी बदलती हैं, पर बाहर–भीतर ऐसा–ऐसा कहां बदलता है? कहां कब आंगन में काग बोलकर पिय–आवन का शुभ सगुन उचारता है? किसी की अंगिया कब, कौन सोने में बौर देता है? कैसे अनजाने स्वर खिंचकर द्रुत विलंबित हो गया? बारंबार जोर मारती है, कितनी अच्छी वह खारे की मिठास–'होरी पिया बिन लागी रे खारी!' पिया! कंठ–कंठ में पिया–पिया, पपीता झूठ। सच है, 'ऋतु फागुन नियरानी, कोई पिया से मिलावे।' तो, कौन मिलावे? रंग न चीन्हें मूरख लोई।' 'यह 'लोई' खूब आयी!...' हमको डांडो–बोंडों मति कोई, हम खूंटा चीरबि लोई!' लोगों, मुझे दंड मत दो, मैं खूंटा चीर दूंगा। उस गौरैये की दाल तो मिल गई, पर कबीर का रंग? मुझे मेरा फागुनी रंग दो। मेरी अबीर की झोरी दो, मेरी होरी दो, 'ब्रज में हरि होरी मचायी! एक दिन का ब्रज, एक रात की राधा, एक क्षण मुट्टी–भर गुलाल, 'छुटत झुठी ह्वे जाय' तो कितनी अच्छा! उस पुरानी झकझोरी–बरजोरी की फागुन–देसी भाषा का भी जवाब नहीं। सौ खून माफवाले केस में मुद्दई एक अदद गुलाब–गंध। मत कहो कि 'गंवई गाहक गाहक कान?' आवत सरसी उर सरसिज कहां खिलते हैं?' केशर के केश कली के, कहां छूटते हैं, 'स्वर्ण शस्य अंचल पृथ्वी का' कहां लहराता है? भाई साहब, गांव–गांव दुल्हा, चलो बकुलहा!

देखो, बरात निकली। घरों से, घोंसलों से, मड़इयों से, मांद से, चलो खेत की ओर। हाथ में लाठी–रस्सी, मुंह में मीठी हंसी और अंग–अंग?– 'फागुन के रंग उमगाने सब अंग–अंग!' वनिहार नहीं, फागुनी रसिया, जिनके हाथों के झण्डे पर बिन हथाड़े का हंसिया, सुबह की गुलाब–गर्द पीते, हेमन्त–अन्त की अंजुरी भर धूप में जीते, ये कीड़े–मकोड़े क्यों? धरती के सुनहरे पन्ने उलटकर अपने पट्ठेदार, खुरदरे और हरमुठ हाथों से अथवा कांच की कुछ खनकती चूड़ियोंवाली मटिही कलाइयों और भंगिमा से वे ऋद्धि–सिद्धि के इतिहास के लिखनहार, अ–वनिहार। नागहानी किसानी और सुलतानी खलिहानी से जुड़ी, जिनके हाथों की रचना में 'हंसिया के अविरल चोटों से बज रहे चने हैं घनर–घनर।' वाह कवि 'रवि' जी, बना दिया फागुन मस्त महीना। चमका दिया चने को। मगर चने का दर्द भी कोई समझे! 'चुटहंसिया न मारो, लागत करेजवा में चोट!'

टिप्पणी

भैरवी का खेत में साक्षात्कार कुछ अर्थ रखता है, जहां अगणित काल भैरवियां रंग–बिरंगी तितलियों के पंखों पर उतरती हैं, मटर–सरसों के फूलों पर रंगरेलियां करती हैं, कोमल स्पर्शी श्यामली अरहर के फूलों से फगुआ मांगती हैं, वहां फागुन खड़ा जायेजा लेता है, क्या वह निरा खाक फांकने उतरा गांव की गलियां में? बड़ा ढीठ है– 'गलियां में ठाढ़ अकेले ही लला!' उधर सांझ–सकारे ही क्यों रात–बिरात निरंतर ढोल–मृदंग के धा–धा धिन्ना में कोई समय का सभापति जैसे डोंडी पीट–पीटकर ऐलान करता है, 'भाइयों, फागुन की दूधिया चांदनी में सोना मना है, अकेले गाना मना है और जो शख्त हुक्मउदूली करता है उसके लिए झ–र–र–र–झ–र–र–र, सुन तो भइया मोर 'कबीर'...!

सीवान बहार रही फगुनाहट क्या–क्या नहीं बहार लायी गांव में? अलसाये अल्हड़पन की साया में, उमर–उमर के पोर–पोर में भी गाढ़े मधिया रस की टनटनाकर चिपकती तृप्ति क्या छिपनेवाली है? मन–मन में मणिपुर मनसायन–ता–ता–थेई... दृगति ... थेई ... नाचत नागर नागरी संग। रस में नहा जाता है मन और महीनों का खाना न फागुन का नहाना। फागुन उठि के प्रात नहाय, आकाशगंगा में, गुलाल, घुली ज्योति धारा में! प्राची तट पर फागुनी विहास का वह उजास जैसे विराट मुख कांति, जैसे उषा–अंगराग, जैसे व्योमकेश की विभूति, जैसे तारक घोल अथवा प्रकाश का पराग... लेकिन दुःख–भूख भरी दुनिया में इस सौन्दर्य का दर्शन क्यों? आंखें खुली होकर भी बन्द। धन्यवाद फागुन को। हर स्तर पर चार दिन के लिए आंखें खोल दीं।

उज्जर दिन की शय्या पर सरसराती पछिमा समधिन रंग और हुड़दंग लिये करवट बदलती है। चेलिकों की पूरी फौज तैयार, सेनापति कोकिल। गौरेया कांठों की चुनमुन–चुनमुन। लौटा गगनबिहारी, पांख पर नीम की पत्तियां झड़ पड़ीं, आंखों में महुए का कोंचा गड़ गया। पथ में पके गेहूं की बालियों के स्वर्णिम प्रसार के पांवड़े। हाथों में प्रेम–प्रीति की पिचकारी... लोग बारंबार पूछते हैं, क्या अब भी?

मैं सोचता हूं, मामला जरा टेढ़ा है। सालोसाल देखता हूं, फगुनाहट के रंग में डूब जाते सूखा–अकाल, घेराव–पथराव, नारे–जुलूस, आन्दोलन–हड़ताल और विरोध–विद्रोह! सब कुछ भूलकर हड़बड़ाये लोग चिल्ला उठते–पलाश–अमलतास की जय, चंदा–चमेली की जय! गुलाब–गुलसब्बो जिन्दाबाद, मल्लिका–कचनार जिन्दाबाद! हेमन्त के हिप्पी की 'जोगानी' में रात मशाल लिए खुद खड़ी रहती है... जोगि जी, चुप्पे रहि जा, सुन लो मेरी बानी। यदि नहीं तो भरो जोगिन का पानी। ढम ढमाढम ढम! ... अब बजाओं नागड़धिन्ना, अब मजा है डेढ़ घरी का! जोगी जी, सारा–रा–रा–रा–रा! अब भी संदेह है? ... बौरों की भीड़ लेकर फगुनाहट का तूफान मेल अपनी गति से जाता है।

एक्सीडेंट मना है... सौ–पचास गंजेड़ी–भंगेड़ी न एक 'जोगिड़ा!' फट पड़ा मजमे में–

कैसे–कैसे धरती डोले,
कैसे डोले आसमान?
कैसे–कैसे लंका डोले,

कैसे जिये इंसान?

जवाब नहीं मस्ती का।

टिप्पणी

3.2.2 चली फगुनाहट बौरे आम : निबंध का सार

फागुन में चलने वाली बयार भ्रष्टाचार और महंगाई से न प्रभावित होते हुए नई चेतना की तरह चारों ओर छा गई है। उसका मीठा प्रभाव मन पर, चित्त पर और प्रकृति में चारों ओर परिलक्षित होने लगा। चारों ओर हवा ने एक नया समां–सा बंधा हुआ है। घोर सर्दी के बाद आया यह मौसम नई–नई क्रांति सरीखा लगता है। ऐसा लगता है खेत, खलिहान, इंसान और बाग–बगीचे सब पुनः जीवित होकर लहलहा उठे हैं। अन्य ऋतुएं भी बदलती हैं लेकिन इस ऋतु के आगमन पर आने वाला बदलाव सबसे अद्‌भुत होता है। यह बदलाव नया जीवन नई गति लेकर आता है। हमारा समूचा काव्य साहित्य भी इस उर्जा से सराबोर नजर आता है। इस काव्य में कही पिया मिलन की उत्कंठा है तो कहीं नायक–नायिका की मीठी छेड़छाड़ है। प्रकृति को देखकर ऐसा लगता है मानो एक बारात–सी निकली है। यह सब नव वसंत के आगमन का परिचायक है। किसान जो सदा अपने श्रम और जिजीविषा से धरती का अनन उपजाता आया है; वे किसान, स्त्रियां जिनके श्रम का संगीत खेतों पर सुनाई देता रहा है, उल्लसित हैं। कवि चने से बजती हंसिया की ध्वनि को जब समेटकर अपनी कविता में प्रस्तुत करता है तो लेखक उसे उलाहना देता है कि चने का दर्द कौन समझेगा?

मटर, सरसों आदि के फूल भरे खेतों में तितलियां और भंवरे चारों ओर मंडरा रहे हैं जिससे फागुन का महीना शोभायमान हो रहा है। यह मास सबके साथ मिलकर रहने का है इसलिए समय यह अकेले रहने का वक्त नहीं है। फागुन में चलने वाली बयार फगुनाहट जैसे गांव की गलियों को बहारती हुए बही जा रही है। दुख और अभावों से भरी इस दुनिया में सौंदर्य के दर्शन का फागुन वस्तुतः हमें नई दृष्टि देता है इस दुनिया को देखने–समझने का। इस दृष्टि के लिए हमें इस फागुनी माह का शुक्रगुजार होना चाहिए। चटकीली धूप वाले दिन में पछिया हवा जैसे रंग और हुड़दंग लिए करवट बदल रही हो। कोयल जैसे सेनापति बनी है और पीछे पूरी फौज तेयार है। महुए के फूल झड़ रहे हैं। गेहूं की पकी सोने जैसी बालियां खेतों में प्रकृति को दुलार रही है।

फागुन ने प्रकृति को हरीतिमा व विकास से ऐसे पल्लवित कर दिया है कि लोग इस महिम उष्णता में एक दूसरे के प्रति अपने राग–द्वेष, क्रोध, घृणा व वैमनस्य को जैसे भूलकर एक हो उठे हैं। सभी पुष्प इस विजय के साक्षी हैं। आम के बौर लिए फगुनाहट अपनी पूरी तीव्रता के साथ आता है और गुजर जाता है। यह आवागमन का तीव्र प्रवाह किसी को चोटिल नहीं करता; किसी को घायल नहीं करता। फगुनाहट अपने साथ जीवन की एक नयी तरंग लेकर आती है और सबको मस्ती से सराबोर करती है।

3.2.3 चली फगुनाहट बौरे आम : व्याख्यांश

1. वह बेकारी बेरोजगारी से नहीं डरी ..... धूल उड़ाते किधर चले?

संदर्भ– प्रस्तुत गद्यांश हिंदी के प्रतिष्ठित साहित्यकार श्री विवेकी राय के ललित निबंध 'चली फगुनाहट बौरे आम' से लिया गया है। इस गद्यांश में फागुन मास का मनोरम व अर्थपूर्ण चित्रण किया गया है।

टिप्पणी

प्रसंग– फागुन के महीने में चलने वाली, हल्की उष्णता लिए तेज बयार, जिसे फगुनाहट कहा जाता है, अपने पूरे उल्लास के साथ बेधड़क, बेखौफ और निःशंक भाव से आई और चारों ओर छा गई। उसका आना ऐसा ही प्रतीत होता है जैसे नई जनचेतना मानव समाज को नई आशा, नई ओजस्विता और नए ओज व तेज से भर देती है; यह नई जनचेतना उसमें एकदम नए व समकालीन जीवन मूल्यों को जन्म देती है और नए रास्तों पर चलने का ही नहीं बल्कि नए रास्तों को तलाशने का भी संकल्प और प्रेरणा प्रदान करती है। नई जनचेतना सदियों पुरानी जंग खा चुकी परंपराओं, रूढ़ियों और अंधविश्वासों तथा अन्याय व शोषण की व्यवस्थाओं से बिना घबराए उनके अस्तित्व को पुरजोर चुनौती देती है।

व्याख्या– फगुनाहट भी शीत महीनों के बेजान निष्क्रियता, जीवन के स्थगन और ठहराव पर यकायक हमला कर बैठती है। फगुनाहट जीवन में नवसंचार और उमंग लेकर आती है। उसके आने से जीवन में प्रेम, शृंगार, उमंग और उत्साह छलकने लगता है जैसा कि कवियों के काव्य में भी देखा जा सकता है। जैसे कि कवि बिहारी की नायिका की आंखों की एक नई रुखाई (अदा) मन को स्निग्ध और कोमल करने लगी हो। इस मौसम में पत्ते तेज हवा में एक खड़खड़ाने लगे हैं मानों उनमें नया जीवन आ गया है; हृदय नवीन और अप्रत्याशित के आगमन से तेजी से धड़कने लगे हैं। ऐसा प्रतीत होता है मानो इस हवा को किसी ने आंखें दिखाकर चुनौती–सी दे दी है जो प्रत्युत्तर में वह क्रोध और उत्साह से भरी सब कुछ हिलाए दे रही है, मानो वह अपने अस्तित्व की हुंकार भर रही है। जो हवा अब तक वसंत में मद्धिम–मद्धिम चल रही थी, कमल वनों में विचरण कर रही थी, बच्चों के बांसों पर पतंग को लटकाने–उलझाने का खेल कर रही थी, वही अब जैसे उखड़ सी गई है और उसने एक आक्रोश भरा तीव्र रूप धारण कर लिया है। ये हवाएं अपने भीतर न जाने कितने और कैसे बवंडर लपेटे हुए हैं। एक तरफ तो ये अति उत्साह में सनकी से हुए जान पड़ रहे हैं तो दूसरी ओर इनकी नीयत में भी कोई खोट नहीं जान पड़ती। ऐसा लगता है ये बवंडर अपने मन में कुछ अनिश्चित–सा ध्येय अथवा लक्ष्य पाले हुए हैं जिसकी खोज में ये किसी अनजान दिशा की ओर चले जा रहे हैं।

विशेष–

- गद्यांश ललित निबंध के अनुरूप अपने भीतर कई अर्थ समेटे हुए प्रतीत होता है, जिसकी व्याख्या दूर तक की जा सकती है। अतः अर्थ की दृष्टि से इसकी भाषा और कथ्य जटिल व संश्लिष्ट कहा जा सकता है।
- लेखक के प्राकृतिक वस्तुओं और मनुष्य समाज के बीच एक अद्‌भुत तारतम्यता व साम्यता इस गद्यांश में स्थापित की है। लेखक की दृष्टि प्रकृति में मानव जीवन और मानव जीवन में प्रकृति को खोज लेने के प्रति काफी सजग है।
- फगुनाहट की तुलना नव–जनचेतना से करना लेखक के जन सरोकार को दर्शाता है। वस्तुतः पूरा निबंध ही प्रकृति के बहाने जन सरोकारों को उद्‌भासित करता है।

टिप्पणी

- भाषा अर्थ की दृष्टि से भले ही जटिल व संश्लिष्ट हो किंतु उसका देशज कलेवर उसे सहजता की सुगंध से भरता है जिससे वह नीरस नहीं होने पाती। भाषा पर लेखक का अप्रतिम अधिकार देखते ही बनता है।
- भाषा में एक काव्योचित लय व प्रवाह है। गद्य होकर भी इस भाषा को पढ़ना कविता पढ़ने जैसा प्रतीत होता है। अर्थ की दृष्टि से भी विचार करने पर हमें ऐसा ही प्रतीत होता है। काव्यात्मकता इस भाषा का एक अन्यतम आकर्षण बनकर उभरी है।

2. भैरवी का खेत में ..... सुन तो भइया मोर कबीर।

संदर्भ एवं प्रसंग– पूर्ववत।

व्याख्या– राग भैरवी प्रातः के समय गाया जाने वाला एक राग है। लेखक ने प्रातःकाल में खेतों में भंवरों/तितलियों के गुंजायमान होने की इसी राग की परिकल्पना की है तथा इसके किसी महत्वपूर्ण अर्थ की ओर संकेत भी किया है। संभवतः उसका संकेत प्रकृति के राग को देखने–समझने की ओर है। असंख्य काल भैरवियां प्रकृति में नृत्य कर रही हैं और यह चंचलता देखते ही बनती है। कभी वे रंग–बिरंगी तितलियों के पंखों पर उतरती हैं, मटर–सरसों के फूलों पर मौज–मस्ती करती हैं, अरहड़ के फूलों से जैसे फगुआ का उपहार मांगती हैं। फागुन भी जैसे वहीं खड़ा हुआ इस पूरी शरारत को देख रहा है और गांव की गलियों में पूरी दृढ़ता के साथ खड़ा हुआ है। वह होली खेलने निकले कन्हैया की तरह पूरी उद्दंडता के साथ ढीठ बनकर खड़ा हुआ है, कि वह खाली हाथ लौट जाने के लिए नहीं आया है। इस तरह फागुन अपनी मस्ती में धीरे–धीरे आबोहवा में घुलता जा रहा है। इन दिनों ऐसा प्रतीत होता है कि सुबह–शाम कोई डोंडी पीट–पीटकर गांव भर में ऐलान कर रहा है कि फागुन मास की दुनिया चांदनी में सोना मना है, अकेले गाना मना है; गाने से तात्पर्य है कि यह चांदनी भरी रात प्रेमिल मिलन के लिए है, रात भर चांद–तारों को निहारने के लिए है, जागते हुए स्वप्न लोक में डूबने उतराने के लिए है, नए भविष्य के लिए स्वप्न पिरोने के लिए है। इस समय अकेले गीत गाना फागुन का अपमान करने जैसा है। फागुन एकांतिक होने का समय नहीं है, यह दूसरों में स्वयं का आनंद खोजने का समय है, एक–दूसरे की आत्मा को जगाने का समय है, मनुष्यता के प्रेममय संधान का समय है। और जो ऐसा करने से मना कर दे उसे जबरन पकड़कर प्रेम, स्नेह, अपनत्व और मनुष्यता में सराबोर कर देना चाहिए। हमारे मन के भीतर छिपे कबीर की यही पुकार है।

विशेष–

- खेत के सुंदर दृश्य में राग भैरवी की नादमय परिकल्पना इस गद्यांश को कथ्य व भाषा दोनों दृष्टि से विशेष बनाती है। प्रकृति के वर्णन को यह प्रयोग एक अलग ही अर्थपूर्ण ऊंचाई प्रदान करता है।
- भाषा का प्रयोग देखते ही बनता है। फागुन का यहां हठी और शैतान बालक के रूप में मानवीकरण किया गया है जबकि भौरों के गुंजन में भैरवी की सुंदर परिकल्पना है।
- अर्थ की दृष्टि से गद्य जटिल व संश्लिष्ट है तथा व्याख्याओं की गहरी संभावनाएं इसमें समाहित है जो कि ललित निबंध की विशेषता के अनुरूप भी है। इसके

बावजूद प्रयुक्त शब्दावली में देशज शब्दों का प्रयोग इसे आमजन के करीब ले जाता है।

टिप्पणी

3.2.4 'चली फगुनाहट बौरे आम' निबंध का समीक्षात्मक अध्ययन

विवेकी राय द्वारा लिखा गया निबंध 'चली फगुनाहट बौरे आम' ललित निबंध का एक अप्रतिम उदाहरण है। निबंध के तत्वों के आधार पर चली फगुनाहट बौरे आम की समीक्षा इस प्रकार की जा सकती है–

विषय का प्रतिपादन

इस निबंध का मूल विषय फागुन मास का उल्लास और जीवंतता है जिसकी खोज मनुष्य से लेकर प्रकृति तक के बीच की गई है। फागुन मास वसंत से ग्रीष्म के संक्रमण का काल होता है जब हम न केवल अपने जीवन बल्कि प्रकृति में भी ऊष्मा, गति व चपलता का अनुभव करने लगते हैं। लेखक ने इस निबंध में आद्योपांत कथित विषय का प्रतिपादन बड़ी खूबसूरती से किया है। प्रकृति और मनुष्य के बीच जीवन के सजीव कार्य व्यापार को लेखक ने बड़ी खूबसूरती से सजीव जीवंत कर दिया है। वस्तुतः फागुन प्रकृति में ही नहीं, मानवीय स्वभाव में भी परिलक्षित होता है। लेखक ने इसी परिवर्तन को पूरे निबंध का मूलकथ्य बनाकर प्रस्तुत किया है। इस पूरे प्रक्रम में लेखक विषय से तनिक भी नहीं भटकता, यही इस निबंध को विशेष रूप से प्रभावी बनाता है जिनसे इसके पाठक मन पर फागुन का प्रभाव चिरकाल के लिए अंकित हो जाता है।

आत्माभिव्यंजना– आत्माभिव्यंजना निबंध का न केवल मूल तत्व है बल्कि वह उसका प्राण स्वर भी है जिसके बिना निबंध की कल्पना ही नहीं की जा सकती। कहने का तात्पर्य यह कि निबंध में हमें लेखक के आत्म का निदर्शन होता है। 'चली फगुनाहट बौरे आम' भी लेखक की खूबसूरत आत्माभिव्यंजना प्रस्तुत हुई है। निबंध से लेखक की साहित्य और प्रकृति दोनों के प्रति गहरी अभिरुचि का पता चलता है; यही कारण है कि वह दोनों को अलग करके नहीं देख पाता। वह प्रकृति के तत्वों में भी कबीर, बिहारी और पद्माकर से लेकर लोक साहित्य का निरंतर संधान करता चलता है; दूसरे शब्दों में साहित्य का मनुष्य प्रकृति में साकार हो उठता है। अपने पठन–पाठन और लोक जीवन तथा प्रकृति की गहरी समझ बूझ व जानकारी की इससे खूबसूरत आत्माभिव्यंजना और क्या हो सकती है जो हमें इस निबंध में दिखाई देती है। यह कहना अतिश्योक्ति न होगी कि निबंध को पढ़ते हुए हमें लेखक के 'आत्म' की गहरी अनुभूति होती है और यह साम्य पता चलता है कि वह अपने लोक समाज में, साहित्य में तथा प्रकृति में कितनी गहराई से रचा–बसा है।

परिवेश– निबंध में, विशेषतः ललित निबंध में परिवेश एक महत्वपूर्ण आयाम है जो निबंध में उपस्थित रहता है। क्या निबंध अपने परिवेश का लोक सांस्कृतिक प्रतिनिधित्व करता है? यदि हां, तो वह ललित निबंध की कसौटी पर खरा उतरता है। 'लोक' की अपनी एक लालित्यमयी सुगंध होती है, और जब तक वह ललित निबंध में न दिखाई दे, तब तक लेखक की आत्माभिव्यंजना क्षमता पर संदेह रहता है। हमारा मन वस्तुतः लोक से निर्मित होता है, हालांकि सबके लिए यह 'लोक' भिन्न हो सकता है किंतु उसका होना जरूरी है। इस लोक में परिवेश की खानपान, वेशभूषा, प्राकृतिक विशेषताएं, तीज त्योहार, मानवीय विशेषताएं, लोगों की आकांक्षाएं व उनके स्वप्न सब

टिप्पणी

कुछ संस्कृति स्वरूप में समाहित होता है। इसी लोक से लेखक के मन की भी निर्मिति होती है जिसकी गहरी प्रतिच्छाया हमें लेखक के लेखन में, विशेषकर निबंध में परिलक्षित होती है। इस दृष्टि से देखें तो हम पाते हैं कि 'चली फगुनाहट, बौरे आम' में न केवल परिवेश बल्कि समूचे परिवेश की आत्मा बड़ी गहराई से चित्रित हुई है। उत्तर भारतीय लोक समाज में फागुन माह की गहमा–गहमी, उसका आनंद, उसका उल्लास, उसकी ऊर्जा बड़ी खूबसूरती से इस निबंध में साकार हो उठी है। ललित निबंध में लोक व परिवेश का प्रत्यक्ष प्रकटीकरण नहीं होता बल्कि वह निबंध के विषय से जुड़कर भाव व विचार के रूप में उपस्थित होता है। इसी तरह इस निबंध में भी लेखक के अनुभव क्षेत्र का परिवेश फागुन के बहाने वर्णित हुआ है जिसमें गांव है, गांव की गलियां हैं, फसलें हैं, पशु–पक्षी व वनस्पतियां हैं, जलवायु है तथा दिन–प्रतिदिन का किसानों का कार्य–व्यय व्यापार है जिसमें उनकी खेती–किसानी के काम शामिल हैं।

भाषा शैली– भाषा शैली से ही निबंध अपने सुंदरतम रूप में निखरकर प्रस्तुत होता है। दूसरे शब्दों में भाषा और भाषा शैली वे औजार हैं जिनके द्वारा न केवल निबंध को गढ़ा जाता है बल्कि उसके शुद्ध कंचन रूप हेतु उसे परिष्कृत व परिमार्जित भी किया जाता है। भाषा–शैली ही उसे भाव व विचार का साकार रूप प्रदान करती है; भाषा शैली ही उसे अलंकृत करके सौंदर्यवान बनाती हैं; भाषा शैली ही लेखकीय व पाठीकय के बीच सुचारु वैचारिक आवागमन का साधन बनती है। इस दृष्टि से देखा जाए तो भाषा शैली निबंध का एक महत्वपूर्ण तत्व है। 'चली फगुनाहट, बौरे आम' की भाषा शैली की विशेषताओं को निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर समझा जा सकता है–

1. **अर्थ की दृष्टि से जटिल व संश्लिष्ट भाषा**– इस निबंध को यदि अर्थ की दृष्टि से देखा–समझा जाए तो इसमें अर्थ विस्तार की प्रबल संभावनाएं दिखाई देती हैं। इसकी संश्लिष्ट भाषा इसमें अर्थ की गहराई पैदा करने में सक्षम दिखाई देती है। प्राकृतिक वस्तुएं व स्थितियां प्रतीक बनकर उभरती हैं तथा वे मानवोचित हर्षोल्लास, उत्साह व आशा को प्रतिबिंबित करती हैं तो वहीं उसमें नवचेतना का सुंदर पुट दिखाई देता है। पूरे निबंध में प्रकृति और मनुष्यता के बीच एक सुंदर तारतम्यता भाषा के माध्यम से उपस्थित होती दिखाई देती है। इस निबंध में मानवीय चेतना की गरिमामय खोज व्याप्त है। किंतु वहां तक पहुंचने के लिए पंक्तियों व शब्दों पर स्थान–स्थान पर ठहरकर गहन विचार करने की आवश्यकता है। निबंध की संश्लिष्ट व जटिल भाषा इसकी मांग करती है।
2. **लालित्य**– इस निबंध में आद्योपांत एक काव्यात्मकता विद्यमान है। निबंध की भाषा में एक काव्योचित कोमलता है जो पाठक को इससे भिगोए रखता है। निबंध में अनेक स्थानों पर बिंब योजना इतनी बेहतरीन बन पड़ी है जैसी प्रायः कविताओं में भी देखने को नहीं मिलती। इस निबंध में एक सुंदर गेयता, लयात्मकता और प्रवाह है जो कविता में ही दिखाई देता है; इस निबंध में भी हमें काव्यातमकता का सुंदर प्रयोग दिखाई देता है। अर्थ की दृष्टि से भी इस निबंध में काव्यात्मकता का समावेश दिखाई पड़ता है क्योंकि काव्य के अनुरूप मांग यहां भी अर्थ के कई संस्तर दिखाई देते हैं।
4. **शब्द भंडार**– 'चली फगुनाहट, बौरे आम' में हमें भांति–भांति के शब्द दिखाई देते हैं। इसमें जहां एक ओर तत्समनिष्ठ शब्द हैं तो वहीं दूसरी ओर देशज व

भदेस (देहाती) शब्दों का भी बहुतायत से प्रयोग देखा जा सकता है। देशज व भदेस शब्दों अथवा पदावली का प्रयोग निबंध की भाषा को एक अलग लोकसांस्कृतिक रूप प्रदान करता है।

टिप्पणी

निबंधों की भाषा शैली

साहित्य रचनाकार के व्यक्तित्व का ही दर्पण हुआ करता है। विवेकी राय ने अपने सीधे– सच्चे व्यक्तित्व के अनुरूप प्रसादगुणयुक्त भाषा का व्यवहार किया है। संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ–साथ तद्भव और देशज शब्दों का भी प्रचुर प्रयोग किया है। अरबी–फारसी और अंग्रेजी के प्रचलित शब्दों का भी उन्होंने प्रसंगानुकूल व्यवहार किया है। बीच–बीच में मुहावरों और कहावतों के प्रयोग से शिल्प में रोचकता का समावेश किया गया है। बीच–बीच में लोक–बोलियां एवं उद्धरणों का भी निर्बाध प्रयोग दिखाई देता है। उन्होंने प्रवाहमयता के अनुरूप ही वाक्य–विन्यास किया है। वाक्य कहीं छोटे हैं तो कहीं बड़े। मूलतः उनकी भाषा शुद्ध साहित्यिक खड़ी बोली है।

विवेकी राय ने प्रसादमयी भाषा का व्यवहार किया है। संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ–साथ तद्भव और देशज शब्दों का भी प्रचुर प्रयोग किया है। अरबी–फारसी और अंग्रेजी शब्दों का भी उन्होंने प्रसंगानुकूल व्यवहार किया है। बीच–बीच में साहित्यिक एवं लोकजीवन के उद्धरणों का भी निर्बाध प्रयोग दिखायी देता है। भाषा में कहीं–कहीं दुरुहता केवल विषय–विवेचन के कारण आई है, अन्यथा उनकी भाषा प्रायः सरल है।

विवेकी राय अपने निबंधों में विषयानुकूल शैली का प्रयोग करते हैं। शैली पर इनके बहुमुखी प्रतिभा संपन्न व्यक्तित्व का स्पष्ट प्रभाव दिखाई पड़ता है। प्रमुख रूप से निम्न प्रकार की शैलियां उनके निबंधों में देखने को मिलती हैं–

1. **भावात्मक शैली** : भावुकता के क्षणों में लेखक ने इस शैली का व्यवहार किया है। सरसता, सहजता, काव्यात्मकता और वैचारिक तीव्रता इस शैली के प्रमुख गुण हैं।
2. **उद्धरण शैली** : अपने भावों और विचारों के समर्थन के लिए उन्होंने उद्धरणों का व्यवहार किया है। यद्यपि इन उद्धरणों से लेखक की मौलिक अभिव्यक्ति प्रभावित हुई है, किंतु उनके पांडित्य और बहुविध ज्ञान का परिचय मिलता है।
3. **चित्रात्मक शैली** : इस शैली के अंतर्गत उन्होंने भावों के मूर्तिकरण और उन्हें चित्र जैसा प्रस्तुत करने का प्रयास किया। इससे शैली में गत्यात्मकता और मनोहरता का संचार हुआ है।
4. **आलंकारिक शैली** : निबंधों में भावों को सुस्पष्ट एवं मनोरम बनाने के लिए उन्होंने अलंकारों का सहज स्वाभाविक प्रयोग किया है। उनकी उपमाओं और रूपकों की छटा देखे ही बनती है।
5. **मुहावरेदार शैली** : विवेकी राय ने अपने भावोत्कर्ष और अर्थ वैशिष्ट्य के लिए निबंधों का सजीव व्यवहार किया है। मुहावरों के प्रयोग से इनके भावों की अभिव्यक्ति में मनोरमता का समावेश हो गया है।
6. **विवेचनात्मक शैली** : इस शैली में उनके मननशील और चिंतनशील प्रकृति की झलक मिलती है। इसके माध्यम से उन्होंने प्रतिपाद्य विषय का

गंभीरतापूर्वक विश्लेषण किया है। कठिन से कठिन विषय को भी उन्होंने प्रभावोत्पादक ढंग से प्रतिपादित किया है।

7. **हास्य–व्यंग्य शैली** : विवेकी राय के निबंधों के विवेचन–विश्लेषण में हास्य–व्यंग्य की छींटों द्वारा सरसता का संचार किया गया है। बौद्धिक विचारों की भीड़ में हास्य व्यंग्यपूर्ण शैली पाठक को बरबस ही मुस्कराने पर मजबूर कर देती है। यह उदाहरण दृष्टव्य है–

टिप्पणी

विवेकी राय के निबंध–साहित्य और निबंध शैली के विवेचन–विश्लेषण के उपरांत निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि डॉ. विवेकी राय की रचनाओं में गांव का दिल–दिमाग, व्यथा– वेदना, भोज–भात, खेत–खलिहान, गांव–किसान, समस्या–समाधान, दुख–सुख आदि का भरपूर समावेश है। इनकी बदौलत ही वे ग्राम केन्द्रित संस्कृति के प्रमुख हस्ताक्षर बने। तमाम दुश्वारियों के बीच उनकी सारस्वत साधना का दीप निष्कंप जलता रहा और वे एक के बाद एक कीर्ति–शिखर छूते गए। प्रचार–प्रसार से कोसों दूर और चाटुकारिता के व्यवहार–व्यापार से सर्वथा अनभिज्ञ डॉ. विवेकी राय अपने जीवन के अंतिम समय तक आदर्श पथ के अनुगामी बने रहे। साहित्य की खेमेबाजी से कोसों दूर इस साहित्यिक विवेकी ने अपने सृजन कर्म से एक ऐसी मीनार को खड़ा किया, जो हिन्दी साहित्य के लेखकों के लिए आज भी प्रेरणास्पद व अनुकरणीय है।

अपनी प्रगति जांचिए

1. विवेकी राय की कहानी 'पाकिस्तानी' वाराणसी के एक दैनिक पत्र में कब छपी थी?

   (क) 1940 (ख) 1945

   (ग) 1941 (घ) 1948

2. विवेकी राय की पुस्तक 'देहरी के पार' किस विधा की कृति है?

   (क) उपन्यास (ख) कविता

   (ग) निबंध (घ) आत्मकथा

3.3 इन्द्रधनुष का रहस्य (वैज्ञानिक लेख) : डॉ. कपूरमल जैन

डॉ. कपूरमल जैन का जन्म 1 जुलाई 1950 को धार जिले के एक छोटे से गांव नागदा में हुआ। डॉ. जैन ने 'शासकीय महाविद्यालय' धार से वर्ष 1970 में बी.एस.सी. प्रावीण्य सूची में तीसरा स्थान उत्तीर्ण करने के पश्चात, बिरला इंस्टीट्यूट ऑफ साईंस एण्ड टेक्नोलॉजी, पिलानी राजस्थान से भौतिकी में एम.एस.सी. की परीक्षा प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण की। इसके पश्चात आपने सी.एस.आई.आर के 'कनिष्ठ और वरिष्ठ' शोध फैलो के रूप में 'नार्थ बंगाल यूनिवर्सिटी, दार्जिलिंग' में आणविक भौतिकी के क्षेत्र में अपना आरंभिक शोध कार्य किया तथा फिर यू.जी.सी. के 'टीचर फैलो' के रूप में 'इंडियन

एसोसिएशन फार कल्टीवेशन ऑफ साइन्स, जाधवपुर (कोलकाता) में कार्य करते हुए सन् 1981 में पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

टिप्पणी

डॉ. जैन ने कई पुस्तकें लिखी हैं जिनमें विश्व व प्रकृति निधि भारत ने 'हरी राह', मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी ने 'जिज्ञासाओं के गर्भ में' वैज्ञानिक चेतना, प्रायोगिक भौतिकी व महाविद्यालयीन भौतिकी आदि है। 'सोसाइटी फॉर दी एडवांसमेंट ऑफ साइन्स एण्ड टेक्नोलॉजी, कराईकुडी (तमिलनाडु) ने डॉ. जैन के जैव आधारित ऊर्जा स्रोत से संबंधित अनुसंधान को पुरस्कृत किया है। वर्ष 2015 में विपिन जोशी स्मारक समिति इटारसी ने आपको शिखर सम्मान 'सरस्वती पुत्र' से सम्मानित किया है।

डॉ. जैन ने प्रदेश की उच्च शिक्षा में गुणवत्ता लाने की दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया है। इसके पूर्व डॉ. जैन ने भौतिकी के अध्यापक के रूप में विभिन्न शासकीय महाविद्यालयों, उच्च शिक्षा, उत्कृष्टता संस्थान, भोपाल एवं महात्मा गांधी ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट में तथा प्राचार्य के रूप में शासकीय महाविद्यालय आष्टा में कार्य किया है। जून 2015 में आप मध्यप्रदेश शासन के उच्च शिक्षा विभाग में संयुक्त संचालक के पद से सेवानिवृत हुए है।

सेवानिवृत्ति के पश्चात डॉ. जैन लोगों को प्रेरित करने के साथ ही शैक्षणिक गुणवत्ता, विज्ञान के लोक व्यापीकरण एवं पर्यावरणीय जागरूकता की अभिवृद्धि हेतु कार्य कर रहे हैं। वैज्ञानिकों के जीवन से प्रेरणा ग्रहण करने के उद्देश्य से आपका 'उड़ान' नाम से एक नियमित स्तम्भ नवम्बर 2016 से 'रोजगार और निर्माण' में प्रकाशित हो रहा है।

3.3.1 इन्द्रधनुष का रहस्य (वैज्ञानिक लेख) : मूल पाठ

प्रकाश के व्यवहार को समझने के उद्देश्य से घूम रहे किसी व्यक्ति का ध्यान जब किसी मकान की खपरैल से बनी छत अथवा खिड़की के छिद्र से निकल रहे प्रकाश पर गया होता तब उसे पता चला होगा कि प्रकाश एक–सीध अर्थात सरल–रेखीय मार्ग पर चलता है। जब उसने बच्चों को दर्पण की सहायता से कमरे के किसी अंधेरे भाग को प्रकाशित करते अथवा अपने मित्रों की आंखों में चिलका डालकर असीम आनन्द उठाते हुए देखा होगा तब उसे ज्ञात हुआ होगा कि यह प्रकाश जब किसी दर्पण (mirror) या चमकदार सतह पर पड़ता है तब इसको आगे बढ़न रुक जाता है और यह अपनी दिशा बदल लेता है। प्रकाश किरणों को इस तरह दिशा बदल लेना वैज्ञानिक भाषा में 'प्रकाश का परावर्तन' (reflection) कहलाता है। ईसा से लगभग 250 वर्ष पूर्व आर्किमिडिज़ नामक ख्यात वैज्ञानिक ने अपने देश यूनान की सेना के लिए बड़े–बड़े दर्पणों का निर्माण किया था। जब रोम ने यूनान पर आक्रमण किया तब यूनानी सैनिकों ने इन दर्पणों की सहायता से रोम के सैनिकों की आंखों में चिलका डाल कर सेना में भगदड़ मचा दी थी। ये वही आर्किमिडिज थे, जो एक बार एक बहुचर्चित समस्या को लेकर परेशान थे जिसमें उन्हें यह बताना था कि उनके राजा का मुकुट शुद्ध सोने का बना है अथवा नहीं। लंबे समय से परेशान कर रही इस समस्या का हल उन्हें एक बार तालाब में नहाते समय अचानक मिला और वे 'युरेका–युरेका' कहते हुए सड़क पर दौड़ पड़े, बिना यह परवाह किये कि उन्होंने क्या पहन रखा है।

टिप्पणी

इसी दौरान मनुष्य ने परावर्तन की तरह ही प्रकाश के एक और महत्वपूर्ण गुण 'अपवर्तण' (refraction) का पता लगा लिया। संभवतः उसने लाठी के सहारे चल रहे किसी मनुष्य को नदी पार करते हुए देखकर 'अपवर्तन' का पता लगाया होगा। उसने देखा होगा कि लाठी का जो भाग पानी में डूबा होता है वह कुछ तिरछा हो जाने का आभास देता है। कारण जानने की तीव्र उत्कंठा ने उसे इसी तरह के कुछ और प्रयोग करने को प्रेरित किया होगा। उसने पानी भरे कटोरे में सीधी छड़ अथवा चम्मच को डाल–डाल कर प्रयोग किये होंगे। जब उसने यह स्थापित कर लिया कि लाठी, छड़ अथवा चम्मच का कोई भाग वास्तव में विरूपण नहीं होता है, तब उस 'आभासी विरूपण' का कारण उसे 'प्रकाश के व्यवहार' में दिखाई दिया होगा। कई प्रयोगों को करने के पश्चात उसने यह निष्कर्ष निकाला होगा कि वस्तु के पानी वाले भाग से आने वाला प्रकाश, हवा में प्रवेश करते समय, अपने मूल मार्ग से विचलित होकर आंख तक पहुंचता है। पूरी वस्तु को एक–साथ देखने पर पानी में डूबा हुआ उसका भाग, मुड़े होने का भ्रम पैदा करता है। इस तरह जब प्रकाश एक माध्यम से दूसरे में प्रवेश करता है तब–तब वह आगे बढ़ता है, लेकिन अपने मूल मार्ग से विचलित भी हो जाता है। यह विचलन उपस्थित माध्यमों पर निर्भर करता है। प्रकाश के इस गुण पर काम करने वाली एक वस्तु 'लेंस' (lens) है। लेंस पारदर्शी पदार्थ जेसे कांच से बनता है। इनका आकार चपटा और गोल होता है। जिस लेंस का बीच वाला भाग उसके किनारों की तुलना में मोटा होता है, वह 'उत्तल लेंस' (conves lens) कहलाता है जबकि बीच से पतला रहने वाला 'अवतल लेंस' (concave lens)। उत्तल लेंस द्वारा सूर्य की किरणें इस तरह विचलित होती हैं कि उस पर पड़ने वाली समस्त किरणें लेंस की दूसरी ओर पहुंच कर एक ही स्थान पर केंद्रित हो जाती है। मनुष्य को यह बात बहुत पहले से ही मालूम है। वह लेंस की सहायता से सूखी घास, पत्ती, कपास और कागज जैसी वस्तुओं को जलाना जानता था। आज भी बच्चों को लैंस की सहायता से किये जाने वाले इस तरह के खेल बहुत भाते हैं। आप हैरान होंगे यह जानकर कि कभी–कभी यह ज्ञान कितना उपयोगी साबित हो जाता है। कल्पना कीजिए कि पर्वतारोहण के दौरान एक पर्वतारोही हिमाच्छादित शिखर पर पहुंच कर पाता है कि उसके पास आग उत्पन्न करने के लिए माचिस नहीं है तथा आग पैदा करने का दूसरा कोई तरीका उपलब्ध नहीं है। ऐसे में वहां उपलब्ध पारदर्शी बर्फ से लैंस बनाने का विचार उसको जानलेवा सर्दी से बचाने का रास्ता सुझा सकता है।

विभिन्न माध्यमों को लेकर किये गये अपर्वतन संबंधी प्रयोगों से 'पूर्ण आंतरिक परावर्तन' के रूप में एक और महत्वपूर्ण घटना की जानकारी मिली। जब प्रकाश की किरण पानी जैसे 'सघन–माध्यम' (denser medium) से हवा जैसे 'विरल माध्यम' (rarer medium) में प्रवेश करती है, तब कुछ स्थितियों में उसका इतना अधिक विचलन (deviation) हो जाता है कि वह प्रकाश–किरण हवा में जाने की बजाय पुनः पानी में ही लौट आती है। इस तरह, ऐसा लगता है मानो 'सघन' और 'विरल' माध्यमों का 'संधि–स्थल' एक दर्पण की तरह है, जहां से प्रकाश का 'परावर्तन' हो रहा है। वैज्ञानिक भाषा में इस घटना को 'पूर्ण आंतरिक परावर्तन' (total internal refraction) कहते हैं।

सन् 1665 में इटली के एक वैज्ञानिक ग्रिमाल्डी (grimaldi) ने देखा कि किसी अवरोधक जैसे कोई महीन तार, किसी के सिर का बाल अथवा किसी बारीक छिद्र के

टिप्पणी

तीक्ष्य किनारों (sharp edges) से प्रकाश अचानक मुड़ जाता है, जिससे उस अवरोधक की छाया के किनारे अस्पष्ट दिखने लगते हैं। प्रकाश द्वारा दिखाये गये इस नये गुण का प्रकाश का 'विवर्तन' (diffraction) कहते हैं। सरल रेखीय मार्ग पर चलने वाले प्रकाश के लिए इस गुण को दर्शाना सचमुच आश्चर्यजनक है।

विवर्तन की खोज के लगभग 4 वर्षों बाद यानी सन् 1669 में प्रकाश के एक अन्य विशिष्ट गुण का फिर पता चला जब दार्शनिक एरेक्मस बार्थोलिनस (Erakmus Bartholinus) 'आइसलैंड स्पार यानी केल्साइट' (निजर्लित कैल्शियन कार्बोनेट) नामक एक प्राकृतिक क्रिस्टल का अध्ययन कर रहे थे। एक प्रयोग के दौरान क्रिस्टल को घुमाते हुए देखने पर उन्हें क्रिस्टल से गुजर कर आने वाले प्रकाश की तीव्रता से पहले तो कोई अंतर नहीं मिला, लेकिन सहज जिज्ञासावश जब उन्होंने इस क्रिस्टल से निकले प्रकाश को अपने पास रखे एक दूसरे क्रिस्टल से गुजार कर देखा तब उन्हें प्रकाश की तीव्रता में अच्छी खासी कमी दिखाई दी। उत्सुक बार्थोलिनस ने अब इस दूसरे क्रिस्टल को घुमाना आरंभ किया और देखा कि क्रिस्टल के घूमने के साथ–साथ प्रकाश की तीव्रता में भी नियमित घटत–बढ़त होने लगती है। उन्होंने देखा कि हमेशा ही पहले क्रिस्टल के सापेक्ष दूसरे क्रिस्टल की एक निश्चित स्थिति में उन्हें अधिकतम प्रकाश मिलता है जबकि इस स्थिति से दूसरे क्रिस्टल को 90 डिग्री घुमाने पर इनमें से गुजरने वाले प्रकाश की तीव्रता शून्य हो जाती है। इससे बार्थोलिनस समझ गये कि निश्चित ही प्रथम आइसलैंड स्पार से निकलने के पश्चात् प्रकाश कोई एक नया गुण धारण कर लेता है। यह गुण प्रकाश का 'ध्रुवण' (polarization) कहलाया। विवर्तन की ही तरह ध्रुवण भी प्रकाश के उन विशिष्ट गुणों में शामिल हो गया जिनका मूल कारण तत्कालीन वैज्ञानिकों को ज्ञात नहीं हो पा रहा था।

इन्हीं वर्षों में प्रकाश के गुणों के विस्तृत अध्ययन हेतु और भी कई वैज्ञानिक जुटे थे जिनमें विलेबोर्ड स्नेल (snell) प्रमुख थे। उन्होंने ही सन् 1620 में अपवर्तन (refraction) संबंधी नियमों की खोज की थी। इसके बाद शुरुआत हुई आयजॅक न्यूटन (Issac Newton) के महान वैज्ञानिक युग की।

तार्किक शक्ति के धनी न्यूटन सन् 1666 में केम्ब्रिज विश्वविद्यालय में चौथे वर्ष के छात्र थे। उस समय लंदन में भयंकर प्लेग फैलने की वजह से सभी स्कूल–कालेज बंद कर दिये गये थे। इससे न्यूटन को अपने गांव जाना पड़ा। कोई और होता तो अपनी पढ़ाई ही बंद कर देता लेकिन गांव में पहुंच कर न्यूटन की बौद्धिक प्रखरता और भी मुखरित हो गई। वहीं अपने खेत पर रहते हुए उनका प्रकृति से सीधा साक्षात्कार होने लगा। उन्हें प्रकृति में घटने वाली हर घटना सार्थक नजर आने लगी। वे उन घटनाओं के प्रखर प्रेक्षक बनकर उसमें निहित संदेशों को ग्रहण करने की चेष्टा करने में जुट गये। कहते हैं, एक बार उन्होंने एक पेड़ से सेब–फल गिरते हुए देखा तो वे तब तक सोचते रहे जब तक कि गुरुत्वाकर्षण (Gravitational attraction) के रूप में उसका कारण नहीं जान लिया। इसी तरह आकाश में इन्द्रधनुष को देखकर प्रकाश के अध्ययन में उनकी इच्छा तीव्र हुई और, इस तरह यही ग्रामीण परिवेश में रहते हुए ही न्यूटन ने करीब 18 माह की अल्पावधि में ही गुरुत्वाकर्षण (Gravitation), यांत्रिकी (Mechanics), प्रकाश, रंग जैसे विषयों पर अपने कई मौलिक विचारों को ठोस आधार प्रदान कर दिया।

टिप्पणी

प्रकाश के व्यवहार को जानने की तीव्र उत्कंठा के कारण आरंभ में न्यूटन ने पारदर्शी (Transparent materials) के विभिन्न आकार के टुकड़ों को लेकर प्रयोग किये। एक अत्यंत सरल प्रयोग में उन्होंने एक बारीक छिद्र से आने वाले सूर्य के प्रकाश को कांच के एक 'त्रिफलक' टुकड़े यानी 'प्रिज्म' (prism) से गुजारा। इस प्रयोग के दौरान उन्होंने देखा कि उसमें बैंगनी, जामुनी, नीले, हरे, पीले, नारंगी व लाल रंग के कुल सात तरह के प्रकाश निकल रहे हैं। इस अत्यंत विस्मयकारी दृश्य ने न्यूटन को बहुत प्रभावित किया।

प्रिज्म से विभिन्न रंगों के प्रकाश निकलने की प्रक्रिया को समझने के उद्देश्य से न्यूटन ने एक अन्य प्रिज्म लिया तथा उसे पहले प्रिज्म के पास ही उल्टा करके रख दिया ताकि पहले प्रिज्म से निकलने वाला प्रकाश दूसरे प्रिज्म से गुजर सके। दूसरे प्रिज्म से निकलने वाले प्रकाश में से सारे प्रकाश के रंग गायब हो गये और श्वेत प्रकाश की पुनः प्राप्ति हो गई। इस प्रयोग से न्यूटन यह समझ गये कि सूर्य के श्वेत प्रकाश में रंगों को प्रिज्म द्वारा नहीं घोला जा रहा है अपितु ये रंग तो सूर्य के प्रकाश में पहले से ही मौजूद हैं। इन रंगों को अलग करने का काम पहले प्रिज्म ने किया, जबकि इन्हें मिलाने का कार्य उल्टे रखे दूसरे प्रिज्म ने।

सन् 1669 में किये गये अपने इन प्रयोगों के दौरान न्यूटन ने यह भी देखा कि प्रिज्म से निकले विभिन्न रंगों के प्रकाश हर बार यह निश्चित क्रम में ही जमे हुए रहते हैं जैसे पहले लाल, फिर उसके नीचे क्रमशः नारंगी, पीले, हरे, नीले, जामुनी व अंत में बैंगनी। रंगों का यह क्रम कभी नहीं बदलता है। इसीलिए विभिन्न प्रकाश–रंगों की इस जमावट को न्यूटन ने वर्ण–क्रम या 'स्पेक्ट्रम' (spectrum) नाम दिया तथा सूर्य के प्रकाश से मिलने के कारण यह 'सौर–स्पेक्ट्रम' हुआ। न्यूटन ने इस बात पर भी गौर किया कि इन्द्रधनुष को बनाने वाले विभिन्न रंगों का क्रम भी 'सौर–स्पेक्ट्रम' की ही भांति रहता है। अतः उनकी नजर में 'इन्द्रधनुष' भी एक 'स्पेक्ट्रम' बन गया, लेकिन आकाश में यह स्पेक्ट्रम कैसे बनता होगा?

स्पेक्ट्रम क्या है?

'स्पेक्ट्रम' वैज्ञानिक और तकनीकी क्षेत्रों में प्रयुक्त होने वाला एक अतिविशिष्ट शब्द है। लेकिन आज जन–सामान्य की विज्ञान से निकटता ने इसे बहु–आयामी स्वरूप प्रदान करके एक प्रचलित शब्द बना दिया है। स्पेक्ट्रम का अर्थ किसी भी राशि की क्रमवार जमावट से है और क्रमवार जमावट बिना किसी निश्चित आधार के नहीं हो सकती। ये आधार अलग–अलग भी हो सकते हैं। उदाहरण के लिए किसी स्कूल की व्यायाम की कक्षा में लगने वाली लड़कों की कतार का आधार उनकी ऊंचाई होती है, जबकि पारितोषिक वितरण के दौरान लगने वाली कतार का आधार प्रतियोगियों की प्रवीणता होती है। इसी तरह राशन अथवा सिनेमा की टिकिट लेने के लिए लगी कतारों का आधार क्रेता के पहुंचने का समय होता है। अतः किसी एक आधार को मानकर किसी भी प्रकार की क्रमवार–जमावट की जा सकती है। इसके विपरीत अगर हमें पहले से ही कोई क्रमवार जमावट मालूम हो तब हम उसका आधार ढूंढ़ सकते हैं।

प्रिज्म से मिलने वाले विभिन्न रंगों के प्रकाश में एक क्रमवार जमावट मिलती है। इस जमावट का आधार क्या हो सकता है? जब प्रकाश की प्रकृति, तरंग के रूप में

टिप्पणी

स्थापित हुई तब स्पेक्ट्रमों में रंगों की जमावट का आधार प्रकाश तरंगों की आवृत्ति अथवा उनकी तरंग–लम्बाई से निर्धारित हुआ। इसी तरह जब वैज्ञानिकों को समान रासायनिक गुण–धर्म वाले लेकिन अलग–अलग द्रव्यमानों के परमाणुओं का ज्ञान हुआ तब उन्होंने द्रव्यमान को आधार बनाकर इस परमाणुओं की क्रमवार जमावट के लिए 'मास–स्पेक्ट्रम' शब्द गढ़ लिया। औषधि के क्षेत्र में व्यापक प्रभाव वाली दवाइयों के लिए 'ब्रॉड–स्पेक्ट्रम' का सहज प्रयोग सर्वविदित है।

स्पेक्ट्रम–निर्माण की मूल–प्रक्रिया को समझने हेतु न्यूटन ने स्पेक्ट्रम का अध्ययन करते हुए देखा कि बैंगनी प्रकाश अपने मूल मार्ग में सबसे अधिक विचलित होते हुए झुका होता है, जबकि लाल–प्रकाश सबसे कम। उन्हें विभिन्न प्रकाश रंग के इस तरह अलग–अलग झुकने का कारण प्रिज्म के पदार्थ और प्रकाश के मध्य होने वाली अंतःक्रिया में छिपा नजर आया। उन्होंने बताया कि इस अंतःक्रिया के फलस्वरूप ही प्रकाश अपने आरंभिक मार्ग से विचलित होते हुए विभिन्न रंगों के प्रकाश–घटकों (components of light) में बंट जाता है जिससे स्पेक्ट्रम का निर्माण होता है। इस स्पेक्ट्रम के निर्माण में प्रिज्माकार सघन माध्यम यानी 'प्रिज्म' सर्वाधिक उपयुक्त होता है क्योंकि इसकी सतहें ही कुछ ऐसी होती हैं कि पहली सहत के प्रकाश–किरण का जो विचलन होता है, वह दूसरी सतह से निकलने के बाद और भी बढ़ जाता है। स्पेक्ट्रम निर्माण का यह ही मूल कारण है। अब अगर हम इस प्रिज्म के पास एक अन्य प्रिज्म को उल्टा रखकर सूर्य के प्रकाश को गुजारें, जैसा कि न्यूटन ने किया था, तब हमें स्पेक्ट्रम नहीं मिल सकता, क्योंकि प्रथम प्रिज्म से प्राप्त विचलन को द्वितीय प्रिज्म उल्टा पड़ा रहने के कारण समाप्त कर देता है। किसी चौकोर या आयताकार कांच के टुकड़े से भी यही होता है, क्योंकि इन्हें भी हम एक–दूसरे के ऊपर रखे दो प्रिज्मों के समान मान सकते हैं। इस तरह वैज्ञानिकों को धीरे–धीरे स्पेक्ट्रम बनने का विज्ञान समझ में आने लगा।

उपर्युक्त पृष्ठभूमि के आधार पर अब हम इंद्रधनुष को समझने की चेष्टा करते हैं। इंद्रधनुष अकसर सूर्य की उपस्थिति में वर्षा होने के बाद आकाश में प्रकट होता है तथा इसे देखते वक्त हमारी पीठ सूर्य की ओर होती है। अतः सूर्य का प्रकाश इन्द्रधनुष के बनते समय सीधे हमारी आंखों तक नहीं पहुंचता है। निश्चित ही उसे किसी न किसी तरह विभिन्न रंगों के प्रकाश–घटकों में टूटने के पश्चात ही हमारी आंखों तक पहुंचना चाहिए। लेकिन यह किस तरह हो सकता है?

हमारी पृथ्वी, सूर्य की तुलना में लगभग 3 लाख 33 हजार गुना छोटी है तथा वह सूर्य से लगभग 15 करोड़ किलोमीटर दूर भी स्थित है। अतः सूर्य के प्रकाश पृथ्वी पर हमेशा लगभग समान्तर किरणों के रूप में ही पहुंचता है। सामान्यतः ये किरणें जल–बूंदों से बाहर निकलते समय वहां पूर्ण आंतरिक परावर्तन की एक अन्य संभावना भी मौजूद रहती है क्योंकि जल–बूंद के अंदर पहुंचा प्रकाश सघन माध्यम (जल) से बूंद के बाहर उपस्थित विरल माध्यम (हवा) की ओर आपतित होता है। हर रंग के प्रकाश के लिए पूर्ण आंतरिक परावर्तन मिलने की शर्त अलग–अलग होती है। अतः जब एक रंग के प्रकाश के लिए पूर्ण–परावर्तन की शर्त पूरी होती है तब रंग का प्रकाश जल–बूंद से सीधे अपवर्तित होकर बाहर निकलने की बजाय पुनः जल–बूंद में ही परावर्तित होकर उससे बाहर निकल आता है। इस तरह जल–बूंदों से अलग–अलग

रंगों के प्रकाश के पूर्ण आंतरिक परावर्तित होने के कारण इन्द्रधनुष बनने लगता है। अब प्रश्न उठता है कि इसकी आकृति को लेकर– क्यों इसकी आकृति धनुष के समान होती है?

टिप्पणी

हमें ज्ञात है कि सूर्य के प्रकाश की किरणें पृथ्वी की ओर समान्तर किरणें के रूप में आती हैं। यही कारण है कि दर्शक की आंख और सूर्य को मिलाने वाली रेखा भी इन किरणों के समान्तर होती है। लेकिन जल–बूंदों से पूर्ण–परावर्तित होकर आने वाली प्रकाश की किरणें इसके समान्तर नहीं होती बल्कि हर रंग के प्रकाश की किरण सूर्य और आंख को मिलाने वाली रेखा से अलग–अलग लेकिन निश्चित कोण बनाती हैं। उदाहरण के लिए 42 डिग्री का कोण बनाने वाली किरणें लाल रंग की होती हैं जबकि अन्य रंगों की किरणें इससे कम कोण बनाती है। बैंगनी प्रकाश की किरणें सबसे कम यानी 38 डिग्री का कोण बनाती है। चूंकि एक रंग की किरणें एक निश्चित कोण पर ही सब ओर से आकर आंख पर मिलती हैं अतः ये एक जोकर की नुकीली टोपी अथवा लाउड–स्पीकर के भोंगे की तरह शंकु का रूप धारण कर लेती हैं जिनका शीर्ष दर्शक की आंख पर होता है। हर रंग के प्रकाश के अपने अलग–अलग शंकु बनते हैं। अब चूंकि शंकुओं के आधार वृत्ताकार होते हैं, अतः प्रकाश रंग भी वृत्ताकार रूप में दिखलाई पड़ना चाहिए। लेकिन प्रायः हमें अर्द्ध–वृत्ताकार या इससे छोटा इन्द्रधनुष ही दिखता है। हमें पूर्ण–वृत्ताकार इन्द्रधनुष तो कभी नहीं दिखता है। आखिर इसका कारण क्या है? वास्तव में इसका कारण हमारा अर्थात् दर्शक का पृथ्वी सतह पर खड़े रहना है। पृथ्वी सतह से इन रंगीन वृत्तों के (अर्थात शंकुओं के वृत्ताकार आधार के) बहुत छोटे–छोटे हिस्से ही दिखते हैं। जिनके सम्मिलित रूप को हम सामान्यतः इंद्रधनुष के नाम से जानते हैं। लेकिन अगर किसी गगनचुम्बी इमारत से इसी दृश्य को देखा जाए तब यह इन्द्रधनुष उसकी हर मंजिल के साथ बड़ा होता जाता है।

पूर्ण वृत्ताकार आकृति भी मिल सकती है जब सूर्य हमारे सिर के ऊपर हो, हमारी आंख पृथ्वी सतह से बहुत ऊंचाई पर हो यानी हम वायुयान में बैठे हों तथा पृथ्वी–सतह और हमारी आंख के बीच बादल हों। स्मरणीय हो कि बादल जल के ठोस कणों (बर्फ) से मिलकर बने होते हैं।

इस तरह इन्द्रधनुष, प्रकृति की एक अत्यन्त सुनियोजित घटना है, न कि कोई दैविक चमत्कार। अब यह स्पष्ट है कि पदार्थ (जल बूंदों) और प्रकाश के बीच होने वाली अंतःक्रिया ही इन्द्रधनुष को बनाती है। शनैः–शनैः इस अंतःक्रिया को समझने के लिए 'स्पेक्ट्रोस्कोपी' (Spectroscopy) नामक एक नई वैज्ञानिक–विधा का जन्म हुआ। इन्द्रधनुष को रहस्योद्घाटन हो जाने से वैज्ञानिकों को प्रकृति से तादाम्य स्थापित करने का एक महत्वपूर्ण सुराग हाथ लग गया। अब प्रकृति को सजाने वाले विभिन्न मनमोहक रंगों से संबंधित प्रश्नों में वैज्ञानिकों की गहरी रुचि जागने लगी क्योंकि रंग किसे आकर्षित नहीं करते हैं। कहीं भड़कीली तो कहीं सौम्य, कहीं गहरे तो कहीं फीके–यों विविधताओं से भरा होता है विस्मयकारी रंगों का यह संसार। लेकिन किस तरह बनते हैं इतने सारे रंग? मन मोहने वाली प्रकृति की छटाएं, खेतों की हरीतिमाएं, फूलों और तितलियों के अनगिनत रंग हमसे क्या कहना चाहते हैं? रंगों में व्यक्त प्रकृति को बोली व भाषा को हम किस तरह समझ सकते हैं?

टिप्पणी

3.3.2 आलेख का महत्व एवं प्रासंगिकता

आकाश में संध्या समय पूर्व दिशा में तथा प्रातःकाल पश्चिम दिशा में, वर्षा के पश्चात लाल, नारंगी, पीला, हरा आसमानी, नीला तथा बैंगनी वर्णों का एक विशालकाय वृत्ताकार वक्र कभी–कभी दिखाई देता है। यह इन्द्रधनुष कहलाता है। वर्षा अथवा बादल में पानी की सूक्ष्म बूंदों अथवा कणों पर पड़ने वाली सूर्य किरणों का विक्षेपण (डिस्पर्शन) ही इन्द्रधनुष के सुन्दर रंगों का कारण है। सूर्य की किरणें वर्षा की बूंदों से अपवर्तित तथा परावर्तित होने के कारण इन्द्रधनुष बनाती है। इन्द्रधनुष सदा दर्शक की पीठ के पीछे सूर्य होने पर ही दिखाई पड़ता है। पानी के फुहारे पर दर्शक के पीछे से सूर्य किरणों के पड़ने पर भी इन्द्रधनुष देखा जा सकता है।

प्रकार

इन्द्रधनुष दो प्रकार के होते हैं–

- प्राथमिक इन्द्रधनुष या दोहरा इन्द्रधनुष
- द्वितीयक इन्द्रधनुष

1. **प्राथमिक इन्द्रधनुष**– जब वर्षा की बूंदों पर आपतित होने वाली सूर्य की किरणों का दो बार अपवर्तन व एक बार परावर्तन होता है तो प्राथमिक इन्द्रधनुष का निर्माण होता है। प्राथमिक इन्द्रधनुष में लाल रंग बाहर की ओर और बैगनी रंग अंदर की ओर होता है। इसमें अंदर वाली बैंगनी किरण आंख पर 40°8' तथा बाहर वाली लाल आंख पर 42°8' का कोण बनाती है। मुख्य या दोहरे इन्द्रधनुष में बाहरी भाग पर अर्ध गोला लाल दिखाई देता है जबकि अंदर की ओर बैंगनी चाप होती है। मुख्य रेनबो तब बनता है जब प्रकाश की किरण पानी की छोटी बूंद में प्रवेश करने पर अपवर्तित होती है और उसके तुरंत बाद बूंद के अंदर से इसके पिछले भाग में प्रतिबिंबित होती है और फिर (प्रकाश की यह किरण) बूंद की सतह को छोड़ते समय फिर से वापिस अपवर्तित हो जाती है। दोहरे इन्द्रधनुष में प्राथमिक चाप के बाहर एक दूसरा चाप दिखाई देता है और इसके रंगों का क्रम उल्टा होता है, जिसमें चाप के अंदरूनी हिस्से पर लाल रंग होता है। यह प्रकाश छोड़ने से पहले बूंद के अंदर दो बार परिवर्तित होने के कारण होता है। एक इन्द्रधनुष देखने वाले से एक निश्चित दूरी पर स्थित नहीं होता है न ही इसका कोई वास्तविक, छूने योग्य अस्तित्व होता है। दरअसल इसे एक दृष्टि–भ्रम भी कहा जा सकता है, जो कि पानी की सूक्ष्म बूंदों को प्रकाश के स्रोत के सापेक्ष एक निश्चित कोण से देखने के कारण उत्पन्न होता है।

   इन्द्रधनुष को तब भी देखा जा सकता है जब हवा में पानी की बूंदें हों और कम ऊंचाई वाले कोण पर दर्शक के पीछे से सूरज की रोशनी आ रही हो। इस कारण से इन्द्रधनुष आमतौर पर पश्चिमी आकाश में सुबह के समय और पूर्वी आकाश में शाम के समय देखा जाता है। सबसे शानदार इन्द्रधनुष तब दिखता है जब आधे आकाश में बारिश के बादलों के साथ थोड़ा अंधेरा होता है और दर्शक सूर्य की दिशा में साफ आसमान के साथ एक स्थान पर होता है।

टिप्पणी

2. **द्वितीयक इन्द्रधनुष**– लाल तथा बैंगनी किरणों का न्यूनतम विचलन क्रमानुसार 231 क तथा 234 क होता है। अतः एक इन्द्रधनुष ऐसा भी बनना संभव है जिसमें वक्र का बाहरी बर्फ बैंगनी रहे तथा भीतरी लाल। इसको द्वितीयक (सेकंडरी) इन्द्रधनुष कहते हैं।

जब वर्षा की बूंदों पर आपतित होने वाली सूर्य की किरणों का दो बार आपवर्तन व दो बार परावर्तन होता है, तो द्वितीयक इन्द्रधनुष का निर्माण होता है। इसमें बाहर की ओर बैंगनी रंग एवं अंदर की ओर लाल रंग होता है। बाहर वाली किरण आंख पर 54°52' का कोण तथा अंदर वाली किरण 50°8' का बनाती है। द्वितीयक इन्द्रधनुष प्राथमिक इन्द्रधनुष की अपेक्षा कुछ धुंधला दिखलाई पड़ता है।

तीन अथवा चार आंतरिक परावर्तन से बने इन्द्रधनुष भी संभव है परंतु वे बिरले अवसरों पर ही दिखाई देते है। वे सदैव सूर्य की दिशा में बनते है तथा तभी दिखाई पड़ते है जब सूर्य स्वयं बादलों में छिपा रहता है। एक इन्द्रधनुष देखने वाले से एक निश्चित दूरी पर स्थित नहीं होता है न ही इसका कोई वास्तविक छूने योग्य अस्तित्व होता है। दरअसल इसे एक दृष्टिभ्रम भी कहा जा सकता है जो कि पानी की सूक्ष्म बूंदों को प्रकाश के स्रोत के सापेक्ष (relative) एक निश्चित कोण से देखने के कारण उत्पन्न होता है। दरअसल एक दर्शक के लिए प्रकाश स्रोत के विपरीत दिशा से 42 डिग्री के अलावा किसी भी कोण पर पानी की बूंदों से एक इन्द्रधनुष देखना असंभव है। यहां तक कि अगर एक दर्शक किसी अन्य दर्शक को देखता है, जो एक इन्द्रधनुष के अंत में खड़ा दिखता है तो दूसरे दर्शक को एक अलग ही इन्द्रधनुष दिखाई देगा जो कि पहले दर्शक द्वारा देखे गए कोण के समान दूर स्थित होगा।

इन्द्रधनुष को तब भी देखा जा सकता है जब हवा में पानी की बूंदें हो और कम ऊंचाई वाले कोण पर दर्शक के पीछे से सूरज की रोशनी आ रही हो। इस वजह से, रनबो आमतौर पर पश्चिमी आकाश में सुबह के समय और पूर्वी आकाश में शाम के समय देखा जाता है। सबसे शानदार रेनबो तब दिखता है।

बारिश के बाद क्यों दिखाई देता है इन्द्रधनुष

आसमान में इन्द्रधनुष का बनना बारिश की नन्हीं बूंदों का कमाल है। बारिश के दिनों में बारिश की नन्ही–नन्ही बूंदे प्रिज्म का काम करती है। इन्द्रधनुष के बनने का सिद्धान्त यह है कि जब प्रकाश एक माध्यम से दूसरे माध्यम में प्रवेश करता है थोड़ा सा झुक जाता है।

एक नन्हीं बूंद में दो सतह होती है। जब सूर्य का प्रकाश बूंद के अंदर प्रवेश करता है तो पहली सतह से टकराकर वह थोड़ा झुक जाता है। अब यह हम जानते ही हैं कि सूर्य के प्रकाश में सात रंग होते हैं, तो रंगों के बंडल बूंद में प्रवेश करने के बाद अलग–अलग रंग अपने–अपने हिसाब से झुकते है और सातो रंग दिखलाई पड़ जाते है। और फिर जब अलग–अलग हुए रंग दूसरी सतह से बाहर निकलते है तो फिर जब अलग–अलग हुए रंग दूसरी सतह से बाहर निकलते है तो फिर से थोड़ा झुक जाते है और एक रंग का एक पट्टा दूसरे से अलग हो जाता है। इस तरह दो बार

टिप्पणी

झुकने के कारण हमें रंगीन धनुष जैसी आकृति आसमान में दिखलाई पड़ती है जिसे हम इन्द्रधनुष कहते है। लाल रंग का प्रकाश कम मुड़ता है और इसलिए वह इन्द्रधनुष में सबसे ऊपर दिखाई देता है जबकि बैंगनी रंग का प्रकाश सबसे ज्यादा मुड़ता है इसलिए वह सबसे नीचे होता है। आसमान में लाल रंग का इन्द्रधनुष बना दिखता है आंखों से देख पाना संभव नहीं होता। इसे देखने के लिए हमें किसी खास यंत्र की आवश्यकता पड़ती है।

3. **क्लाइड इन्द्रधनुष**– क्लाइड रेनबो यानी बादलों वाला इन्द्रधनुष यह इन्द्रधनुष की श्रेणी में आने वाले सभी तरह के इन्द्रधनुष में से सबसे सुंदर और आकर्षक होता है। यह न सिर्फ अपने आकर्षण, बल्कि आकार में भी अन्य रेन्बो से अलग होता है इसके पीछे कारण यह है कि यह बादलों के ऊपर बनता है और इसका फैलाव काफी दूर तक होता है जो इसकी खूबसूरती को और ज्यादा बढ़ाता है। जब पानी या बर्फ के बेहद छोटे कण वातावरण के साथ–साथ बादलों की सतह पर भी मौजूद होते है ऐसे में जब सूर्य का प्रकाश इन पर पड़ता है तो यह इन्द्रधनुष दिखने लगता है।

4. **टविंड इन्द्रधनुष**– टविंड रेन्बो एक ऐसा रेंबों होता है जो आसानी से देखने को नहीं मिलता। इसका आकार डबल रेनबो से एकदम अलग होता है। इसमें दो धनुष आकार के प्रतिबिम्ब बनते है पर इन प्रतिबिम्बों की शुरुआत का केंद्र एक ही होता है यह आगे जाकर पृथक हो जाता है। यह खास इन्द्रधनुष तब बनता है जब वातावरण में छोटे और बड़े दोनों तरह के पानी के अणु हो। इस दौरान हवा का दबाव बड़े अणुओं को चपटा कर देता है और छोटे अणु भी एक अलग आकार ले लेते हैं। ऐसे में जब सूरज का प्रकाश इनमें से होकर गुजरता है तो वह अलग–अलग आकार के दो इन्द्रधनुष बनाता है जो कि एक ही जगह से निकलते है।

5. **लूनर इन्द्रधनुष**– लूनर रेनबो अन्य कई नामों से भी जाना जाता है जैसे कि सफेद और मून रेनबो। इसमें जो सबसे अनूठी बात है वह है इसकी रात के समय चांद की रोशनी में बनना। जहां एक और अन्य सभी प्रकार के रेनबो सूरज के प्रकाश में बनते है वहीं यह लूनर रेनबो चांद से दिखाई देता है। चांद की रोशनी जब आसमान में मौजूद छोटी–छोटी बूंदों से होकर गुजरती है तो वह लूनर रेनबो बनाती है, इसका प्रतिबिम्ब काफी हल्का होता है जिस कारण इसे नंगी आंखों से देख पाना संभव नहीं होता। इसे देखने के लिए हमें किसी खास यंत्र की आवश्यकता पड़ती है।

6. **एलेम्स जैन्डर्स डार्क**– एलेम्स जैन्डर्स इन्द्रधनुष की श्रेणी में अलग ही स्थान रखता है। दिखने में यह डबल इन्द्रधनुष के समान ही लगता है मगर एक चीज जो इसे अलग करती है वह है इसका प्रकाश। इससे निकलने वाला प्रकाश आसपास के सारे आसमान में अंधेरा फैला देता है। इस कारण इसकी खूबसूरती और भी ज्यादा उभरकर सामने आती है। यह आमतौर पर देखने को नहीं मिलता। इस तरह के इन्द्रधनुष ज्यादातर वर्षावनों में दिखते हैं।

टिप्पणी

7. **सुपरनुमेरेरी इन्द्रधनुष**– शायद आपके लिए यह नाम बिल्कुल नया हो सकता है। सुपरनुमेरेरी इन्द्रधनुष कुछ–कुछ डबल रेनबो की तरह दिखाई पड़ता है। बस इसमें फर्क इतना है कि इसके बनने की प्रक्रिया अलग–अलग आकार के पानी के अणुओं के संयोजन पर आधारित होती है। नीचे की ओर बनने वाले सुपरनुमेरैरी इन्द्रधनुष का प्रकाश अधिक रहता है जबकि उसके ऊपर वाले का कम होता है।

8. **रेड इंद्रधनुष**– ऐसा मौका बहुत कम लोगों को मिलता है जब उन्हें इस अद्भुत नजारे को देखने का मौका मिले। अपने नाम की ही तरह रेड रेनबो देखने में भी बेहद दर्शनीय होता है। वैज्ञानिक भाषा में इसे मोनोक्रोम रेनबो भी कहते है। इसके बनने का संयोजन ज्यादातर तेज बारिश के बाद सूर्योदय व सूर्य अस्त के समय ही होता है। इसके बनने के कारण को अच्छे से समझने के लिए जरूरी है कि आपको पता हो कि सूर्य के प्रकाश से निकलने वाले रंगों में से नीले और हरे रंग की क्षमता सबसे अधिक है। सूर्य उदय व अस्त के समय सूर्य के प्रकाश की पहुंच कम हो जाती है। ऐसे में वातावरण में उपस्थित पानी के अणुओं तक केवल लाल रंग की किरणें ही पहुंच पाती है।

इन्द्रधनुष कैसे बनता है– इन्द्रधनुष एक ऐसा कुदरती कारनामा है जिसके दर्शन कभी न कभी कभी हर किसी ने किये ही होंगे, यह बारिश के बाद प्रकृति का अनूठा नजारा होता है यहां पर लोगों के मन में यह सवाल जरूर उठता होगा कि यह इन्द्रधनुष बनता कैसे है और क्यों बनता है। कुछ जगह इसे मेघधनुष के नाम से भी जाना जाता है इन्द्रधनुष चाप (arc) के आकार का होता है जो कि सात रंगों में दिखाई देता है, इसके वैज्ञानिक कारण हैं–

इन्द्रधनुष एक बहुत ही सुंदर प्रकाशीय विक्षेपण की घटना है। इन्द्रधनुष कैसे बनता है इसकी व्याख्या करने से पहले उसकी वैज्ञानिक तकनीक के बारे में जान लेते हैं–

प्रकाश का विक्षेपण– सूर्य के प्रकाश की कोई किरण जब प्रिज्म में से गुजरती है तो वो सात रंगों में विभक्त हो जाती है इसे ही प्रकाश का विक्षेपण कहते है। इन्द्रधनुष, प्रकाश के परावर्तन, अपवर्तन और पानी की बूंदों में प्रकाश के विक्षेपण के कारण बनता है–

इन्द्रधनुष में सात रंगों का स्पेक्ट्रम चाप (arc) के आकार में हमें आकाश में दिखाई पड़ता है।

इन्द्रधनुष के रंग– हम इन रंगों से हमेशा प्रभावित हुए है जो भौतिकी के जादू के लिए आकाश में रचित है जिन्हें अब समझाया गया है। पहले अध्ययनों को मार्केन्टोनियो डी डोमिनिस के लिए जिम्मेदार ठहराया जाना है। सत्रहवीं शताब्दी में आइजैक न्यूटन ने पिछले अध्ययनों को गहरा बनाने और बेहतर बहस करने के लिए काम किया है। इस उत्कृष्ट विद्वान के लिए हमें न्यूटन के प्रिज्म भी होना चाहिए, इसमें कोई संदेह नहीं है कि उसने अपना निशान छोड़ा और उन्हें बनाया– सभी रंगों के साथ, इसके सूत्रों के साथ छात्रों को आज भी भौतिकी किताबों में मिलता है।

टिप्पणी

इन्द्रधनुष के रंग एक प्राकृतिक घटना का परिणाम है जो तब होता है जब सूरज की रोशनी तूफान के बाद हवा में निलंबित पानी की बूंदों से गुजरती है उदाहरण के लिए रंग क्यों आते हैं? क्योंकि सफेद रोशनी हवा में निलंबित पानी की बूंदों से गुजरती है, इन्द्रधनुष के रंगों में टूट जाती है। ऐसा होगा अगर वे न्यूटन के गिलास प्रिज्म को पार करते है।

इन्द्रधनुष के रंगों के बीच कोई स्पष्ट विभाजन नहीं है हालांकि यह अन्य चीजों के साथ इन्द्रधनुष के रंगों की धारणा व्यक्ति से व्यक्ति में बदल सकती है और रंगहीनता वाले लोग भी एक कम सेट देख सकते है आसमान की तुलना में रंगों की। प्रारंभ में न्यूटन ने पाँच (लाल, पीला, हरा, नीला और बैंगनी) प्रतिष्ठित किया था लेकिन तब नारंगी छः की ऊंचाई पर पहुंचने लगा।

इन्द्रधनुष के सात रंग प्राप्त करने के लिए इंडिगो को जोड़ा जाना चाहिए कि कई लोग इन्द्रधनुष के हिस्से पर भी विचार करते है जो संगीत के साथ सद्भाव प्राप्त करने के लिए सात नोट्स है। इसलिए इन्द्रधनुष के रंगों की संख्या पर थोड़ा सा भ्रम है। किसी को भी निराश करने की इच्छा बिना, हम कह सकते है कि अधिकांश ऑप्टिशियन वैज्ञानिक मानते है कि वे छह है, क्योंकि वे इंडिगो को एक अलग विभाजन के रूप में नहीं पहचानते है।

द्वितीयक इन्द्रधनुष के रंग– हमने चांद इन्द्रधनुष के बारे में या द्वितीयक इन्द्रधनुष के बारे में भी बात की। यह इन्द्रधनुष के रंगों के साथ एक चाप है लेकिन प्राथमिक आर्क के बाहर दिखाई देने वाला गहरा और बड़ा भी है। यह कैसे दिखाई देता है? यह Raindrops के अंदर सूरज की रोशनी के एक डबल प्रतिबिम्ब का परिणाम है। उन्होंने इन्द्रधनुष विशेषज्ञों के साथ झुकाव की गणना भी की है और देखा है कि यह 50 डिग्री–53 डिग्री के कोण पर दिखाई देता है। इस इन्द्रधनुष के बारे में क्या खास है? देखने में कम आसान होने के अलावा इसके रंग प्राथमिक के मुकाबले नीले रंग के बाहर और लाल रंग के विपरीत उलट दिए जाते है। अलेक्जेंडर के बैंड, एफ्रोडाइसिया के अलेक्जेंडर से जिन्होंने इसे पहले वर्णित किया है, आकाश, अंधेरा, अद्वितीय का अंश है जिसे हम प्राथमिक और माध्यमिक इन्द्रधनुष के बीच पाते है। सिद्धांत रूप में यह एक तिहाई या तिहाई इन्द्रधनुष भी होगा लेकिन यह देखना वास्तव में दुर्लभ है।

इन्द्रधनुष की छवि– इन्द्रधनुष की ली गई छवि से इन्द्रधनुष के रंग हमेशा स्पष्ट रूप से विशिष्ट नहीं होते है, और यदि वे 6 या 7 है तो भी आप एक नजर से कम समझ सकते है लेकिन निस्संदेह वे बहुत ही आकर्षक है।

इन्द्रधनुष के रंग इंडिगो– इंडिगो चाहे इन्द्रधनुष के रंगों का हिस्सा था ही नहीं, इंडिगो एक रंग है और एक ही रंग बना हुआ है वही नाम पौधे के मूल के रंगीन पदार्थ को भी इंगित करता है जिसे पहले से ही 4000 साल पहले एशिया में जाना जाता था। यह रंग मॉरिटानिया के साहेल में बहुत लोकप्रिय है।

इन्द्रधनुष (रेनबो) एक मौसम संबंधी घटना है, इन्द्रधनुष पानी की बूंदों में प्रकाश के परावर्तन और अपवर्तन और फैलाव के कारण बनने वाला एक संयोजन होती है जिसके परिणामस्वरूप आकाश में प्रकाश का एक स्पेक्ट्रम यानी रंगावली दिखाई पड़ता

है। अंततः यह बहुरंगी गोलाकार चाप का रूप ले लेता है। सूरज की रोशनी से होने वाली रेनबो आकाश में हमेशा सूर्य के विपरीत दिशा में दिखाई देती है।

इन्द्रधनुष पूर्ण वृत्ताकार हो सकते हैं। हालांकि दर्शक आमतौर पर केवल एक अर्ध–गोलाकार चाप ही देखता है जो जमीन के ऊपर चमकती बूंदों से बनता है, यह चाप सूर्य से दर्शक की आंख की ओर एक सीधी रेखा पर केंद्रित होता है।

टिप्पणी

इन्द्रधनुष की क्रिया को सर्वप्रथम दे कर्ति नामक फ्रेंच वैज्ञानिक ने उपर्युक्त सिद्धांतों द्वारा समझाया था। इनके अतिरिक्त कभी–कभी प्रथम इंद्रधनुष के नीचे की ओर अनेक अन्य रंगीन वृत्त भी दिखाई देते हैं। ये वास्तविक नहीं होते है। ये जल की बूंदों से ही बनते है किन्तु इनका कारण विवर्तन (डिफ्रैक्शन) होती है। इनमें विभिन्न रंगों के वृत्तों की चौड़ाई जल की बूंदों के बड़ी या छोटी होने पर निर्भर रहती है।

दूसरी ओर हम कह सकते हैं कि बरसात के मौसम में जब कभी आसमान में काले–काले बादल छाए होते हैं तो मन खुशी से खिल उठता है तभी मगर हल्की–फुल्की बारिश की फुहारे पड़ने लगे तो सभी झूम उठते है। बारिश के बंद होने के बाद जब सूर्य की किरणें बादलों से टकराती है तो आकाश में रंग–बिरंगी आकृति दिखाई देती है यही आकृति इन्द्रधनुष कहलाती है। इन्द्रधनुष के निकलते ही मोर नाचने लगते है। चारों तरफ मानो खुशी का माहौल बन जाता है।

सोचो अगर हमारे जीवन में रंग न होते तो हमारी जिन्दगी कितनी बदरंग होती। सब चीजें काली या सफेद ही होती। मूल रूप से इन्द्रधनुष के सात रंगों को ही रंगों का जनक माना जाता है। रंगों की उत्पत्ति का सबसे प्राकृतिक स्रोत सूर्य ही है। सूर्य की किरणों में सात रंग होते है। प्रिज्म की सहायता से देखने पर पता चलता है कि सूर्य सात रंग ग्रहण करता है। ये रंग हैं– बैंगनी, जामुनी, नीला, हरा, पीला, नारंगी और लाल जो हमें इन्द्रधनुष में दिखाई देते हैं।

अपनी प्रगति जांचिए

3. किस वैज्ञानिक ने प्रकाश के 'विवर्तन' नामक गुण की खोज की?

(क) न्यूटन (ख) गैलीलियो

(ग) ग्रिमाल्डी (घ) बार्थोलिनस

4. चांद की रोशनी में बनने वाले इन्द्रधनुष को क्या कहा जाता है?

(क) रेड इन्द्रधनुष (ख) सुपरनुमेरेरी इन्द्रधनुष

(ग) लूनर इन्द्रधनुष (घ) टविंड इन्द्रधनुष

3.4 संधि (संकलित)

संधि दो शब्दों से मिलकर बना है–सम् + धि। जिसका अर्थ होता है 'मिलना'। हमारी हिंदी भाषा में संधि के द्वारा पूरे शब्दों को लिखने की परम्परा नहीं है। लेकिन संस्कृत में संधि के बिना कोई काम नहीं चलता। संस्कृत की व्याकरण की परम्परा बहुत पुरानी

है। संस्कृत भाषा को अच्छी तरह जानने के लिए व्याकरण को पढ़ना जरूरी है। शब्द रचना में भी संधियां काम करती हैं।

टिप्पणी

जब दो शब्द मिलते हैं, तो पहले शब्द की अंतिम ध्वनि और दूसरे शब्द की पहली ध्वनि आपस में मिलकर जो परिवर्तन लाती हैं, उसे संधि कहते हैं। अर्थात संधि किये गये शब्दों को अलग–अलग करके पहले की तरह करना ही संधि विच्छेद कहलाता है। अर्थात, जब दो शब्द आपस में मिलकर कोई तीसरा शब्द बनाते हैं, तब जो परिवर्तन होता है, उसे संधि कहते हैं।

उदाहरण– हिमालय = हिम + आलय, सत् + आनंद = सदानंद।

संधि के प्रकार

संधि तीन प्रकार की होती हैं–

स्वर संधि

व्यंजन संधि

विसर्ग संधि।

स्वर संधि

जब स्वर के साथ स्वर का मेल होता है, तब जो परिवर्तन होता है, उसे स्वर संधि कहते हैं। हिंदी में स्वरों की संख्या ग्यारह होती है। बाकी के अक्षर व्यंजन होते हैं। जब दो स्वर मिलते हैं, तब उससे जो तीसरा स्वर बनता है, उसे स्वर संधि कहते हैं।

उदाहरण– विद्या + आलय = विद्यालय।

स्वर संधि पांच प्रकार की होती हैं–

(क) दीर्घ संधि

(ख) गुण संधि

(ग) वृद्धि संधि

(घ) यण संधि

(च) अयादि संधि।

(क) दीर्घ संधि– जब (अ, आ) के साथ (अ, आ) हो तो 'आ' बनता है, जब (इ, ई) के साथ (इ, ई) हो तो 'ई' बनता है, जब (उ, ऊ) के साथ (उ, ऊ) हो तो 'ऊ' बनता है। अर्थात सूत्र– अकः सवर्ण दीर्घः– मतलब अक् प्रत्याहार के बाद अगर सवर्ण हो तो दानों मिलकर दीर्घ बनते हैं। दूसरे शब्दों में कहें, तो जब दो सजातीय स्वर आसपास आते हैं, तब जो स्वर बनता है, उसे सजातीय दीर्घ स्वर कहते हैं। इसी को स्वर संधि की दीर्घ संधि कहते हैं। इसे ह्रस्व संधि भी कहते हैं।

उदाहरण– धर्म + अर्थ = धर्मार्थ

पुस्तक + आलय = पुस्तकालय

विद्या + अर्थी = विद्यार्थी

रवि + इंद्र = रविन्द्र

टिप्पणी

गिरी +ईश = गिरीश

मुनि + ईश =मुनीश

मुनि +इंद्र = मुनींद्र

भानु + उदय = भानूदय

वधू + ऊर्जा = वधूर्जा

विधु + उदय = विधूदय

भू + उर्जित = भूर्जित।

(ख) गुण संधि– जब (अ, आ) के साथ (इ, ई) हो तो 'ए' बनता है, जब (अ, आ) के साथ (उ, ऊ) हो तो 'ओ' बनता है, जब (अ, आ) के साथ (ऋ) हो तो 'अर' बनता है। इसे गुण संधि कहते हैं।

उदाहरण– नर + इंद्र = नरेंद्र

सुर + इन्द्र = सुरेन्द्र

ज्ञान + उपदेश = ज्ञानोपदेश

भारत + इंदु = भारतेन्दु

देव + ऋषि = देवर्षि

सर्व + ईक्षण = सर्वेक्षण

(ग) वृद्धि संधि– जब (अ, आ) के साथ (ए, ऐ) हो तो 'ऐ' बनता है और जब (अ, आ) के साथ (ओ, औ) हो तो 'औ' बनता है। इसे वृद्धि संधि कहते हैं।

उदाहरण– मत + एकता = मतैकता

एक + एक = एकैक

धन + एषणा = धनैषणा

सदा + एव = सदैव

महा + ओज = महौज

(घ) यण संधि– जब (इ, ई) के साथ कोई अन्य स्वर हो तो 'य' बन जाता है, जब (उ, ऊ) के साथ कोई अन्य स्वर हो तो 'व्' बन जाता है, जब (ऋ) के साथ कोई अन्य स्वर हो तो 'र' बन जाता है। यण संधि के तीन प्रकार के संधि युक्त पद होते हैं– (1) य से पूर्व आधा व्यंजन होना चाहिए। (2) व् से पूर्व आधा व्यंजन होना चाहिए। (3) शब्द में त्र होना चाहिए।

यण स्वर संधि में एक शर्त भी दी गयी है कि य और त्र में स्वर होना चाहिए और उसी से बने हुए शुद्ध व सार्थक स्वर को + के बाद लिखें। इसे यण संधि कहते हैं।

उदाहरण– इति + आदि = इत्यादि

परि + आवरण = पर्यावरण

अनु + अय = अन्वय

सु + आगत = स्वागत

अभि + आगत = अभ्यागत

टिप्पणी

(च) अयादि संधि– जब (ए, ऐ, ओ, औ) के साथ कोई अन्य स्वर हो तो 'ए – अय' में, 'ऐ – आय' में, 'ओ – अव' में, 'औ – आव' में बदल जाता है। य, व् से पहले व्यंजन पर अ, आ की मात्रा हो तो अयादि संधि हो सकती है, लेकिन और कोई विच्छेद न निकलता हो तो + के बाद वाले भाग को वैसा का वैसा लिखना होगा। इसे अयादि संधि कहते हैं।

उदाहरण– ने + अन = नयन

नौ + इक = नाविक

भो + अन = भवन

पो + इत्र = पवित्र

व्यंजन संधि

व्यंजन को व्यंजन या स्वर के साथ मिलाने से जो परिवर्तन होता है, उसे व्यंजन संधि कहते हैं।

उदाहरण– दिक् + अम्बर = दिगम्बर

अभी + सेक = अभिषेक

व्यंजन संधि के 13 नियम होते हैं–

(1) जब किसी वर्ग के पहले वर्ण क्, च्, ट्, त्, प् का मिलन किसी वर्ग के तीसरे या चौथे वर्ण से या य्, र्, ल्, व्, ह से या किसी स्वर से हो जाये तो क् को ग्, च् को ज्, ट् को ड्, त् को द्, और प् को ब् में बदल दिया जाता है। अगर स्वर मिलता है तो जो स्वर की मात्रा होगी, वह हलन्त वर्ण में लग जाएगी, लेकिन अगर व्यंजन का मिलन होता है, तो वे हलन्त ही रहेंगे।

उदाहरण– क् के ग् में बदलने के–

दिक् + अम्बर = दिगम्बर

दिक् + गज = दिग्गज

वाक् + ईश = वागीश

च् के ज् में बदलने के–

अच् + अन्त = अजन्त

अच् + आदि =अजादि

ट् के ड् में बदलने के–

षट् + आनन = षडानन

षट् + यन्त्र = षड्यन्त्र

षट् + दर्शन = षड्दर्शन

टिप्पणी

षट् + विकार = षड्विकार

षट् + अंग = षडंग

त् के द् में बदलने के–

तत् + उपरान्त = तदुपरान्त

सत् + आशय = सदाशय

तत् + अनन्तर = तदनन्तर

उत् + घाटन = उद्घाटन

जगत् + अम्बा = जगदम्बा

प् के ब् में बदलने के–

अप् + द = अब्द

अप् + ज = अब्ज

(2) यदि किसी वर्ग के पहले वर्ण (क्, च्, ट्, त्, प्) का मिलन न या म वर्ण (ङ, ञ, ज, ण, न, म) के साथ हो, तो क् को ङ्, च् को ज्, ट् को ण्, त् को न्, तथा प् को म् में बदल दिया जाता है।

उदाहरण :– क् के ङ् में बदलने के–

वाक् + मय = वाङ्मय

दिक् + मण्डल = दिङ्मण्डल

प्राक् + मुख = प्राङ्मुख

ट् के ण् में बदलने के–

षट् + मास = षण्मास

षट् + मूर्ति = षण्मूर्ति

षट् + मुख = षण्मुख

त् के न् में बदलने के–

उत् + नति = उन्नति

जगत् + नाथ = जगन्नाथ

उत् + मूलन = उन्मूलन

प् के म् में बदलने के–

अप् + मय = अम्मय

(3) जब त् का मिलन ग, घ, द, ध, ब, भ, य, र, व से या किसी स्वर से हो, तो द् बन जाता है। म के साथ क से म तक के किसी भी वर्ण के मिलन पर 'म' की जगह पर मिलन वाले वर्ण का अंतिम नासिक वर्ण बन जायेगा।

उदाहरण– म् + क ख ग घ ङ के उदाहरण–

सम् + कल्प = संकल्प

टिप्पणी

सम् + ख्या = संख्या

सम् + गम = संगम

शम् + कर = शंकर

म् + च, छ, ज, झ, ञ के–

सम् + चय = संचय

किम् + चित् = किंचित

सम् + जीवन = संजीवन

म् + ट, ठ, ड, ढ, ण के–

दम् + ड = दण्ड/दंड

खम् + ड = खण्ड/खंड

म् + त, थ, द, ध, न के–

सम् + तोष = सन्तोष/संतोष

किम् + नर = किन्नर

सम् + देह = सन्देह

म् + प, फ, ब, भ, म के–

सम् + पूर्ण = सम्पूर्ण/संपूर्ण

सम् + भव = सम्भव/संभव

त् + ग, घ, ध, द, ब, भ, य, र, व् के–

सत् + भावना = सद्भावना

जगत् + ईश =जगदीश

भगवत् + भक्ति = भगवद्भक्ति

तत् + रूप = तद्रूप

सत् + धर्म = सद्धर्म

(4) त् से परे च् या छ् होने पर च, ज् या झ् होने पर ज्, ट् या ठ् होने पर ट्, ड् या ढ् होने पर ड् और ल होने पर ल् बन जाता है। म् के साथ य, र, ल, व, श, ष, स, ह में से किसी भी वर्ण का मिलन होने पर 'म्' की जगह पर अनुस्वार ही लगता है।

उदाहरण– म + य, र, ल, व्, श, ष, स, ह के उदाहरण–

सम् + रचना = संरचना

सम् + लग्न = संलग्न

सम् + वत् = संवत्

सम् + शय = संशय

टिप्पणी

त् + च, ज, झ, ट, ड, ल के उदाहरण–

उत् + चारण = उच्चारण

सत् + जन = सज्जन

उत् + झटिका = उज्झटिका

तत् + टीका =तट्टीका

उत् + डयन = उड्डयन

उत् +लास = उल्लास

(5) जब त् का मिलन अगर श् से हो तो त् को च् और श् को छ् में बदल दिया जाता है। जब त् या द् के साथ च या छ का मिलन होता है तो त् या द् की जगह पर च् बन जाता है।

उदाहरण– उत् + चारण = उच्चारण

शरत् + चन्द्र = शरच्चन्द्र

उत् + छिन्न = उच्छिन्न

त् + श् के–

उत् + श्वास = उच्छ्वास

उत् + शिष्ट = उच्छिष्ट

सत् + शास्त्र = सच्छास्त्र

(6) जब त् का मिलन ह् से हो तो त् को द् और ह् को ध् में बदल दिया जाता है। त् या द् के साथ ज या झ का मिलन होता है, तब त् या द् की जगह पर ज् बन जाता है।

उदाहरण– सत् + जन = सज्जन

जगत् + जीवन = जगज्जीवन

वृहत् + झंकार = वृहज्झंकार

त् + ह के–

उत् + हार = उद्धार

उत् + हरण = उद्धरण

तत् + हित = तद्धित

(7) स्वर के बाद अगर छ् वर्ण आ जाए, तो छ् से पहले च् वर्ण बढ़ा दिया जाता है। त् या द् के साथ ट या ठ का मिलन होने पर त् या द् की जगह पर ट् बन जाता है। त् या द् के साथ 'ड' या ढ का मिलन होने पर त् या द् की जगह पर 'ड्' बन जाता है।

टिप्पणी

उदाहरण– तत् + टीका = तट्टीका

वृहत् + टीका = वृहट्टीका

भवत् + डमरू = भवड्डमरू

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, + छ के–

स्व + छंद = स्वच्छंद

आ + छादन =आच्छादन

संधि + छेद = संधिच्छेद

अनु + छेद =अनुच्छेद

(8) अगर म् के बाद क् से लेकर म् तक कोई व्यंजन हो, तो म् अनुस्वार में बदल जाता है। त् या द् के साथ जब ल का मिलन होता है तब त् या द् की जगह पर 'ल' बन जाता है।

उदाहरण– उत् + लास = उल्लास

तत् + लीन = तल्लीन

विद्युत् + लेखा = विद्युल्लेखा

म् + च्, क, त, ब, प के–

किम् + चित = किंचित

किम् + कर = किंकर

सम् + कल्प = संकल्प

सम् + चय = संचय

सम + तोष = संतोष

सम् + बंध = संबंध

सम् + पूर्ण = संपूर्ण

(9) म् के बाद म का द्वित्व हो जाता है। त् या द् के साथ 'ह' के मिलन पर त् या द् की जगह पर द् तथा ह की जगह पर ध बन जाता है।

उदाहरण– उत् + हार = उद्धार

उत् + ह्रत = उद्धृत

पद् + हति = पद्धति

म् + म के–

सम् + मति = सम्मति

सम् + मान = सम्मान

(10) म् के बाद य्, र्, ल्, व्, श्, ष्, स्, ह् में से कोई व्यंजन आने पर म् का अनुस्वार हो जाता है। 'त् या द्' के साथ 'श' के मिलन पर त् या द् की जगह पर 'च' तथा 'श' की जगह पर 'छ' बन जाता है।

टिप्पणी

उदाहरण– उत् + ष्वास = उच्छ्वास

उत् + शृंखल = उच्छृंखल

शरत् + शशि = शरच्छशि

म् + य, र, व्, श, ल, स, के–

सम् + योग = संयोग

सम् + रक्षण = संरक्षण

सम् + विधान = संविधान

सम् + शय =संशय

सम् + लग्न = संलग्न

सम् + सार = संसार

(11) ऋ, र्, ष् से परे न् का ण् हो जाता है। परन्तु चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, श और स का व्यवधान हो जाने पर न् का ण् नहीं होता। किसी भी स्वर के साथ 'छ' के मिलन पर स्वर तथा 'छ' के बीच 'च' आ जाता है।

उदाहरण– आ + छादन = आच्छादन

अनु + छेद = अनुच्छेद

शाला + छादन = शालाच्छादन

स्व + छन्द = स्वच्छन्द

र् + न, म के–

परि + नाम = परिणाम

प्र + मान = प्रमाण

(12) स् से पहले अ, आ से भिन्न कोई स्वर आ जाए, तो स् को ष बना दिया जाता है।

उदाहरण– वि + सम = विषम

अभि + सिक्त = अभिषिक्त

अनु + संग = अनुषंग

भ् + स् के–

अभि + सेक = अभिषेक

नि + सिद्ध = निषिद्ध

वि + सम + विषम

(13) यदि किसी शब्द में कही भी ऋ, र या ष हो एवं उसके साथ मिलने वाले शब्द में कहीं भी 'न' हो तथा उन दोनों के बीच कोई भी स्वर क, ख, ग, घ, प, फ, ब, भ, म, य, र, ल, व में से कोई भी वर्ण हो, तो सन्धि होने पर 'न' के स्थान पर 'ण' हो

टिप्पणी

जाता है। जब द् के साथ क, ख, त, थ, प, फ, श, ष, स, ह का मिलन होता है, तब द की जगह पर त् बन जाता है।

उदाहरण– राम + अयन = रामायण

परि + नाम = परिणाम

नार + अयन = नारायण

संसद् + सदस्य = संसत्सदस्य

तद् + पर = तत्पर

सद् + कार = सत्कार

विसर्ग संधि

विसर्ग के बाद जब स्वर या व्यंजन आ जाये, तब जो परिवर्तन होता है, उसे विसर्ग संधि कहते हैं।

उदाहरण– मनः + अनुकूल = मनोनुकूल

निः + अक्षर = निरक्षर

निः + पाप =निष्पाप

विसर्ग संधि के 10 नियम होते हैं–

(1) विसर्ग के साथ च या छ के मिलन से विसर्ग के जगह पर 'श' बन जाता है। विसर्ग के पहले अगर 'अ' और बाद में भी 'अ' अथवा वर्गों के तीसरे, चौथे, पांचवें वर्ण, अथवा य, र, ल, व हो तो विसर्ग का 'ओ' हो जाता है।

उदाहरण– मनः + अनुकूल = मनोनुकूल

अधः + गति = अधोगति

मनः + बल = मनोबल

निः + चय = निश्चय

दुः + चरित्र = दुश्चरित्र

ज्योतिः + चक्र = ज्योतिश्चक्र

निः + छल = निश्छल

विच्छेद–

तपश्चर्या = तपः + चर्या

अन्तश्चेतना = अन्तः + चेतना

हरिश्चन्द्र = हरिः + चन्द्र

अन्तश्चक्षु = अन्तः + चक्षु

(2) विसर्ग से पहले अ, आ को छोड़कर कोई स्वर हो और बाद में भी कोई स्वर हो, वर्ग के तीसरे, चौथे, पांचवें वर्ण अथवा य्, र, ल, व, ह में से कोई हो तो विसर्ग का

र या ` हो जाता है। विसर्ग के साथ 'श' के मेल पर विसर्ग के स्थान पर भी 'श्' बन जाता है।

उदाहरण– दुः + शासन = दुश्शासन

यशः + शरीर = यशश्शरीर

निः + शुल्क = निश्शुल्क

विच्छेद–

निश्वास = निः + ष्वास

चतुश्श्लोकी = चतुः + श्लोकी

निश्शंक = निः + शंक

निः + आहार = निराहार

निः + आशा = निराशा

निः + धन = निर्धन

(3) विसर्ग से पहले कोई स्वर हो और बाद में च, छ या श हो तो विसर्ग का श हो जाता है। विसर्ग के साथ ट, ठ या ष के मेल पर विसर्ग के स्थान पर 'ष' बन जाता है।

उदाहरण– धनुः + टंकार = धनुष्टंकार

चतुः + टीका = चतुष्टीका

चतुः + षष्टि = चतुषष्टि

निः + चल = निश्चल

निः + छल = निश्छल

दुः + शासन = दुश्शासन

(4) विसर्ग के बाद यदि त या स हो तो विसर्ग स् बन जाता है। यदि विसर्ग के पहले वाले वर्ण में अ या आ के अतिरिक्त अन्य कोई स्वर हो तथा विसर्ग के साथ मिलने वाले शब्द का प्रथम वर्ण क, ख, प, फ में से कोई भी हो तो विसर्ग के स्थान पर 'ष' बन जायेगा।

उदाहरण– निः + कलंक = निष्कलंक

दुः + कर = दुष्कर

आविः + कार = आविष्कार

चतुः + पथ = चतुष्पथ

निः + फल = निष्फल

विच्छेद–

निष्काम = निः + काम

निष्प्रयोजन = निः + प्रयोजन

बहिष्कार = बहिः + कार

निष्कपट = निः + कपट

टिप्पणी

(5) विसर्ग से पहले इ, उ और बाद में क, ख, ट, ठ, प, फ में से कोई वर्ण हो तो विसर्ग का ष हो जाता है। यदि विसर्ग के पहले वाले वर्ण में अ या आ का स्वर हो तथा विसर्ग के बाद क, ख, प, फ हो तो सन्धि होने पर विसर्ग भी ज्यों का त्यों बना रहेगा।

उदाहरण– अधः + पतन = अधःपतन

प्रातः + काल = प्रातःकाल

अन्तः + पुर = अन्तःपुर

वयः + क्रम = वयःक्रम

विच्छेद–

रजःकण = रजः + कण

तपःपूत = तपः + पूत

पयःपान = पयः + पान

अन्तःकरण = अन्तः + करण

अपवाद–

भाः + कर = भास्कर

नमः + कार = नमस्कार

पुरः + कार = पुरस्कार

श्रेयः + कर = श्रेयस्कर

बृहः + पति = बृहस्पति

पुरः + कृत = पुरस्कृत

तिरः + कार = तिरस्कार

निः + कलंक = निष्कलंक

चतुः + पाद = चतुष्पाद

निः + फल = निष्फल

(6) विसर्ग से पहले अ, आ हो और बाद में कोई भिन्न स्वर हो तो विसर्ग का लोप हो जाता है। विसर्ग के साथ त या थ के मेल पर विसर्ग के स्थान पर 'स' बन जायेगा।

उदाहरण– अन्तः + तल = अन्तस्तल

निः + ताप = निस्ताप

दुः + तर = दुस्तर

निः + तारण = निस्तारण

विच्छेद–

निस्तेज = निः + तेज

नमस्ते = नमः + ते

मनस्ताप = मनः + ताप

बहिस्थल = बहिः + थल

निः + रोग = निरोग

निः + रस = नीरस

(7) विसर्ग के बाद क, ख अथवा प, फ होने पर विसर्ग में कोई परिवर्तन नहीं होता। विसर्ग के साथ 'स' के मेल पर विसर्ग के स्थान पर 'स्' बन जाता है।

उदाहरण– निः + सन्देह = निस्सन्देह

दुः + साहस = दुस्साहस

निः + स्वार्थ = निस्स्वार्थ

दुः + स्वप्न = दुस्स्वप्न

विच्छेद–

निस्संतान = निः + संतान

दुस्साध्य = दुः + साध्य

मनस्संताप = मनः + संताप

पुनरस्मरण = पुनः + स्मरण

अंतः + करण = अंतःकरण

(8) यदि विसर्ग के पहले वाले वर्ण में 'इ' व 'उ' का स्वर हो, तथा विसर्ग के बाद 'र' हो, तो सन्धि होने पर विसर्ग का तो लोप हो जायेगा, साथ ही 'इ' व 'उ' की मात्रा 'ई' व 'ऊ' की हो जायेगी।

उदाहरण– निः + रस = नीरस

निः + रव = नीरव

निः + रोग = नीरोग

दुः + राज = दूराज

विच्छेद–

नीरज = निः + रज

नीरन्द्र = निः + रन्द्र

चक्षूरोग = चक्षुः + रोग

दूरम्य = दुः + रम्य

टिप्पणी

(9) विसर्ग के पहले वाले वर्ण में 'अ' का स्वर हो, तथा विसर्ग के साथ अ के अतिरिक्त अन्य किसी स्वर के मेल पर विसर्ग का लोप हो जायेगा तथा अन्य कोई परिवर्तन नहीं होगा।

टिप्पणी

उदाहरण– अतः + एव = अतएव

मनः + उच्छेद = मनउच्छेद

पयः + आदि = पयआदि

ततः + एव = ततएव

(10) विसर्ग के पहले वाले वर्ण में 'अ' का स्वर हो तथा विसर्ग के साथ अ, ग, घ, ङ, ञ, झ, ज, ड, ढ, ण, द, ध, न, ब, भ, म, य, र, ल, व, ह में से किसी भी वर्ण के मेल पर विसर्ग के स्थान पर 'ओ' बन जायेगा।

उदाहरण– मनः + अभिलाषा = मनोभिलाषा

सरः + ज = सरोज

वयः + वृद्ध = वयोवृद्ध

यशः + धरा = यशोधरा

मनः + योग = मनोयोग

अधः + भाग = अधोभाग

तपः + बल = तपोबल

मनः + रंजन = मनोरंजन

विच्छेद–

मनोनुकूल = मनः + अनुकूल

मनोहर = मनः + हर

तपोभूमि = तपः + भूमि

पुरोहित = पुरः + हित

यशोदा = यशः + दा

अधोवस्त्र = अधः + वस्त्र

अपवाद–

पुनः + अवलोकन = पुनरवलोकन

पुनः + ईक्षण = पुनरीक्षण

पुनः + उद्धार = पुनरुद्धार

पुनः + निर्माण = पुनर्निर्माण

अन्तः + द्वन्द्व = अन्तर्द्वन्द्व

अन्तः + देशीय = अन्तर्देशीय

अन्तः + यामी = अन्तर्यामी

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

5. संधि कितने प्रकार की होती है?

(क) दो (ख) तीन

(ग) चार (घ) पांच

6. 'उद्धरण' का संधि–विच्छेद कौन–सा होगा?

(क) उद् + धरण (ख) उत् + हरण

(ग) उत् + धरण (घ) उद्ध + रण

3.5 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ख)
2. (क)
3. (ग)
4. (ग)
5. (ख)
6. (ख)

3.6 सारांश

भारतीय संस्कृति की साक्षात प्रतिमूर्ति डॉ. विवेकी राय मूलतः गंवई सरोकार के रचनाकार हैं। आंचलिक चेतना विवेकी राय के कथा साहित्य की एक विशेषता है। स्वातंत्र्योत्तर भारतीय ग्रामीण जीवन में परिलक्षित परिवर्तनों को इन्होंने अपने उपन्यासों एवं कहानियों में सशक्त ढंग से प्रस्तुत किया है। इनका रचनाकर्म नगरीय जीवन के ताप से तपाई गई मनोभूमि पर ग्रामीण जीवन के प्रति सहज राग की रस–वर्षा के समान है। गांव की माटी की सौंधी महक इनकी खास पहचान है।

अपने समस्त शोक–विषाद और तज्जन्य वेदना को कलम में डुबोकर विवेकी राय ने 'दीक्षा' नामक काव्य–पुस्तक की रचना की। शोक–संदर्भों को लेकर 'देहरी के पार' नामक उपन्यास लिखा। विवेकी राय का सृजन संयोगाधीन है, वह धर्म–कर्म विपाक है। विवेकी जी ने पूरी तरह आम मानव का जीवन निर्वाह कर अपने मर्मस्पर्शी साहित्य–सृजन की बदौलत साहित्य में एक अलग विलक्षण स्थान प्राप्त किया। समाज की अधिव्याधि के दुर्निवार उपद्रवों पर भी विवेकी राय ने खूब लिखा। इनकी रचनाधर्मिता के कारण हम इन्हें प्रेमचंद और फणीश्वरनाथ रेणु के बीच का स्थान दे सकते हैं।

फागुन ने प्रकृति को हरीतिमा व विकास से ऐसे पल्लवित कर दिया है कि लोग इस महिम उष्णता में एक दूसरे के प्रति अपने राग–द्वेष, क्रोध, घृणा व वैमनस्य को जैसे

टिप्पणी

भूलकर एक हो उठे हैं। सभी पुष्प इस विजय के साक्षी हैं। आम के बौर लिए फगुनाहट अपनी पूरी तीव्रता के साथ आता है और गुजर जाता है। यह आवागमन का तीव्र प्रवाह किसी को चोटिल नहीं करता; किसी को घायल नहीं करता। फगुनाहट अपने साथ जीवन की एक नयी तरंग लेकर आती है और सबको मस्ती से सराबोर करती है।

चली फगुनाहट बौरे आम निबंध का मूल विषय फागुन मास का उल्लास और जीवंतता है जिसकी खोज मनुष्य से लेकर प्रकृति तक के बीच की गई है। फागुन मास वसंत से ग्रीष्म के संक्रमण का काल होता है जब हम न केवल अपने जीवन बल्कि प्रकृति में भी ऊष्मा, गति व चपलता का अनुभव करने लगते हैं। लेखक ने इस निबंधा में आद्योपांत कथित विषय का प्रतिपादन बड़ी खूबसूरती से किया है। प्रकृति और मनुष्य के बीच जीवन के सजीव कार्य व्यापार को लेखक ने बड़ी खूबसूरती से सजीव जीवंत कर दिया है। वस्तुतः फागुन प्रकृति में ही नहीं, मानवीय स्वभाव में भी परिलक्षित होता है। लेखक ने इसी परिवर्तन को पूरे निबंध का मूलकथ्य बनाकर प्रस्तुत किया है।

डॉ. जैन ने कई पुस्तकें लिखी हैं जिनमें विश्व व प्रकृति निधि भारत ने 'हरी राह', मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी ने 'जिज्ञासाओं के गर्भ में' वैज्ञानिक चेतना, प्रायोगिक भौतिकी व महाविद्यालयीन भौतिकी आदि है। 'सोसाइटी फॉर दी एडवांसमेंट ऑफ साइन्स एण्ड टेक्नोलॉजी, कराईकुडी (तमिलनाडु) ने डॉ. जैन के जैव आधारित ऊर्जा स्रोत से संबंधित अनुसंधान को पुरस्कृत किया है। वर्ष 2015 में विपिन जोशी स्मारक समिति इटारसी ने आपको शिखर सम्मान 'सरस्वती पुत्र' से सम्मानित किया है।

बरसात के मौसम में जब कभी आसमान में काले–काले बादल छाए होते हैं तो मन खुशी से खिल उठता है तभी मगर हल्की–फुल्की बारिश की फुहारे पड़ने लगे तो सभी झूम उठते है। बारिश के बंद होने के बाद जब सूर्य की किरणें बादलों से टकराती है तो आकाश में रंग–बिरंगी आकृति दिखाई देती है यही आकृति इन्द्रधनुष कहलाती है। इन्द्रधनुष के निकलते ही मोर नाचने लगते है। चारों तरफ मानो खुशी का माहौल बन जाता है।

संधि दो शब्दों से मिलकर बना है–सम् + धि। जिसका अर्थ होता है 'मिलना'। हमारी हिंदी भाषा में संधि के द्वारा पूरे शब्दों को लिखने की परम्परा नहीं है। लेकिन संस्कृत में संधि के बिना कोई काम नहीं चलता। संस्कृत की व्याकरण की परम्परा बहुत पुरानी है। संस्कृत भाषा को अच्छी तरह जानने के लिए व्याकरण को पढ़ना जरूरी है। शब्द रचना में भी संधियां काम करती हैं।

जब दो शब्द मिलते हैं, तो पहले शब्द की अंतिम ध्वनि और दूसरे शब्द की पहली ध्वनि आपस में मिलकर जो परिवर्तन लाती हैं, उसे संधि कहते हैं। अर्थात संधि किये गये शब्दों को अलग–अलग करके पहले की तरह करना ही संधि विच्छेद कहलाता है। अर्थात, जब दो शब्द आपस में मिलकर कोई तीसरा शब्द बनाते हैं, तब जो परिवर्तन होता है, उसे संधि कहते हैं।

3.7 मुख्य शब्दावली

टिप्पणी

- **स्वातंत्र्योत्तर** : स्वतंत्रता के बाद।
- **प्रदेय** : योगदान।
- **आंचलिक** : अंचल संबंधी।
- **प्रपंच** : झंझट, जंजाल।
- **तज्जन्य** : उससे उपजी हुई।
- **तारतम्य** : सामंजस्य, मेल।
- **द्वितीयक** : दूसरा।
- **विच्छेद** : अलग करना।

3.8 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. विवेकी राय के प्रकाशित निबंध–संग्रहों के नाम लिखिए।
2. 'विवेकी राय मूलतः गंवई सरोकार के लेखक हैं'– स्पष्ट कीजिए।
3. 'चली फगुनाहट बौरे आम' की विषयवस्तु क्या है?
4. डॉ. कपूरमल जैन की प्रमुख कृतियां कौन–सी हैं?
5. 'इन्द्रधनुष का रहस्य' निबंध का सार लिखिए।
6. दीर्घ संधि और गुण संधि का अर्थ उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. साहित्यसेवी विवेकी राय के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का परिचय दीजिए।
2. 'चली फगुनाहट बौरे आम' निबंध का समीक्षात्मक विश्लेषण कीजिए।
3. डॉ. कपूरमल जैन के योगदान का एक विज्ञान–लेखक के तौर पर मूल्यांकन कीजिए।
4. 'इन्द्रधनुष का रहस्य' की प्रासंगिकता और महत्व बताइए।
5. संधि का आशय स्पष्ट करते हुए उसके प्रमुख प्रकारों की उदाहरण सहित विवेचना कीजिए।

3.9 सहायक पाठ्य सामग्री

टिप्पणी

1. सत्यकाम, *माटी की महक : विवेकी राय, व्यक्तित्व और कृतित्व*, अभिरुचि प्रकाशन : 1994
2. डॉ. कपूरमल जैन, *जिज्ञासाओं के गर्भ में वैज्ञानिक चेतना*, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
3. डॉ. मीनाक्षी अग्रवाल, *आदर्श हिन्दी व्याकरण*, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली : 2008

इकाई 4 हिन्दी भाषा

टिप्पणी

संरचना

4.0 परिचय
4.1 उद्देश्य
4.2 सपनों की उड़ान (प्रेरक निबन्ध) : ए.पी.जे. अब्दुल कलाम
  4.2.1 सपनों की उड़ान (प्रेरक निबन्ध) : मूल पाठ
  4.2.2 सपनों की उड़ान (प्रेरक निबन्ध) का सार
  4.2.3 सपनों की उड़ान (प्रेरक निबन्ध) : व्याख्यांश
  4.2.4 सपनों की उड़ान (प्रेरक निबन्ध) का समीक्षात्मक अध्ययन
4.3 हमारा सौरमण्डल (संकलित)
4.4 प्रमुख वैज्ञानिक आविष्कार (संकलित)
4.5 समास (संकलित)
4.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
4.7 सारांश
4.8 मुख्य शब्दावली
4.9 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
4.10 सहायक पाठ्य सामग्री

4.0 परिचय

सपनों की उड़ान डॉ. ए.पी.जे अब्दुल कलाम के जीवन की ही कहानी नहीं है, बल्कि यह डॉ. कलाम के स्वयं के ऊपर उठने और उनके व्यक्तित्व एवं पेशेवर संघर्षों की कहानी के साथ अग्नि, पृथ्वी, त्रिशूल और नाग मिसाइलों के विकास की भी कहानी है, जिसने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत को मिसाइल सम्पन्न देश के रूप में जगह दिलायी। यह टेक्नोलॉजी एवं रक्षा के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता हासिल करने की आजाद भारत की भी कहानी है। अब्दुल कलाम राजनीतिक क्षेत्र के व्यक्ति नहीं थे, लेकिन राष्ट्रवादी सोच और राष्ट्रपति बनने के बाद भारत की कल्याण संबंधी नीतियों के कारण इन्हें कुछ हद तक राजनीतिक दृष्टि से सम्पन्न माना जा सकता है। इन्होंने अपनी पुस्तक 'इण्डिया 2020' में अपना दृष्टिकोण स्पष्ट किया है। वे भारत को अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में दुनिया का सिरमौर राष्ट्र बनते देखना चाहते थे और इसके लिए इनके पास एक कार्ययोजना भी थी। परमाणु हथियारों के क्षेत्र में वे भारत को सुपर पॉवर बनाने की बात सोचते रहे थे और विज्ञान के अन्य क्षेत्रों में भी तकनीकी विकास चाहते थे। उनका जीवन संघर्ष प्रेरणादायी है।

ब्रह्माण्ड में वैसे तो कई सौरमण्डल हैं, लेकिन हमारा सौरमण्डल सभी से अलग है, जिसका आकार एक तश्तरी जैसा है। हमारे सौरमण्डल में सूर्य और वे सभी खगोलीय पिंड जो सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाते हैं, सम्मलित हैं, जो एक दूसरे से गुरुत्वाकर्षण बल द्वारा बंधे हैं। कॉपरनिकस ने सबसे पहले यह सिद्धांत दिया था कि सभी ग्रह सूर्य के चारों ओर घूमते हैं। सौरमण्डल में सूर्य का आकार सब से बड़ा है, जिसका प्रभुत्व है, क्योंकि सौरमण्डल निकाय के द्रव्य का लगभग 99.999 द्रव्य सूर्य में

टिप्पणी

निहित है। सौरमण्डल के समस्त ऊर्जा का स्रोत भी सूर्य ही है। सौरमण्डल के केन्द्र में सूर्य है तथा सबसे बाहरी सीमा पर नेप्च्यून ग्रह है। नेपच्यून के परे प्लूटो जैसे बौने ग्रहों के अलावा धूमकेतु भी आते हैं। सूर्य सौरमण्डल का प्रधान है और इसके केंद्र में स्थित एक तारा है। सूर्य का व्यास 13 लाख 92 हजार किलोमीटर है, जो पृथ्वी के व्यास का लगभग 110 गुना है। सूर्य पृथ्वी से 13 लाख गुना बड़ा है, और पृथ्वी को सूर्यताप का 2 अरबवां भाग मिलता है। पृथ्वी से सूर्य की दूरी 149 लाख कि.मी है। सूर्य प्रकाश को पृथ्वी में आने में 8 मिनिट 18 सेकंड लगते हैं। सूर्य से दिखाई देने वाली सतह को "प्रकाश मंडल" कहते हैं। ग्रह सूर्य से उनकी दूरी के बढ़ते क्रम में हैं– बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल, बृहस्पति, शनि, अरुण (यूरेनस) एवं वरुण (नेप्च्यून)। शुक्र सूर्य से सबसे करीब है और नेप्च्यून सबसे दूर।

इस इकाई में भारत के पूर्व राष्ट्रपति और मिसाइलमैन डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के जीवन–संघर्ष और योगदान के बारे में बताते हुए संकलित निबंध 'सपनों की उड़ान' का समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। साथ ही हमारे सौरमंडल और विश्व के प्रमुख वैज्ञानिक आविष्कारों के बारे में विस्तार से चर्चा करते हुए व्याकरण के अंतर्गत समास का भी अध्ययन किया गया है।

4.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के जीवन–संघर्ष और व्यक्तित्व से परिचित हो पाएंगे;
- प्रेरक निबंध 'सपनों की उड़ान' के मूल पाठ का अध्ययन करेंगे;
- 'सपनों की उड़ान' के अंशों की व्याख्या कर पाएंगे;
- 'सपनों की उड़ान' का समीक्षात्मक विश्लेषण कर पाएंगे;
- हमारे सौरमंडल के स्वरूप एवं संरचना से अवगत हो पाएंगे;
- दुनिया को बदलने वाले प्रमुख वैज्ञानिक आविष्कारों के विषय में जान पाएंगे;
- व्याकरण में समास और उसके भेदों को समझ पाएंगे।

4.2 सपनों की उड़ान (प्रेरक निबन्ध) : ए.पी.जे. अब्दुल कलाम

सपनों को उड़ान भरने में वक्त नहीं लगता जब सपनों के पंखों को निडर हौसलों के हवा का सहारा मिल जाये।

एपीजे अब्दुल कलाम देश के विख्यात भारतीय वैज्ञानिक और भारत के 11वें राष्ट्रपति थे। उन्होंने परमाणु परीक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। वे मिसाइल विकास कार्यक्रम से भी जुड़े रहे अतः उन्हें 'मिसाइल मैन' कहा जाता है।

टिप्पणी

बचपन और युवावस्था

अब्दुल कलाम का जन्म 15 अक्टूबर 1931 तमिलनाडु राज्य के धनुषकोडी गाँव, रामेश्वरम के तमिल मुस्लिम परिवार में हुआ था। उनका पूरा नाम डॉक्टर अबुल पाकिर जैनुल्लाब्दीन अब्दुल कलाम है। उनके पिता जैनुलाब्दीन एक नाविक थे। उनकी माँ आसिंमा एक गृहिणी थी। कलाम अपने परिवार में चार भाइयों और एक बहन में सबसे छोटे थे। परिवार की आर्थिक दशा ठीक नहीं थी। अतः कम उम्र में ही कलाम को काम करना पड़ा। अपने पिता की आर्थिक मदद हेतु समाचार पत्र वितरित करने का कार्य किया।

रामेश्वरम मंदिर के पुजारी कलाम के पिता आपस में दोस्त थे अतः दोनों का काफी समय धर्म और अध्ययन की चर्चा में व्यतीत होता था। इसका प्रभाव कलाम पर स्पष्ट देखा जा सकता है। धर्म और जाति से उठ कर वे सभी धर्मों का आदर करते थे। अपने स्कूल के समय कलाम एक सामान्य विद्यार्थी थे। लेकिन सीखने की प्रवृत्ति उनके अन्दर शुरू से ही विद्यमान थी। वे अपना काफी समय अध्ययन में देते थे। उन्होंने श्वार्ट्र हायर सेकेंडरी स्कूल(Schwartz Higher Secondary School) रामनाथपुरम में अपनी शिक्षा पूरी की। इसके बाद 1954 में कलाम ने सेंट जोसेफ कॉलेज तिरुचिरापल्ली में भौतिक विज्ञान में स्नातक की उपाधि ग्रहण की। वर्ष 1955 में वे मद्रास इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी में एयरोस्पेस इंजीनियरिंग का अध्ययन करने के लिए मद्रास चले गये।

कलाम रक्षा अनुसंधान एवं विकास सेवा (डीआरडीओ) के सदस्य बने और एक वैज्ञानिक के रूप में कार्य किया। जिसके बाद वह रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन (प्रेस सूचना ब्यूरो, भारत सरकार) द्वारा एयरोनॉटिकल विकास प्रतिष्ठान में शामिल हुए। उन्होंने एक छोटे से हेलीकॉप्टर डिजाइन करके अपने करियर की शुरुआत की।

साहित्य और संस्कृति

डॉक्टर कलाम ने अपनी जीवनी 'विग्स आफ फायर' में युवाओं का मार्ग प्रशस्त किया है तो अपनी पुस्तक 'गाईडिंग सोल्स डायलॉग्स ऑफ द परपज ऑफ लाइफ' आत्मिक विचारों को रेखांकित किया है अपनी एक अन्य पुस्तक 'इंडिया 2020' अ विज़न फार न्यू मिलेनियम पर आधारित है। इसके अतिरिक्त वे तमिल भाषा में कवितायें भी लिखते थे साथ ही वाद्ययंत्र वीणा भी बजाते थे। डॉ. कलाम को कर्नाटक भक्ति संगीत में भी काफी रुचि थी। उन्हें 2003 और 2006 में 'एमटीवी आइकन ऑफ डीयर' के लिए नामांकित किया गया था। 2011 में 'आई एम कलाम' के नाम पर एक बहुचर्चित फिल्म भी बनी, जो एक बच्चे की सकारात्मक सोच पर आधारित है।

महत्वपूर्ण उपलब्धियां

डॉ. कलाम विख्यात अंतरिक्ष वैज्ञानिक विक्रम साराभाई के तहत काम करने वाली समिति 'इंडियन नेशनल कमेटी फार स्पेस रिसर्च' का हिस्सा भी रहे। 1969 में कलाम को 'भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) में स्थानांतरित कर दिया गया। जहाँ वह भारत के पहले उपग्रह प्रक्षेपण वाहन (एसएलवी–तृतीय) के प्रोजेक्ट डायरेक्टर थे। उन्होंने जुलाई 1980 में सफलतापूर्वक रोहिणी उपग्रह को स्थापित किया। कलाम ने

टिप्पणी

1965 में डीआरडीओ पर स्वतंत्र रूप से एक विस्तार योग्य रॉकेट परियोजना पर काम शुरू किया था।

डॉ. कलाम ने प्रधानमंत्री के मुख्य वैज्ञानिक सलाहकार और रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन के सचिव के रूप में जुलाई 1992 से दिसम्बर 1999 तक कार्य किया। पोखरण–2 परमाणु परीक्षण में उन्होंने एक गहन राजनीतिक और तकनीकी भूमिका निभाई। कलाम ने मुख्य परियोजना समन्वयक, राजगोपाल चिदंबरम के साथ परीक्षण चरण के दौरान भी कार्य किया।

वह सत्तारूढ़ पार्टी भारतीय जनता पार्टी और विपक्ष की भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी में सहयोग से 2002 से 2007 तक भारत के 11वें राष्ट्रपति बने। उन्हें व्यापक रूप से ''पीपुल्स राष्ट्रपति'' के रूप में जाता है। राष्ट्रपति अवधि के बाद उन्होंने शिक्षा, लेखन और सार्वजनिक सेवा में उल्लेखनीय कार्य किया। वे भारत के सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'भारत रत्न' सहित कई प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित किये गये।

एक सफल व्यक्तित्व

डॉ. कलाम एक राजनैतिक व्यक्ति न होते हुए भी सदैव देश के विकास की बात करते थे। वे देश को एक शक्तिशाली राष्ट्र बनाना चाहते थे। उसके लिए उनका अथक प्रयास सराहनीय है। मिसाइल और परमाणु अनुसन्धान के क्षेत्र में उनकी सफलता इसका प्रमाण है। उन्होंने युवा पीढ़ी को जो राह दिखाई। उससे हर युवा उनको अपना आदर्श मानता है। उन्होंने युवा शक्ति को एक नई दिशा दी उनका अनुभव सामान्य लोगों से हटकर था। उनके अनुसार यदि तुम सूरज की तरह चमकना चाहते हो तो सूरज की तरह जलना होगा। जिंदगी के प्रति उनकी सोच क्रांतिकारी थी। अध्ययन और कार्य के प्रति लगन और निष्ठा ही उनकी शक्ति थी।

मृत्यु

27 जुलाई, 1915 को इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट शिलांग में एक व्याख्यान देने के दौरान उन्हें दिल का दौरा पड़ा और वे बेहोश होकर गिर गए। शाम साढ़े छह बजे गम्भीर हालत में उन्हें ढोधानी अस्पताल के आईसीयू ले जाया गया। डाक्टरों की एक टीम ने उनको बचाने का बहुत प्रयास किया लेकिन वे उन्हें नहीं बचा सके और दो घंटे बाद उनकी मृत्यु हो गयी। उनका 30 जुलाई, 2015 को रामेश्वर में अपने गृहनगर में आयोजित अंतिम संस्कार समारोह में राष्ट्रीय स्तर के गणमान्य व्यक्ति सहित हजारों लोगों ने भाग लिया, जहां उन्हें पूरे राजकीय सम्मान के साथ दफनाया गया।

जैसे आप सपने देखते हैं और लक्ष्य निर्धारित करते हैं, सही दिशा में बढ़ने के लिए एक योजना बनाना और उसके अनुसार काम करना आवश्यक है। एक योजना तैयार करना और संगठित होना आपके सपने को प्राप्त करने की दिशा में शुरुआती कदम है। बड़ा सपना देखें और उसी को प्राप्त करने के लिए हर बाधा को पार करें।

सपनों की उड़ान (प्रेरक निबन्ध) : ए.पी.जे. अब्दुल कलाम

सपने वो जो सोने ही नहीं देते।

टिप्पणी

एक प्रोफेसर से मिसाइलमैन और फिर दुनिया के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश भारत के राष्ट्रपति पद तक का सफल सहजता से तय करने वाले डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम बच्चों से कहा करते थे सपने वो नहीं जो सोने के बाद आते हैं। सपने तो वो हैं जो सोने ही नहीं देते। ऐसा कहने के प्रति उनका भाव यही रहा कि बच्चे सपने जरूर देखें लेकिन खुली आंखों से। खुद अपने देश के विकास के सपने देखने की उन्होंने बच्चों को हमेशा प्रेरणा दी। बच्चों की सोच वैज्ञानिक बने, इसके लिए वह जीवन भर प्रयास करते रहे। जिस दौर में यह राष्ट्रपति रहे, तब भी किसी विश्वविद्यालय अथवा ऐसे समारोह में जहाँ भी उन्हें छात्र–छात्राएं मिलते तो वह एक अध्यापक की तरह पेश आते। उन्होंने नई पीढ़ी के दम पर ही भारत के महाशक्ति बनने का सपना संजोया। यह देश डा. कलाम के सपनों को पूरा करने की दिशा में लगातार आगे बढ़ रहा है। उन्हें लगता है कि यह देश केवल लाल बत्ती से गुजरते वीआईपी का नहीं है। यह देश केवल जुगाड़ से पद पा लेने वालों के लिए नहीं है। यह देश परिवारों से अवतरित हुए शासकों का नहीं है। यह देश गुदड़ी के लालों का भी है। यहाँ की जमीन केवल ट्रांसप्लांट कर दिए गए बड़े वृक्षों के लिए नहीं है बल्कि यहाँ की धरती बीज को अंकुर बन जाने का अवसर देती है। डॉ. कलाम से मोहब्बत कर रही जनता दरअसल उसी बीज के बड़े बन जाने का उत्सव है, उसी सिलसिले का एक हिस्सा है।

डॉ. कलाम हिन्दुस्तान के आसमान पर तब उभरे जब निराशा और नाउम्मीदी की धुंध छाई हुई थी। बारूद के ढेर पर बैठी दुनिया एटम बम बनाकर हमें आँख दिखा रही थी। चीन और पाकिस्तान से युद्ध का दंश हम झेल चुके थे। हमारी ही कोख से उपजा हमारा पड़ोसी हमारी नाक में दम किए हुआ था। तब एक–एक कर हमें अग्नि, पृथ्वी और आकाश जैसी मिसाइलें मिलीं। पोखरण में परमाणु की धमक मिली और मिला मिसाइलमैन के रूप में पुरुषार्थ और स्वाभिमान का प्रतीक। इस पुरुषार्थ को शक्ति के इस अर्जन को उन्होंने जो शब्द दिए वो भी बाकमाल थे। हम शांति चाहते हैं। शक्ति ही शक्ति का सम्मान करती है। इसीलिए शांति बनाए रखने के लिए शक्ति का ये अर्जन जरूरी है।

उनके जीवन में मिसाइल और वीणा का योग महज संयोग भर नहीं था। हम मिसाइल बनाकर वीणा बजाने में मशगूल हो सकते थे क्योंकि अब कुछ समय हमें कोई परेशान नहीं करेगा। यह विडंबना ही सही लेकिन सच है। मानवीय मूल्यों के संवर्धन के लिए शांति आवश्यक है और शांति बारास्ता शक्ति ही आ रही है तो ऐसे ही सही। इसीलिए डॉ. कलाम उस भारत के प्रतीक बने जो शक्ति और शांति के संतुलन को जानता है और दोनों को साथ लेकर चलता है।

उन्होंने राष्ट्रपति के पद को महज शोभा का और औपचारिक नहीं बने रहने दिया। वे 'पाश' की कविता को बहुत आमफहम अंदाज़ में जनता तक लगातार पहुंचाते रहे। हमें सपने देखने चाहिए, हम अपने ही नहीं देखेंगे तो उन्हें हासिल करने के लिए आगे कैसे बढ़ेंगे?

सबसे खतरनाक होता है
मुर्दा शांति से भर जाना
ना होना तड़प का

टिप्पणी

सब कुछ सहन कर जाना
घर से निकलना काम पर
और काम से लौटकर घर आना
सबसे खतरनाक होता है,
हमारे सपनों का मर जाना –(पाश)

रामेश्वरम के एक साधारण परिवार में जन्मा एक इनसान अपने कर्म से फरिश्ता बन गया और कलाम को पा गया। उसने सपने देखे और दिखाए। अपने सपने पूरे किए और हमें प्रेरणा दी कि हम भी कर सकते हैं। क्योंकि हर व्यक्ति की कुछ महत्वाकांक्षा या इच्छा होती है जैसे जब हम बच्चे थे तो हम कई चीजों को देखकर रोमांचित हो उठते थे और बड़े होकर हम उन्हें प्राप्त करने की इच्छा रखते थे। जैसे–जैसे हम बड़े होते हैं वैसे–वैसे कुछ सपने और आकांक्षाएं बरकरार रहती है और हम उन्हें प्राप्त करने के लिए कड़ी मेहनत करते हैं। जीवन में एक सपना। लक्ष्य रखना बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि जब आप अपने जीवन में इसे हासिल करने के लिए कड़ी मेहनत करेंगे तभी आप इसे प्राप्त कर पाएंगे। क्योंकि किसी ने सच ही कहा है कि ''जब आप अपने डर के आगे अपने सपनों को ज्यादा महत्व देंगे तो चमत्कार हो सकते हैं।'' सपने आवश्यक है लेकिन यह केवल तभी हो सकता है जब आप अपने पूरे दिल से बड़ा सपना देखें। तभी बड़े सपने को हासिल करने में सक्षम होंगे।

डॉ. कलाम को जनता का राष्ट्रपति कहा गया। 1329 एकड़ में फैला राष्ट्रपति भवन आम आदमी के लिए एक तिलिस्म जैसा ही रहा पर कलाम ने अपनी तरफ से इसका दरवाजा खोले रखने की कोशिश की और उसके माहौल को औपचारिकताओं से बोझिल नहीं रहने दिया। उनके कार्यकाल में राष्ट्रपति भवन साधारण लोगों को आमदरफ्त और बच्चों की खिलखिलाहट से गूंजता रहा।

सबसे बड़ी बात यह कि इस 'लार्जर दैन लाइफ' पद को उन्होंने अपने व्यक्तित्व पर कभी हावी नहीं होने दिया। बहरहाल, राष्ट्रपति के रूप में उनके पास मोटे तौर पर दो विकल्प थे। एक तो यह कि कार्यपालिका प्रमुख के रूप में वे सरकार के कामकाज को लेकर सचेत रहें और जहां भी उसे रास्ते से इधर–उधर होते देखें, वहां अपनी मर्यादा में रहते हुए उसकी गलतियों का एहसास कराएं। दूसरा रास्ता राष्ट्रपति भवन को अकादमिक और वैज्ञानिक विमर्श का केन्द्र बनाने तथा एक दूरदर्शी अभिभावक के रूप में राष्ट्र के सामाजिक आर्थिक विकास का भविष्योन्मुख खाका खींचने का था। इसे उनकी शक्ति कहें या सीमा लेकिन 'लाभ का पद' संबंधी विधेयक को लौटने के निर्णय को छोड़ दें, तो आम तौर पर उन्होंने पहले वाले रास्ते से कतरा कर निकलना ही बेहतर समझा। राष्ट्रपति के रूप में अपने सामने आई 21 दया याचिकाओं में से 20 के संबंध में कोई फैसला न करने को लेकर उन्हें आलोचनाओं का सामना करना पड़ा।

23 मई, 2005 को अपनी रूस यात्रा के दौरान उन्होंने मंत्रिमंडल की सलाह पर बिहार विधान सभा को भंग कर दिया था। बाद में सुप्रीम कोर्ट ने इस पर प्रतिकूल टिप्पणी की थी। कलाम ने काफी दिनों बाद खुलासा किया कि इस टिप्पणी के बाद वे अपना पद छोड़ देना चाहते थे। कुल मिलाकर राजनीतिक फैसलों से बचकर चलने

टिप्पणी

की उनकी प्रवृत्ति ही वह वजह बनी, जिसके चलते उनके बाद राष्ट्रपति का पद किसी राजनीतिक व्यक्ति को ही दिए जाने के विचार ने जोर पकड़ा। लेकिन राष्ट्रपति भवन से निकलने के बाद भी कलाम का व्यक्तित्व मुरछाया नहीं। एक अनुभवी बुजुर्ग की भूमिका में वापस आकर वे एक शिक्षक, जीवन–दर्शन के व्याख्याता और अराजनीतिक जननेता के रूप में लोकप्रिय हुए।

रक्षा विज्ञान के क्षेत्र में अनेक उपलब्धियों के अलावा वैज्ञानिकता प्रसार में भी उनका काफी बड़ा योगदान रहा। अपने लेखन और भाषणों के जरिए वे जीवन में वैज्ञानिक दृष्टि अपनाने पर जोर देते रहे। उनका मानना था कि मनुष्य का विकास इसके बिना संभव नहीं है। 2020 तक भारत को एक विकसित राष्ट्र बनाने का स्वप्न एक आम भारतीय नागरिक की आकांक्षाओं की ही अभिव्यक्ति है। उन्होंने ठीक ही कहा कि सपने देखना कभी नहीं छोड़ना चाहिए। कलाम ने अपने आचरण से संदेश दिया कि मनुष्य की शक्ति उसके पद से आती है और यह भी एक श्रेष्ठ मनुष्य के निर्माण से ज्यादा बड़ा नैतिक और संवैधानिक दायित्व और कोई नहीं हो सकता।

आपके पास जीवन में एक बड़ा सपना हो सकता है लेकिन इसे प्राप्त करने के लिए आपको अल्पकालिक और दीर्घकालिक दोनों लक्ष्य निर्धारित करने होंगे और छोटे और स्थिर कदम उठाने होंगे। सपने हमारे भविष्य को संवारने में अहम भूमिका निभाते हैं। यह ठीक ही कहा गया है, ''यदि आप इसकी कल्पना कर सकते हैं तो आप इसे प्राप्त भी कर सकते हैं। यदि आप कोई सपना देख सकते हैं तो आप वैसा बन सकते हैं। इसलिए अगर आपका कोई सपना है तो उसे हासिल करने के लिए कड़ी मेहनत करें। आखिरी बार जब किसी ने आपसे कहा था कि सपने देखना बंद करो और काम करना शुरू करो? अगली बार जब कोई कहता है तो उन्हें सपने देखने की शक्ति बताएं कि आपके पास अपना उत्तर वापस देने के लिए यह सिद्धान्त है, केवल सपने देखने से मदद नहीं मिलेगी खुद पर विश्वास रखें और अपने सपनों से साकार करने के लिए अधिक से अधिक प्रयास करें।

4.2.1 सपनों की उड़ान (प्रेरक निबन्ध) : मूल पाठ

मनुष्य स्वभावतः स्वप्नदर्शी है। वह कल्पनाशील भी है। कल्पना के रेशमी धागों से मनुष्य अपने भविष्य के सुखमय स्वप्न सँजोता है। यह उसकी सहज प्रवृत्ति है। इन्हीं कल्पना प्रसूत स्वप्नों से वह अपने कार्य की दिशा निश्चित करता है और तद्नुसार व्यवहार करता है। अपने स्वर्णिम स्वप्नों को साकार करने का प्रयत्न करता है। कोमल कल्पनाएँ कोई स्वप्न सँजो सकती हैं, किंतु साकार वे ही स्वप्न हो पाते हैं जो यथार्थ स्थितियों के निकट होते हैं।

प्रख्यात कवि हरिवंशराय बच्चन ने निम्नांकित पंक्तियों में इस तथ्य को प्रस्तुत किया है–

कौन कहता है कि स्वप्नों
को न आने दे हृदय में,
देखते सब हैं इन्हें

टिप्पणी

अपनी उमर, अपने समय में,
स्वप्न आता स्वर्ग का, दृग–
कोरको में दीप्ति आती,
पंख लग जाते पगों को
ललकती उन्मुक्त छाती,
रास्ते का एक काँटा
पाँव का दिल चीर देता,
रक्त की दो बूँद गिरतीं,
एक दुनिया डूब जाती,
आँख में हो स्वर्ग लेकिन
पाँव पृथ्वी पर टिके हों,
कंटकों की इस अनोखी
सीख का सम्मान कर लें!'

धरती से जुड़कर स्वर्ग का स्वप्न देखने वाले कवि, कलाकार, वैज्ञानिक की तरह मैं डी.आर.डी.ओ. (डिफेंस रिसर्च एंड डेवलपमेंट आर्गनाइजेशन) से जुड़ गया। अर्थ और विदेश भ्रमण का मोह मनुष्य की सहज दुर्बलता है। इस दुर्बलता पर विजयी होना ही महानता है। डॉ. कलाम ने मानवीय दुर्बलताओं पर विजय पाकर देश–सेवा के उच्च आदर्श को प्रस्तुत किया। यह उदात्त आदर्श–पालन उनकी महानता का परिचायक है।

प्रायः मनुष्य तुच्छ स्वार्थों के लिए उच्च आदर्श की उपेक्षा कर देता है। उसकी व्यवसाय बुद्धि उसे तात्कालिक लाभ की ओर धकेलती है और वह उदात्त भावों का गला घोंटकर, मानव मूल्यों को त्यागकर–उच्च आदर्श पालन से विमुख हो जाता है। आदर्श पालन का सुफल उसे वरदान सिद्ध होता है। डॉ. कलाम के संदर्भ में भी यह बात सही है। निष्काम, निस्पृह भाव से देश–सेवा के लिए देश में ही रहने का निर्णय लेते समय डॉ. कलाम ने कभी सोचा भी न होगा कि उनकी निष्काम देशसेवा का फल उन्हें देश के राष्ट्रपति के पद पर कार्य करने के रूप में मिलेगा। बहुत संभव है कि यदि डॉ. कलाम अन्य सामान्य जनों की भाँति विदेश चले जाते तो शायद कहीं अधिक धन अर्जित कर लेते, किन्तु तब वे भारत के राष्ट्रपति होने का गौरव कदापि प्राप्त नहीं कर पाते। उल्लेखनीय है कि धन बहुत से लोग अर्जित कर लेते हैं, किंतु ऐसे महान पदों पर आसीन होना विरलों को ही नसीब होता है। निष्काम कर्मयोगी के प्रति प्रकृति कितना सदय होकर न्याय करती है, यह डॉ. कलाम की दुर्लभ एवं अपूर्व उपलब्धियों से स्वतः प्रमाणित है।

परिश्रमी और लगनशील व्यक्तित्व के धनी, प्रतिभाशाली वैज्ञानिक डॉ. अब्दुल कलाम ने डॉ. आर. वर्धराजन के निर्देशन में सुपरसोनिक टारगेट एअर क्राफ्ट बनाने का कार्य आरंभ किया। इस क्षेत्र में उन्होंने अनेक नवीन तकनीकियों की खोज की तथा एयरोनॉटिकल डेवलपमेंट बेंगलौर में कार्य किया। यहाँ पर वैज्ञानिकों विकास प्रतिष्ठान (ए.डी.ई.) में स्वदेशी 'होवर क्राफ्ट' को डिजाइन करने का कार्य उन्हें सौंपा गया। डॉ.

कलाम ने इस दायित्व को निष्ठापूर्वक पूर्ण किया था तथा उनकी टीम द्वारा विकसित किया गया होवर क्राफ्ट 'नंदी' नाम से अस्तित्व में आया। 'नंदी' की सफल उड़ान से प्रेरित होकर डॉ. कलाम ने उससे भी अधिक शक्तिशाली विमान बनाने का निश्चय किया।

टिप्पणी

डॉ. अब्दुल कलाम सन् 1962 से 1983 के मध्य 'भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) में अनेक पदों पर कार्यरत रहे। इस अवधि में उन्होंने अनेक प्रक्षेपास्त्र प्रणालियों पर कार्य किया। उनके कुशल मार्गदर्शन में 'रोहिणी' नामक उपग्रह सन् 1980 में कक्षस्थ हुआ। इस सफलता के लिए 25 जनवरी सन् 1981 को डॉ. कलाम 'पदम् भूषण' की उपाधि से अलंकृत किए गए। सन् 1982 में उन्होंने 'इंटीग्रेटेड गाइडेड मिसाइल डेवलपमेंट प्रोग्राम' (आई.जी.एम.डी.पी.) का कार्यभार ग्रहण किया। यहाँ कार्य करते हुए उन्होंने अनेक प्रकार की छोटी, बड़ी और मध्यम कोटि की मिसाइलों और प्रक्षेपास्त्रों का विकास किया। सामरिक महत्व की ये मिसाइलें राष्ट्रीय सुरक्षा की दृष्टि से विशेषतः महत्वपूर्ण सिद्ध हुई हैं। अपने मित्रों और सहयोगियों के मध्य मिसाइलमैन के नाम से चर्चित डॉ. कलाम की उपलब्धियों में जमीन से जमीन पर मार करने वाले इस प्रक्षेपास्त्र का सफल परीक्षण 27 जुलाई, 1983 को हुआ। इसकी सफलता से उत्साहित डॉ. कलाम ने सन् 1985 में 'त्रिशूल', सन् 1988 में 'पृथ्वी' और सन् 1990 में 'नाग' एवं 'आकाश' नामक प्रक्षेपास्त्र विकसित किए। इन अत्यन्त महत्वपूर्ण उपलब्धियों के लिए सन् 1990 में ही उन्हें 'पद्मभूषण' से अलंकृत किया गया। 25 नवम्बर, सन् 1997 को डॉ. अब्दुल कलाम 'भारत रत्न' की गरिमामय उपाधि से अलंकृत हुए। देश का यह सर्वोच्च सम्मान उनके महान व्यक्तित्व के अनुरूप था। मई 1998 में उनके कुशल निर्देशन में 'पोखरण' में अनेक परमाणु बम विस्फोट करवाए गए। इनकी अभूतपूर्व सिद्धि ने न केवल वैज्ञानिक कलाम की कीर्ति में चार चाँद लगाए, अपितु देशवासियों को भी सुरक्षा के संबंध में नया आत्मविश्वास दिया। पोखरण में हुए सफल परीक्षणों से डॉ. कलाम भारत में परमाणु अस्त्र एवं प्रक्षेपास्त्र चालन व्यवस्था के जनक के रूप में प्रख्यात हो गए।

डॉ. अब्दुल कलाम के जीवन में 18 जुलाई, सन् 2002 का दिन सर्वाधिक महत्वपूर्ण रहा। इस दिन वे विश्व के सबसे बड़े गणतंत्र के ग्यारहवें राष्ट्रपति बने। वैश्विक शक्तियों की भी अन्यतम सामरिक संबद्धता से सशंकित डॉ. कलाम ने देश की सुरक्षा के लिए जीवन अर्पित किया। यथार्थ के कठोर धरातल पर जीने वाले इस स्वप्नदर्शी का मन देश के गौरव और अस्मिता की रक्षा के लिए अत्यन्त सतर्क और चिन्तित था। उनकी सतर्कता और चिंता का बोध उनकी निम्नांकित पंक्ति से होता है–'हमें ऐसी दूरदर्शिता चाहिए एवं ऐसी दूसरी दृष्टि 2020 जिससे हमारा देश भारत आगामी बीस वर्षों में विकसित वैज्ञानिक देश में परिवर्तित हो जाए।'–देश के राष्ट्रपति के रूप में उनके संबोधन की ये पंक्तियाँ केवल उनका शब्द संदेश ही नहीं है, अपितु उनका स्वप्न भी है, जिसे साकार करने के लिए उनकी वैज्ञानिक प्रतिभा और अनुसंधान वृत्ति सतत् सक्रिय है।

यह अत्यन्त आश्चर्यजनक है कि अनेक उच्च पुरस्कारों से अलंकृत भारत के विचारक सदा सफल होते रहे हैं। विश्व ने देश, जाति, धर्म आदि की संकीर्ण सीमाओं से ऊपर उठकर उनका स्वागत किया है, उन्हें सराहा है। हमारे देश में भी ऐसी

टिप्पणी

स्वप्नदर्शी विभूतियों की कमी नहीं है, जिन्होंने अपने शुभ–स्वप्न साकार कर अखिल विश्व को प्रभावित किया है। भारतवर्ष के पूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम भी आधुनिक भारत की ऐसी ही स्वप्नदर्शी विभूति हैं। उन्होंने अपने सपने को साकार किया है। कहा जाता है कि कार्य की सफलता साधनों से नहीं शक्ति से होती है। 'क्रिया सिद्धि : सत्वे भवति महतां नोपकरणे'। बहुत–से साधन सम्पन्न जन जिन कार्यों को नहीं कर पाते उन्हें सामान्य से लगने वाले लोग अपनी लगन, अध्यावसाय, आत्मविश्वास और सूझ–बूझ से पूर्ण कर दिखाते हैं। हमारे पूर्व राष्ट्रपति अब्दुल कलाम के संदर्भ में भी यह तथ्य पूर्णरूपेण सत्य सिद्ध होता है। उनका जन्म 15 अक्टूबर, सन् 1931 को तमिलनाडु प्रांत के 'रामेश्वरम्' नामक स्थान पर हुआ। उनके पिता श्री जैनुल आब्दीन निम्न मध्यमवर्गीय परिवार से सम्बद्ध थे। भरे–पूरे परिवार में कम आमदनी के कारण अर्थाभाव बना रहना स्वाभाविक था। अतः बालक अब्दुल को अध्ययन आदि के लिए वे सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हो सकीं जो कि महानतम् उपलब्धियों के अर्जन के लिए आवश्यक समझी जाती हैं। फिर भी बालक अब्दुल ने परिश्रमपूर्वक महानतम् उपलब्धियाँ अर्जित कीं। एक सामान्य परिवार के सदस्य का अपने व्यक्तित्व के बल पर राष्ट्रपति बनना निश्चय की महत्वपूर्ण घटना है। जो लोग अपनी असफलताओं को ढँकने के लिए सुविधाओं और साधनों की कमी का रोना रोते हैं, उन्हें ऐसी अपूर्व सफलताओं से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए।

व्यक्तित्व के विकास में परिवार की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। बालक पारिवारिक वातावरण में संस्कार ग्रहण करता है। माता–पिता का आचरण उसके भावी जीवन की दिशाएँ रेखांकित करता है। उनके विचार पारिवारिक वातावरण में पुष्ट हुए। उन्होंने अपने पिता से ईमानदारी, अनुशासन और श्रमशीलता विरासत में पाई। इन गुणों ने उनके भावी जीवन को आलोकित कर उन्हें सफल वैज्ञानिक बनाया। अपनी माता से उन्हें ईश्वरीय अस्तित्व में आस्था तथा दीन–दुखियों के प्रति करुणा के भाव मिले। माता–पिता के इन सद्‌गुणों ने डॉ. कलाम के व्यक्तित्व निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया।

डॉ. अब्दुल कलाम की प्रारंभिक शिक्षा उनके पैतृक गाँव रामेश्वरम् के प्राथमिक विद्यालय में ही सम्पन्न हुई। अपनी लगन और परिश्रम से माध्यमिक स्तर पर निरंतर सफल होते हुए डॉ. कलाम उच्च शिक्षा की ओर अग्रसर हुए। सन् 1954 में उन्होंने 'सेंट जोसेफ कॉलेज, तिरुचिरापल्ली' से बी.एस.सी. की परीक्षा उत्तीर्ण की। तदुपरांत 'मद्रास इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नालॉजी, चेन्नई' से इंजीनियरिंग की परीक्षा उत्तीर्ण करके सन् 1958 में 'एयरोनॉटिकल वैज्ञानिकी इंजीनियरिंग' में विशेष दक्षता अर्जित की। एक कुशल इंजीनियर के रूप में उन्होंने 'डिफेंस रिसर्च एंड डेवलपमेंट आर्गनाइजेशन' को अपनी सेवाएँ अर्पित कीं तथा देश की सुरक्षा के लिए निरंतर प्रयत्न करके नए कीर्तिमान स्थापित किए।

भारत के प्रधानमंत्री के वैज्ञानिक एवं तकनीकी सलाहकार के रूप में डॉ. अब्दुल कलाम ने भारत को मिसाइलें रखने वाले देशों के विशेष क्लब का सदस्य बनवाया। यह उनकी महत्वपूर्ण उपलब्धि थी, किंतु उक्त पद से डॉ. कलाम ने शीघ्र ही त्यागपत्र दे दिया, क्योंकि वे अध्ययन और अध्यापन को समर्पित थे। उनकी अन्वेषणशील प्रतिभा

राजनीतिक गलियारों में संतुष्टि नहीं पा सकी और अनुसंधान के क्षेत्र में पुनः सक्रिय हो गई।

टिप्पणी

बीसवीं शताब्दी में आध्यात्मिक मूल्यों के ह्रास और भौतिक उपलब्धियों के प्रति असीम आकर्षण ने मनुष्य को आदर्श की उच्चभूमि से पतित कर अर्थ–लिप्सा के भँवरजाल में फँसने को आकर्षित किया। इस दुःखद स्थिति के चलते भारत से प्रतिभा पलायन का दौर शुरू हुआ और डॉ. कलाम के समकालीन कितने ही प्रतिभावान देशसेवा के समुन्नत मूल्य की उपेक्षा करके विदेशों में विशेष रूप से यूरोपीय देशों में जा बसे। जिस धरती ने उन्हें जन्म दिया, जिस सामाजिक व्यवस्था ने उन्हें समर्थ बनाया, उसके प्रति बिना कोई दायित्व निबाहे कितने ही होनहार 'नौनिहाल' आर्थिक समृद्धि के मोहपाश में बँधकर निजी सीमित स्वार्थों के लिए प्रवासी हो गए, किंतु डॉ. कलाम के संस्कारशील मन से यह पाप न हो सका। उन्होंने निजी स्वार्थों पर विजय पाई और देशसेवा के आदर्श पालन में व्यक्तिगत समृद्धि की उपेक्षा कर दी। अपनी पुस्तक 'माई जर्नी' में उन्होंने अपनी तत्कालीन द्वन्द्वग्रस्त मनःस्थिति को इस प्रकार व्यक्त किया है–''जीवन के वे दिन काफी कसमसाहट भरे थे। एक तरफ विदेशों में 'शानदार' कैरियर था तो दूसरी तरफ देश–सेवा का आदर्श। बचपन के सपनों को सच करने का अवसर चुनना कठिन था कि आदर्शों की ओर चला जाए या मालामाल होने के अवसर को गले लगाया जाए, लेकिन अंततः मैंने तय किया कि पैसों के लिए विदेश नहीं जाऊँगा। कैरियर की परवाह के लिए देशसेवा का अवसर नहीं गवाऊँगा। इसके पूर्व राष्ट्रपति अत्यंत सहज और सादगीपूर्ण जीवन के विश्वासी हैं। 'सादा जीवन उच्च विचार' के सिद्धान्त में उनकी दृढ़ आस्था है। देश की सुरक्षा के लिए विकट संहारक परमाणु बम बनाने वाले इस वैज्ञानिक का अंतःकरण अत्यंत कोमल है।'' अपनी मातृभाषा 'तमिल' में कविता करना और अवकाश के क्षणों में 'रुद्रवीणा' बजाना उनके शौक हैं। बालकों से उन्हें विशेष प्रेम है। उनका जन्म सागर तट पर स्थित गाँव में हुआ और वही उनकी क्रीड़ास्थली भी रहा, अतः प्रकृति से भी उन्हें विशेष मोह है। इस प्रकार डॉ. कलाम शत्रुओं, मानवता–विरोधी युद्धेच्छुओं के लिए वज्र से कठोर और सज्जनों, स्वजनों के लिए फूल से कोमल हैं। उनके उदार व्यक्तित्व और निष्काम कृतित्व में सच्चे भारतीय की मूल्य निष्ठा सर्वत्र व्याप्त है। अतः हमें उन पर गर्व है।

4.2.2 सपनों की उड़ान (प्रेरक निबन्ध) का सार

मनुष्य स्वभाव से कल्पनाशील व स्वप्नदर्शी है। वह अपने सपनों के आधार पर ही जीवन में रास्ते चुनता है लेकिन उन स्वप्नों में यथार्थ की गुंजाइश भी देनी चाहिए। प्रख्यात कवि हरिवंशराय बच्चन ने भी अपनी एक कविता में सपनों की बात करते हुए कहा है कि स्वप्न देखना बुरा नहीं है, हमें हर तरह के स्वप्न देखने की आजादी है। लेकिन स्वप्न देखते हुए ही हमें यथार्थ से मुंह नहीं मोड़ना चाहिए। डा. कलाम डी.आर.डी.ओ. (डिफेंस रिसर्च एंड डेवलपमेंट ऑरगेनाइजेशन) से एक यथार्थवादी स्वप्नदर्शी की तरह जुड़ गए। डा. कलाम ने आगे विदेश जाने का हर विचार त्याग दिया और निष्काम निस्पृह भाव से देश में रहकर देश की सेवा करने का निर्णय लिया। शायद उन्होंने तब सोचा भी नहीं होगा कि एक दिन ये देश उन्हें भारत के राष्ट्रपति के रूप में सर माथों पर बिठाएगा। डॉ. कलाम के डॉ. आर. वर्धराजन के नेतृत्व व निर्देशन में सुपरसोनिक

टिप्पणी

टार्गेट एयरक्रॉफ्ट बनाने का काम शुरू किया। उन्होंने अनेक नवीन तकनीकियाँ खोजीं और उसके बाद एयरोनॉटिकल डेवलपमेंट बैंगलोर में कार्य किया व स्वदेशी 'होवर क्रॉफ्ट' को डिजाइन करने का काम उन्हें मिला जो बाद में 'नंदी' नाम से सामने आया। आगे चलकर उनके निर्देश में 'रोहिणी' नामक उपग्रह सफलतापूर्वक कक्षा में उपस्थित किया गया जिसके लिए भारत सरकार ने उन्हें 'पद्म भूषण' की उपाधि से सम्मानित किया।

सन् 1982 में उन्होंने 'इंटीग्रेटेड गाइडेड मिसाइल डेवलपमेंट प्रोग्राम' का कार्यभार सँभाला और छोटी–बड़ी व मध्यम कोटि की मिसाइलें व प्रक्षेपास्त्र विकसित किए। जिनके सफल परीक्षण किए गए। बाद में सन् 1985 में उन्होंने 'त्रिशूल', सन् 1988 में 'पृथ्वी' और सन् 1990 में 'नाग' व 'आकाश' नामक प्रक्षेपास्त्रों को विकसित किया। सन् 1997 में उन्हें उनके अभूतपूर्व योगदान के लिए देश के सर्वोच्च सम्मान 'भारत रत्न' से सम्मानित किया गया। सन् 1998 के पोखरण परमाणु परीक्षण में भी उनका अभूतपूर्व योगदान था। 18 जुलाई, सन् 2002 में वे भारत के ग्यारहवें राष्ट्रपति बने।

डॉ. कलाम ऐसी विभूति थे जो न केवल देश बल्कि विदेश में भी बेहद सम्मानित हस्ती थे। उनका जीवन अनथक परिश्रम, धैर्य, जिजीविषा और लगन का परिचायक था। वे बचपन से ही बड़े मेहनती और कुशाग्र बुद्धि थे। उनका जन्म 15 अक्टूबर, 1931 को तमिलनाडु प्रांत के 'रामेश्वरम' में हुआ था। पिता श्री जैनुल आब्दीन का यह परिवार एक निम्न मध्यमवर्गीय परिवार था। उनके पिता एक बेहत ईमानदार, अनुशासित व श्रमशील व्यक्ति थे और यही गुण डा. कलाम ने भी उनसे प्राप्त किए। बचपन की शिक्षा उनके पैतृक गाँव रामेश्वरम के प्राथमिक विद्यालय में ही संपन्न हुई। निरंतर सफल होते हुए सन् 1954 में उन्होंने 'सेंट जोसेफ कॉलेज, तिरुचिरापल्ली' से बी.एस.सी. की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली और 'मद्रास इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी, चेन्नई' से इंजीनियरिंग पास करके एयरोनॉटिकल इंजीनियरिंग में विशेष दक्षता प्राप्त कर ली। कालांतर में वे भारतीय प्रधानमंत्री के 'वैज्ञानिक एवं तकनीकी सलाहकार' भी बने, लेकिन उन्होंने उस पद से बाद में इस्तीफा दे दिया। उन्होंने अपने हर द्वंद्व पर सफलता पाई और देश की तरफ खड़े हुए। वे अत्यंत सरल व्यक्तित्व के धनी थे और 'सादा जीवन उच्च विचार' के सिद्धान्त में यकीन करते थे। उन्होंने मातृभाषा 'तमिल' में कविता करना तथा खाली समय में रुद्रवीणा बजाना बहुत अच्छा लगता था। प्रकृति और बच्चों से उन्हें विशेष प्रेम था। हमें उन पर सदा गर्व रहेगा।

4.2.3 सपनों की उड़ान (प्रेरक निबन्ध) : व्याख्यांश

1. मनुष्य स्वभावतः स्वप्नदर्शी है..... यथार्थ स्थितियों के निकट होते हैं।

प्रसंग–प्रस्तुत गद्यांश देश के महान वैज्ञानिक तथा पूर्व राष्ट्रपति डा. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के जीवन पर आधारित लेख 'सपनों की उड़ान' से लिया गया है जिसमें संक्षेप में उनकी जीवन यात्रा, उनके संघर्षों तथा उच्च मानव मूल्यों का संक्षेप में वर्णन किया गया है।

व्याख्या–

मनुष्य को सपने देखना अच्छा लगता है। सपने देखने की उसकी क्रिया सोते–जागते दोनों अवस्थाओं में चलती रहती है। उसके स्वभाव की एक अन्य विशेषता होती है–कल्पनाशीलता। उसे नित नई–नई कल्पनाएँ करना अच्छा लगता है। यह दोनों ही क्रियाएं उसके मूल स्वभाव में होती हैं। ऐसा मनुष्य खोजना कठिन है जो कल्पना न करता हो, ख्यालीा पुलाव न पकाता हो और सपने न देखता हो। अपनी कल्पनाओं से ही वह अपने नए–नए सपनों को जन्म देता है जो आगे चलकर जीवन में बड़े फैसले लेने या कड़े कदम उठाने की प्रेरणा देते हैं। सपनों का पीछा करते हुए वह अपने कामों की रूपरेखा तैयार करता है। वह यह जानने–समझने की कोशिश में लगा रहता है कि किन कामों को करते हुए उसके सपने साकार हो सकेंगे। किंतु क्या कोमल कल्पनाओं से सपने संजो लेना काफी होता है? ऐसा नहीं है। हमारे वे ही सपने साकार हो सकते हैं जो यथार्थ यानी जमीनी सच्चाई के करीब होते हैं। कहने का अर्थ यह है कि हमें यथार्थ के धरातल पर खड़े होकर ही सपने देखने चाहिए अन्यथा उन्हें साकार नहीं किया जा सकता। जो सपने सिर्फ कोमल कल्पना पर आधारित होते हैं, वे सपने ही रह जाते हैं।

टिप्पणी

विशेष–

- इस गद्यांश में यथार्थवादी सपनों की बात कही गई है और बताया गया है कि हमें सपने भी जमीन पर ही खड़े होकर देखने चाहिए वरना वे एक दिन तिरोहित होकर ही रहेंगे।
- यह गद्यांश सूक्ति शैली में लिखा गया है जिसमें जीवन का गहरा संदेश समाहित है।
- भाषा शैली शुद्ध साहित्यिक व प्रांजल है जो कम शब्दों में बहुत अधिक अर्थ सँजोए रखने में सक्षम है।

2. प्रायः मनुष्य तुच्छ स्वार्थों के लिए ..... राष्ट्रपति के पद पर कार्य करने के रूप में मिलेगा।

प्रसंग–प्रस्तुत गद्यांश देश के महान वैज्ञानिक तथा पूर्व राष्ट्रपति डा. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के जीवन पर आधारित लेख 'सपनों की उड़ान' से लिया गया है जिसमें संक्षेप में उनकी जीवन यात्रा, उनके संघर्षों तथा उच्च मानव मूल्यों का संक्षेप में वर्णन किया गया है।

व्याख्या–

मनुष्य अपने जीवन में मामूली स्वार्थों के लिए अपने आदर्शों को दाँव पर लगा देता है। यदि उसे लगता है कि सच बोलने से, देश और समाज के बारे में सोचने से नुकसान होता है तो ऐसे में वह सिर्फ अपने ही बारे में सोचना ठीक समझता है। उसकी बुद्धि ऐसे में एक साधारण दुकानदार की ही तरह काम करती है जो सिर्फ अपने ही लाभ के बारे में सोचता है। तब वह आदर्शों का गला घोंटने में देर नहीं लगाता, किंतु जो व्यक्ति ऐसा नहीं करता और अपने आदर्शों के रास्ते पूरी मजबूती से जीवनपर्यंत चलता चला जाता है उसे उसका फल जरूर मिलता है। हमारे प्रिय पूर्व राष्ट्रपति श्री ए.पी.जे. अब्दुल कलाम भी इसके अपवाद नहीं थे।

टिप्पणी

उन्होंने बिना किसी निजी लोभ–लालच के लंबे समय तक देश की जो निष्काम, निःस्वार्थ सेवा की उसने उन्हें देश के दिल तक पहुँचा दिया। तब उन्हें सोचा भी न होगा कि एक दिन उन्हें देश का राष्ट्रपति पद सँभालने को मिलेगा। इस तरह हम पाते हैं कि मनुष्य को उसकी निःस्वार्थ व निष्काम सेवा भावना का सुफल अवश्य मिलता है।

विशेष–

- इस गद्यांश में उच्च आदर्शों व नैतिक मूल्यों के प्रति साधारण मनुष्य ने आचरण के बारे में बताया गया है तथा इस बात को भी रेखांकित किया गया है कि जो व्यक्ति निःस्वार्थ व निष्काम भाव से देश व समाज की सेवा में लगता रहता है उसे उसका सुफल अवश्य मिलता है।
- यह गद्यांश सूक्ति शैली में लिखा गया है जिसमें जीवन के लिए गहरा संदेश समाहित है।
- भाषा शैली शुद्ध साहित्यिक व प्रांजल है जो कम शब्दों में बहुत अधिक अर्थ संजोए रखने में सक्षम है।

4.2.4 सपनों की उड़ान (प्रेरक निबन्ध) का समीक्षात्मक अध्ययन

लेख 'सपनों की उड़ान' देश के महान वैज्ञानिक व पूर्व राष्ट्रपति डा. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के जीवन पर आधारित है। इस लेख में उनके जीवन की संघर्ष यात्रा, उनके अंतर्द्वंद्वों व सफलता के सोपानों का संक्षेप में वर्णन किया गया है। यह लेख एक प्रेरणात्मक लेख है जिसे पढ़ने से पाठ्य को न केवल जीवन के कठोर संघर्षों से लड़ने–जूझने का साहस मिलता है बल्कि उसे अपने सपनों को साकार कर पाने की ऊर्जा भी प्राप्त होती है। इसमें कोई संशय नहीं कि कलाम लाखों–करोड़ों लोगों के लिए न केवल आज बल्कि आने वाले समय में भी प्रेरणा के स्रोत बने रहेंगे।

'सपनों की उड़ान' लेख की समीक्षा निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर की जा सकती है–

1. **जीवन यात्रा**

   'सपनों की उड़ान' वस्तुतः देश के महान वैज्ञानिक व पूर्व राष्ट्रपति डा. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम की जीवन यात्रा है और यही इस लेख की सबसे बड़ी विशेषता है। इसे पढ़ते हुए पाठक डा. कलाम के जीवन, उनके संघर्ष, उनकी सफलताओं तथा उनके विचारों से अवगत होंगे जो उनके जीवन के लिए प्रेरणा देने का काम करेगी। डा. कलाम का जीवन अपने आप में एक जीवंत आदर्श है जो बच्चों व युवाओं के लिए जीवंत प्रेरणा है। इस लेख में बड़ी खूबसूरती से क्रमबद्ध रूप से बताया गया है कि किस तरह बचपन से लेकर देश का राष्ट्रपति बनने तक का सफर तय किया। इससे पता चलता है कि यदि हम अपने आदर्शों व मूल्यों पर पूरी, मेहनत और लगन के साथ लगे रहें तो हमें जीवन में बड़ी से बड़ी सफलताएँ मिल सकती हैं।

2. **कलाम का अंतर्द्वंद्व**

   एक निम्न मध्यवर्गीय परिवार में जन्मे व्यक्ति के लिए अपने आदर्शों, सिद्धांतों व जीवन मूल्यों पर चलते रहना आसान नहीं होता जबकि सामने लोभ और ऐश्वर्य

का संसार बाँहें पसारे सामने से लगातार आमंत्रित कर रहा हो। लोग ऐसे में नियंत्रण नहीं रख पाते और सरल राह चुनने के कई बहाने खोज लेते हैं। डा. कलाम के सामने भी जीवन में ऐसे कई पड़ाव आए जब वे विदेश में जाकर आलीशान जीवन जी सकते थे। किन्तु इस अंतर्द्वंद्व को बखूबी शब्दों में पिरोया गया है जिससे हमें डा. कलाम की महानता का भी अहसास होता है।

3. **जीवन संदेश का स्वर**

'सपनों की उड़ान' लेख में जीवन का संदेश समाहित है। डा. कलाम के जीवन और उनकी जीवन यात्रा के बहाने इसमें मनुष्य को निजी स्वार्थों व लोभ के ऊपर राष्ट्र व समाज के हित को तथा उच्च जीवन आदर्शों व मूल्यों को वरीयता देने का संदेश दिया गया है। इस लेख में जीवन संदेश का स्वर इतना ऊंचा है कि वह इसे एक प्रेरणा लेख के रूप में प्रस्तुत करता है।

4. **भाषा**

'सपनों की उड़ान' लेख की भाषा शुद्ध साहित्यिक भाषा है। इस लेख का कसाव बेहतरीन है जिससे बहुत कम शब्दों में विस्तृत कथ्य समाहित हो गया प्रतीत होता है। संस्कृतनिष्ठ तत्सम शब्दावली का संतुलित प्रयोग इस लेख में दिखाई पड़ता है जो इसमें अर्थ का विस्तार पैदा करता है। लेख में कई स्थानों पर सूचित शैली में वाक्य या अनुच्छेद रचे गए हैं जिनमें जीवन के प्रति गहरे संदेश समाहित हैं। विज्ञान से जुड़े शब्दों का उनके अंग्रेजी रूप में ही लिखा गया है ताकि प्रचलित रूप से परिचित होने के कारण आम पाठक को अर्थ ग्रहण में असुविधा न हो।

अपनी प्रगति जांचिए

1. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम भारत के निर्वाचित राष्ट्रपतियों की सूची में किस स्थान पर हैं?

   (क) 10वें (ख) 11वें

   (ग) 12वें (घ) 13वें

2. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम का गृहनगर कौन सा है?

   (क) मदुरई (ख) तिरुनेलवेलि

   (ग) रामेश्वरम (घ) कांचीपुरम

4.3 हमारा सौरमण्डल (संकलित)

शास्त्रों से ज्ञात होता है कि हजारों साल पहले सर्वशक्तिमान ईश्वर ने पहले हमारे विश्व की रचना की होगी और फिर इसे बनाया होगा। अगर यह बात सच है तो इसका मतलब हमारा सौरमण्डल अपने आप वजूद में नहीं आ सकता बल्कि इसे किसी मकसद के साथ बनाया गया होगा। धरती पर जीवन को मुमकिन बनाने के लिए जो–जो किया

टिप्पणी

गया होगा उन सब पर कुछ ना कुछ इतिहास में रिकॉर्ड रखा गया होगा और वह रिकार्ड 3500 साल पुराना है तो उसमें से एक रिकार्ड बाइबिल का भी है। उसके मुताबिक एक समय ऐसा था जब हमारी पृथ्वी 'बेडौल और सुनसान' थी उसमें ना कोई महाद्वीप था ना कोई जमीन। परंतु इस ग्रह में अगर जीवन के लिए जरूरी है तो वह है पानी जो कि इस ग्रह में था। इस प्रकार हमारा सौरमण्डल कई कारण से पूरे विश्व में अनोखा है। हमारी आकाशगंगा सर्पिलाकार है और इसी संरचना की दो भुजाओं के बीच जहां बहुत कम तारे हैं उसमें हमारा सौरमण्डल पाया जाता है।

ब्रह्माण्ड में वैसे तो कई सौरमंडल हैं लेकिन हमारा सौरमण्डल सभी से अलग है, जिसका आकार एक तश्तरी की तरह का है। सौरमण्डल की उत्पत्ति 5 बिलियन साल पहले हुई थी, जब एक नए तारे का जन्म हुआ था, जिसे हम सूर्य के नाम से जानते हैं। सौरमण्डल में सूर्य और वह खगोलीय पिंड सम्मिलित हैं जो सौरमण्डल में एक–दूसरे से गुरुत्वकर्षण बल के साथ बंधे हुए हैं।

किसी तारे के आसपास परिक्रमा करते हुए उन खगोलीय वस्तुओं के समूह को ग्रहीय मंडल कहा जाता है, जो अन्य तारे न हों, जैसे कि ग्रह, बौने ग्रह, प्राकृतिक उपग्रह, क्षुद्रग्रह, उल्का, धूमकेतु और खगोलीय धूल। हमारे सूरज और उसके ग्रहीय मंडल को मिलाकर हमारा सौरमंडल बनता है। इन पिंडों में आठ ग्रह, उनके 166 उपग्रह, पांच बौने ग्रह और अरबों छोटे पिंड सम्मिलित हैं।

इन छोटे पिंडों में क्षुद्रग्रह, बर्फीला काइपर घेरा के पिंड, धूमकेतु, उल्काएं और ग्रहों के बीच की धूल शामिल है। सौरमण्डल के चार छोटे आंतरिक ग्रह बुध, शुक्र, पृथ्वी और मंगल ग्रह जिन्हें स्थलीय ग्रह कहा जाता है, मुख्यतः पत्थर और धातु से बने हैं, और इसमें क्षुद्रग्रह घेरा, चार विशाल गैस से बने बाहरी गैस दानव ग्रह, काइपर घेरा और बिखरा चक्र शामिल हैं। काल्पनिक और बादल भी सनदी क्षेत्रों से लगभग एक हजार गुना दूरी से परे मौजूद हो सकता है।

सूर्य से होने वाला प्लाज्मा का प्रवाह सौरमण्डल को भेदता है। यह तारे के बीच के माध्यम में एक बुलबुला बनाता है जिसे हेलिओमण्डल कहते हैं जो इससे बाहर फैलकर बिखरी हुई तश्तरी के बीच तक जाता है। सौरमण्डल में सूर्य का आकार सबसे बड़ा है जिसका प्रभुत्व है, क्योंकि सौरमण्डल निकाय के द्रव्य का लगभग 99,999 द्रव्य सूर्य में निहित है। सौरमण्डल में समस्त ऊर्जा का स्रोत भी सूर्य है। आज के समय हम पृथ्वी को जिस रूप में देख रहे हैं वह ज्वालामुखियों की वजह से है।

ज्वालामुखी ने हमारे वायुमण्डल को भी प्रभावित किया है। गर्म लावा धरती की सतह पर गिरा जिससे नई मजबूत जमीन का निर्माण हुआ। जमी हुई पृथ्वी पर जब ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन हुआ तो ज्वालामुखी की वजह से यह संभव हो पाया कि पृथ्वी आगे जमी न रहे। लेकिन ज्वालामुखी सिर्फ पृथ्वी पर ही नहीं पाए जाते हैं।

सोलर सिस्टम की वजह से हमें पता चला है कि ज्वालामुखी दूसरे ग्रहों और उपग्रहों पर भी मौजूद है। ये ज्वालामुखी पृथ्वी के ज्वालामुखियों से कहीं विशाल हैं। कुछ निष्क्रिय हैं और कई सालों से इनमें विस्फोट नहीं हुआ है और शायद आगे भी न हो। लेकिन कई तो पृथ्वी पर मौजूद ज्वालामुखी की तरह सक्रिय है।

टिप्पणी

सौरमण्डल कैसे बना

हमारा सौरमण्डल कई कारणों से पूरे संसार में बहुत अनोखा है। हमारी आकाशगंगा सर्पिल आकार की है और इसी सर्पिल रचना की दो भुजाओं के बीच में जहां पर बहुत ही कम तारे हैं हमारा सौरमण्डल पाया जाता है। रात को हमें जितने तारे नजर आते हैं उनमें से लगभग सभी हमसे इतने दूर हैं कि बड़ी–बड़ी दूरबीनों से देखने पर भी वे केवल चमकती हुई बिंदुओं की तरह ही दिखाई देते हैं।

क्या इसका मतलब यह है कि हमारा सौरमण्डल ठीक स्थान पर नहीं है? अगर हमारा सौरमण्डल आकाशगंगा के बिल्कुल बीचों बीच होता तो तारों के झुरमुट के बीच रहने के हमें बहुत से बुरे नतीजे भुगतने पड़ते जैसे– पृथ्वी की कक्षा नष्ट हो जाती और इसका इन्सान के जीवन पर बहुत भारी असर होता। लेकिन जैसा कि हम जानते हैं कि हमारा सौरमण्डल आकाशगंगा में बिल्कुल सही जगह पर है।

इसलिए हमारी पृथ्वी सही सलामत है। इसके अतिरिक्त हम और भी बहुत सारे खतरों से बचे रहते हैं जैसे– हमारी पृथ्वी को गैस से बने बादलों से नहीं गुजरना पड़ता है वरना यह बहुत ही गर्म हो सकती है। इसे न तो फूटते तारों और न ही ऐसे दूसरे पिंडों का सामना करना पड़ता है जिनसे खतरनाक रेडिएशन निकलता है। हमारी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सूर्य बिल्कुल ठीक तारा है। सूर्य मुद्दतों से निरंतर एक ही तापमान पर जलता आ रहा है।

सूर्य न ही तो अधिक बड़ा है और न ही अधिक गर्म। हमारी मंदाकिनी में अधिकतर तारे हमारे सूरज से छोटे हैं, इसलिए वे पृथ्वी जैसे ग्रह पर जीवन को कायम रखने के लिए न तो सही किस्म की रौशनी दे सकते हैं और न ही भरपूर गर्मी। अधिकतर तारे गुरुत्वाकर्षण बल से एक या उससे ज्यादा तारों से बंधे हुए हैं और एक दूसरे के इधर उधर घूमते रहते हैं। लेकिन हमारा सूरज किसी भी तारे से बंध हुआ नहीं है।

सौरमण्डल एक ऐसा मण्डल है जो कि गुरुत्वाकर्षण बल के कारण एक दूसरे छोटे तारों या कुछ अन्य ग्रहों के इर्दगिर्द परिक्रमा करते हैं। उनके वस्तुओं के समूह को गति मण्डल कहा जाता है और सौरमण्डल में सूर्य और उसकी कुछ खगोलीय पिंड शामिल होता है उसके अंदर अन्य तारे ग्रह हैं। प्राकृतिक उपग्रह, क्षुद्र ग्रह, उल्काएं, धूमकेतु, बोने ग्रह, खगोलीय दूरी और हमारा सूरज यह सब चीजें मिलकर हमारे सौरमण्डल का निर्माण करती हैं और इसके अलावा सौरमण्डल और अन्य पिंड से मिलकर बना होता है।

सौरमण्डल की खोज

सन् 1543 में सबसे पहले निकोलस कोपरनिकस ने खोजा कि सूर्य ब्रह्माण्ड का केन्द्र है और गणितीय भविष्यवाणी से हेलिओसेनिस प्रणाली का विकास करने वाले पहले इंसान 17वीं शताब्दी में गैलीलियो गैलीली और जॉन केपलर ने पता लगाया कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाती है। 1704 में सौर प्रणाली शब्द पहली बार अंग्रेजी में प्रकाशित किया। गैलीलियों गैलीली की खोज से ही क्रिस्टियान हजेंस ने सेंट के चन्द्रमा टाइटन और शनि के चारों ओर छल्ले की खोज की और बाद में जियोवानी

टिप्पणी

डोमिनिको कैसीनी ने सनी के चार और उपग्रह की खोज की और सन् 1781 में बायनरी तारे की तलाश में थे जब उन्होंने नया धूमकेतु देखा। इसकी कक्षा से पता चला कि यह एक नया ग्रह यूरेनस था इस प्रकार सौरमण्डल में अनगिनत तारे और ग्रह है इसकी खोज कई वैज्ञानिकों ने की और सफल भी रहे और नई–नई खोजों में आज भी तत्पर हैं।

कुछ उल्लेखनीय अपवादों को छोड़कर मानवता को सौरमण्डल का अस्तित्व जानने में कई हजार साल लग गए। लोग सोचते थे कि पृथ्वी ब्रह्माण्ड का स्थिर केंद्र है और आकाश में घूमने वाली दिव्य या वायव्य वस्तुओं से स्पष्ट रूप से अलग है। लेकिन 140 ई. में क्लाडियस टालमी ने बताया कि पृथ्वी ब्रह्माण्ड के केंद्र में है और सारे पिंड इसकी परिक्रमा करते हैं लेकिन कोपरनिकस ने सन् 1543 में बताया कि सूर्य ब्रह्माण्ड के केंद्र में है और सारे ग्रह पिंड इसकी परिक्रमा करते हैं।

सौरमण्डल के ग्रह

हमारे सौरमण्डल में ग्रहों की संख्या 8 है और इन ग्रहों को दो भागों में बांटा गया है–

1. पहला आंतरिक ग्रह
2. दूसरा बाहरी ग्रह।

इन ग्रहों को दो भागों में बांटने का कारण क्षुद्रग्रह का घेरा है। यह घेरा मंगल और बृहस्पति के बीच में है। उनकी संख्या हजारों लाखों में है।

आंतरिक ग्रह– बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल

बुध– बुध ग्रह सौरमण्डल का सबसे छोटा ग्रह है। अन्य ग्रहों की तुलना में बुध सूर्य के सबसे नजदीक है। 180,000 किमी/घंटा की गति पर, यह अंतरिक्ष में यात्रा करने वाला सबसे तेज ग्रह है। यह 88 दिनों में सूर्य के चारों ओर एक परिक्रमा पूरी करता है। बुध का बाहरी खोल 400 किमी है। बुध एक स्थानीय ग्रह है तथा बुध का चुंबकीय क्षेत्र पृथ्वी का केवल एक प्रतिशत है। बुध का भूपटल सभी ग्रहों की तुलना में तापमान का सर्वाधिक उतार–चढ़ाव महसूस करता है जो कि 100 K से लेकर 700 K तक परिवर्तित होता है। बुध का कोई उपग्रह नहीं है।

शुक्र– शुक्र ग्रह सूर्य से दूरी के अनुसार दूसरा तथा आकार में छठवां बड़ा ग्रह है। यह आकाश में सूर्य तथा चंद्रमा के बाद सबसे ज्यादा चमकने वाली वस्तु है। बुध की तरह शुक्र का भी कोई उपग्रह नहीं है। शुक्र ग्रह को पृथ्वी की बहन भी कहा जाता है क्योंकि दोनों के आकार में काफी समानता पाई जाती है। शुक्र ग्रह का व्यास पृथ्वी के व्यास का 95 प्रतिशत तथा वजन में पृथ्वी का 80 प्रतिशत है। शुक्र ग्रह पर सल्यूरिक एसिड के बादलों की कई किलोमीटर मोटी परते हैं जो कि इसकी सतह को पूरी तरह से ढक लेती है। इस कारण से शुक्र ग्रह की सतह देखी नहीं जा सकती। शुक्र ग्रह का वातावरण मुख्य रूप से कार्बनडाइऑक्साइड का बना हुआ है जो कि ग्रीन हाउस प्रभाव पैदा करती है जिससे इसके सूर्य की तरफ वाले भाग का तापमान 462 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच जाता है।

टिप्पणी

पृथ्वी– पृथ्वी सूर्य से निकटतम तीसरा ग्रह और ज्ञात ब्रह्माण्ड में एकमात्र ग्रह है जहां जीवन उपस्थित है। सूर्य का एक चक्कर लगाने में पृथ्वी को लगभग 365 दिन लगते हैं। इस प्रकार पृथ्वी का एक वर्ष लगभग 365.26 दिन होता है। पृथ्वी के परिक्रमण के दौरान इसके धुरी में झुकाव होता है जिसके कारण ही ग्रह की सतह पर मौसमी विविधताएं (ऋतुएं) पाई जाती है।

मंगल– मंगल ग्रह ब्रह्माण्ड में सूर्य से चौथा बड़ा ग्रह है इसे लाल ग्रह के नाम से भी जाना जाता है। इसका व्यास लगभग 6794 किलोमीटर है। यह सूर्य से लगभग 22.80 करोड़ किलोमीटर दूर है।

ज्यादातर वैज्ञानिकों का मानना है कि मंगल ग्रह पर कभी पानी रहा होगा। मंगल ग्रह का तापमान औसतन –55 डिग्री सेल्सियस है। इस ग्रह की सतह का तापमान 27 डिग्री से 127 डिग्री सेल्सियस तक हो जाता है। मंगल ग्रह धरती के व्यास का केवल आधा है। और यह धरती से कम घना है। यूनान के लोग मंगल ग्रह को युद्ध का देवता मानते हैं और इस ग्रह को एरेस के नाम से पुकारते हैं। लाल ग्रह यानी के मंगल ग्रह पर पानी और कार्बनडाइआक्साइड बर्फ की परत है। इस ग्रह के दो उपग्रह है फोबोस और डीमोस। मंगल ग्रह पर धरती के दिनों के हिसाब से 687 दिनों का एक साल होता है।

बाहरी ग्रह

बृहस्पति– बृहस्पति सूर्य से पांचवां और हमारे सौरमंडल का सबसे बड़ा ग्रह है जिसका द्रव्यमान सूर्य के हजारवें भाग के बराबर तथा सौरमंडल में मौजूद अन्य सात ग्रहों के कुल द्रव्यमान का ढाई गुना है। यह वैज्ञानिकों द्वारा खोजा गया पहला ग्रह है।

बृहस्पति को शनि, अरुण और वरुण के साथ एक गैसीय ग्रह के रूप में वर्गीकृत किया गया है। बृहस्पति मुख्य रूप से हाइड्रोजन से बना हुआ है।

शनि– शनि सूर्य से छठा ग्रह है तथा बृहस्पति के बाद सौरमण्डल का सबसे बड़ा ग्रह है। जबकि इसका औसत घनत्व पृथ्वी का एक आठवां है अपने बड़े आयतन के साथ यह पृथ्वी से 95 गुने से भी थोड़ा बड़ा है। शनि ग्रह का धरातल ठोस नहीं है वरन कम घनत्व वाली हल्की गैस से निर्मित है। शनि ग्रह का ताप 180°C है सौर परिवार के शनि ग्रह में सबसे अधिक उपग्रह है। टाइटन, शनि का सबसे बड़ा और सौरमण्डल का दूसरा सबसे बड़ा उपग्रह है।

अरुण– अरुण या यूरेनस हमारे सौरमण्डल में सूर्य से दूर सातवां ग्रह है। व्यास के आधार पर यह सौरमण्डल का तीसरा बड़ा और द्रव्यमान के आधार पर चौथा बड़ा ग्रह है।

द्रव्यमान में यह पृथ्वी से 14.5 गुना अधिक भारी और आकार में पृथ्वी से 63 गुना अधिक बड़ा है। मीथेन गैस ज्यादा होने की वजह से यह झुका हुआ है इसे 'लेटा हुआ ग्रह' भी कहा जाता है। इस ग्रह में भी शनि के तरह चारों ओर वलय पाए जाते हैं जिनके नाम अल्फा, बीटा, गामा, डेल्टा और इप्सिलौन है। अरुण ग्रह को 13 मार्च 1781 में सर विलियम हर्शेल ने खोजा था।

टिप्पणी

वरुण– वरुण हमारे सौरमण्डल में सूर्य से दूर आठवां ग्रह है। व्यास के आधार पर यह सौरमण्डल का चौथा बड़ा और द्रव्यमान के आधार पर तीसरा बड़ा ग्रह है। वरुण के 13 ज्ञात प्राकृतिक उपग्रह है।

धूमकेतु– धूमकेतु जिसे हम पुच्छल तारा भी कहते हैं मूलतः धूल भरी बर्फ का गोला है। यह धूल के साथ कार्बनडाइऑक्साइड, अमोनिया और मीथेन के मिलने से बनता है। यह भी ग्रहों के समान सूर्य की परिक्रमा करते हैं।

क्षुद्रग्रह– क्षुद्रग्रह चट्टानों एवं धातुओं से बनी आकृति है जो एक कंकड़ के आकार से लेकर लगभग 600 मील चौड़ाई तक का हो सकता है। यद्यपि ये सभी सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाते है परंतु इनका आकार इतना छोटा होता है कि इन्हें हम ग्रह नहीं कह सकते। यह संभवतः हमारे सौरमण्डल के उत्पत्ति के दौरान बचे हुए मलवे से बना है।

इसमें से अधिकांश क्षुद्रग्रह मंगल एवं बृहस्पति के कक्षों के बीच अंतरिक्ष में स्थित है जिसे क्षुद्रग्रह वेल्ट कहा जाता है।

सौरमण्डल के सदस्य

सूर्य– सूर्य अथवा सूरज सौरमण्डल के केंद्र में स्थित एक तारा है जिसके चारों तरफ पृथ्वी और सौरमण्डल के अन्य अवयव घूमते है। सूर्य हमारे पृथ्वी के जलवायु और मौसम के लिए जिम्मेदार है। सूर्य के ध्रुवों और भूमध्य रेखा के बीच व्यास में केवल 10 किमी का अंतर होता है।

सौरमण्डल के पिण्ड

अंतर्राष्ट्रीय खगोलशास्त्रीय संघ के 24 अगस्त, 2006 के प्राग सम्मेलन के अनुसार सौरमण्डल पिंडों को तीन श्रेणियों में बांटा गया है।

1. **प्रधान ग्रह**– सूर्य से उनकी दूरी के बढ़ते क्रम में हैं– बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल, बृहस्पति, शनि, अरुण एवं वरुण। शुक्र सूर्य से सबसे नजदीक है और नेपच्यून उससे सबसे दूर है।
2. **बौने ग्रह**– यम, एरीज, सीरिज, हॉमिया, माकी माकी। सीरीज क्षुद्रग्रह पट्टी में है और वरुण से परे चार बौने ग्रह यम, हॉमिया, माकीमाकी और एरीज।
3. **लघु सौरमण्डलीय पिंड**– 166 ज्ञात उपग्रह एवं अन्य छोटे खगोलीय पिंड जिसमें क्षुद्रग्रह पट्टी, धूमकेतु, उल्काएं, बर्फीली क्विपर पट्टी के पिंड और ग्रहों के बीच की धूल शामिल है। 6 ग्रहों और 3 बौनों ग्रहों की परिक्रमा उपग्रह करते हैं जिन्हें आमतौर पर पृथ्वी के चंद्रमा के नाम के आधार पर चंद्रमा ही कहा जाता है। प्रत्येक बाहरी ग्रह को धूल और अन्य कणों से निर्मित छल्लों द्वारा परिवृत किया जाता है।

   बौने ग्रह– हमारे सौरमण्डल में पांच ज्ञात बौने ग्रह हैं– यम, सीरीज, हउमेया, माकेमाके, ऍरिस। यम को पहले ग्रह ही माना जाता था लेकिन 2006 में इसे बौने ग्रह के रूप में स्वीकार किया गया।

टिप्पणी

यम– यम ग्रह की खोज सन् 1930 में क्लाड टामवों ने की थी। रोमन मिथक कथाओं के अनुसार प्लूटो पाताल का देवता है। इस नाम के पीछे दो कारण हैं एक तो यह कि सूर्य से काफी दूर होने से यह एक अंधेरा ग्रह है और दूसरा यह कि प्लूटो का नाम PL से शुरू होता है जो इसके अन्वेषक पर्सीयन लावेल के अद्याक्षर है।

सेरस– सेरस की खोज इटली के खगोलशास्त्री पियाजी ने की थी। आई.ए.यू. की नई परिभाषा के अनुसार इसे बौने ग्रह की श्रेणी में ही रखा जाता है जहां पर इसे संख्या 1 से माना जाएगा। इसकी कक्षा सूर्य से 446,000,000 किलोमीटर है। इसका व्यास 950 किलोमीटर है। सेरस कृषि का रोमन देवता है।

यह मंगल और गुरु के मध्य स्थित मुख्य क्षुद्र ग्रह पट्टे में हैं। यह इस पट्टे में सबसे बड़ा पिंड है। सेरस का आकार और द्रव्यमान उसे गुरुत्व के प्रभाव में डालकर बनाने के लिए पर्याप्त है। अन्य बड़े क्षुद्रग्रह जैसे 2 पलास, 3 जूनो और 10 हायजीआ अनियमित आकार के हैं। सेरस एक चट्टानी केन्द्रक है और 100 किलोमीटर मोटी बर्फ की परत है।

यह 100 किलोमीटर मोटी परत सेरस के द्रव्यमान का 23 से 28 प्रतिशत तथा आयतन का 50 प्रतिशत है। यह पृथ्वी पर ताजे जल से ज्यादा है। इसके बाहर एक पतली धूल की परत है। सेरस की तरह C वर्ग के क्षुद्रग्रह के जैसे है। सेरस पर एक पतले वातावरण के संकेत मिले हैं। सेरस तक कोई अन्तरिक्ष यान नहीं गया है। लेकिन नासा का डान इसकी याया 2015 में करेगा।

क्षुद्रग्रह– पथरीले और धातुओं के ऐसे पिंड हैं जो सूर्य की परिक्रमा करते हैं लेकिन इतने लघु होते हैं कि इन्हें ग्रह नहीं कहा जा सकता। इन्हें लघु ग्रह का क्षुद्रग्रह ग्रहिका ग्रहिका भी कहते हैं। हमारी सौर प्रणाली में लगभग 100,000 क्षुद्रग्रह हैं लेकिन उनमें से ज्यादातर इतने छोटे हैं कि उन्हें पृथ्वी से देखा नहीं जा सकता है।

हर क्षुद्रग्रह की अपनी एक कक्षा होती है जिसमें ये सूर्य के आसपास घूमते रहते हैं। इनमें से सबसे बड़ा क्षुद्रग्रह है सेरस। इतालवी खगोलवेत्ता पिआज्जी ने इस क्षुद्रग्रह को जनवरी 1801 में खोजा था। सिर्फ वेस्टाल ही एक ऐसा क्षुद्रग्रह है जिसे आंखों से देखा जा सकता है यद्यपि इसे सेरस के बाद खोजा गया था।

इनका आकार 1000 किलोमीटर व्यास के सेरस से 1 से 2 इंच के पत्थर के टुकड़ों तक होता है। ये क्षुद्रग्रह पृथ्वी की कक्षा के अंदर से शनि की कक्षा से बाहर तक है। इनमें से दो तिहाई क्षुद्रग्रह मंगल और बृहस्पति के बीच में एक पट्टे में है। हिडाल्गो नामक क्षुद्रग्रह की कक्षा मंगल तथा शनि ग्रहों के बीच पड़ती है।

हमेंस तथा ऐसोस नामक क्षुद्रग्रह पृथ्वी से कुछ लाख किलोमीटर की ही दूरी पर है। कुछ ही कक्षा पृथ्वी की कक्षा को काटती है और कुछ ने भूतकाल में पृथ्वी को टक्कर भी मारी है। क्षुद्रग्रह पथरीले और धातुओं के ऐसे पिंड हैं जो सूर्य की परिक्रमा करते हैं लेकिन इतने छोटे हैं कि इन्हें ग्रह नहीं कहा जा सकता है।

टिप्पणी

क्षुद्रग्रह का पट्टा– क्षुद्रग्रह सौरमण्डल बन जाने के बाद बचे हुए पदार्थ हैं। एक दूसरी कल्पना के अनुसार ये मंगल और गुरु के बीच में किसी समय में रहे प्राचीन ग्रह के अवशेष है जो किसी कारण की वजह से टुकड़ों में बंट गए थे। इस कल्पना की एक वजह से यह भी है कि मंगल और गुरु के बीच का अंतराल सामान्य से ज्यादा है।

दूसरा कारण यह है कि सूर्य के ग्रह अपनी दूरी के अनुसार द्रव्यमान में बढ़ते हुए और गुरु के बाद घटते क्रम में है। इस प्रकार मंगल और गुरु के बीच में गुरु से छोटा लेकिन मंगल से बड़ा एक ग्रह होना चाहिए। लेकिन इस प्राचीन ग्रह के होने की बात एक कल्पना ही लगती है क्योंकि अगर सभी क्षुद्रग्रहों को एक साथ मिला भी लिया जाए तब भी इनसे बना संयुक्त ग्रह 1500 किलोमीटर से कम व्यास का होगा जो कि हमारे चंद्रमा के आधे से भी कम हैं।

क्षुद्रग्रहों के बारे में जानकारी उल्कापात में बचे हुए अवशेषों से है। जो क्षुद्रग्रह पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण से पृथ्वी के वातावरण में आकर पृथ्वी से टकरा जाते हैं उन्हें उल्का कहा जाता है। अधिकतर उल्काएं वातावरण में ही जल जाती है लेकिन कुछ उल्काएं वातावरण में ही जल जाती है लेकिन कुछ उल्काएं पृथ्वी से टकरा भी जाती है। इन उल्काओं का 92 प्रतिशत भाग सीलीकेट का और 5 प्रतिशत भाग लोहे और निकेल का बना हुआ होता है।

उल्का अवशेषों को पहचानना मुश्किल होता है क्योंकि ये सामान्य पत्थरों जैसे होते है। क्षुद्रग्रह सौरमण्डल के जन्म से ही मौजूद है इस लिए वैज्ञानिक इनके अध्ययन के लिए उत्सुक रहते है। अंतरिक्षयान जो इनके पट्टे के बीच से गए है उन्होंने पाया है ये पट्टा सघन नहीं है और इनके बीच में बहुत सारी जगह खाली है। अब तक हमारों क्षुद्रग्रह देखे जा चुके हैं और उनका नामकरण और वर्गीकरण हो चुका है। इनमें प्रमुख है टाउटेटीस, कैस्टेलिया, जिओग्राफोस और वेस्ता।

क्षुद्रग्रहों का वर्गीकरण

1. C वर्ग– इस श्रेणी में 75 प्रतिशत ज्ञात क्षुद्रग्रह आते हैं। ये बहुत धुंधले होते है। ये सूर्य के जैसी संरचना रखते है लेकिन इनमें हाइड्रोजन और हीलियम नहीं होता है।
2. ड वर्ग– इस श्रेणी में 17 प्रतिशत ज्ञात क्षुद्रग्रह आते है जिनमें से कुछ चमकदार होते है। ये धातुओं लोहा और निकेल तथा मैग्नीशियम सीलीकेट से बने होते हैं।
3. M वर्ग– ज्यादातर बचे हुए क्षुद्रग्रह इस श्रेणी में आते है। ये चमकदार, निकेल और लोहे से बने होते हैं।

क्षुद्रग्रहों का वर्गीकरण इनकी सौरमंडल में जगह के आधार पर भी किया गया है।

1. मुख्य पट्टा– मंगल और गुरु के मध्य कुछ क्षुद्रग्रह होते हैं। ये सूर्य से 2 से 4AU की दूरी पर होते हैं। इनमें कुछ उपवर्ग भी हैं– हंगे रियास, लोरास,

फोकिया, कोरोनीस, एओस, थेमीस, सायबेलेस और हिडाल्स। हिडाल्स इनमें से मुख्य है।

2. एटेंस– ये सूर्य 1.0 AU से ज्यादा दूरी पर लेकिन 1.01 AU से कम दूरी पर है।
3. अपोलोस– ये सूर्य से 1.0 AU से ज्यादा दूरी पर लेकिन 1.01 AU से कम दूरी पर है।
4. अमार्स– ये सूर्य से 1.017 AU से ज्यादा दूरी पर लेकिन 1.3 AU से कम दूरी पर है।
5. ट्राजन– ये गुरु के गुरुत्व के पास होते हैं।

टिप्पणी

क्षुद्र ग्रह घेरा

क्षुद्र ग्रह घेरा या एस्टरौयड बेल्ट हमारे सौरमण्डल का एक क्षेत्र है जो मंगल ग्रह और बृहस्पति ग्रह की ग्रहपथाओं के बीच में स्थित है जिससे लाखों–हजारों क्षुद्रग्रह सूरज की परिक्रमा कर रहे हैं। इनमें एक 150 किलोमीटर के व्यास वाला सेरस नाम का बौना ग्रह भी है जो अपने स्वयं के गुरुत्वाकर्षण खिंचाव से गोल आकार पा चुका है।

यहां पर तीन और 400 किलोमीटर के व्यास से बड़े क्षुद्रग्रह पाए जा चुके हैं– वॅस्टा, पैलस और हाइजिआ। पूरे क्षुद्रग्रह घेरे के कुल द्रव्यमान में से आधे से ज्यादा इन्हीं चार वस्तुओं में निहित है। बाकी वस्तुओं का आकार भिन्न–भिन्न है कुछ तो दसियों किलोमीटर बड़े हैं और कुछ धूल कण मात्र हैं।

सन् 2008 के मध्य तक, पांच छोटे पिंडों को बौने ग्रह के रूप में वर्गीकृत किया जाता है सेरस क्षुद्रग्रह घेरे में है और वरुण से परे चार सूर्य ग्रह पथ– यम, हउमेया, माके और ऍरिस। 6 ग्रहों और तीन बौने ग्रहों की परिक्रमा प्राकृतिक उपग्रह करते हैं जिन्हें आमतौर पर पृथ्वी के चन्द्रमा के नाम के आधार पर चंद्रमा ही पुकारा जाता है। हर बाहरी ग्रह को धूल और अन्य कणों से निर्मित छल्लों द्वारा परिवृत किया जाता है।

ग्रहीय मण्डल

ग्रहीय मण्डल से उसी प्रक्रिया से बनते हैं जिससे तारों की सृष्टि होती है। आधुनिक खगोलशास्त्र में माना जाता है कि जब अंतरिक्ष में कोई अणुओं का बादल गुरुत्वाकर्षण से सिमटने लगता है तो वह किसी तारे के आसपास तक एक आदिग्रह चक्र बना देता है। पहले अणु जमा होकर धूल के कण बना देते हैं फिर कण मिलकर डले बन जाते हैं।

गुरुत्वाकर्षण के निरंतर प्रभाव से इन डलों में टकराव और जमावड़े होते रहते हैं और धीरे–धीरे मलबे के बड़े बड़े टुकड़े बन जाते हैं जो समय के साथ–साथ ग्रहों, उपग्रहों और अलग वस्तुओं का रूप धारण कर लेते हैं। जो वस्तुएं बड़ी होती हैं उनका गुरुत्वाकर्षण बल प्रबल होता है और वे अपने–आप को सिकोड़कर एक गोले का आकार धारण कर लेती है।

किसी ग्रहीय मण्डल के सृजन के पहले चरणों में यह ग्रह और उपग्रह कभी–कभी आपस में टकरा भी जाते हैं जिससे कभी तो वह खंउित हो जाते हैं और कभी जुड़कर और बड़े हो जाते हैं। माना जाता है कि हमारी पृथ्वी के साथ एक

मंगलग्रह जितनी बड़ी वस्तु का भयंकर टकराव हुआ जिससे पृथ्वी का बड़ा–सा सतही हिस्सा उखाड़कर पृथ्वी के आसपास परिक्रमा ग्रहपथ में चला गया और धीरे–धीरे जुड़कर हमारा चंद्रमा बन गया।

टिप्पणी

सौर वायु– सौरमण्डल सौर वायु द्वारा बनाए गए एक बड़े बुलबुले से घिरा हुआ है जिसे हिलियोस्फियर कहते हैं। इस बुलबुले के अंदर सभी पदार्थ सूर्य द्वारा उत्सर्जित हैं। अत्यंत अधिक उर्जा वाले कण इस बुलबुले के अंदर हिलियोस्फियर के बाहर से प्रवेश कर सकते हैं। यह किसी तारे के बाहरी वातावरण द्वारा उत्सर्जन किए गए आवेशित कणों की धारा को सौर वायु कहते हैं।

सौर वायु विशेषकर अत्यधिक उर्जा वाले इलेक्ट्रान और प्रोटॉन से बनी होती है इनकी उर्जा किसी तारे के गुरुत्व प्रभाव से बाहर जाने के लिए पर्याप्त होती है। सौर वायु सूर्य से हर दिशा में प्रवाहित होती है जिसकी गति कुछ सौ किलोमीटर प्रति सेकेण्ड होती है। सूर्य के संदर्भ में इसे सौर वायु कहते हैं अन्य तारों के संदर्भ में इसे ब्रह्माण्ड वायु कहते हैं।

प्लूटो से बहुत बाहर सौर वायु खगोलीय माध्यम के प्रभाव से धीमी हो जाती है। यह प्रक्रिया कुछ चरणों में होती है। खगोलीय माध्यम और सारे ब्रह्माण्ड में फैला हुआ है। यह एक बहुत ही कम घनत्व वाला माध्यम है। सौर वायु सुपरसोनिक गति से धीमी होकर सबसोनिक गति में आने वाले चरण को टर्मिनेशन शाक या सामग्री सदमा कहते हैं।

सबसोनिक गति पर सौर वायु खगोलीय माध्यम के प्रवाह के प्रभाव में आने से दबाव होता है जिससे सौर वायु धूमकेतु की पूंछ जैसी आकृति बनाती है जिसे हिलिओसिथ कहते हैं। हिलिओसिथ की बाहरी सतह जहां पर हिलियोस्फियर खगोलीय माध्यम से मिलता है हिलीयोपाज कहलाती है। हिलीयोपाज क्षेत्र सूर्य के आकाशगंगा के केंद्र की परिक्रमा के दौरान खगोलीय माध्यम में एक हलचल उत्पन्न करता है। यह खलबली वाला क्षेत्र जो हिलियोपाज के बाहर है वह बो–शाक या धनु सदमा कहलाता है।

धूमकेतु– सौरमण्डल के छोर पर बहुत ही छोटे–छोटे अरबों पिंड विद्यमान हैं जो धूमकेतु या पुच्छल तारा कहलाते हैं। इसका नाम पुच्छल इसके पीछे एक छोटी चमकदार पूंछ के होने की वजह से पड़ा है। Comet शब्द, ग्रीक शब्द Kometes से बना है जिसका अर्थ होता है Hairy one बालो वाला।

यह इसी तरह से दिखते हैं इसलिए यह नाम पड़ा। धूमकेतु या पुच्छल तारे, चट्टान, धूल और जमी हुई गैसों के बने होते हैं। जो सूर्य की परिक्रमा करते हैं। परिक्रमा करते समय गैस और धूल के कण पूंछ का आकार ले लेते है। सूर्य के निकट आने पर गर्मी के कारण जमी हुई गैसें और धूल के कण सूर्य से विपरीत दिशा में फैल जाते हैं और सूर्य की रोशनी परिवर्तित कर चमकने लगते हैं।

चीनी सभ्यता हेली के धूमकेतु को 240 ईसा पूर्व देखे जाने का प्रमाण है। इंग्लैंड के नारमन आक्रमण के समय 1066 में भी हेली का धूमकेतु देखा गया था। सन् 1995 तक 878 धूमकेतुओं को सारणबीबद्ध दिया जा चुका था और उनकी कक्षाओं की गणना

हो चुकी थी। इनमें से 184 धूमकेतुओं का परिक्रमा काल 200 सालों से कम है। बाकी धूमकेतुओं के परिक्रमा काल की सही गणना पर्याप्त जानकारी के अभाव में नहीं की जा सकी है।

टिप्पणी

धूमकेतुओं को कभी कभी गन्दी या कीचड़ युक्त बर्फीली गेंद कहा जाता है। ये विभिन्न बर्फो और धूल के मिश्रण होते हैं और किसी कारण से सौरमण्डल के ग्रहों का भाग नहीं बन पाए पिंड हैं। यह हमारे लिए आवश्यक है क्योंकि ये सौरमण्डल के जन्म के समय से मौजूद हैं। जब धूमकेतु सूर्य के निकट होते हैं तो उनके कुछ स्पष्ट भाग दिखाई देते हैं।

केन्द्रक में ठोस और स्थायी भाग जो मुख्यतः बर्फ, धूल और अन्य ठोस पदार्थों से बना होता है। कोमा में जल, कार्बनडाईआक्साइड तथा अन्य गैसों का घना बादल जो केंद्रक से उत्सर्जित होते रहता है। हाइड्रोजन बादल में लाखों किलोमीटर चौड़ा विशालकाय हाइड्रोजन का बादल का धूल भरी पूंछ लगभग 100 लाख किलोमीटर लंबे धुएं के कणों के जैसे धूलकणों की पूंछनुमा आकृति।

यह किसी भी धूमकेतु का सबसे ज्यादा दर्शनीय भाग होता है। आयन पूंछ में सैकड़ों लाख किलोमीटर लंबा प्लाज्मा का प्रवाह जो सौर वायु के धूमकेतु की प्रतिक्रिया से बना होता है। धूमकेतु सामान्यतः दिखाई नहीं देते हैं लेकिन जब वे सूर्य के समीप आते हैं तो वे दिखाई देने लगते हैं। ज्यादातर धूमकेतुओं की कक्षा प्लूटो की कक्षा से बाहर होते हुए सौरमंडल के अंदर तक होती है। इन धूमकेतुओं का परिक्रमा काल लाखो साल होता है।

कुछ छोटे परिक्रमा काल के धूमकेतु ज्यादातर प्लूटो की कक्षा से अंदर रहते हैं। सूर्य की 500 या इसके आसपास परिक्रमाओं के बाद धूमकेतुओं की ज्यादातर बर्फ और गैस खत्म हो जाती है। इसके बाद क्षुद्रग्रहों के जैसा चट्टानी भाग शेष रहता है। पृथ्वी के पास के आधे से ज्यादा क्षुद्रग्रह शायद मृत धूमकेतु है।

जिन धूमकेतुओं की कक्षा सूर्य के निकट तक जाती है उनके ग्रहों या सूर्य से टकराने की या गुरु जैसे महाकाय ग्रह के गुरुत्व से सुदुर अंतरिक्ष में फेंके दिए जाने की संभावना होती है। सबसे अधिक प्रसिद्ध धूमकेतु हेली का धूमकेतु है। सन् 1994 में शुमेकर लेवी का धूमकेतु चर्चा में रहा था जब वह गुरु से टुकड़ों में टूटकर जा टकराया था।

पृथ्वी जब किसी धूमकेतु की कक्षा से गुजरता है तो उसका उल्कापात होता है। कुछ उल्कापात एक नियमित अंतराल में होते हैं जैसे प्रसीड उल्कापात जो हर साल 9 अगस्त और 13 अगस्त के मध्य होता है जब पृथ्वी स्विट टटल धूमकेतु की कक्षा से गुजरती है। हेली का धूमकेतु अक्टूबर में होने वाले ओरियानाइड उल्कापात के लिए जिम्मेदार है। बहुत सारे धूमकेतु शौकिया खगोलशास्त्रियों ने खोजे हैं क्योंकि ये सूर्य के निकट आने पर आकाश में सबसे अधिक चमकीले पिंड में होते हैं।

उल्का– उल्का चट्टानों या धातु के छोटे टुकड़े होते हैं। जब क्षुद्रग्रह टूटते हैं तो उल्का बन जाते है। यह उल्का जब रतार से यात्रा करते है तो इनमें हवा के घर्षण से आग लग जाती है और तब ये उल्का से उल्कापिंड बन जाते हैं। कई लोग इस

गिरते हुए जलते उल्कापिंड को टूटता हुआ तारा कहते हैं। उल्काएं प्रकाश की चमकीली धारी के रूप में दिखाई देती हैं। बड़े उल्का पिंड बहुत नुकसान पहुंचा सकते हैं।

टिप्पणी

नैप्चून– इसके अतिरिक्त ज्वालामुखी वाला पिंड नेप्चून के सबसे बड़े उपग्रह ट्राइटन पर मौजूद है। नेप्चून सूर्य से पृथ्वी के मुकाबले 30 गुना दूरी पर स्थित है। इसके बारे में वायेजर 2 स्पेस मिशन ने सन् 1989 में पता लगाया था। वायेजर की भेजी तस्वीरों से पता चला है कि इसकी सतह भी चंद्रमा जैसी ही है।

वायेजर 2 ने ही ये पता लगाया था कि ट्राइटन की सतह से निकलने वाला लावा या कोई और पदार्थ अंतरिक्ष में 8 किलो मीटर ऊपर उठ रहा है। हालांकि बहुत संभव है कि ट्राइटन से निकलने वाला पदार्थ लावा नहीं होकर बर्फ भी हो सकता है। नासा के वैज्ञानिकों के अनुसार पूरी सतह वाटर आइस से भरी हुई है।

शैरान– शैरान प्लूटो का सबसे बड़ा चंद्रमा है। शैरान की कक्षा प्लूटो से 19,640 किलोमीटर है। शैरान का व्यास 1206 किलोमीटर और द्रव्यमान 1,52e21 किलोग्राम है। शैरान पाताल में मृत आत्मा को अचेरान नदी पार कराने वाले नाविक का नाम है। शैरान को जीम क्रिस्टी ने सन् 1978 में खोजा था।

पहले समय में यह माना जाता था कि प्लूटो शैरान से है क्योंकि प्लूटो और शैरान के चित्र धुंधले थे। शैरान असामान्य चंद्रमा है क्योंकि यह सौरमण्डल में अपने ग्रह की तुलना में सबसे बड़ा चंद्रमा है। इसके पहले यह श्रेय पृथ्वी और चंद्रमा का था। कुछ वैज्ञानिक प्लूटो और शैरान को ग्रह और चंद्रमा की बजाय युग्म ग्रह मानते है।

शैरान का व्यास अनुमानित है और इसमें 2 प्रतिशत की गलती की संभावना है। इसका द्रव्यमान और घनत्व भी सही तरह से ज्ञात नहीं है। प्लूटो और शैरान एक दूसरे की परिक्रमा समकाल में करते है अर्थात दोनों एक दूसरे के सम्मुख एक ही पक्ष रखते हैं। यह सौरमण्डल में अनोखा है।

शैरान की संरचना अज्ञात है लेकिन कम घनत्व दर्शाता है कि यह शनि के बर्फीले चंद्रमाओं की तरह है। इसकी सतह पानी की बर्फ से ढकी है। आश्चर्यजनक रूप से यह प्लूटो से भिन्न है। यह माना जाता है कि यह प्लूटो के किसी पिंड से टकराने से बना होगा। शैरान पर वातावरण होने में शंका है।

प्लूटो– प्लूटो यह दूसरा सबसे भारी बौना ग्रह है। सामान्यतः यह नेपच्युन की कक्षा से बाहर रहता है। प्लूटो सौरमंउल के सात चंद्रमाओं से छोटा है। प्लूटो की कक्षा सूर्य की औसत दूरी से 5,913,520,000 किलोमीटर है। प्लूटो का व्यास 2274 किलोमीटर है और इसका द्रव्यमान 1,27e22 है। रोमन मिथको के अनुसार प्लूटो पाताल का देवता है।

प्लूटो को यह नाम इस ग्रह के अंधेरे के कारण और इसके आविष्कार पर्सीवल लावेल के आद्याक्षरों के कारण मिला है। प्लूओ को सन् 1930 में संयोग से खोजा गया था। युरेनस और नेप्च्युन की गति के आधार पर की गई गणना में गलती की वजह से नेपच्युन के परे एक और ग्रह के होने की भविष्यवाणी की गई थी।

टिप्पणी

लावेल वेधशाला अरिजोना में क्लायड टामबाग इस गणना की गलती से अनजान थे। उन्होंने पूरे आकाश का सावधानीपूर्वक निरीक्षण किया और प्लूटो को खोज निकाला। खोज के तुरंत बाद यह पता चल गया था कि प्लूटो इतना छोटा है कि यह दूसरे ग्रह की कक्षा में प्रभाव नहीं डाल सकता है।

इसका परिक्रमा पथ बाकी ग्रहों से ज्यादा झुका हुआ है। प्लूटो नेपच्यून की कक्षा को काटता हुआ प्रतीत होता है लेकिन परिक्रमा पथ के झुके होने से वह नेपच्युन से कभी नहीं टकराएगा। युरेनस की तरह प्लूटो का विषुवत उसके परिक्रमा पथ के प्रतल पर लंबबत है। प्लूटो की सतह पर तापमान –235 सेल्सियस से –210 सेल्सियस तक विचलन करता है।

गर्म क्षेत्र साधारण प्रकाश में गहरे नजर आते हैं। प्लूटो की संरचना अज्ञात है लेकिन उसके घनत्व के होने से अनुमान है कि यह ट्राइटन की तरह 70 प्रतिशत चट्टान और 30 प्रतिशत जल बर्फ से बना है। इसके चमकदार क्षेत्र नाईट्रोजन की बर्फ के साथ कुछ मात्रा में मिथेन, इथेन और कार्बन मोनोआक्साइड की बर्फ से ढके है।

इसके गहरे क्षेत्रों की संरचना अज्ञात है लेकिन इन पर कार्बनिक पदार्थ होने की संभावना है। प्लूटो के वातावरण के विषय बहुत कम जानकारी है लेकिन शायद यह नाइट्रोजन के साथ कुछ मात्रा में मिथेन और कार्बन मोनोआक्साइड से बना हो सकता है। यह बहुत पतला है और दबाव भी कुछ मीलीबार है।

प्लूटो का वातावरण इसके सूर्य के निकट होने पर ही अस्तित्व में आता है शेष अधिकतर काल में यह बर्फ बन जाता है। जब प्लूटो सूर्य के निकट होता है तब इसका कुछ वातावरण उड़ भी जाता है। नासा के वैज्ञानिक इस ग्रह की यात्रा इसके वातावरण के जमे रहने के काल में करना चाहते हैं। प्लूटो और ट्राईटन की असामान्य कक्षाएं और उनके गुणधर्मो में समानता इन दोनों में ऐतिहासिक संबंध दर्शाती है।

एक समय में यह माना जाता था कि प्लूटो कभी नेपच्युन का चंद्रमा रहा होगा लेकिन अब यह ऐसा नहीं माना जाता है। अब यह माना जाता है कि ट्राईटन प्लूटो के जैसे स्वतंत्र रूप से सूर्य की परिक्रमा करते रहा होगा और किसी कारण से नेपच्युन के गुरुत्व की चपेट में आ गया होगा। शायद ट्राइटन, प्लूटो और शेरान शायद उड़ते बादल से सौरमण्डल में आए हुए पिंड हैं। पृथ्वी के चन्द्रमा की तरह शैरान शायद प्लूटो के किसी पिंड से टकराने से बना है। प्लूटो को दूरबीन से देखा जा सकता है।

नेरेईड– यह नेपच्युन का तीसरा सबसे बड़ा चंद्रमा है। इसकी कक्षा नेपच्युन से 5,513,400 किलोमीटर है इसका व्यास 340 किलोमीटर है। नेरेइड सागरी जलपरी है और नेरेउस और डोरीस की 50 पुत्रियों में से एक है। इसकी खोज काईपर ने सन् 1949 में की थी।

नेरेइड की कक्षा सौरमंडल के किसी भी ग्रह या चंद्रमा से ज्यादा विकेंद्रित है। नेरेइड की नेपच्युन से दूरी 1,353,600 किलोमीटर से 9,623,700 किलोमीटर तक विचलित होती है। इसकी विचित्र कक्षा से लगता है कि यह एक क्षुद्रग्रह है या काईपर पट्टे का पिंड है।

टिप्पणी

ट्राइटन– यह नेपच्युन का सातवां ज्ञात और सबसे बड़ा चंद्रमा है। इसकी कक्षा नेपच्युन से 354,760 किलोमीटर है। इसका व्यास 2700 किलोमीटर है और इसका द्रव्यमान 2.14म22 किलोग्राम है। इसकी खोज लासेल ने सन् 1846 में नेपच्युन की खोज के कुछ सप्ताहों में की थी। ग्रीक मिथकों में ट्राईटन सागर का देवता है जो नेपच्युन का पुत्र है।

इसे मानव के धड़ और चेहरे लेकिन मछली के पूंछ वाले देवता के रूप में दर्शाया जाता है। ट्राईटन के विषय में हमारी जानकारी वायेजर 2 द्वारा 25 अगस्त 1989 की यात्रा से प्राप्त जानकारी तक ही सीमित है। ट्राईटन विपरीत दिशा में नेपच्युन की परिक्रमा करता है। यह बड़े चंद्रमाओं से अकेला है जो विपरीत दिशा में परिक्रमा करता है।

अन्य विपरीत दिशा में परिक्रमा करने वाले बृहस्पति के चंद्रमा एनान्के, कार्मे, पासीपे और शनि का चंद्रमा फोबे ट्राइटन के व्यास के 1/10 भाग से भी छोटे हैं। अपनी इस विचित्र परिक्रमा की वजह से लगता है कि ट्राइटन शायद सौरमण्डल की मात्र सौर निहारिका से नहीं बना है। यह कहीं पर बना होगा और बाद में नेपच्युन के परे X ग्रह की खोज जारी रही लेकिन कुछ नहीं मिला और इस ग्रह के मिलने की संभावना भी नहीं है। कोई X ग्रह नहीं है क्योंकि वायेजर 2 से प्राप्त आंकड़ों के अनुसार युरेनस और नेपच्युन की कक्षा न्युटन के नियमों का पालन करती है। कोई X ग्रह नहीं है इसका अर्थ यह नहीं है कि प्लूटो के परे कोई और पिंड नहीं है। प्लूटो के परे बर्फीले क्षुद्र ग्रह, धूमकेतु और बड़ी संख्या में छोटे–छोटे पिंड मौजूद हैं।

इनमें से बहुत से पिंड प्लूटो के आकार के भी हैं। प्लूटो पर अभी तक कोई भी अंतरिक्ष यान नहीं भेजा गया है, हब्बल से प्राप्त तस्वीरें भी प्लूटो के बारे में अधिक जानकारी देने में असमर्थ है। वर्ष 2006 में प्रक्षेपित अंतरिक्ष यान न्यु हारीजांस वर्ष 2015 में प्लूटो के पास पहुंचेगा। प्लूटो का एक उपग्रह भी है जिसका नाम शैरान है।

शैरान को सन् 1978 में संक्रमण विधि से खोजा गया था। जब प्लूटो सौरमण्डल के प्रतल में आ गया था और शैरान द्वारा प्लूटो के सामने से गुजरने पर इसके प्रकाश में आई कमी को देखा जा सकता था। 2005 में हब्बल ने इसके दो और चंद्रमाओं को खोजा जिन्हें निक्स और हायड्रा का नाम दिया गया था। इनका व्यास क्रमशः 50 और 60 किलोमीटर है।

प्लूटो का व्यास अनुमानित है इसमें 1 प्रतिशत की गलती की संभावना है। प्लूटो और शैरान का द्रव्यमान ज्ञात है जो शैरान की कक्षा और परिक्रमा कला की गणना में प्रयोग कर ज्ञात किया गया है लेकिन प्लूटो और शैरान का स्वतंत्र रूप से द्रव्यमान ज्ञात नहीं है। इसके लिए दोनों पिंडों द्वारा दोनों के मध्य गुरुत्व केन्द्र के परिक्रमण काल की गणना करनी होगी।

इस गणना को हब्बल दूरबीन द्वारा नहीं किया जा सकता है। यह गणना न्यु हारीजांस के द्वारा आंकड़े भेजे जाने के बाद ही संभव हो सकती है। प्लूटो सौरमंडल में सबसे ज्यादा गहरे रंग का पिंड है। प्लूटो के वर्गीकरण में विवाद रहा है। यह 75 वर्षो तक सौरमंडल में नवे ग्रह के रूप में जाना जाता रहा लेकिन 24 अगस्त 2006 में

इसे अंतर्राष्ट्रीय खगोल संगठन ने ग्रहों के वर्ग से निकालकर एक नए वर्ग बौने ग्रह में रख दिया।

टिप्पणी

प्लूटो की कक्षा अत्यधिक विकेंद्रित है, ये नेपच्युन की कक्षा के अंदर भी आता रहा है। हाल ही में यह नेपच्युन की कक्षा के अंदर जनवरी 1979 से 11 फरवरी 1999 तक रहा था। प्लूटो ज्यादातर ग्रहों की विपरीत दिशा में घूर्णन करता है। प्लूटो ने नेपच्युन से 3:2 के अनुपात से बंधा हुआ है, इसका अर्थ यह है कि प्लूटो का परिक्रमा काल नेपच्युन से 1.5 गुना लंबा है। नेपच्युन के गुरुत्व की चपेट में आ गया होगा।

इस प्रक्रिया में वह नेपच्युन के किसी चंद्रमा से टकराया होगा। यह प्रक्रिया नेरेईड की असामान्य कक्षा के पीछे एक वजह हो सकती है। अपनी विपरीत कक्षा की वजह से नेपच्युन और ट्राइटन के मध्य ज्वारीय बंध ट्राइटन की गतिज उर्जा को कम कर रहा है जिसकी वजह से इसकी कक्षा छोटी होती जा रही है।

आने वाले भविष्य में ट्राइटन टुकड़ों में बंटकर वलय में बदल जाएगा या नेपच्युन से टकरा जाएगा। इस समय में यह केवल एक कल्पना मात्र ही है। ट्राइटन का घूर्णन अक्ष विचित्र है। वह नेपच्युन के अक्ष के संदर्भ में 157 डिग्री झुका हुआ है जबकि नेपच्युन का अक्ष 30 डिग्री झुका हुआ है ट्राइटन का घूर्णन अक्ष युरेनस के जैसा है जिसमें इसके ध्रुव और विषुवत के क्षेत्र में एक के बाद एक सूरज की ओर होते हैं।

इस वजह से इस पर विषय मौसमी स्थिति उत्पन्न होती है। वायेजर की यात्रा के समय इसका दक्षिणी ध्रुव सूर्य की तरफ था। ट्राइटन का घनत्व शनि के बर्फीले चंद्रमाओं जैसे रीआ से अधिक है। ट्राइटन में शायद 25 प्रतिशत पानी बर्फ और शेष चट्टानी पदार्थ हैं। वायेजर ने ट्राईटन का वातावरण पतला पाया था जो मुख्यतः नाईट्रोजन और मिथेन की कुछ मात्रा से बना है। एक पतला कोहरा पांच से दस किलोमीटर की ऊंचाई तक छाया रहता है।

ट्राइटन की सतह पर तापमान 34.5 डिग्री केल्विन रहता है जो प्लूटो के जैसा है। इसकी चमक ज्यादा है जिससे सूर्य की अत्यल्प रोशनी की भी छोटी मात्रा में अवशोषित होती है। इस तापमान पर मिथेन, नाइट्रोजन और कार्बनडाईआक्साइड जमकर ठोस बन जाते हैं। इस पर कुछ ही क्रेटर दिखाई देते हैं इसकी सतह नहीं है।

इसके दक्षिणी गोलार्ध में नाइट्रोजन और मिथेन की बर्फ जमी रहती है। ट्राइटन की सतह पर जटिल पैटर्न में पर्वत श्रेणी और घटिया है जो शायद जमने या पिघलने की प्रक्रिया की वजह से है। ट्राइटन की दुनिया में सबसे विचित्र इसके बर्फीले ज्वालामुखी हैं। इनसे निकलने वाला पदार्थ द्रव नाइट्रोजन, धूल और मिथेन के यौगिक है।

वायेजर के एक चित्र में एक ज्वालामुखी सतह से 8 किलोमीटर ऊंचा और 140 किलोमीटर चौड़ा है। ट्राइटन, आयो, शुक्र और पृथ्वी सौरमण्डल में सक्रिय ज्वालामुखी वाले पिंड हैं। मंगल पर भूतकाल में ज्वालामुखी थे। यह एक बहुत विचित्र तथ्य है कि पृथ्वी और शुक्र के ज्वालामुखी चट्टानी पदार्थ उत्सर्जित करते हैं और अंदरूनी गर्मी द्वारा चालित है जबकि आयो के ज्वालामुखी गंधक या गंधक के यौगिक उत्सर्जित करते हैं और गुरु के ज्वारीय बंध द्वारा चालित है। वहीं ट्राइटन के ज्वालामुखी

नाइट्रोजन या मिथेन उत्सर्जित करते हैं तथा सूर्य द्वारा प्रदान मौसमी उष्णता से चालित हैं।

टिप्पणी

प्राटेउस– यह नेपच्युन का छठा ज्ञात और दूसरा सबसे बड़ा चंद्रमा है। इसकी कक्षा 117,600 किलोमीटर नेपच्युन से है। इसका व्यास 418 किलोमीटर है। पाटेउस एक सागरी देवता था जो अपना आकार बदल सकता था। इसकी खोज सन् 1989 में वायेजर 2 ने की थी। यह नेरेइड से बड़ा है लेकिन बहुत गहरे रंग का है।

यह नेपच्युन के इतने निकट है कि इसे नेपच्युन की चमक देखा जाना मुश्किल है। प्राटेउस अनियमित आकार का चंद्रमा है। यह शायद अनियमित आकार के पिंड के लिए गुरुत्व के कारण गोलाकार होने की सीमा से थोड़ा–सा ही छोटा है। इसकी सतह पर क्रेटरों की भरमार है और भूगर्भिय गतिविधि के कोई प्रमाण नहीं है।

हीलोयोस्फियर– हमारा सौरमण्डल एक बहुत बड़े बुलबुले से घिरा हुआ है जिसे हीलोयोस्फियर कहते हैं। हीलोयोस्फियर सौरमण्डल द्वारा बनाया गया एक बुलबुला है। इस बुलबुले के अंदर सभी पदार्थ सूर्य द्वारा उत्सर्जित है। वैसे इस बुलबुले के अंदर हीलोयोस्फियर के बाहर से अत्यंत अधिक उर्जा वाले कण प्रवेश कर सकते हैं।

सौर वायु किसी तारे के बाहरी वातावरण द्वारा उत्सर्जित आवेशित कणों की एक धारा होती है। सौर वायु मुख्यतः अत्यधिक उर्जा वाले इलेक्ट्रान और प्रोटान से बनी होती है। इनकी उर्जा किसी तारे के गुरुत्व प्रभाव से बाहर जाने के लिए पर्याप्त होती है। सौर वायु सूर्य से हर दिशा में प्रवाहित होती है जिसकी गति कुछ सौ किलोमीटर प्रति सैकण्ड होती है।

सूर्य के संदर्भ में इसे सौर वायु कहते हैं, अन्य तारों के संदर्भ में इसे ब्रह्मांड वायु कहते हैं। सूर्य से कुछ दूरी पर प्लूटो से काफी बाहर सौर वायु खगोलीय माध्यम के प्रभाव से धीमी हो जाती है। यह प्रक्रिया कुछ चरणों में होती है। खगोलीय माध्यम से हाइड्रोजन और हिलीयम से बना हुआ है और सारे ब्रह्मांड में फैला हुआ है।

यह एक अधिक कम घनत्व वाला माध्यम है। सौर वायु सुपरसोनिक गति से धीमी होकर सबसोनिक गति में आ जाती है। इस चरण को टर्मिनेशन शाक या समापन सदमा कहते हैं। सबसोनिक गति दर सौर वायु खगोलीय माध्यम के प्रवाह के प्रभाव में आ जाती है। इस दबाव से सौर वायु धूमकेतु की पूंछ जैसी आकृति बनाती है जिसे हीलोयोशेथ कहते हैं।

हीलीयोशेथ की बाहरी सतह जहां हीलोयोस्फियर खगोलीय माध्यम से मिलता है हीलीयोपाज कहलाती है। हीलीयोपाज क्षेत्र सूर्य की आकाशगंगा के केंद्र की परिक्रमा के दौरान खगोलीय माध्यम में एक हलचल उत्पन्न करता है यह खलबली वाला क्षेत्र जो हीलोयापाज के बाहर बौ शाक या धनुष सदमा कहलाता है।

टर्मीनेशन शॉक– खगोल विज्ञान में टर्मिनेशन शाक सूर्य के प्रभाव को सीमित करने वाली बाहरी सीमा है। यह वह सीमा है जहां सौर वायु के बुलबुलों की स्थानीय खगोलीय माध्यम के प्रभाव से कम होकर सबसोनिक गति तक सीमित हो जाती है। इससे संकुचन, गर्म होना और चुंबकीय क्षेत्र में बदलाव जैसे प्रभाव उत्पन्न होते हैं।

टिप्पणी

यह टर्मिनेशन शाक क्षेत्र सूर्य से 75–90 खगोलीय इकाई की दूरी पर है। टर्मिनेशन शाक सीमा सौर ज्वाला के विचलन के अनुपात में कम ज्यादा होते रहती है। समापन सदमा या टर्मिनेशन शाक की उत्पत्ति की वजह तारों से निकलने वाली सौर वायु के कणों की गति से ध्वनि की गति में परिवर्तन है।

खगोलीय माध्यम जिसका घनत्व अत्यंत कम होता है और उस पर कोई विशेष दबाव नहीं होता है वही सौर वायु का दबाव उसे उत्पन्न करने वाले तारे की दूरी के वर्गमूल के अनुपात में कम होती है। सौर वायु तारे से दूर जाती है एक विशेष दूरी पर खगोलीय माध्यम का दबाब सौर वायु के दबाव से ज्यादा हो जाता है और सौर वायु के कणों की गति को कम कर देता है जिससे एक सदमा तरंग उत्पन्न होती है।

सूर्य के बाहर जाने पर टर्मिनेशन शाक के बाद एक और सीमा आती है जिसे हीलोयोपाज कहते हैं। इस सीमा पर सौर वायु कण खगोलीय माध्यम के प्रभाव में पूरी तरह से रुक जाते हैं। इसके बाद की सीमा धनुष सदमा है जहां सौर वायु का अस्तित्व नहीं होता है।

वैज्ञानिकों का मानना है कि शोध यान वायेजर 1 दिसंबर, 2004 में टर्मिनेशन शाक सीमा पार कर चुका है। इस समय वह सूर्य से 94 खगोलीय इकाई की दूरी पर था। जबकि इसके विपरीत वायेजर 2 ने मई 2006 में 76 खगोलीय इकाई की दूरी पर ही टर्मिनेशन शाक सीमा पार करने के संकेत देने शुरू कर दिये हैं। इससे यह प्रतीत होता है कि टर्मिनेशन शाक सीमा एक गोलाकार आकार में न होकर एक अजीब से आकार में है।

हिलियोशेथ– यह टर्मिनेशन शाक और हीलीयोपाक के बीच का क्षेत्र है। वायेजर 1 और वायेजर 2 अभी इसी क्षेत्र में है और इसका अध्ययन कर रहे हैं। यह क्षेत्र सूर्य से लगभग 80 से 100 खगोलीय दूरी पर है।

हिलीयोपाज– यह सौरमण्डल की वह सीमा है जहां सौर वायु खगोलीय माध यम के कणों को बाहर धकेल पाने में असफल रहती है। इसे सौरमण्डल की सबसे बाहरी सीमा माना जाता है।

बौ शाक– हीलीयोपाज क्षेत्र सूर्य के आकाशगंगा के केंद्र की परिक्रमा के दौरान खगोलीय माध्यम में एक हलचल उत्पन्न करता है। यह हलचल वाला क्षेत्र है जो हीलीयोपाज के बाहर है, बौ शाक या धनुष सदमा कहलाता है।

अन्तरिक्ष में मानव

सिर के ऊपर अनन्त तक विस्तृत नीली छत और निश्चित गति तथा निर्धारित मार्ग से विचरण करते हुए तारागणों को देखकर मनुष्य अंतहीन जिज्ञासा में डूबा हुआ सदैव से यह जानने का इच्छुक रहा है कि यह सब क्या है? इस नीली छत का कोई और छोर है या नहीं? ये विचरण करते हुए असंख्य तारागण कभी आपस में टकराते क्यों नहीं? ऐसे ही अनेक प्रश्न उसके मन–मस्तिष्क का मंथन करते रहे हैं। इन्हीं प्रश्नों का उत्तर पाने के लिए वह सदैव से बेचैन रहा है। अपने प्रश्नों के उत्तर की खोज में वह सौरमण्डल तक जा पहुंचा है। इन प्रश्नों ने केवल वैज्ञानिकों को ही आंदोलित नहीं किया अपितु साहित्यकारों के हृदयों में भी हलचल मचाई है–

टिप्पणी

महानील उस परम व्योम में
अन्तरिक्ष में ज्योतिर्मान।
ग्रह नक्षत्र और तारागण
किसका करते हैं सन्धान?

भारतीय वैज्ञानिक आर्यभट्ट ने पांचवी शताब्दी में सूर्य और चंद्रमा की गति का अध्ययन किया तथा आकाशीय पिंडों का व्यास ज्ञात किया। 12वीं शताब्दी में वैज्ञानिक भास्कराचार्य हुए जिन्होंने 'सिद्धान्त शिरोमणि' ग्रंथ की रचना की। इस ग्रंथ में नक्षत्रों की गति, मार्ग तथा विशेषताओं का विवेचन किया गया है। जर्मनी के प्रसिद्ध वैज्ञानिक जोहान्स केपलर भास्कराचार्य से भी पहले हुए, जिन्होंने आकाशीय पिंडों की गति का अध्ययन किया। इसी संबंध में कोपरनिकस का नाम भी उल्लेखनीय है जिन्होंने खगोल विज्ञान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण खोजें की। मनुष्य जाति के इतिहास में अंतरिक्ष विज्ञान का सूत्रपात मानव–सभ्यता के प्रारंभिक चरण में ही हो गया था किंतु 'अंतरिक्ष युग' का प्रादुर्भाव आधुनिक युग में ही हुआ। इस शताब्दी का छठा दशक अंतरिक्ष युग का प्रारंभ कहा जा सकता है।

1957 में कृत्रिम उपग्रहों का प्रक्षेपण आरंभ हुआ। सोवियत रूस ने 4 अक्टूबर 1957 में प्रथम यान अंतरिक्ष में भेजा। इसका नाम स्पूतनिक प्रथम था। धरती से अंतरिक्ष में भेजे गये इस प्रथम यान ने 65 दिन तक पृथ्वी की परिक्रमा की। इस अवधि में उसने पृथ्वी के 1440 चक्कर लगाये। इस यान में कोई अंतरिक्ष यात्री नहीं था। स्पूतनिक प्रथम के एक माह पश्चात रूसियों ने स्पूतनिक द्वितीय को अंतरिक्ष में भेजा जिसमें एक अंतरिक्ष यात्री भी गया था। यह एक कुतिया थी जिसने अंतरिक्ष यान में 100 बार पृथ्वी के चक्कर लगाये। अंतरिक्ष में सबसे पहले पृथ्वी के चारों ओर घूमने वाला अंतरिक्ष यात्री एक रूसी ही था जिसका नाम यूरि गागरिन था। वह 12 अप्रैल 1961 को अंतरिक्ष में गया तथा पौने दो घंटे में वापस पृथ्वी पर आ गया। वह मनुष्य की बड़ी सफलता थी। यूरी गागरिन तो सारा समय अपने अंतरिक्ष यान में ही रहा। किंतु चार वर्ष पश्चात 1965 में एक अन्य रूसी एलैक्सी लियानेव अंतरिक्ष में पहुंचा। उसने अपना यान अंतरिक्ष में छोड़ दिया तथा अंतरिक्ष में टहला। वह लगभग 20 मिनट तक अंतरिक्ष में तैरता रहा।

इसी बीच अमेरिका भी अंतरिक्ष में यान भेजता रहा। रूस और अमेरिका में चांद पर जाने की होड़ लग गई। रूस ने इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए लूनार (Lunar) शृंखला आरंभ की तथा अमेरिका ने अपोलो शृंखला। अपोलो 1 से अपोलो 7 तक अमेरिका को विशेष सफलता प्राप्त नहीं हुई किंतु अपोलो 8 चन्द्रमा की कक्षा में प्रवेश कर गया। इसने चंद्रमा की दस बार परिक्रमा की। यह अंतरिक्ष यान 21 दिसंबर 1968 को छोड़ा गया था और 27 दिसंबर को यह पृथ्वी पर लौट आया।

चंद्रमा पर मनुष्य के प्रथम चरण 21 जुलाई 1969 को पड़े। 16 जुलाई 1969 की सुबह अपोलो 11 तीन अंतरिक्ष यात्रियों– नील आर्मस्ट्रांग, एडविन एलड्रिन तथा माइकल कोलिन्स को लेकर पृथ्वी से रवाना हुआ। नील आर्मस्ट्रांग चंद्रतल पर पैर रखने वाला प्रथम मानव था। उसके साथ एडविन एलड्रिन भी चंद्रमा पर उतरा। तीसरा अंतरिक्ष माइकल कोलिन्स अंतरिक्ष यान में चंद्रमा का चक्कर लगाता रहा। चंद्रमा पर मानव का लघु चरण मानवता की अंतरिक्ष में एक ऊंची छलांग है। मनुष्य का चिरस्वप्न साकार हो गया। "पन्त" का कवि कह उठा–

टिप्पणी

चन्द्र लोक में प्रथम बार
मानव ने किया पदार्पण,
छिन्न हुए लो, देशकाल के
दुर्जय बाधा बन्धन
युग–युग का पौराणिक स्वप्न
हुआ मानव का सम्भव,
समारंभ शुभ नये चन्द्र–युग का
भू को दे गौरव।

अंतरिक्ष में भारत की दौड़ बहुत देर से आरम्भ हुई। 19 अप्रैल 1975 को भारत का प्रथम भू–उपग्रह अंतरिक्ष में छोड़ा गया जिसका नामकरण पांचवीं शताब्दी के प्रसिद्ध वैज्ञानिक आर्यभट्ट के नाम पर किया गया। 1978 में 'पृथ्वी' नामक एक और उपग्रह अंतरिक्ष में छोड़ा गया। इसका उद्देश्य पृथ्वी के वायुमण्डल तथा भौगोलिक विशेषताओं का अध्ययन करना था। 1980 में भारत ने अपने अंतरिक्ष प्रक्षेपण यान की सहायता से 'रोहिणी' नामक उपग्रह अंतरिक्ष में भेजा। इसके साथ ही भारत उपग्रह प्रक्षेपण क्षमता रखने वाले देशों में सम्मिलित हो गया। इसके पश्चात कुछ अन्य उपग्रह अंतरिक्ष में भेजे गये जिन्होंने सफलतापूर्वक अपने कार्य को संपन्न किया। 'इनसेट' शृंखला के उपग्रह इसी श्रेणी में आते हैं।

अंतरिक्ष में जाने वाले प्रथम अंतरिक्ष यात्री का नाम राकेश शर्मा है। स्क्वाड्रन लीडर राकेश शर्मा सोवियत रूस के अंतरिक्ष यान में अंतरिक्ष में गये। वे अन्य रूसी अंतरिक्ष यात्रियों के साथ एक सप्ताह तक अंतरिक्ष में रहे तथा भारहीनता में मानव शरीर पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन किया।

अनन्त अंतरिक्ष की भांति मानव की अभिलाषाएं भी अनन्त है। वह पंख पसारकर आकाश के उस पार उड़ जाना चाहता है तथा निरंतर इस खोज में लगा है कि शायद किसी अन्य ग्रह पर किसी सभ्यता का अस्तित्व हो। अभी तक खोजो से ऐसा संकेत नहीं मिलता किन्तु प्रयत्न जारी है। यह लघु मानव अपने अथक परिश्रम, अदम्य साहस और अपरिमित बुद्धि–बल के साथ अपने अनन्त प्रयासों में संलग्न है।

कुछ उल्लेखनीय अपवादों को छोड़कर, मानवता को सौरमण्डल का अस्तित्व जानने में कई हजार वर्ष लग गए। बाइबल के अनुसार पृथ्वी, ब्रह्माण्ड का स्थिर केंद्र है और आकाश में घूमने वाली दिव्य या वायव्य वस्तुओं से स्पष्ट रूप में अलग है। लेकिन 140 इ में क्लाडियस टालमी ने बताया (जेओसेट्रिक अवधारणा के अनुसार) की पृथ्वी ब्रह्माण्ड के केंद्र में है और सारे गृह पिंड इसकी परिक्रमा करते हैं लेकिन कोपरनिकस ने 1543 में बताया कि सूर्य ब्रह्माण्ड के केंद्र में है और सारे ग्रह पिंड इसकी परिक्रमा करते हैं। सौरमंडल में सूर्य और वह खगोलीय पिंड सम्मिलित है, जो इस मंडल में एक दूसरे से गुरुत्वाकर्षण बल द्वारा बंधे है। किसी तारे के इर्द गिर्द परिक्रमा करते हुए उन खगोलीय वस्तुओं के समूह को ग्रहीय मण्डल कहा जाता है जो अन्य तारे न हों, जैसे कि ग्रह, बौने ग्रह, प्राकृतिक उपग्रह, क्षुद्रग्रह, उल्का, धूमकेतु और खगोलीय धूल। हमारे सूरज और उसके ग्रहीय मण्डल को मिलाकर हमारा सौरमण्डल बनता है। इन पिंडों में आठ ग्रह, उनके 172 ज्ञात उपग्रह, पांच बौने ग्रह और अरबों छोटे

टिप्पणी

पिंड शामिल है। इन छोटे पिंडों में क्षुद्रग्रह, बर्फीला काइपर घेरा के पिंड, धूमकेतु, उल्कायें और ग्रहों के बीच की धूल शामिल हैं।

सौरमण्डल के चार छोटे आंतरिक ग्रह बुध, शुक्र, पृथ्वी और मंगल ग्रह जिनहें स्थलीय ग्रह कहा जाता है मुख्यतया पत्थर और धातु से बने है और इसमें क्षुद्रग्रह घेरा, चार विशाल गैस से बने बाहरी गैस दानव ग्रह, काइपर घेरा और निसरा चक्र शामिल है। काल्पनिक और बादल भी सनदी क्षेत्रों से लगभग एक हजार गुना दूरी से परे मौजूद हो सकता है।

अगर हमारा सूरज तारे से बंधा होता तो हमारा सौरमण्डल दो या उससे ज्यादा सूरज के गुरुत्वाकर्षण बल की वजह से अपनी जगह पर बरकरार नहीं रह पाता। हमारा सौरमण्डल एक और कारण से बहुत ही अनोखा है और वह यह कि बड़े–बड़े ग्रह, सौरमण्डल के बाहरी हिस्से में है। इन सभी ग्रहों की कक्षा का आकार लगभग गोल है और इनके गुरुत्वाकर्षण बल से छोटे–छोटे ग्रहों को कोई खतरा नहीं है।

इसके बजाय वे खतरनाक चीजों को अपनी ओर खींचकर या फिर उनकी दिशा को बदलकर छोटे–छोटे ग्रहों की रक्षा करते हैं। वैज्ञानिक पीटर डी. वार्ड और डानल्ड ब्राउनली ने अपनी किताब अनोखी पृथ्वी– जटिल जीवन विश्व में कहीं और क्यों नहीं में कहते हैं– "ग्रहिकाएं और धूमकेतु हमारी पृथ्वी से टकराते जरूर हैं मगर इतनी तादाद में नहीं और यह सब बृहस्पति जैसे बड़े ग्रहों की बदौलत होता है जो गैस से बने हैं।" हमारे सौरमण्डल की तरह और भी दूसरे सौरमण्डलों की खोज की गई है जिनमें भी बड़े–बड़े ग्रह हैं। लेकिन उनमें से अधिकतर लो कक्षाएं ऐसी हैं जो पृथ्वी जैसे छोटे–छोटे ग्रहों को खतरों में डाल सकती हैं।

अपनी प्रगति जांचिए

3. "सूर्य ब्रह्मांड का केन्द्र है"– यह खोज सबसे पहले किसने की?

(क) गैलीलियो (ख) केपलर

(ग) कोपरनिकस (घ) ब्रूनो

4. सौरमंडल का सबसे छोटा ग्रह कौन सा है?

(क) शुक्र (ख) पृथ्वी

(ग) बुध (घ) शनि

4.4 प्रमुख वैज्ञानिक आविष्कार (संकलित)

जब हम विज्ञान में हुए आविष्कारों की बात करते हैं तो एक चीज तो साफ हो जाती है कि बहुत सी ऐसी चीजें हैं जो आज भले ही आम लगे पर जहाँ इनके आविष्कार हुए थे तो ये किसी चमत्कार से कम नहीं थे। लेकिन आज भी हम अगर अपनी जीवन शैली देखें तो भले ही इन आविष्कारों के उन्नत रूप अब हमारे पास है पर अगर ये नहीं होते तो क्या होता?

टिप्पणी

आज पूरी दुनिया में विज्ञान की पताका लहरा रही है। जीवन तथा विज्ञान एक दूसरे के पर्याय बन गए हैं। विज्ञान से मानव को असीमित शक्ति प्राप्त हुई है। आज मनुष्य विज्ञान की सहायता से पक्षियों की भांति आसमान में उड़ सकता है। गहरे से गहरे पानी में सांस ले सकता है। पर्वतों को लांघ सकता है तथा कई मीलों की दूरियों को चंद घंटों में पार कर सकता है। आज मनुष्य ने विज्ञान की सहायता से कई बड़े क्षेत्रों में सफलता पाई है जैसे कि चिकित्सा, सूचना क्रांति, अंतरिक्ष विज्ञान, यातायात आदि।

प्राचीन समय से लेकर आधुनिक काल तक भारत के वैज्ञानिक और उनकी खोज सारे विश्व को ज्ञान की राह दिखाते रहे हैं। चाहे शून्य के आविष्कार की बात रही हो या फिर महत्वपूर्ण गणितीय और ज्योतिषीय विचारों की, भारत का नाम उनके साथ सहज रूप से जुड़ा रहता है।

प्राचीन काल में चरक सुश्रुत, आर्यभट्ट, वराहमिहिर, ब्रह्मगुप्त, नागार्जुन एवं भास्कराचार्य जैसे विश्वविख्यात वैज्ञानिकों से लेकर आधुनिक युग में जगदीश चंद्र बोस, श्रीनिवास रामानुजन, चन्द्रशेखर, वेंकटरामन, मेघनाद साहा, सत्येन्द्रनाथ बसु जैसे महान वैज्ञानिक पैदा हुए जिन्होंने तमाम असुविधाओं से लड़कर नए–नए खोज कर सारी दुनिया में भारत का झण्डा लहराया।

1. **आग का आविष्कार** – आग का आविष्कार आदिमानव काल में ही हो गया था क्योंकि जंगलों में रहने वाले आदिमानव जंगली जानवरों से बचने के लिए आग का उपयोग करते थे और कहा जाता है कि आदिमानव ने आग की खोज पत्थर को रगड़ के की थी जब वो पत्थर को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जा रहे तो गलती से पत्थर एक दूसरे के ऊपर गिरे और आदिमानव ने पत्थरों के टकराने से उत्पन्न चिनगारियों को देखा होगा।

उस समय आदि मानव इससे डरता था लेकिन उनको इसका उपयोग करना सीखा और शुरू में आदिमानव यदि कहीं गुफाएं होती तो मनुष्य उन्हीं में रहने लगते थे। अन्यथा वे बड़े पेड़ों की पत्तों वाली शाखाओं के बीच अपने लिए शरण स्थान बना लेते थे। उन्हें दो चीजों का भय रहता था मौसम और जंगली जानवर। आदिमानव नहीं जानता था कि बादल क्यों गरजते हैं या बिजली क्यों चमकती है और जब किसी चीज का कारण समझ में नहीं आता, तो आदमी उससे भयभीत रहता है। बाघ, शेर, चीता, हाथी और गैंडे जैसे खूँखार जानवर जंगलों में घूमते फिरते रहते थे।

इन जानवरों की तुलना में मनुष्य कमजोर थे, इसलिए उन्हें या तो गुफाओं और पेड़ों में छिपकर अपनी रक्षा करनी पड़ती थी या फिर अपने अनगढ़ हथियारों से उन्हें मार डालना पड़ता था। परन्तु इन जानवरों से रक्षा का सर्वोत्तम उपाय था आग।

रात के समय जहां सभी प्राणी गुफा में जमा हो जाते तो गुफा के मुंह पर आग लगाई जाती थी। आग के डर से जानवर गुफा के भीतर नहीं आते थे। शीतकाल में तूफानी रातों में आग ही उन्हें आराम तथा सुरक्षा प्रदान करती थी।

लेकिन जहां तक आदिमानव ने इसको नियंत्रण करना नहीं सिखा तब तक इसका उपयोग नहीं हुआ आग का प्रयोग लगभग 125000 साल पहले पता चला। और

टिप्पणी

उत्पन्न करने की एक और विधि थी घर्षणविधि से आग उत्पन्न करने की सबसे सरल और प्रचलित विधि लकड़ी के पटरे पर लकड़ी की छड़ रगड़ने की है और प्राचीन भारत में भी इस विधि का प्रचलन था। इस यंत्र को अरणी भी कहते थे इस विधि से आग उत्पन्न करना भारत के अतिरिक्त श्रीलंका, सुमात्रा, आस्ट्रेलिया और दक्षिणी अफ्रीका में भी प्रचलित था।

सन् 1830 के बाद दियासलाई का आविष्कार हो जाने के कारण आग प्रज्वलित रखने की विधि आई थी और आज मानव जीवन में आग के बहुत उपयोग है यदि आग नहीं होती तो मानव जीवन इतना सरल नहीं होता और जैसे–जैसे जनसंख्या बढ़ी, लोग आग के सहारे अधिकाधिक ठंडे देशों में रहने लगे।

2. **विद्युत का आविष्कार**–विद्युत एक ऊर्जा होती है जो प्रकृति में पहले से मौजूद है तो कोई ये नहीं कह सकता कि विद्युत का आविष्कार हुआ बल्कि हम ये कह सकते हैं कि विद्युत की खोज हुई वास्तव में विद्युत की खोज का श्रेय Benjamin Franklin को दिया जाता है। इसके बाद बहुत खोज के बाद 1930 में ताँबे के बर्तन पाए गये जो कि बैटरी बनाने के काम में आते थे और इनका प्रयोग रोमन स्थानों पर रोशनी करने के लिए किया जाता था। ऐसा ही एक उपकरण बगदाद में खुदाई करते समय मिला था। ऐसा माना जाता है कि वो लोग इसका इस्तेमाल बैटरी के लिए करते होंगे।

17वीं शताब्दी तक विद्युत के बारे में बहुत सारी खोज हुई जैसे कि इलेक्ट्रिसिटी में Positive और Negative करंट Electrostertic Generator और Insulators का वर्गीकरण किया गया।

1752 में Ben Franklin ने एक पतंग, चाबी की मदद से साबित किया कि बादलों में जो Lighting होती है। वह और छोटी सी विद्युत चिंगारी दोनों ही एक चीज है। 1800 में Italian Physicist Alessandro Voltr ने एक प्रयोग में पाया कि विशेष रासायनिक प्रतिक्रियाओं की मदद से हम इलेक्ट्रिसिटी बचा सकते हैं उन्होंने सन् 1800 में ही Voltic Pile का आविष्कार किया यह लगातार इलेक्ट्रिसिटी पैदा कर सकती है।

1831 में Michel Foreiday ने इलेक्ट्रिक आइनेमो का आविष्कार किया। फिर इस इलेक्ट्रिसिटी को टेक्नोलॉजी के लिए इस्तेमाल किया जाने लगा। Micheal Foraday के इलेक्ट्रिसिटी डाइनेमो में एक मैगनेट थी जो कॉपर वायर की Coil में घूमती थी और थोड़ी मात्रा में विद्युत बनाती थी। इसके बाद विद्युत के क्षेत्र में बहुत सारे प्रयोग किये गये और नये–नये विद्युत से चलने वाले उपकरण बनाये गये।

3. **वायुयान का आविष्कार**–आज से 114 साल पहले 17 दिसंबर 1903 के दिन राइट बंधुओं ऑरविल और विलबर ने उत्तरी कैरोलिना में राइट फ्लायर नामक विमान से सफल उड़ान भरी थी। विमान 120 फीट की ऊंचाई पर 12 सेकंड तक उड़ा।

वायुयान का आविष्कार करने वाले राइट बंधु बचपन से ही कल्पनाशील थे और अपनी कल्पनाओं की उड़ान में उन्होंने वायुयान का सपना देखना शुरू कर दिया था।

टिप्पणी

अमेरिका के हटिंगटन स्थित यूनाइटेड ब्रेडेन चर्च में बिशप के पद पर कार्यरत उनके पिता ने बचपन में उन्हें एक खिलौना हेलीकॉप्टर दिया था जिसने दोनों भाईयों को असली का उड़न यंत्र बनाने के लिए प्रेरित किया।

कागज, रबर और बांस का बना हुआ यह हेलीकॉप्टर फ्रांस के एयरोनॉटिक विज्ञानी अल्फोंसे पेनाउड के एक अविष्कार पर आधारित था। दोनों में इस खिलौने को लेकर जबरदस्त उत्सुकता थी। दोनों रात दिन इस खिलौने से जब तक खेलते रहे तब तक ये टूट नहीं गया।

17 दिसंबर, 1903 को पहली बार पूर्ण नियंत्रित मानव वायु उड़ान को सफलतापूर्वक अंजाम देने वाले औरविल और विलबर राइट साइकिल की संरचना को ध्यान में रखकर अलग अलग कल पुर्जा जोड़कर वायुयान का विकास करते रहे। उन्होंने कई बार हवा में उड़ने वाले ग्लाइडर बनाए और अंत में जाकर वायुयान बनाने का उनका सपना सच हुआ। दोनों को मशीनी तकनीक की काफी अच्छी समझ थी जिससे उन्हें हेलीकॉप्टर के निर्माण में मदद मिली। यह कौशल उन्होंने प्रिंटिंग प्रेसों, साइकिलों, मोटरों और दूसरी मशीनों पर लगातार काम करते हुए पाया था। दोनों ने 1900 से 1903 तक लगातार ग्लाइडरों के साथ परीक्षण किया था।

राइट बंधुओं को अपने सपनों को साकार करने में उनके परिवार से भी पूरी मदद मिली। लेखिका पामेला डंकन एडवर्डस ने अपनी किताब 'द राइट ब्रदर्स' में लिखा है कि विलबर ने कहा–हम खुशकिस्मत थे कि हमारा पालन पोषण ऐसे वातावरण में हुआ जहां बच्चों को उनकी बौद्धिक रुचियों और उत्सुकताओं की दिशा में काम करने की आजादी मिली हुई थी।

हालांकि राइट बंधुओं के आविष्कार को लेकर काफी विवाद भी हुए थे। फ्रांस की एक कंपनी ने भी इस तरह का आविष्कार करने का दावा किया लेकिन 1908 में पूरी दुनिया ने राइट बंधुओं के आविष्कार को मान्यता दे दी।

4. **कम्प्यूटर का आविष्कार**– कंप्यूटर का इतिहास तीन हजार वर्ष पुराना है। उस समय गिनतारे का उपयोग अंकगणितीय कार्यों के लिए होता था। जिसे आज हम रोमन गिनतारा कहते हैं। उसका उपयोग 2400 ईसा पूर्व के प्रारम्भ में बेबीलोनिया में हुआ था। गिनतारे को Abacus भी कहते हैं। ये तारों का एक फ्रेम होता है, इन तारों में पकी हुई मिट्टी के गोले पिरोये रहते हैं। प्रारंभ में Abacus को व्यापारी गणना करने के लिए उपयोग में लाया करते थे। यह अंकों को जोड़ने, घटाने के काम आता था।

इसके बाद अंकों की गणना के लिए 17वीं शताब्दी में फ्रांस के गणितज्ञ ब्लेज पास्कल ने एक यांत्रिक अंकीय गणना यंत्र सन् 1645 में विकसित किया। इस मशीन को एंडिग मशीन कहते थे। क्योंकि यह केवल जोड़ या घटाव कर सकती थी। यह मशीन घड़ी और ओडोमीटर के सिद्धांत पर कार्य करती थी। उसमें कई दांतेयुक्त चकरियां लगी होती थी जो घूमती रहती थी। चक्रियों के दांतों पर 0 से 9 तक के अंक छपे रहते थे। प्रत्येक चक्री का एक स्थानीय मान होता था। जैसे–इकाई, दहाई, सैकड़ा आदि इसमें एक चक्री के घूमने के बाद दूसरी चक्री घूमती थी।

टिप्पणी

इसके बाद यांत्रिक अंकीय गणना यंत्र को ओर अधिक विकसित किया गया और सन् 1801 में फ्रांसीसी बुनकर जोसेफ जेकार्ड ने कपड़े बुनने के एक ऐसे लूम का आविष्कार किया जो कपड़ों में डिजाईन या पैटर्न को कार्डबोर्ड के छिद्र युक्त पंचकार्ड से नियंत्रित करता था। और पंच कार्ड पर चित्रों की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति द्वारा धागों को निर्देशित किया जाता था। लेकिन इस यंत्र में भी बहुत सारी कमियां थी।

जेकार्ड लूम के इस यंत्र में भी बहुत सारी कमियां थी। इसलिए और अन्य यांत्रिक अंकीय गणना यंत्र को विकसित किया गया तथा अंत में 19वीं शताब्दी में चार्ल्स बैबेज ने सन् 1822 में एक मशीन का निर्माण किया जिसका खर्चा ब्रिटिश सरकार ने दिया। इस मशीन का नाम डिफरेंस इंजन रखा गया। इस मशीन में गियर और साफ्ट लगे हुए थे। यह मशीन भाप से चलती थी। सन् 1833 में चार्ल्स बैबेज ने डिफरेंस इंजिन का विकसित रूप एनालिटिकल इंजिन तैयार किया जो बहुत ही शक्तिशाली मशीन थी। चार्ल्स बैबेज का कम्प्यूटर के विकास में बहुत बड़ा योगदान रहा है। चार्ल्स बैबेज का एनालिटिकल इंजन आधुनिक कम्प्यूटर का आधार बना और इसी कारण चार्ल्स बैबेज को कम्प्यूटर का जनक कहा जाता है। चार्ल्स बैबेज ने 1837 में स्वचालित कम्प्यूटर को बनाने की कल्पना की लेकिन पैसे की कमी होने के कारण वे उसे पूरा नहीं कर पाये थे। इस प्रकार कई सारी कठिनाईयों और चरणों को पार करते हुए कम्प्यूटर का जन्म हुआ और इसके जन्मदाता चार्ल्स बैबेज बने।

5. **रेलगाड़ी का आविष्कार**– रेलगाड़ी यानी ट्रेन का आज दुनिया का सबसे बड़ा ट्रांसपोर्ट का साधन है आज दुनिया में करोड़ों यात्री एक दिन में एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिए ट्रेन का इस्तेमाल करते हैं आज दुनिया की 90 फीसदी आबादी ट्रेन से सफर करती है। ट्रेन ने लोगों की जिंदगी में क्रांतिकारी परिवर्तन किया है और ट्रेन से केवल यात्री ही नहीं बल्कि बहुत सी जरूरत की चीजों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के लिए रेलगाड़ी का इस्तेमाल किया जा रहा है।

यदि आप कभी भी रेल परिवहन के इतिहास के बारे में जानना चाहते हैं तो यहां से पता चलता है कि आधुनिक गाड़ियों के लिए प्रेरणा कहाँ से आती है, भाप इंजन के शुरुआती दिनों में, दुनिया भर के रेल नेटवर्क के प्रसार में, पहले सबवे का निर्माण हुआ सबसे पहली बार ट्रेन का प्रारूप 1604 में इंग्लैण्ड के वोलाटन में सामने आया था। उस समय लकड़ी से बनायी गई काठ के डिब्बों की गाड़ियां जो पटरियों पर चलती थी और वो घोड़ों से खिंची जाती थी।

और बाद में पैरों से इंजीनियर रिचर्ड ट्रवेथिक को पहली बार भाप के इंजन को रेलवे इंजन के रूप में इस्तेमाल किया जो पहला रेलवे इंजन था और पहली बार भाप ट्रेन 1800 के प्रारंभ में हुई। 21 फरवरी, 1804 को विश्व की पहली रेलवे यात्रा तब हुई थी जब ट्रेविथिक नामक लोकोमोटिव स्टीम इंजन ने एक ट्रेन की खींच लिया। ट्रेविथिक रेलवे इंजनों के साथ प्रयोगात्मक चरण से अधिक सफलता नहीं मिली, क्योंकि उनके इंजन कास्ट आयरन प्लेटवे ट्रैक के लिए बहुत भारी था और रेलवे के पिता माने जाने वाले ट्रेविथिक में अनोखी प्रतिभाओं होने के बावजूद गरीबी में मृत्यु हो गई, उन्हें ''रेलवे के पिता'' के शीर्षक के साथ कई इतिहासकारों का श्रेय दिया जाता है।

टिप्पणी

1814 में जार्ज स्टीफन्सन, ट्रेवथिक, मरे और हेडली के शुरुआती इंजनों को देखकर, किलिंगवर्थ कोलियरी के प्रबन्धक ने एक भाप–संचालित मशीन बनाने पर काम किया और उन्होंने ब्लूचर का निर्माण किया, यह पहला सफल Filanged Wheel Adhesion Locomotives था।

और स्टीफंसन ने माप लोकोमोटिव बनाने में बड़े पैमाने पर बनाने की भूमिका निभाई। सन् 1825 में उन्होंने इंग्लैण्ड के पूर्वोत्तर में स्टॉकटन और डार्लिंग्टन रेलवे के लिए लोकोमोशन का निर्माण किया, जो कि दुनिया में पहले सार्वजनिक भाप रेलवे था। इस तरह की सफलता ने स्टीफनसन को अपनी कंपनी की स्थापना यूनाइटेड किंगडम, संयुक्त राज्य अमेरिका और यूरोप के अधिकांश रेलवे में काम करने के लिए प्रेरित किया।

दुनिया की पहली ट्रंक लाइन लिवरपूल और मैनचेस्टर लाइन केवल 35 मील (56 किमी.) लंबी थी जिसको ग्रांड जंक्शन रेलवे कहा जाता है। उसका 1837 में उद्घाटन किया गया था और इससे लिवरपूल और मैनचेस्टर रेलवे का ब्रुमिंगहम के साथ एक क्रीक, स्टैफोर्ड और वाल्वरहैम्टन के माध्यम से मिडपाइंट को जोड़ा जा सकता है। पहले की ट्रेनों और आज की आधुनिक ट्रेनों की स्पीड में दिन रात का अंतर है। शुरुआती ट्रेनों की गति तो बहुत ही धीमी थी उसके बाद उनके अंदर अच्छे बदलाव किये गये और धीरे–धीरे गति में सुधार किया गया। शुरुआत में ट्रेन की गति 10 से 15 किलोमीटर प्रति घंटा के हिसाब से थी और आज की आधुनिक ट्रेनें 200 से 300 घंटा प्रति किलोमीटर के हिसाब से चल रही है। जापान जैसे विकसित देश 500 किलोमीटर प्रति घंटा के हिसाब से चलने वाली ट्रेनें बना रहे हैं। अविकसित देशों के अंदर तो ट्रेनों की गति कुछ खास नहीं है। आज दिन भर ट्रेनों की सुविधा और गति निरन्तर सुधार के प्रयास किये जा रहे हैं।

शुरुआत में भाप के इंजन से चलने वाली ट्रेनों में बदलाव करके डीजल से चलने वाले इंजन की ट्रेनों को इजाद किया गया उसके बाद उसे बदलाव करके बिजली से चलने वाले इंजन बनाए गये और आज ज्यादातर बिजली से चलने वाले रेल इंजन का प्रयोग किया जा रहा है। बिजली से चलने वाले इंजन का इस्तेमाल इसलिए बढ़ा क्योंकि इससे ट्रेन की गति अच्छी है और यह वातावरण को भी कोई नुकसान नहीं पहुंचाता है लेकिन इसमें बिजली खपत बहुत ज्यादा होती है और कुछ विकसित देश इतने बड़े बिजली उत्पादक नहीं हैं जो इन इंजनों को पर्याप्त मात्रा में बिजली की पूर्ति करवा सके इसलिए उन देशों में आज भी डीजल इंजन का इस्तेमाल किया जा रहा है।

आज बदलाव करके बहुत सी प्रकार की ट्रेनें बनाई जा रही हैं जिनके अंदर सुविधा और गति के हिसाब से अलग–अलग विशेषताएं हैं जैसे बुलेट ट्रेन, मैगनेटिव ट्रेन, या मैट्रो इन सभी के अंदर अलग–अलग विशेषताएं इन ट्रेनों को स्पीड़, दूरी और लंबाई के हिसाब से अलग–अलग बनाया गया है।

6. **साईकिल का आविष्कार**– 1818 में इस अनोखी मशीन ने पहली बार पेरिस में लगाई गई एक प्रदर्शनी में देखा।

टिप्पणी

वान अपनी सवारी को 'रनिंग मशीन' कहते थे। दरअसल, यह जमीन पर दौड़ लगाने वाली सवारी थी, जो काठ यानी लकड़ी की बनी थी। इसमें पैडल नहीं था। इसे चलाने के लिए साइकिल की सीट पर बैठकर चालक को जमीन पर दौड़ लगाना पड़ता था।

–रनिंग मशीन की सवारी भले ही थकाऊ थी, लेकिन उस समय यह काफी महंगी मिलती थी। इसे समाज के संभ्रांत और संपन्न लोग ही खरीद सकते थे। इसे एक नाम भी दिया गया–'हॉबी हॉसेस।'

बाइसिकल एक फ्रांसिसी शब्द है। वर्ष 1860 में पहली बार फ्रांस में ही दो पहियों वाली सवारी को बाइसिकल या साइकिल कहा गया।

–अबाउट डॉट कॉम के अनुसार, फ्रांसीसी पिता–पुत्र की जोड़ी पियरे एंड अर्नेस्ट को आधुनिक साइकिल का आविष्कारक माना जाता है। यह दो नहीं तीन पहियों वाली साइकिल थी। उसे उन्होंने 1867 में बनाया था।

–वर्ष 1870 में काठ की साइकिल की जगह धातु की साइकिलें बनने लगी। इनका अगला पहिया पिछले पहिए से बड़ा होता था। धारणा था कि अगला पहिया जितना बड़ा होगा, साइकिल की स्पीड उतनी ज्यादा होगी।

–बड़े पहिये वाली इस साइकिल की सवारी सेफ नहीं थी। यह अक्सर दुर्घटनाग्रस्त हो जाया करती थी। यही वजह थी कि इसे 'डेंजर टॉय' यानी खतरनाक खिलौना कहा जाता था।

–कुछ इतिहासकार पैडल के आविष्कार का श्रेय स्काटलैंड के लुहार किर्क पैट्रिक मैक मिलन को देते हैं। इसका आविष्कार 1812 से 1878 के बीच किया गया था।

–वर्ष 1880 के आसपास जब चेन का अविष्कार किया गया, तो साइकिल के पहिये एक जैसे बनाये जाने लगे। मैनचेस्टर, इंग्लैण्ड के निवासी हैंस रोनाल्ड ने चैन का आविष्कार किया था।

–1890 के मध्य में बीसवीं सदी तक की अवधि को 'गोल्डन एज ऑफ बाइसिकल' कहा जाता है। इसी समय साइकिल को नई शक्ल मिली। बराबर आकार के पहिए, आगे स्टीयरिंग और पहियों में चेन इसी दौरान लगाया गया। अब साइकिल चलाना सुरक्षित था।

–ओहियो, अमेरिका के सेंट हेलेन स्कूल से ग्रेजुएशन करने वाले छात्रों को यूनिसाइक्लिंग यानी एक पहिए वाली साइकिल चलाना सीखना होता है। यहां से ग्रेजुएट छात्र इस कला में निपुण होते हैं।

–साइकिल चलाना बेस्ट एक्सरसाइज माना जाता है।

–साइकिल की पहली रेस 31 मई, 1868 को हुई थी। इसका आयोजन पेरिस के पार्क दे सेंट क्लाउड में किया गया। यह रेस 1200 मीटर की थी। इसके विजेता रहे थे इंग्लैण्ड के जेम्स मूरे।

–न्यूयार्क स्थित 'पैडलिंग बाइसिकल म्यूजियम' में पुरानी साइकिलों का संग्रह देखा जा सकता है। यहां न केवल दुनिया की अनोखी साइकिलों का प्रदर्शन किया गया है, बल्कि यहां पर साइकिल से जुड़े तमाम तरह के आयोजन भी किए जाते हैं।

टिप्पणी

7. चलचित्र या सिनेमा का आविष्कार– चलचित्र या सिनेमा का आविष्कार एक ही वक्त में सन् 1891 के आस–पास बहुत से लोगों ने किया था, जिनमें, थामस एडिसन और निकोला रेस्ला थे। उनमें एडिसन की कंपनी ने किनोटोस्कोप का पेटेंट करवाया, इसलिए किसी एक को चलचित्र का जनक नहीं कह सकते। मगर उस समय फिल्म का कांसेप्ट या सोच बिल्कुल भी नहीं थी। लेकिन उनके पहले 1867 में विलियम लिंकन ने Zoopraxiscope का पेटेंट करवाया था जिसमें एक मशीन के सामने बैठ के चलते हुए ड्राइंग या फोटो को देखा जा सकता था।

पहला चलचित्र जिसमें लोग पैसे देकर और टिकट लेके देखने आए उसको लुमियर बंधु ने 1895 में पेरिस में आयोजित किया था। कायदे में पहली फिल्म उसी को बोला जा सकता है।

ये भी कह सकते हैं कि भारत में सिनेमा संयोगवश आया। लुमियर ब्रदर्स ने अपने आविष्कार से दुनिया को चमत्कृत तो किया ही, साथ ही उन्होंने पूरी दुनिया में जल्दी से जल्दी पहुंचाने का भी प्रयत्न भी किया। उन्होंने अपने एजेंट के जरिए आस्ट्रेलिया के लिए फिल्म पैकेज रवाना किया। एजेंट मॉरिस सेस्टियर को मुंबई आने पर पता चला कि आस्ट्रेलिया जाने वाले हवाई जहाज में खराबी के चलते उन्हें यहां दो चार दिन ठहरना होगा। वह कोलाबा स्थित वॉटसन होटल में जाकर ठहर गया। मौरिस के दिमाग में आया कि जो काम आस्ट्रेलिया जाकर करना है उसे बंबई में ही क्यों न कर अंजाम दिया जाए। लिहाजा वह 6 जुलाई 1896 को टाइम्स ऑफ इंडिया के दफ्तर गया और अगले दिन के लिए एक विज्ञापन बुक कराया। दुनिया का अजूबा नाम से प्रचारित इस विज्ञापन को पढ़कर बंबई के कोने–कोने से दर्शकों का हुजूम वॉटसन होटल के लिए उमड़ पड़ा। 1 रुपए की प्रवेश दर से लगभग 200 दर्शकों ने 7 जुलाई 1896 की शाम 20वीं सदी के इस चमत्कार से साक्षात्कार किया। इस तरह भारत में सिनेमा संयोगवश आ गया।

इस दिन के पहले प्रदर्शन में बंबई के छायाकार हरिश्चन्द्र सखाराम भारवडेकर भी शामिल थे। उनके दिमाग में लुमिएर ब्रदर्स की फिल्में देखकर यह विचार उत्पन्न हुआ कि क्यों न इस प्रकार की स्वेदशी फिल्मों का निर्माण कर उनका प्रदर्शन किया जाए। वे बंबई में 1880 से अपना फोटो स्टूडियो संचालित कर रहे थे।

सन् 1898 में उन्होंने लुमिएर सिनेमा–टोग्राफ यंत्र 21 गिन्नी भेजकर मंगाया। सावेदादा के नाम से परिचित भारवडेकर ने बंबई के हैगिंग गार्डर में एक कुश्ती का आयोजन कर उस पर लघु फिल्म का निर्माण किया। उनकी दूसरी फिल्म सर्कस के बंदरों की ट्रेनिंग पर आधारित थी। इन दोनों फिल्मों को उन्होंने डबलपिंग के लिए लंदन भेजा। सन् 1899 में विदेशी फिल्मों के साथ जोड़कर उनका प्रदर्शन किया। इस प्रकार सावेदार पहले भारतीय हैं जिन्होंने अपनी बुद्धि कौशल से स्वदेशी लघु फिल्मों का निर्माण कर प्रथम निर्माता निर्देशक तथा प्रदर्शक होने का श्रेय प्राप्त किया।

वाटसन होटल में 7 से 13 जुलाई 1896 तक फिल्मों के लगातार प्रदर्शन होते रहे। बाद में इस प्रदर्शन को 14 जुलाई से बम्बई के नौवेल्टी थिएटर में शिफ्ट कर दिया गया, जहां से 15 अगस्त, 1896 तक लगातार चलते रहे।

टिप्पणी

8. फोटोचित्रण का आविष्कार– हम जो कुछ भी अपनी आंखों से देखते हैं उसकी छाप हमारे मस्तिष्क में बनती जाती है तथा समय बीतने के साथ ही ये छाप धूमिल पड़ने लगती है। देखे गए दृश्यों को स्वयं तो कुछ हद तक याद करके दोहराया जा सकता है लेकिन किसी और को उसी दृश्य के बारे में बताना हो तो शायद यह शब्दों के माध्यम से पूरी तरह संभव नहीं हो सकेगा।

इसी समस्या को हल करने के लिए पहले–पहल पेंटिंग का विकास किया गया लेकिन पेंटिंग के माध्यम से किसी विषय वस्तु को उकेरना बहुत ही समय लेने वाला व धैर्य का काम है और जरूरी नहीं है कि बनाया गया चित्र हूबहू अपने मॉडल की तरह ही हो। इन्हीं चुनौतियों से जूझते हुए मनुष्य ने ''कैमरे'' की खोज की। फ्रांस के महान आविष्कारक 'जोसेफ नीप्से' ने सन् 1824 में कैमरे के प्रारंभक रूप का आविष्कार किया था। इस यंत्र से किसी भी वस्तु या दृश्य की हूबहू नकल उकेरी जा सकती थी।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी लियोनार्दो दा विंची ने सर्वप्रथम देखा कि अन्धेरे कमरे में यदि दीवार या दरवाजे के किसी छोटे छिद्र से प्रकाश आता है तो छिद्र के सामने की दीवार छिद्र के बाहर की तरफ मौजूद वस्तु अथवा दृश्य का छोटा व उल्टा प्रतिबिम्ब बन जाता है।

इसकी खोज के आधार पर प्रकाशरोधी बॉक्स में एक सूक्ष्म छिद्र करके दुनिया का पहला कैमरा 'कैमरा ऑन्स्म्यौरा' बनाया गया।

लियोनादौ दा विंची के इस प्रयोग को फोटोग्राफी के इतिहास में मील का पत्थर माना जाता है। कालान्तर में इसे और छोटा तथा परिवहनीय बनाकर इसमें एक उत्तल लेंस और 45 अंश के कोण पर एक समतल दर्पण लगाया गया। बाद में और सुधार के साथ अत्यन्त सुविधायुक्त कैमरे बनाए जाने लगे।

9. मुद्रण यंत्र का आविष्कार– मुद्रण यंत्र यानि प्रिंटिंग मशीन का आविष्कार और मानव विकास सभ्यता और संस्कृति के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। 1439 में जर्मनी के टेंग किला ने लकड़ी के छापा प्रिंटिंग मशीन बनाकर इस ऊर्ध्वाधर सर्पिल हाथ प्रेस ब्रश का निर्माण किया था, हालांकि यह संरचना सरल है लेकिन इसका उपयोग 300 वर्षों के लिए किया गया है। 1812 जर्मनी के कोएनिका ने पहली बार ताईचुंग को प्रिंटिंग मशीन छपवाया 1847 संयुक्त राज्य अमेरिका होय ने रोटरी प्रेस का आविष्कार किया। 1990 छह रंग रोटरी प्रेस से बना। 1904 संयुक्त राज्य अमेरिका रूबेल ऑफसेट प्रिंटिंग मशीन का आविष्कार किया।

1950 के दशक से पहले प्रिंटिंग उद्योग में परम्परागत छपाई प्रक्रिया को एक प्रमुख स्थान पर कब्जा करने के लिए, प्रिंटिंग मशीन से मुख्य छापा प्रिंटिंग मशीनों का विकास हालांकि सीसी मिश्र धातु छापा प्रिंटिंग प्रक्रिया में उच्च श्रम तीव्रता, लंबे उत्पादन चक्र और पर्यावरण प्रदूषण का नुकसान होता है। 1960 के दशक के बाद से लियोग्राफिक प्रिंटिंग प्रक्रिया के एक छोटे चक्र, उच्च उत्पादकता और अन्य विशेषताओं के साथ, वृद्धि और विकास शुरू हुआ, मित्र धातु छापा प्रिंटिंग का नेतृत्व धीरे–धीरे लियोग्राफिक ऑफसेट प्रिंटिंग द्वारा बदल दिया गया।

20वीं शताब्दी के बाद से दुनिया की छपाई मशीनरी 80 वर्षों ने महान विकास किया है। 21वीं सदी में मुद्रण मशीनरी ने विकास के तीसरे चरण में प्रवेश किया।

टिप्पणी

10. **रेडियो व टेलीविजन का आविष्कार**– रेडियो का आविष्कार इटली के एक इंजीनियर मार्कोनी ने 12 दिसम्बर 1901 को किया था। स्टूडियो में माइक्रोफोन के सामने बोलने से ध्वनि की तरंग माइक्रोफोन के परदे से टकराकर उस पर कंपन उत्पन्न करती है। उसी कंपन के कारण माइक्रोफोन की विद्युत धारा में उतार–चढ़ाव होता है। अब एक विशेष यंत्र के माध्यम से विद्युत की रेडियो तरंगें उत्पन्न की जाती हैं। यह तरंगें बिना किसी सहारे के तीव्र गति से वायुमण्डल में व्याप्त हो जाती है इसका वेग 300000 किलोमीटर प्रति सैकण्ड होता है। सुनने वाले का रेडियो एक विशेष तरंगों को चुनकर उसमें से संदेशवाहक तरंगों को अलग कर देता है यह तरंगें प्रसारित होकर रेडियो के लाउडस्पीकर में पहुंचती है। यह लाउडस्पीकर वैसी ही ध्वनि जैसी स्टूडियो से चली थी, पैदा कर देती है।

    निश्चित ही रेडियो का आविष्कार बहुत महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ जिससे विश्व की संचार व्यवस्था में एक नया मोड ला दिया। उसकी इस प्रवृत्ति का आविष्कार है टेलीविजन–यह आविष्कार सबसे पहले स्कॉटलैंड के एक महान वैज्ञानिक जॉन बेयर्ड ने 1922 ईस्वी में किया था टेलीविजन में भी रेडियो तरंगों का ही व्यवहार होता है।

    भारत में सर्वप्रथम टेलीविजन का प्रयोग 15 सितम्बर, 1959 को दिल्ली में दूरदर्शन केन्द्र की स्थापना के साथ हुआ। इसका व्यापक प्रसार 1982 में भारत में आयोजित एशियाड खेलों के आयोजन से हुआ। वर्तमान में दूरदर्शन की पहुंच 86% लोगों तक है जो इसके माध्यम से अपना मनोरंजन करते हैं। टेलीविजन जनसंचार का दृश्य–श्रव्य माध्यम है। ध्वनि के साथ–साथ चित्रों के सजीव प्रसारण के कारण यह अपने कार्यक्रम को रुचिकर बना देता है। जिसका समूह पर प्रभावशाली और प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। टेलीविजन मुख्य रूप से दृष्टि–निर्बन्ध के सिद्धान्त पर आधारित है। जिस वस्तु या व्यक्ति का बिम्ब टेलीविजन के माध्यम से प्रसारित करना होता है, उस पर बहुत तेज़ प्रकाश डाला जाता है। वस्तु या व्यक्ति की तस्वीर को क्रम में विभक्त कर छोटे–छोटे विभिन्न घनत्वों वाले अवयव में बदल दिया जाता है तथा उनकी संगत तरंगों का माडुलन कर एक निश्चित दिशा में प्रेषित द्वारा संचारित किया जाता है। ग्राही द्वारा छोटे–छोटे उसी क्रम में इन अवयवों को जोड़कर मूल तस्वीर प्राप्त कर ली जाती है। जैसा कि हमारी आंखों के सामने एक सैकण्ड में 20–25 क्रमिक परिवर्तन वाले चित्र के गुजरने पर वह गतिमान चित्र के रूप में दिखाई देता है।

11. **शून्य का आविष्कार**– शून्य का आविष्कार भारत में किया गया कहा जाता है कि शून्य का आविष्कार भारत में पांचवीं शताब्दी के मध्य में आर्यभट्ट जी ने किया उसके बाद ही यह दुनिया में प्रचलित हुआ लेकिन अमेरिका के एक गणितज्ञ का कहना है कि शून्य का आविष्कार भारत में नहीं हुआ था। अमेरिकी गणितज्ञ आमिर एक्जेल ने सबसे पुराना शून्य कंबोडिया में खोजा है और कहा

टिप्पणी

जाता है कि सर्वनन्दि नामक दिगम्बर जैन मुनि द्वारा मूल रूप से प्रकृत में रचित लोक विभाग नामक ग्रन्थ में शून्य का उल्लेख सबसे पहले मिलता है। इस ग्रन्थ में दशमलव संख्या पद्धति का भी उल्लेख है और यह उल्लेख सन् 498 में भारतीय गणितज्ञ एवं खगोलवेत्ता आर्यभट्ट ने आर्यभटीय (संङ्ख्यास्थाननिरुपणम्) में कहा है और सबसे पहले भारत का 'शून्य' अरब जगत में 'सिफर' (अर्थ खाली) नाम से प्रचलित हुआ लेकिन फिर लैटिन, इटैलियन, फ्रेंच आदि से होते हुए इसे अंग्रेजी में 'जीरो' (Zero) कहते हैं।

लेकिन शून्य के आविष्कार को लेकर कुछ अलग तथ्य भी है कि अगर शून्य का आविष्कार 5वीं सदी में आर्यभट्ट जी ने किया फिर हजारों वर्ष पूर्व रावण के 10 सिर बिना शून्य के कैसे गिने गए बिना शून्य के कैसे पता लगा कि कौरव 100 थे ऐसे कुछ अलग–अलग बातें हैं लेकिन आज तक यही कहा जा रहा है कि शून्य का आविष्कार 5वीं सदी में आर्य भट्ट ने किया था।

12. **सौर ऊर्जा का आविष्कार**– सबसे पहले सन् 1839 में एलेकजेन्डर एडमंड बैकेलल ने फोटोवोल्टिक के इफेक्ट का पता लगाया उन्होंने पता लगाया कि कैसे सूर्य के प्रकाश की किरण से बिजली बनाई जा सकती है और कितनी बनाई जा सकती है और सौर पैनल को बनाने में बहुत से वैज्ञानिकों का योगदान है। और इस बात पर बहुत बहस हुई की कि किसने सोलर पैनल्स का आविष्कार किया कुछ लोग फ्रांसीसी वैज्ञानिक एडमंड बैकेलल को सौर पैनल्स के आविष्कार को श्रेय देते हैं लेकिन सन् 1873 में विलफ्लिस्मिथ ने सेलेनियम में फोटोकॉन्डक्वास्टिक की पावर का पता लगाया क्योंकि किसी पैनल के अन्दर फोटोकान्डक्वास्टिक का सबसे बड़ा या जरूरी काम होता है क्योंकि फोटोकॉन्डक्वास्टिक ही सूर्य की किरणों को अवशोषित करती है और सेलेनियम सूर्य के प्रकाश के संपर्क में आने पर बिजली पैदा करता है।

सौर ऊर्जा का इस्तेमाल बहुत पहले बाह्य अंतरिक्ष में उपग्रहों को ऊर्जा देने के लिए किया जाता था। सन् 1958 में मोहरा मैं एक छोटे से उपग्रह पर एक वाट पैनल का इस्तेमाल किया था। सन् 1964 में नासा ने उपग्रह पर 470 वाट पैनल का इस्तेमाल किया था और उसके बाद 1973 में डेलावेयर विश्वविद्यालय ''सोलर वन' नामक पहला सौर भवन तैयार किया गया उसकी पूरी छत के ऊपर सोलर पैनल लगाये गये जैसे आज लगाये जा रहे हैं और सन् 1981 में पॉल मैकक्री ने सौर ऊर्जा पर चलने वाले पहले विमान सौर चैलेंजर का बनाया।

इसे 1998 में फ्रांस से U.K. तक उड़ाया गया। यह विमान को 80,000 फीट पर उड़ाकर रिकॉर्ड बनाया। इसके बाद नासा ने 2001 में उस रिकार्ड को तोड़ दिया जब वे रॉकेट विमानों को 96,000 फीट उड़ा दिया और सन् 2016 में बट्रेड पिकाकार्ड ने दुनिया की सबसे बड़ी और सबसे शक्तिशाली सौर ऊर्जा से चलने वाला विमान बनाया।

वर्ष 1980 से सौर पैनल की कीमतों में हर साल कम से कम 10 प्रतिशत गिरावट आई है लेकिन पिछले कुछ समय से सौर पैनल की डिमांड बड़ी है क्योंकि यह

बिजली का सस्ता और अच्छा साधन है इससे वातावरण को कोई भी नुकसान नहीं होता है।

टिप्पणी

13. **टेलीफोन का आविष्कार**– ग्राहम बेल को ध्वनि विज्ञान का अच्छा ज्ञान होने के कारण वे एक ऐसे यंत्र का आविष्कार करना चाहते थे कि अगर कोई एक व्यक्ति अपने से बहुत दूर बैठे और दूसरे व्यक्ति से बात करना चाहे तो उस यंत्र के माध्यम से बात कर सके। जब बेल बोस्टन के विश्वविद्यालय में पढ़ा रहे थे तो पढ़ाने के साथ–साथ हानौनिक टेलीग्राफ पर रिसर्च भी कर रहे थे। कड़ी मेहनत के कारण वे इस रिसर्च में कामयाब भी हो गये। इस टेलीग्राफ के माध्यम से एक तार पर एक ही समय में एक साथ कई टेलीग्राफ संदेशों को भेज सकते थे। इस रिसर्च को करते हुए ग्राहम बेल के मन में एक विचार आया कि तार के माध्यम से अगर व्यक्ति की आवाज को भी भेजा जा सके तो कितना अच्छा होगा। इस विचार के साथ ही ग्राहम बेल अपने सहयोगी वाटसन के साथ इस पर कार्य करने लगे। वे इस यंत्र को बनाने के लिए लगातार प्रयत्न करते गये। तारों को अलग–अलग तरह से जोड़कर देखते गये कि वह दिन कब आयेगा जब उनका यह सपना पूरा होगा। एक दिन ग्राहम बेल व वाट्सन दो अलग–अलग कमरे में इस पर रिसर्च कर रहे थे, तभी बेल को अचानक वाट्सन की सहायता की जरूरत पड़ी तो बेल ने कहा–''मिस्टर वाट्सन यहां आओ, मुझे आपकी सहायता चाहिए।'' ग्राहम बेल द्वारा कहे गये इन शब्दों को वाटसन ने उस तार के माध्यम से सुन लिया। यह सुनकर वे बहुत खुश हुए और बेल से कहा मुझे आपकी आवाज उस कमरे में तार के माध्यम से सुनाई दे रही है। इतना सुनकर ही दोनों लोग खुशी से उछल पड़े क्योंकि आज उनकी मेहनत सफल हो गई थी और उन्होंने जो सोचा था, वह पूरा हो गया। इस प्रकार 10 मार्च 1876 को ग्राहम ढोल ने दुनिया के पहले टेलीफोन का आविष्कार किया था।

14. **कंप्यूटर**– आम लोगों द्वारा अपने दिन प्रतिदिन के लेन–देन रिकॉर्ड करने के लिए कंप्यूटर का उपयोग व्यापक रूप से किया जाता है। इसका उपयोग कारखानों और पौधों की गतिविधियों को नियंत्रित करने और प्रसंस्करण में भी किया जाता है।

15. **चिकित्सा विज्ञान**– वैज्ञानिकों ने इतनी सारी दवाओं का आविष्कार किया है। इन दवाओं के प्रभाव इतने चमत्कारी है। इन दवाओं के माध्यम से घातक रोगों को नियंत्रित किया जा सकता है। उचित समय में दवा के आवेदन से कई घातक रोग ठीक हो सकते हैं। मानव हृदय प्रत्यारोपण सर्जरी के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। वास्तव में, मानव अंगों के प्रत्यारोपण अब जीवन को बचाने के लिए काफी सम्भव है।

16. **पहिए का आविष्कार**– पहिए का आविष्कार मानव विज्ञान के इतिहास में महत्वपूर्ण उपलब्धि थी सबसे पहले मिट्टी के बर्तनों के निर्माण में इस्तेमाल किया जा सकता है। सबसे पुराना पहिए बरामद नमूना एक लकड़ी का स्लोपेनियाई मॉडल है जो 5100 से 5350 साल पहले बना था कहा जाता है

टिप्पणी

हमारे पश्चिमी विद्वान पहिए के आविष्कार का क्षेत्र इराक को देते हैं लेकिन कहा जाता है कि पहिए का आविष्कार भारत में हुआ था।

17. **कील का आविष्कार**– कील के आविष्कार ने प्राचीन सभ्यता निश्चित रूप से जोड़ा रखा प्राचीन रोम की अवधि में 2000 से अधिक वर्षों की तारीखें हैं जब धातु को ढलाई और आकार देने की क्षमता विकसित हुई तब से पहले से कील, लकड़ी से बनाई जाती थी और कील–बनाने वाली मशीन सन् 1790 और 1800 के दशक के बीच शुरू हुई। उसके बाद इनका इस्तेमाल भी बढ़ गया।

18. **इन्टरनेट का आविष्कार**– इन्टरनेट हमारे लिए आज के समय में कितना महत्वपूर्ण है। इस आधुनिक युग में हर किसी के पास एक अपना स्मार्ट फोन या PC जरूर मिल जाएगा। उस स्मार्ट फोन या पीसी में आपके पास इन्टरनेट नहीं है तो आप उसके साथ कुछ भी नहीं कर सकते इन्टरनेट के माध्यम से आज हम दुनिया भर के दोस्तों और रिश्तेदारों से जुड़ सकते हैं और उनसे एक जगह से दूसरी जगह पर बातें कर सकते हैं और इन्टरनेट हमारे लिए एक बहुत वरदान साबित हुआ है।

    इन्टरनेट एक ऐसी चीज है जो दुनिया के करोड़ों कम्प्यूटरों को एक साथ जोड़े रखता है। इन्टरनेट सूचना के आदान–प्रदान के लिए जाना जाता है सबसे पहले इन्टरनेट का आविष्कार 1969 में DOD (डिपार्टमेन्ट ऑफ डिफेन्स) द्वारा किया गया था। जब 29 अक्टूबर 1969 को रात 10.30 ULCA प्रोग्रामर चार्ली क्लीन ने लगभग 350 किलोमीटर दूर मेलों पार्क कैलिफोर्निया में दो शब्द "I" और "O" इलेक्ट्रिकल भेंजे और उसके बाद सारा सिस्टम बंद हो गया था। इस नेटवर्क को ARPN (एडवांस रिसर्च प्रोजेक्ट इन एजेंसी) ने बाद में इसको करीब 1980 में लांच किया। भारत में इन्टरनेट पहली बार 15 अगस्त 1945 में विदेश संचार निगम लिमिटेड (VSNL) द्वारा शुरू किया गया था।

19. **राकेट का आविष्कार**– रॉकेट एक ऐसा वायुयान है जो किसी भी प्रकार की मौसम में उड़ सकता है। वैसे तो राकेट का आविष्कार बहुत पुराना माना जाता है। लगभग 1232 में चीन और मंगोलों के युद्ध में रॉकेट का सबसे पहले इस्तेमाल किया गया था यह उस समय का सबसे शक्तिशाली हथियार था और दुनिया का पहला टर्मिनल रॉकेट 1926 में रॉबर्ट गोल्ड द्वारा शुरू किया गया और 16 मार्च 1926 को आबर्न मैसाचूसेट्स पर इसका परीक्षण किया गया।

20. **ऑप्टिकल का आविष्कार**– ऑप्टिकल Lenses का प्राचीन इतिहास रहा है। प्राचीन मिस्र और मेसोपोटामिया में इसका आविष्कार हुआ था। चश्मा से दूरबीन और सूक्ष्मदर्शी तक, ऑप्टिकल लेंस का इस्तेमाल किया जाता है जो कि किसी भी चीज को आसानी से देखने में मदद करता है।

21. **टीकाकरण**– पहली टीका (चेचक के लिए) को सन् 1796 में एडवर्ड जेनर द्वारा विकसित किया गया था। एक रेबीज वैक्सीन फ्रांसीसी रसायनज्ञ और जीव विज्ञानी और लुई पाश्चर द्वारा सन् 1885 में विकसित किया गया था जिसे आज की दवा का प्रमुख हिस्सा टीकाकरण करने का श्रेय दिया जाता है।

टिप्पणी

22. **रेफ्रिजरेटर**– पिछले 150 वर्षों में, रेफ्रिजरेशन ने, हमें खाद्य दवाइयों और अन्य विनाशकारी पदार्थों को संरक्षित करने के तरीकों की पेशकश की। इसकी शुरुआत से पहले, लोग अपना खाना बर्फ से ठंडा और ताजा रखते थे। जेम्स हैरिसन ने पहला प्रैक्टिकल वेपर कमप्रेशन रेफ्रिजरेशन सिस्टम का निर्माण किया। हालांकि, पहला व्यापक रेफ्रिजरेटर 1927 में जनरल इलेक्ट्रिक का मॉनीटर–टॉप रेफ्रिजरेटर था। इसने इंडस्ट्रियल प्रोसेसेज को सुधारने में मदद की और यह एक उद्योग बन गया।

23. **वर्ल्ड वाइड वेब**– इंटरनेट एक नेटवर्किंग आधारभूत संरचना है। वर्ल्ड वाइड वेब इन्टरनेट के माध्यम से जानकारी तक पहुंचने का एक तरीका है। वर्ल्ड वाइड वेब के पिता एक ब्रिटिश कम्प्यूटर वैज्ञानिक टिम बर्नर्सली है। स्विट्जरलैंड के जिनेवा में CERN में एक सॉफ्टवेयर इंजीनियर के रूप में काम करते हुए टिम ने ध्यान दिया कि इनफॉर्मेशन को शेयर करने में कठिनाई हो रही है। 1989 में उन्होंने "Information Management : A Proposal" एक प्रस्ताव रखा। हालांकि उसे तुरन्त स्वीकार नहीं किया गया। अक्टूबर 1990 तक टिम ने HTML, URL और HTTP तकनीकों के माध्यम से वेब पर नींव रखी। अप्रैल 1993 वेब के इतिहास में एक महत्वपूर्ण कदम चिन्हित किया गया और वेब का उपयोग मुफ्त में करने का निर्णय घोषित किया गया।

    आज तक, वेब ने आविष्कार की एक विश्वकोषीय लहर बनाई। वेब ने पारंपरिक तरीकों को तेजी से बदल दिया और विभिन्न उद्योगों के विकास को प्रभावित किया। उदाहरण के लिए इसने ऑनलाइन शिक्षा और अर्थव्यवस्था के विकास को जन्म दिया। 2017 में आपकी कम्पनी को बढ़ावा देने का सबसे अच्छा तरीका Google खोज के माध्यम से है। लोग ऑनलाइन किसी भी प्रकार की सामग्री को पढ़ या देख सकते हैं जैसे साइट या सोशल मीडिया जैसे फेसबुक और टिव्टर के माध्यम से।

चिकित्सा के क्षेत्र में हुए आविष्कार

1. **रक्त परिसंचरण की प्रक्रिया की खोज**– विलियम हार्वे एक ब्रिटिश चिकित्सा विज्ञानी थे जिन्होंने अपने विभिन्न प्रयोगों द्वारा रक्त के प्रवाह पर निष्कर्ष निकाला और उनका यह शोध 1628 में प्रकाशित हुआ। उन्होंने सिर्फ इस बात की ही खोज नहीं की थी कि रक्त शरीर में वाहिकाओं के माध्यम से बहता है बल्कि उन्होंने दो चरणों वाली रक्त परिसंचरण की पूरी प्रक्रिया की खोज की। उन्होंने इस बात का पता लगाया कि रक्त हृदय से फेफड़ों में जाता है जहां यह शुद्ध होकर वापस दृश्य में आता है। यहाँ से रक्त धमनियों के एक संजाल के माध्यम से शरीर के विभिन्न अंगों में जाता है।

    हार्वे की इस खोज से कई प्रकार के रोगों और रक्त वाहिकाओं के ठीक प्रकार से काम न करने आदि के इलाज में मदद मिली।

2. **आनुवंशिकी की खोज**– ग्रेगर जोहान मेंडेल को उनके किसी शैक्षिक प्रतिभा के लिए नहीं जाना जाता है। उन्होंने अपने जीवन में कई काम करने की कोशिश

टिप्पणी

की जब तक कि वह अंतिम रूप से ऑस्ट्रिया ने ब्रून में नहीं बस गए। यहाँ के ग्रामीण परिवेश के उत्कृष्ट बागानों में उन्होंने बागवानी का काम किया। यहाँ मेडेल 7 सालों तक मटर के पौधे के साथ खेलते रहे। उन्होंने लम्बे, बौने और अलग–अलग रंगों के पौधों के बीच संकरण कराया और लगभग 28 हजार पौधों का अध्ययन किया और अपने निष्कर्षों को दर्ज किया।

एक पीढ़ी की विशेषताएं अगली पीढ़ी तक कैसे जाती है? मेंडेल ने देखा कि प्रत्येक गुणवत्ता को नियंत्रित करने वाला एक विशिष्ट कारक है। मेंडेल ने यह पाया कि इन कारकों को, जिसे अब हम जींस कहते हैं। आपस में मिलाया नहीं जा सकता। ये कारक अपनी स्वतन्त्रता को बनाये रखते हैं। प्रमुख कारक ही अपना प्रभाव दिखाता है जबकि निष्क्रिय कारक प्रमुख कारक के साथ निष्क्रिय रूप से साथ ही रहता है। उनके ये निष्कर्ष आनुवंशिकी की शुरुआत थी।

ये सभी घटनाएं 1866 के आस–पास की थी। मेंडेल के इन सभी अध्ययनों और निष्कर्ष पर लगभग 34 वर्षों तक किसी का ध्यान नहीं गया। परन्तु बाद में यह पाया गया कि मेंडेल के यह सिद्धान्त डार्विन के विकास के सिद्धांत को समर्थन देते हैं जल्दी ही मेंडेल और आनुवंशिकी पर उसका अवलोकन सुर्खियों में आ गया और मेंडेल को आधुनिक आनुवंशिकी का पिता स्वीकार कर लिया गया।

3. **पेनिसिलीन के उपचारात्मक औषध का आविष्कार**– लगभग 100 वर्ष पहले हमें यह तो पता था कि बैक्टीरिया द्वारा बहुत से रोग होते हैं परन्तु यह कोई नहीं जानता था कि इन बैक्टीरिया को कैसे नष्ट करके इन रोगों को नियंत्रित करना एक चुनौती थी। इस समय एक ब्रिटिश वैज्ञानिक अलेक्जेंडर फ्लेमिंग ने इस चुनौती को स्वीकार किया।

फ्लेमिंग ने अपनी प्रयोगशाला में बैक्टीरिया पर प्रयोग करते समय यह पाया की कुछ फफूंद की वजह से बैक्टीरिया की वृद्धि रुक जाती है। इन फफूंद का नाम पेनिसिलन था। ये एक रासायनिक तत्व का स्रावण करते थे जिसकी वजह से बैक्टीरिया में विकास नहीं होता था। फ्लेमिंग ने इस रासायनिक तत्व को निकाल लिया और इसे पेनिसिलिन कहा गया।

परन्तु फ्लेंमिग द्वारा निकाला गया पेनिसिलिन स्थाई नहीं था और इसे दवाओं के रूप में प्रयोग नहीं किया जा सकता था। इस चुनौती को पूरा किया आस्ट्रेलिया के हावर्ड फ्लोरी और जर्मनी के अर्नस्ट चेन ने, जिन्होंने पेनिसिलिन की स्थाई संरचना बनाने में सफलता प्राप्त की और इनके इस काम ने ही पेनिसिलिन के महत्व को पूरा किया। इन तीनों को एक साथ विभिन्न संक्रामक रोगों में पेनिसिलिन की खोज और उसके उपचारात्मक प्रभाव के लिए 1945 में चिकित्सा का नोबल पुरस्कार मिला। पेनिसिलीन अब तक ज्ञात सबसे उपयोगी दवाओं में से एक है।

4. **एक्स–रे की खोज**– एक्स–रे से प्राप्त चित्रों का प्रयोग हड्डियों के फ्रैक्चर, पथरी और शरीर के विभिन्न संक्रमण को देखने के लिए किया जाता है। इन शक्तिशाली एम्स किरणों की खोज जर्मनी के वैज्ञानिक विलहम कॉनरैड रॉन्टजन ने की थी। रॉन्टजन कैथोड रे ट्यूब में विद्युत के प्रवाह का अध्ययन कर रहे थे तब उन्होंने देखा कि इस ट्यूब के पास बेरियम प्ले–रिनोसाईनाइड

टिप्पणी

का एक टुकड़ा रख देने से वह चमकने लगता है। रॉटजन इस बात को समझ गए थे कि कैथोड रे ट्यूब द्वारा उत्सर्जित कुछ अज्ञात विकिरण इस प्रतिदीप्ति का कारण है। रान्टजन ने पाया कि ये किरणें विद्युत चुंबकीय विकिरण है जो कि कागज, लकड़ी और ऊतकों के माध्यम के पार जा सकती है। उनकी इस खोज के कुछ सप्ताह के भीतर ही जर्मनी में कई एक्स–रे मशीनें हड्डी के फ्रैक्चर का पता लगाने के लिए लगा दी गयीं।

एक्स–किरणों का उपयोग चिकित्सा निदान के अलावा अन्य क्षेत्रों में भी किया जाता है।

5. **प्रतिवर्ती क्रिया या अनुकूलित अनुक्रिया सिद्धान्त की खोज**– भूख मुंह में लार का स्राव और खाना खाना हमारे जीवन की एक सामान्य प्रक्रिया है। जिसके बारे में हम शायद ही कभी सोचते हैं। रूस के वैज्ञानिक इवान पेट्रोविच पावलोव ने सबसे पहले हमें बताया कि इस सरल सी प्रक्रिया में मस्तिष्क द्वारा नियंत्रित गतिविधियों की एक बड़ी संख्या होती है। पावलोव का प्रयोग बड़ी ही साधारण था, उन्होंने यह दिखाया कि यदि एक कुत्ते को एक घंटी की आवाज सुनकर ही उसके मुंह में लार का स्रावण होने लगता है चाहे वहाँ खाना हो ही ना। पावलोव के प्रयोग ने इस बात को सिद्ध कर दिया कि भोजन कर पाचन केवल जैव–रासायनिक गतिविधियों पर निर्भर नहीं करता है बल्कि लार का स्राव आदि गतिविधियाँ हमारे मस्तिष्क पर भी निर्भर करती है। पावलोन ने इस प्रक्रिया को अनुकूलित प्रतिक्रिया का नाम दिया और सीखने की इस क्रिया को अनुकूलन कहा।

   पावलोव ने यह सिद्ध कर दिया था कि अनुकूलित प्रतिक्रिया मस्तिष्क द्वारा नियंत्रित होती है और इसलिए यह केवल विकसित मस्तिष्क वाले प्राणियों में ही पाई जाती है। पावलोव के सिद्धांत ने हमें तांत्रिका तंत्र के बारे में समझने में काफी मदद की। उनके इन सिद्धांतों का शिक्षा और मनोविज्ञान में काफी उपयोग किया गया। इवान पेट्रोविच पावलोव को 1904 में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

6. **एंटीबॉडी संरचना की खोज**– प्रकृति ने हमें बीमारी पैदा करने वाले बैक्टीरिया आदि के बचाव के लिए हमें दो तरह के सुरक्षा तंत्र प्रदान किये हैं। पहली लिम्फ कोशिकाएं जो रक्त और शरीर की अन्य ग्रंथियों में पाई जाती है। दूसरी एंटीबाडी जिसे लम्फ कोशिकाओं द्वारा पैदा किया जाता है। मोटे तौर पर हम इस बात को जानते थे कि एंटीबॉडी किस तरह का प्रोटीन होते हैं लेकिन उनकी सटीक संरचना की खोज अभी की जानी थी।

प्रोटीन एमिनो एसिड की श्रृंखलाएं होती हैं और इन सभी अमीनो एसिड के अनुक्रम का निर्धारण करने की जरूरत थी। ब्रिटिश वैज्ञानिक प्रो. रॉडने और पोर्टर भी इस काम को करने के लिए अग्रणी वैज्ञानिकों में से एक थे। अमेरिकन वैज्ञानिक एडेलमेन ने अपने प्रयोगों से यह पता लगाया कि एंटीबॉडी में एमिनो एसिड की एक नहीं बल्कि दो श्रृंखलायें होती हैं। उनमें से एक लम्बी और भारी और दूसरी छोटी और हल्की होती है। उनकी इस खोज से बेहतर एन्टीबायोटिक दवाओं के लिए नए रास्ते

खुल गए। बाद में पोर्टर ने इस बात का पता लगाया कि ये श्रृंखलायें किस तरह से आपस में उलझीं होती हैं।

टिप्पणी

उनके इस शोध ने एंटीबॉडी की संरचना पर काफी प्रकाश डाला और ये एंटीबाडी बैक्टीरिया से हमारी रक्षा कैसे करते हैं, इस बात को समझने में हमारी मदद की। उनकी इस खोज से हमें अंग प्रत्यारोपण में भी मदद मिली।

7. **गुरुत्वाकर्षण और गति के नियमों की खोज**– न्यूटन के नाम का उल्लेख होते ही हमें सबसे पहले गुरुत्वाकर्षण कर ध्यान आता है। इस महान वैज्ञानिक ने सैद्धान्तिक और प्रायोगिक दोनों तरह की गणित और भौतिकी की शाखाओं के लिए काफी योगदान दिया है। गति के प्रसिद्ध तीन नियमों के अलावा उन्होंने इस बात को भी सिद्ध किया कि सूर्य के प्रकाश में 7 तरह के रंग होते हैं। वर्तमान में भौतिक विज्ञान और इंजीनियरिंग न्यूटन के सिद्धान्तों पर टिके हुए हैं। न्यूटन ने यह भी बताया कि दो वस्तुएं एक–दूसरे को आकर्षित करती हैं। गुरुत्वाकर्षण और गति के उनके इन नियमों से हमें ग्रहों और उपग्रहों की गति को समझने में भी मदद मिली। न्यूटन ने अपने सभी नियमों के लिए सटीक गतिणीय समीकरण भी दिए।

   न्यूटन के समय में गणित ने बहुत उन्नति की थी। न्यूटन ने कैल्कुलस और द्विपद प्रयेय की भी खोज की। न्यूटन की भौतिकी की यह खोज अपने आप में अद्वितीय थी।

8. **जीवाणु विज्ञान की खोज**– बैक्टीरिया बहुत सारी महामारियों के लिए जिम्मेदार होते हैं, परन्तु कुछ सौ साल पहले बैक्टीरिया और ये किस प्रकार जान लेवा महामारियां फैलाते हैं इस बात की हमें बहुत कम जानकारी थी। इस समय जर्मनी के जीवाणु विज्ञानी रॉबर्ट कॉरव ने बहुत ही साधारण तकनीकों के द्वारा एंथ्रेक्स, हैजा और तपेदिक (Anthrax, Cholera and Tuberculosis) फैलाने वाले जीवाणुओं की खोज की। उन्होंने ही सबसे पहले टी.बी. के बैक्टीरिया की खोज की और उन्हें अलग करने में सफलता प्राप्त की। रॉबर्ट कॉरव ने मानव शरीर के बाहर भी इन बैक्टीरिया की कालोनियों को विकसित किया और यह दिखाया कि वे कैसे जानवरों में भी इस रोग को फैलाते हैं। टी.बी. को कॉरव रोग (Koch's disease) भी कहा जाता है।

   साधारण तरीकों से अपनी आसाधारण खोजों के लिए रॉबर्ट कॉरव को उनकी उपलब्धियों के लिए 1905 में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

9. **एंटीबॉडी की संरचना की खोज**–प्रकृति ने हमें बीमारी पैदा करने वाले बैक्टीरिया आदि से बचाव के लिए हमें दो तरह के सुरक्षा तंत्र प्रदान किये हैं। पहली लिम्फ कोशिकाएं जो रक्त और शरीर की अन्य ग्रन्थियों में पाई जाती है, दूसरी एंटीबाडी जिसे लिम्फ कोशिकाओं द्वारा पैदा किया जाता है। मोटे तौर पर हम इस बात को जानते थे कि एंटीबॉडी किसी तरह का प्रोटीन होते हैं, लेकिन उनकी सटीक संरचना की खोज अभी भी जानी थी।

प्रोटीन एमिनो एसिड की श्रृंखलाएं (Chain) होते हैं और इन सभी अमीनो एसिड के अनुक्रम का निर्धारण करने की जरूरत थी। ब्रिटिश वैज्ञानिक प्रो. रॉडने और पोर्टर

टिप्पणी

(Prof. Rodney R. Porter) भी इस काम को करने के लिए अग्रणी वैज्ञानिकों में से एक थे। अमेरिकन वैज्ञानिक एडेलमैन ने अपने प्रयोगों से यह पता लगाया कि एंटीबॉडी में, एमिनो एसिड की एक नहीं बल्कि दो श्रृंखलायें होती हैं। उनमें से एक, लंबी और दूसरी छोटी और हल्की होती है। उनकी इस खोज से बेहतर एंटीबायोटिक दवाओं के लिए नए रास्ते खुल गए। बाद में पोर्टर ने इस बात का पता लगाया कि ये श्रृंखलायें किस तरह से आपस में उलझी होती हैं।

उनके इस शोध ने एंटीबॉडी की संरचना पर काफी प्रकाश डाला और ये एंटीबाडी बैक्टीरिया से हमारी रक्षा कैसे करते हैं, इस बात को समझने में हमारी मदद की। उनकी इस खोज में अंग प्रत्यारोपण (Organ Transplants) में भी मदद मिली। एडेलमैन और पोर्टर उनके श्रमसाध्य काम के लिए 1972 में संयुक्त रूप से नोबेल पुरस्कार मिला।

10. **पश्चुराइजेशन की प्रक्रिया की खोज**– जीवाणुओं की वजह से हमें कई संक्रामक रोग होते हैं, यह तो हमें पता था, परन्तु बैक्टीरिया हमारे जीवन में अन्य कई महत्वपूर्ण भूमिकाएं भी निभाते हैं, इस बात का पता सबसे पहले फ्रांस के रसायन शास्त्री लूई पाश्चर ने लगाया। ये दूध और शराब को भी खराब कर देते थे। पाश्चर ने जीवाणुओं को नष्ट करने का आविष्कार किया, जिससे दूध, शराब और अन्य खाद्य सामग्रियों को लंबे समय के लिए संरक्षित किया जा सका।

सामान्य रूप से हम सभी को यह अनुभव था कि दूध को उबालने से इसमें मौजूद बैक्टीरिया मर जाते हैं और दूध देर तक खराब नहीं होता है। पाश्चर ने इस बात की खोज की, यदि दूध को 72° तक उबला जाये और फिर कुछ ही सेकंड में इसे 10°C तक ठंडा किया जाये और यह प्रक्रिया कई बार दोहराया जाये, तो दूध के आवश्यक तत्वों को नष्ट किये बिना ही उसमें मौजूद बैक्टीरिया आदि को नष्ट किया जा सकता है और दूध को काफी लम्बे समय तक संरक्षित किया जा सकता है। इस प्रक्रिया को पश्चुराइजेशन (Pasteurisation) कहा जाता है। इस प्रक्रिया द्वारा ही विश्व के कई देशों में खाद्य सामग्रियों को लम्बे समय तक संरक्षित रखना संभव हुआ और भारत जैसे देश में श्वेत क्रान्ति या आपरेशन फ्लड (Operation Flood) सफल हुआ। पाश्चर ने डिप्थीरिया, हैजा और एंथ्रेक्स के लिए जिम्मेदार जीवाणुओं के बारे में भी कई खोजें की। पाश्चर की, एक निपुण चित्रकार होने के अलावा, गणित में भी काफी दिलचस्पी थी।

11. **शल्य क्रिया के बाद होने वाले संक्रमण से बचाने की महत्वपूर्ण खोज**– एनेस्थीसिया (Anaesthesia) का प्रयोग हम लगभग 150 वर्षों से कर रहे हैं, जिसके बाद से सर्जरी से गुजरने वाले रोगियों की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है। लगभग 100 वर्ष पहले सर्जरी से गुजरने वाले 50 प्रतिशत रोगियों की मौत, सर्जरी के बाद होने वाले संक्रमण से हो जाती थी। सफल आपरेशनों के बाद घाव में सड़न (Septic) और संक्रमण हो जाता था। एक ब्रिटिश सर्जन, जोसेफ लिस्टर ने इस बात को महसूस किया कि यह सब आपरेशन थिएटर में सफाई की कमी के कारण ही होता है।

जोसेफ लिस्टर ने एक अजीब चीज पर ध्यान दिया कि स्वतन्त्र रूप से खुले गटर की बदबू कम करने के लिए कार्बलिक एसिड (Carbolic Acid) का इस्तेमाल किया जाता था। उन्हें इस बात का विश्वास हो गया था कि कार्बोलिक एसिड गंध पैदा

टिप्पणी

करने वाले बैक्टीरिया को मार डालता है और उन्होंने आपरेशन थिएटर में इसका छिड़काव शुरू किया। इसी समय फ्रांस में पाश्चर की खोज की खबर कि बैक्टीरिया संक्रामक रोगों का कारण बनता है, इंग्लैण्ड पहुंच गयी थी। इससे उनका विश्वास और दृढ़ हो गया, और उन्होंने अपने हाथ, शल्य चिकित्सा उपकरणों और यहां तक कि घावों को साफ करने के लिए कार्बोलिक एसिड का इस्तेमाल किया। लिस्टर ने अपने सहयोगियों से भी इस अवधि को प्रयोग करने का अनुरोध किया, परन्तु उन्होंने इसका विरोध किया। परन्तु लिस्टर की इस विधि के प्रयोग के शल्य क्रिया के बाद जीवित बचने वाले रोगियों की संख्या 50 प्रतिशत से बढ़कर 90 प्रतिशत तक हो गयी। अपनी उपलब्धियों के कारण लिस्टर महारानी विक्टोरिया के सहकर्मी भी रहे।

12. **इंसुलिन की खोज** :– हम सभी जानते हैं कि इंसुलिन की कमी के कारण मधुमेह (diabets) होता है। इंसुलिन आमतौर पर अग्न्याशय (Pancreas) में बनता है और रक्त द्वारा इसका परिसंचरण होता है। यदि किसी कारण से इंसुलिन अग्न्याशय में पर्याप्त मात्रा में तैयार नहीं होता है, तो रोगी मधुमेह से ग्रस्त हो जाता है। इंसुलिन की खोज से पहले डायबिटीज का कोई इलाज नहीं था, कुछ मामलों में चीनी आदि का सेवन कम करने के बाद भी, रोगी अक्सर कोमा में चले जाते थे और अंततः उनकी मौत हो जाती थी। कनाडा के चिकित्सक बैंटिंग ने अपने सहयोगियों के साथ मिलकर इंसुलिन की खोज की। उन्होंने एक कुत्ते की अग्नाशय की नलिकाओं को बांध दिया और देखा कि कुछ समय बाद अग्नाशय की लैंगर हैन्स की द्वीपकाओं (Islets of Langerhans) की कोशिकाओं में इंसुलिन बन गया था। बैंटिंग ने इंसुलिन को निकालने में भी सफलता प्राप्त की। इंसुलिन के साथ मधुमेह रोगियों के इलाज से, रोगियों ने काफी राहत महसूस की। उनके घाव भी आसानी से सामान्य व्यक्तियों की तरह भर गए।

    बैंटिंग ने अपना सारा काम सिर्फ 8 महीनों में एक साधारण सी प्रयोगशाला में किया। बैंटिंग एक महान चिकित्सक थे, उन्होंने अपनी खोज में मैकलिओड (Macleod) और बेस्ट (best) के योगदान को स्वीकार किया। इन तीनों वैज्ञानिकों को 1923 में संयुक्त रूप से नोबेल पुरस्कार मिला।

13. **इंसुलिन की संरचना की खोज**– हमारे यह जानने के बाद कि, इंसुलिन मधुमेह को नियंत्रित करता है, इसकी संरचना हमारे लिए रहस्य बनी हुई थी, जब तक ब्रिटिश जैव रसायन शास्त्री ने इसकी खोज नहीं कर ली। सैंगर ने इस बात का पता लगाया कि इंसुलिन एमिनो अम्लों की दो शृंखलाओं से बना होता है जो सल्फर अणुओं के द्वारा जुड़े होते हैं। उन्होंने इंसुलिन के सभी अमीनो एसिड की पहचान भी की, और उनके अनुक्रम को भी निर्धारित किया।

यह एक आसान खोज नहीं थी। उन्होंने एक नयी तकनीक विकसित की जिससे किसी शृंखला के अन्त में एमीनो अम्ल का पता लगाया जा सकता था। इस प्रक्रिया ने प्रोटीन की संरचना का निर्धारण करने की भी नींव रखी। सेंगर को इस खोज के लिए 1958 में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उन्होंने इस पद्धति में और सुधार करके इसे और भी शक्तिशाली बनाया, जिससे डीएनए अणु में अमीनो एसिड के अनुक्रम का निर्धारण करने में भी मदद मिली। उनकी इस खोज से वैज्ञानिक अब

डीएनए अणुओं में एमिनो एसिड के अनुक्रम को निर्धारित कर सकते थे या अपनी इच्छानुसार डीएनए अणुओं का निर्माण कर सकते थे। उनके इस काम के लिए सैंगर की 1980 में, गिल्बर्ट और बर्ग के साथ संयुक्त रूप से दूसरी बार नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

टिप्पणी

14. **इलेक्ट्रोकार्डियोग्राफ (ECG) मशीन की खोज**– तंत्रिका तंत्र से एक सन्देश मिलने के बाद हृदय, रक्त को बाहर पम्प करता है। डच चिकित्सक विललेम एंथेविन ने इन तंत्रिकीय आवेगों में परिवर्तनों को दर्ज करने के लिए एक मशीन बनाई, जिसकी मदद से बिना शल्य चिकित्सा के इस बात की जांच की जा सकती थी कि हृदय ठीक से काम कर रहा है या नहीं।

    यह एक साधारण स्ट्रिंग गैल्बेनोमीटर था, जो उन विद्युतीय आवेगों को नापने में सक्षम था जो हृदय के संकुचन और फैलने से उत्पन्न होते हैं। चूंकि हृदय के संकुचन और फैलने से उत्पन्न होते हैं। चूंकि हृदय में यह प्रक्रिया बार–बार होती रहती है, इसलिए इन आवेगों की लहर को दर्ज किया जा सकता है। आज की ECG (Electro Cardeo Graph) मशीनें आधुनिक हो गयी हैं, परन्तु ये आज भी उसी सिद्धान्त पर काम करती हैं। इसी सिद्धान्त पर काम करने वाली EEG (Electro Cardeo Graph) मशीन को बाद में विकसित किया गया, जिससे मस्तिष्क के आवेगों को दर्ज किया जा सकता है। विललेम एंथोवेन को इस खोज के लिए 1924 में नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

15. **द्रव्य के परमाणु सिद्धान्त की खोज**– सदियों से लोग इस बात से सहमत थे कि कोई पदार्थ अणुओं से बना होता है, लेकिन किसी ने भी इसका कोई प्रयोगात्मक प्रमाण नहीं दिया था। इस काम के लिए सबसे पहले ब्रिटिश वैज्ञानिक जॉन डाल्टन ने सफलता हासिल की थी।

डाल्टन के सिद्धान्त के दूरगामी परिणाम हुए और हमें इस बात का पता चला कि रासायनिक क्रियाएं परमाणुओं के स्तर पर होती हैं। इस बात का पता चलने के बाद की किसी तत्व में सभी परमाणु एक जैसे होते हैं, तत्वों के परमाणु भार का महत्व बढ़ गया। इस अवधारणा ने परमाणु भार के मापन में तेजी ला दी। बाद की आधुनिक खोजों के बाद हमें यह पता चला कि, किसी तत्व के समस्थानिकों (Isotopes) के सभी परमाणु एक समान नहीं होते हैं। परन्तु आज भी डाल्टन की खोज विज्ञान में मील का पत्थर है।

डाल्टन के समय से कई रासायनिक क्रियाओं का अध्ययन किया जा रहा था। इन अध्ययनों में इस बात की जानकारी हो चुकी थी कि किसी रासायनिक क्रिया में अभिकारकों (reactants) कुल वजन संरक्षित रहता है और रासायनिक पदार्थ सरल अनुपात में एक दूसरे से जुड़ते हैं। जानने के बाद डाल्टन ने बताया कि किसी एक तत्व के सभी परमाणु बिल्कुल एक जैसे ही होते हैं, लेकिन अन्य तत्वों के परमाणुओं से भिन्न होते हैं और किसी रासायनिक क्रिया में एक तत्व के परमाणु दूसरे तत्व के परमाणु के साथ गठबंधन बनाते हैं।

16. **इलेक्ट्रान की खोज**– जे.जे. थॉमसन, एक ब्रिटिश वैज्ञानिक थे, जिन्होंने गैसों के माध्यम से बिजली के निर्वहन का अध्ययन किया था। अपने अध्ययन के

टिप्पणी

दौरान उन्होंने पाया कि एक ट्यूब के माध्यम से विद्युत का प्रवाह करने पर ऋण आवेशित इलेक्ट्रोड (कैथोड) एक विकिरण को उत्सर्जित कर्ता है, जो एक फोटोग्राफिक प्लेट को आकर्षित करता है। ये कैथोड किरणें कोई विद्युत चुम्बकीय विकिरण नहीं बल्कि कण (partides) थी, क्योंकि उनमें द्रव्यमान था। एक चुम्बकीय क्षेत्र में वे ऋण आवेशित (Degatively Charged) व्यवहार का प्रदर्शन करती थीं। थॉमसन उन्हें कॉर्पुसल्स (Corpuseles) कहा, जिन्हें बाद में इलेक्ट्रॉनों के रूप में जाना गया।

थामसन ने कई तरह के विद्युत और चुम्बकीय क्षेत्रों में इस बात का अध्ययन किया कि ये किरणें किस प्रकार मुड़ती (bend) होती हैं। अपनी इन विधियों का प्रयोग करके उन्होंने द्रव्यमान और आवेश के अनुपात का निर्धारण किया और निष्कर्ष निकाला कि इलेक्ट्रॉन उप परमाणु (Sub alomic) कण होते हैं। थामसन ने यह भी बताया कि यदि इलेक्ट्रान ऋण आवेशित कण हैं, तो परमाणु के विद्युत आवेश को शून्य करने के लिए, इस आवेश के बराबर एक घन आवेशित कण भी होना चाहिए।

थामसन ने बताया कि एक परमाणु एक तरबूज की तरह होता है, जिसमें धन आवेश तरबूज के आयतन (Volume) को भरता और ऋण आवेशित कण इलेक्ट्रान तरबूज के बीजों की तरह इसमें धंसे रहते हैं। आधुनिक खोजों के बाद हम इस परमाणु संरचना की गलत अवधारणाओं के बारे में जानते हैं। परन्तु उनकी इस खोज ने परमाणु संरचना को ऋण और धन आवेश के सन्दर्भ में आगे बढ़ाया। सर जोसेफ जॉन थॉमसन को उनकी खोज के लिए 1906 में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

17. **हेपेटाइटिस–बी की प्रतिरक्षा के लिए टीके की खोज**– पीलिया (Jaundice), जिगर (Liver) पर वायरस के संक्रमण के कारण होता है और ब्लमबर्ग के समय में पीलिया का इलाज करना मुश्किल था, क्योंकि एंटीबायोटिक दवायें इस रोग में असर नहीं करती थीं। सामान्य तौर पर पीलिया दो प्रकार का होता है, एक जो दूषित भोजन से फैलता है और दूसरा संक्रमित रक्त से फैलता है। दूसरे प्रकार का पीलिया एक घातक वायरस से फैलता है, जिसे हेपेटाइटिस–बी (Hepatitis-B) कहते हैं और इससे लीवर का कैंसर भी हो जाता है। बारुक एस ब्लमबर्ग ने इस रोग से सम्बन्धित तीन तरह की खोज की, पहली उन्होंने उस वायरस के उन पदार्थों की पहचान की, जिनके कारण हमारा शरीर इस वायरस के खिलाफ एंटीबाडी बनाता है और उन्होंने इस वायरस की पहचान भी की। दूसरा, उन्होंने इन विशिष्ट प्रकार को एंटीबाडीज की पहचान करके, हेपेटाइटिस–बी की पहचान करने की विधि भी विकसित की। तीसरा, उन्होंने हेपेटाइटिप–बी की प्रतिरक्षा के लिए वैक्सीन बनाने में सफलता प्राप्त की। उनकी इस उपलब्धि के लिए बारुक एस ब्लमबर्ग को 1976 में डैनियल कार्लटन गाजदुसेक (Daniel Carleton Gajdusek) के साथ संयुक्त रूप से चिकित्सा का नोबेल पुरस्कार मिला।

विज्ञान की उपयोगिता

आज का युग विज्ञान का युग है। वैज्ञानिक सुविधाओं के बिना आज जीवन सम्भव नहीं है। जब हम अपने चारों ओर दृष्टिपात करते हैं तो अपने चारों ओर वैज्ञानिक

टिप्पणी

उपलब्धियों का अम्बार लगा पाते हैं। ये सुविधाएँ तथा उपलब्धियाँ हमारे दैनिक जीवन का अंग बन गई है। विज्ञान के बिना आधुनिक जीवन की कल्पना तक नहीं की जा सकती। प्रतिदिन प्रातःकाल जागरण से लेकर रात्रि के शयन तक ही नहीं, शयन करते समय भी वह वैज्ञानिक उपलब्धियों का भोग करता है। उसके जीवन का एक क्षण भी ऐसा नहीं जाता, जब वह विज्ञान की पहुँच से परे हो। रेडियो, अखबार, दूरदर्शन, टेलीफोन, कार, बस, रेलगाड़ी, कलम, स्याही, कागज, पंखा, लैम्प, पुस्तक, घड़ी, रसोई गैस, तेल, पेट्रोल आदि सब विज्ञान की ही तो देन है। विज्ञान हमारे विज्ञान का अनिवार्य और अपरिहार्य अंग बन गया है।

जब हम विभिन्न क्षेत्रों में दृष्टिपात करते हैं तो विज्ञान के वरदानों को देखकर हर्ष मिश्रित आश्चर्य में डूब जाते हैं आइए, कुछ क्षेत्रों पर दृष्टि डालकर देखें–

हम अपनी बात का प्रारम्भ शैक्षिक जगत से करते हैं। क्या अपने कभी सोचा है कि विज्ञान के बिना शिक्षा जगत की वह क्रान्ति सम्भव ही नहीं थी, जो आज सर्वत्र दिखायी पड़ती है। करोड़ों विद्यार्थियों को कापी, कलम, पुस्तकें और अन्य पाठ्य सामग्री उपलब्ध कराना क्या विज्ञान के बिना सम्भव था? इसके अतिरिक्त दूरदर्शन, रेडियो और फिल्मों के माध्यम से शिक्षा के प्रचार–प्रसार ने इसे उन लोगों के लिए भी सुलभ बना दिया है जो आर्थिक या अन्य कारणों से इसका लाभ उठाने में असमर्थ थे। आज विज्ञान की उपलब्धियों के कारण विद्यार्थी उन चीजों से भी घर बैठे साक्षात्कार कर लेता है जिन्हें वह जीवन में सम्भवतः कभी भी न देख पाता।

चिकित्सा के क्षेत्र को ही लीजिए। ढेरों लाइलाज बीमारियों का इलाज अब वैज्ञानिक उपलब्धियों के कारण ही सम्भव हो पाया है। क्या कुछ वर्ष पहले ओपन हार्ट सर्जरी, बाइपास सर्जरी, हृदय बदलना, गुर्दा बदलना, शरीर का सम्पूर्ण रक्त बदल देना, आंख का प्रत्यारोपण आदि बातें कोई सोच भी सकता था? शरीर के अंग–प्रत्यंग के बाह्य और अन्तरंग चित्र लेकर शरीर की बीमारी की खोज पाना विज्ञान के कारण सरल हो गया है। रोग प्रतिरोधक टीकों ने मनुष्य को बीमारियों से दूर रखने में सहायता दी है। कुछ लोगों का तो यहाँ तक कहना है कि आयुर्विज्ञान के क्षेत्र में विज्ञान ने सर्वाधिक उपलब्धियां प्राप्त की है।

अभी कुछ वर्ष पूर्व तक हमारा देश अन्न तथा कुछ अन्य खाद्य सामग्री का विदेशों से आयात किया करता था किन्तु आज हम न केवल अपना भरण पोषण करने में समर्थ हैं बल्कि आवश्यकता पड़ने पर दूसरे देशों को निर्यात करने की स्थिति में भी हैं। इस स्थिति में केवल भारत में ही नहीं अपितु संसार के सभी देशों में कृषि उत्पादों में आश्चर्यजनक प्रगति हुई है। सारे संसार में जनसंख्या का भयंकर विस्फोट हुआ है। इस बढ़ी हुई जनसंख्या के उदर–भरण में विज्ञान ने बड़ी सहायता की है। विभिन्न रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों और उन्नत किस्म के बीजों तथा उन्नत किस्म के पशुओं की खोज से इस समस्या ने विकराल रूप धारण नहीं किया है।

विज्ञान ने औद्योगिक क्षेत्र में भी क्रान्ति पैदा कर दी है। विभिन्न प्रकार के उद्योग विज्ञान के आविष्कारों के बलबूते पर ही फूल रहे हैं। यहाँ तक कि विज्ञान ने कुटीर उद्योग की तो परिभाषा तक बदल डाली है और वे भी वैज्ञानिक आविष्कारों का लाभ उठाकर ऊपर उठ रहे हैं। बड़े उद्योग तो पहले से ही वैज्ञानिक उपलब्धियों पर आश्रित

चले जा रहे हैं। लोहा उद्योग, कागज उद्योग, सीमेन्ट उद्योग, कपड़ा उद्योग, खनिज उद्योग, जूता उद्योग आदि वैज्ञानिक देन का भरपूर लाभ उठा रहे हैं।

टिप्पणी

जब हम परिवहन के क्षेत्र में दृष्टि डालते हैं तो आश्चर्य में डूब जाते हैं। याद कीजिए कि मार्को पोलो को वेनिस से चीन तक की यात्रा करने में चार वर्ष लगे थे। क्या आज के युग में यह सम्भव है कि मनुष्य लगातार चार वर्ष तक यात्रा करता रहे? कदापि नहीं। आज हमारे पास यात्रा करने के तीव्रतम साधन हैं। आज के इस युग में मनुष्य एक सप्ताह में चाँद की यात्रा करके सकुशल पृथ्वी पर लौट आता है। हजारों यात्री प्रतिदिन बसों, रेलगाड़ियों, विमानों और निजी वाहनों में यात्रा करते हैं। परिवहन के क्षेत्र में विज्ञान की उपलब्धियों ने दूरी को समाप्त कर दिया है।

दूर संचार के क्षेत्र की उपलब्धियों पर दृष्टिपात करने पर हम पाते हैं कि आज जीवन कितना सुगम और सुविधा पूर्ण हो गया है। घर में बैठकर अमेरिका से बात कीजिए। क्या विज्ञान की उपलब्धियों के बिना यह सम्भव था? कदापि नहीं। अब घर में बैठे देश–विदेश से प्रसारित रेडियो कार्यक्रमों का आनन्द लीजिए। दूरदर्शन पर वेस्टइन्डीज में हो रहे क्रिकेट मैच का आनन्द लीजिए और लिहाफ में बैठकर एवरेस्ट की चोटी पर खड़ी बचेन्द्रीपाल को साक्षात देखिए। मनोरंजन के क्षेत्र में सिनेमा की देन से आज भी सभी परिचित हैं। अब तो वीडियो गेम्स कमरे में बैठकर खेले जा सकते हैं।

सुरक्षा के क्षेत्र में भी विज्ञान की उपलब्धियाँ आश्चर्यजनक हैं। अब तीरों, तलवारों, बघनखों, खंजरों और गदाओं का युग तो रहा नहीं। अब तो छोटे पिस्तौल से लेकर परमाणु बम, हाइड्रोजन बम से भी आगे लक्ष्यभेदी मिसाइलों का युग है। वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण सुरक्षा–तन्त्र और सुरक्षा तकनीक बदल गयी है। इस युग में कोई भी देश केवल अपने जनसंख्या बल के आधार पर उन्मुक्त होकर युद्ध के मैदान में कूदने की हिम्मत नहीं कर सकता। जहाँ विध्वंसक लड़ाकू विमानों का विकास हुआ है, वहीं विमान भेदी तोपों और विमान टोही अचूक राडारों का भी आविष्कार हुआ है। अतः अब रात के घने अंधकार में शभु सेना की दृष्टि बचाकर आक्रमण करना सहज नहीं रह गया।

अन्य क्षेत्रों जैसे क्रीड़ा, राजनीति आदि में भी विज्ञान की देन अभूतपूर्व है और यह देन निरन्तर बढ़ती ही जा रही है। किन्तु इतनी उपलब्धियों के होते हुए भी विज्ञान को कुछ लोग अभिशाप समझते हैं। निस्सन्देह उनका दृष्टिकोण एकांगी है फिर भी हमें उन बातों पर अवश्य विचार करना चाहिए जिसके कारण लोगों की विज्ञान के विषय में ऐसी धारणा बनी। वास्तव में द्वितीय विश्वयुद्ध में विनाशकारी परमाणु बमों का विध्वन्सकारी रूप लोगों ने अपनी आँखों से देखा। हिरोशिमा और नागासाकी आज भी उस विध्वन्स के गवाह हैं। तब से लेकर आज तक विनाशकारी बमों के विध्वन्सकारी रूप में आश्चर्यजनक वृद्धि हुई है। चेरनाबिस की परमाणु दुर्घटना तथा भोपाल में गैस रिसाव दुर्घटना में हजारों लोगों की मृत्यु तथा स्थायी विकलांगता ने मनुष्य के मन के भय को और अधिक बढ़ा दिया है जो स्वाभाविक भी है और इसी कारण से बहुत से लोग विज्ञान को अभिशाप तथा मानवीय जाति का शत्रु मानने लगे किन्तु क्या कुछ सीमित यद्यपि भयंकर दुर्घटनाओं के कारण समस्त वरदानों को त्याग देना चाहिए? ये

टिप्पणी

सभी घटनाएँ क्यों घटी, यदि इस तथ्य पर गौर किया जाए तो पता चलता है कि इन सबके पीछे मनुष्य की अपनी भूल थी। अपनी भूल का पाश्चाताप न करके अपना दोष दूसरों के सिर मढ़ देना मानव मन की दुर्बलता है। अतः हमने इसी दुर्बलता के अधीन होकर अपना दोष विज्ञान के सिर मढ़कर घोषणा कर दी कि विज्ञान अभिशाप है। यदि हम विवेक, संयम, धैर्य और सहिष्णुता से काम लें। अपने मिथ्या अहंकार कुलाभिमान का परित्याग कर दें और अपने भीतर विश्वबन्धुत्व और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना का विकास करें तो यह अभिशाप वरदान में बदलते देर नहीं लगेगी।

यह बात निर्विवाद रूप से कही जा सकती है कि विज्ञान की उपलब्धियां अनन्त हैं और वे आधुनिक जीवन के लिए अनिवार्य भी हो गयी हैं।

दैनिक जीवन में विज्ञान का महत्व

हमारे चारों ओर विज्ञान है। हम सोच रहे हैं, भोजन कर रहे हैं, दौड़ रहे हैं या सांस ले रहे हैं इन सभी जैविक क्रियाओं के पीछे कहीं न कहीं विज्ञान के सिद्धान्त कार्य कर रहे हैं। मानव सभ्यता के विकास में विज्ञान का उद्‌भव मनुष्य की सबसे बड़ी उपलब्धि है। विज्ञान ने मनुष्यों को तमाम रोग व्याधियों से मुक्ति दी है और असंख्य दैनिक सुविधाओं से लैश भी किया है। विज्ञान को मनुष्य का वफादार नौकर की संज्ञा भी दी जा सकती है जो जीवन भर हमारे आदेशों का पालन करता रहता है।

वहीं दूसरी तरफ यदि विज्ञानरूपी शक्ति का हम दुरुपयोग करें तो यह क्षण भर में विनाश का मंजर भी ला सकता है। परमाणु की शक्ति जहां एक तरफ लाखों घरों में बिजली का उजाला फैला सकती है, वहीं दूसरी ओर परमाणु बम बनने पर जीवन में अंधेरा भी ला सकती है। विज्ञान ने हमारे जीवन में आमूल–चूल परिवर्तन लाये हैं और यह सब विज्ञान के सिद्धान्तों के उपयोग से बने उन उपकरणों के कारण संभव हुआ है जिन्होंने हमारे जीवन को सरल बनाया है। आज जहाँ भी अपनी नजर दौड़ाएंगे तो यही पाएंगे कि विज्ञान के सिद्धान्तों के हमारे जीवन के हर क्षेत्र में व्यावहारिक उपयोग पर आज समूची दुनिया निर्भर हो चुकी है।

वर्तमान समय में हम चाहते हुए भी विज्ञान को अपने विज्ञान से निकाल नहीं सकते। यदि विज्ञान के बिना दुनिया की कल्पना करें तो हमें एक गहरा शून्य ही दिखाई देता है। कल्पना कीजिये कि अब तक एडिसन ने विद्युत बल्ब का आविष्कार न किया होता तो शायद पूरी दुनिया अंधेरे में डूबी रहती। हियरिंग ऐड के आविष्कार ने बहरों को सुनने में मदद की है और कृत्रिम अंगों के उपयोग से अपंग व्यक्ति भी चलने–फिरने लायक बन गए हैं। यहाँ विज्ञान वरदान के समान साबित हुआ है। विज्ञान ने आधुनिक जीवन में हमें कई उपहार दिए हैं।

विज्ञान तो बस एक शक्ति होती है। विज्ञान का मनुष्य सदुपयोग भी कर सकता है और दुरुपयोग भी। असल में जो विनाश हुआ था उसका जिम्मेदार हम विज्ञान को नहीं मान सकते। वह तो निर्जीव होता है। विज्ञान का सदुपयोग करना है या दुरुपयोग यह बात मनुष्य पर ही निर्भर करती है।

विज्ञान तो मनुष्य का दास होता है। मनुष्य उसे जैसी आज्ञा देता है विज्ञान वैसा ही करता है। विज्ञान एक तलवार की तरह होता है जिससे किसी को बचाया भी जा

सकता है और मारा भी जा सकता है। विज्ञान के प्रयोग को मनुष्य जाति के कल्याण के लिए किया जाना चाहिए। मनुष्य जाति के विनाश के लिए नहीं।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

5. मार्कोनी ने रेडियो का आविष्कार 1901 में किया। वे किस देश के वैज्ञानिक थे?

(क) जर्मनी (ख) ब्राजील

(ग) अमेरिका (घ) इटली

6. टेलीफोन का आविष्कार किसने किया?

(क) मारकोनी (ख) ग्राहम बेल

(ग) रॉबर्ट गोल्ड (घ) एडवर्ड जेनर

4.5 समास (संकलित)

दो या अधिक शब्दों का मिलकर इस प्रकार एक हो जाना कि उनके बीच के संयोजक शब्दों और कारक चिह्नों का लोप हो जाए, समास कहलाता है। समास का तात्पर्य है संक्षिप्त रूप में समीपस्थ हो जाना। संस्कृत में इनका विशेष महत्व है, पर हिंदी में भी समास पदों का काफी प्रयोग होता है।

समास में दो पद अपनी विभक्ति छोड़कर या बीच के संयोजक शब्दों को छोड़कर मिलते हैं। कभी–कभी समास युक्त पदों में वर्णों की संधि भी हो जाती है। समासयुक्त पदों को अलग–अलग करके मूल रूप में रखने का नाम है– समास विग्रह। उदाहरण के लिए एक शब्द है– जलोदर। इसका समास विग्रह होगा– उदर में जल बढ़ जाने से जो रोग होगा, वह जलोदर। यह बहुब्रीहि समास हुआ।

समास के प्रकार

समास छः प्रकार के माने गए हैं– द्वंद्व, द्विगु, कर्मधारय, तत्पुरुष, अव्ययी भाव और बहुब्रीहि। परंतु कुछ वैयाकरण चार प्रकार के ही समास मानते हैं– द्वंद्व, तत्पुरुष, अव्ययी भाव और बहुब्रीहि। द्विगु और कर्मधारय को वे तत्पुरुष के भेद ही मान लेते हैं, अलग प्रकार नहीं। चार प्रकार के समास मानने वाले विद्वानों के द्वारा ये समास लक्षण पद की प्रधानता के आधार पर बनाए जाते हैं। जैसे, जिसमें दोनों पद प्रधान हों, वह द्वंद्व समास है। जिसमें द्वितीय पद प्रधान हो, वह तत्पुरुष। जिसमें दोनों पद गौण हो जाएं और बाहर से लाया अर्थ प्रधान हो, वह बहुब्रीहि और जिसमें अव्यय पद प्रधान हो वह अव्ययी भाव माना जाता है। परंतु समझने की सुविधा और सुगमता की दृष्टि से छः भेद मानना ही अधिक उपयुक्त है।

1. **द्वंद्व समास** – जहां दोनों पद प्रधान हों। बीच के संयोजक शब्द का लोप हो वहां द्वंद्व समास होता है। जैसे– माता–पिता, दिन–रात। यहां बीच के 'और' संयोजक का लोप है।
2. **द्विगु समास**– जिस समास में पहला पद संख्या बोधक हो, उसे द्विगु समास कहते हैं। द्विगु समास के दो भेद हैं– 1.समाहार द्विगु , 2. उत्तर पद प्रधान द्विगु।

टिप्पणी

समाहार द्विगु में एक समुदाय या एकत्रता का बोध होता है, जैसे– पंचवटी–वट जाति के पांच वृक्षों का झुरमुट। पसेरी– पांच सेर की एक साथ तौल या उसके लिए प्रयुक्त बाट। त्रिभुवन– तीनों भुवनों का समाहार। उत्तर पद प्रधान द्विगु में बाद वाले पद का अर्थ महत्वपूर्ण होता है, जैसे– दोपहर, नवरात्र, सतसई, चौराहा, पंचशील, बारहमासा आदि।

3. **कर्मधारय समास**– जिस समास में विशेषण–विशेष्य रूप से दो पदों का समाहार हो, वहां पर कर्मधारय समास होता है। कुछ लोग इसे तत्पुरुष का ही एक भेद मानते हैं, परंतु अलग नाम होने से इसे स्वतंत्र समास मानना ही उचित है। इस समास में कभी विशेषण पहला पद होता है और कभी बाद वाला पद। उदाहरणार्थ– नीलकमल, चंद्रमुख, छुटभैया, भुजदंड आदि।

4. **तत्पुरुष समास**– तत्पुरुष में अंतिम पद प्रधान रहता है। इसमें दो पदों के बीच आने वाली विभक्ति का लोप हो जाता है। जिस विभक्ति का लोप होता है, उसी के नाम पर तत्पुरुष का भी नाम हो जाता है।

कर्मतत्पुरुष समास– वह तत्पुरुष है, जिसमें कर्मधारक की विभक्ति का लोप हो जाता है, जैसे– मोक्षप्राप्त– मोक्ष को प्राप्त, चिड़ीमार– चिड़िया को मारने वाला, इस तरह माखनचोर, तिलचट्टा, आदि।

करणतत्पुरुष समास– वह तत्पुरुष है, जिसमें करण कारक की विभक्ति का लोप हो जाता है, जैसे–तुलसीकृत, शोकाकुल, कपड़छान, शराहत, अकालग्रस्त।

संप्रदान तत्पुरुष समास– वह तत्पुरुष है, जिसमें संप्रदान कारक या चतुर्थी के चिह्न का लोप हो जाता है, जैसे– देशभक्ति, देश के लिए भक्ति, विद्यालय– विद्या के लिए आलय, रसोईघर– रसोई के लिए घर, हथकड़ी– हाथ के लिए कड़ी, मार्गव्यय– मार्ग के लिए व्यय।

अपादान तत्पुरुष समास– जहां समास के पदों में अपादान कारक का चिह्न या पंचमी विभक्ति लुप्त हो जाती है, वहां अपादान तत्पुरुष होता है, जैसे– ऋणमुक्त– ऋण से मुक्त, रणविमुख– रण से विमुख, देशनिकाला– देश से निकाला, कामचोर– काम से जी चुराने वाला आदि।

संबंध तत्पुरुष समास– जहां समास के पदों में संबंध कारक चिह्न लुप्त हो जाता है वहां संबंध तत्पुरुष होता है, जैसे– गंगाजल– गंगा का जल, सेनापति– सेना का पति, पराधीन– पर के अधीन, राजपुत्र – राजा का पुत्र।

अधिकरण तत्पुरुष समास– जहां समास पदों में अधिकरण कारक का चिह्न लुप्त होता है वहां अधिकरण तत्पुरुष होता है। जैसे– गृहप्रवेश– गृह में प्रवेश, स्नेहमग्न– स्नेह में मग्न, गृहस्थ– गृह में स्थित, कलाप्रवीण– कला में प्रवीण आदि।

नञ् तत्पुरुष समास– तत्पुरुष का एक भेद न्–ा तत्पुरुष भी माना जाता है। इसमें पहला पद निषेध या अभाव का सूचक होता है। जैसे– अनाचार, अनिष्ट, अयोग्य, नालायक, अनजाना आदि।

5. **अव्ययी भाव समास**–जहां पूर्व पद की प्रधानता होती है अथवा प्रथम पद अव्यय होता है और दोनों के मेल से जो सामासिक पद बनता है, उस पर लिंग, वचन,

टिप्पणी

कारक आदि का प्रभाव नहीं होता है। उदाहरणार्थ– प्रतिदिन–दिन–दिन, यथाशक्ति– शक्ति के अनुसार, यथासंभव– जितना संभव हो, यथाक्रम– क्रम के अनुसार, आजीवन– जीवन भर, अकारण– कारण के बिना, अभूतपूर्व– जैसा पहले नहीं हुआ, निडर– डर के बिना, यावज्जीवन– जब तक जीवन है।

6. **बहुब्रीहि समास**–जहां समास में आए पदों को छोड़कर किसी अन्य पदार्थ की प्रधानता होती है, अर्थात दोनों पद प्रधान होते हैं, किंतु तीसरा महत्वपूर्ण पद निर्मित होता है वहां बहुब्रीहि समास होता है। उदाहरणार्थ– पीतांबर– पीला है अंबर जिसका, वह कृष्ण। पंचानन– पांच है आनन जिसके, वह शिव। शूलपाणि– शूल है पाणि या हाथ में जिसके, ऐसे शंकर। वीणापाणि– वीणा है पाणि या हाथ में जिसके, ऐसी सरस्वती।

अपनी प्रगति जांचिए

7. 'लम्बोदर' में कौन–सा समास है?

(क) कर्मधारय (ख) द्वन्द्व

(ग) तत्पुरुष (घ) बहुव्रीहि

8. निम्न में से द्विगु समास का उदाहरण कौन–सा नहीं है?

(क) त्रिभुवन (ख) नवरात्र

(ग) छुटभैया (घ) बारहमासा

4.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ख)
2. (ग)
3. (ग)
4. (ग)
5. (घ)
6. (ख)
7. (घ)
8. (ग)

4.7 सारांश

डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम का जन्म 15 अक्टूबर 1931 तमिलनाडु राज्य के धनुषकोडी गाँव, रामेश्वरम के तमिल मुस्लिम परिवार में हुआ था। उनका पूरा नाम डॉक्टर अबुल पाकिर जैनुल्लाब्दीन अब्दुल कलाम है। उनके पिता जैनुलाब्दीन एक नाविक थे। उनकी माँ आसिंमा एक गृहिणी थी। कलाम अपने परिवार में चार भाइयों और एक बहन में

सबसे छोटे थे। परिवार की आर्थिक दशा ठीक नहीं थी। अतः कम उम्र में ही कलाम को काम करना पड़ा। अपने पिता की आर्थिक मदद हेतु समाचार पत्र वितरित करने का कार्य किया।

टिप्पणी

डॉ. कलाम ने प्रधानमंत्री के मुख्य वैज्ञानिक सलाहकार और रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन के सचिव के रूप में जुलाई 1992 से दिसम्बर 1999 तक कार्य किया। पोखरण–2 परमाणु परीक्षण में उन्होंने एक गहन राजनीतिक और तकनीकी भूमिका निभाई। कलाम ने मुख्य परियोजना समन्वयक, राजगोपाल चिदंबरम के साथ परीक्षण चरण के दौरान भी कार्य किया।

डॉ. अब्दुल कलाम सत्तारूढ़ पार्टी भारतीय जनता पार्टी और विपक्ष की भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी में सहयोग से 2002 से 2007 तक भारत के 11वें राष्ट्रपति बने। उन्हें व्यापक रूप से ''जनता का राष्ट्रपति'' के रूप में जाता है। राष्ट्रपति अवधि के बाद उन्होंने शिक्षा, लेखन और सार्वजनिक सेवा में उल्लेखनीय कार्य किया। वे भारत के सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'भारत रत्न' सहित कई प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित किये गये।

एक प्रोफेसर से मिसाइल मैन और फिर दुनिया के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश भारत के राष्ट्रपति पद तक का सफल सहजता से तय करने वाले डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम बच्चों से कहा करते थे सपने वो नहीं जो सोने के बाद आते है। सपने तो वो है जो सोने ही नहीं देते। ऐसा कहने के प्रति उनका भाव यही रहा कि बच्चे सपने जरूर देखें लेकिन खुली आंखों से। खुद अपने देश के विकास के सपने देखने की उन्होंने बच्चों को हमेशा प्रेरणा दी। बच्चों की सोच वैज्ञानिक ठाने, इसके लिए वह जीवन भर प्रयास करते रहे। जिस दौर में यह राष्ट्रपति रहे, तब भी किसी विश्वविद्यालय अथवा ऐसे समारोह में जहाँ भी उन्हें छात्र–छात्राएं मिलते तो वह एक अध्यापक की तरह पेश आते। उन्होंने नई पीढ़ी के दम पर ही भारत के महाशक्ति बनने का सपना संजोया।

रक्षा विज्ञान के क्षेत्र में अनेक उपलब्धियों के अलावा वैज्ञानिकता प्रसार में भी डॉ. कलाम का काफी बड़ा योगदान रहा। अपने लेखन और भाषणों के जरिए वे जीवन में वैज्ञानिक दृष्टि अपनाने पर जोर देते रहे। उनका मानना था कि मनुष्य का विकास इसके बिना संभव नहीं है। 2020 तक भारत को एक विकसित राष्ट्र बनाने का स्वप्न एक आम भारतीय नागरिक की आकांक्षाओं की ही अभिव्यक्ति है। उन्होंने ठीक ही कहा कि सपने देखना कभी नहीं छोड़ना चाहिए। कलाम ने अपने आचरण से संदेश दिया कि मनुष्य की शक्ति उसके पद से आती है और यह भी एक श्रेष्ठ मनुष्य के निर्माण से ज्यादा बड़ा नैतिक और संवैधानिक दायित्व और कोई नहीं हो सकता।

कुछ उल्लेखनीय अपवादों को छोड़कर मानवता को सौरमण्डल का अस्तित्व जानने में कई हजार साल लग गए। लोग सोचते थे कि पृथ्वी ब्रह्माण्ड का स्थिर केंद्र है और आकाश में घूमने वाली दिव्य या वायव्य वस्तुओं से स्पष्ट रूप से अलग है। लेकिन 140 ई. में क्लाडियस टालमी ने बताया कि पृथ्वी ब्रह्माण्ड के केंद्र में है और सारे पिंड इसकी परिक्रमा करते हैं लेकिन कोपरनिकस ने सन् 1543 में बताया कि सूर्य ब्रह्माण्ड के केंद्र में है और सारे ग्रह पिंड इसकी परिक्रमा करते हैं।

टिप्पणी

सौरमण्डल सौर वायु द्वारा बनाए गए एक बड़े बुलबुले से घिरा हुआ है जिसे हिलियोस्फियर कहते हैं। इस बुलबुले के अंदर सभी पदार्थ सूर्य द्वारा उत्सर्जित हैं। अत्यंत अधिक उर्जा वाले कण इस बुलबुले के अंदर हिलियोस्फियर के बाहर से प्रवेश कर सकते हैं। यह किसी तारे के बाहरी वातावरण द्वारा उत्सर्जन किए गए आवेशित कणों की धारा को सौर वायु कहते हैं।

सौर वायु विशेषकर अत्यधिक उर्जा वाले इलेक्ट्रान और प्रोटॉन से बनी होती है इनकी उर्जा किसी तारे के गुरुत्व प्रभाव से बाहर जाने के लिए पर्याप्त होती है। सौर वायु सूर्य से हर दिशा में प्रवाहित होती है जिसकी गति कुछ सौ किलोमीटर प्रति सेकेण्ड होती है। सूर्य के संदर्भ में इसे सौर वायु कहते हैं अन्य तारों के संदर्भ में इसे ब्रह्माण्ड वायु कहते हैं।

आज पूरी दुनिया में विज्ञान की पताका लहरा रही है। जीवन तथा विज्ञान एक दूसरे के पर्याय बन गए हैं। विज्ञान से मानव को असीमित शक्ति प्राप्त हुई है। आज मनुष्य विज्ञान की सहायता से पक्षियों की भांति आसमान में उड़ सकता है। गहरे से गहरे पानी में सांस ले सकता है। पर्वतों को लांघ सकता है तथा कई मीलों की दूरियों को चंद घंटों में पार कर सकता है। आज मनुष्य ने विज्ञान की सहायता से कई बड़े क्षेत्रों में सफलता पाई है जैसे कि चिकित्सा, सूचना क्रांति, अंतरिक्ष विज्ञान, यातायात आदि।

हमारे चारों ओर विज्ञान है। हम सोच दुनिया रहे हैं भोजन कर रहे हैं, दौड़ रहे हैं या सांस ले रहे हैं इन सभी जैविक क्रियाओं के पीछे कहीं न कहीं विज्ञान के सिद्धान्त कार्य कर रहे हैं। मानव सभ्यता के विकास में विज्ञान का उद्‌भव मनुष्य की सबसे बड़ी उपलब्धि है। विज्ञान ने मनुष्यों को तमाम रोग व्याधियों से मुक्ति दी है और असंख्य दैनिक सुविधाओं से लैश भी किया है। विज्ञान को मनुष्य का वफादार नौकर की संज्ञा भी दी जा सकती है जो जीवन भर हमारे आदेशों का पालन करता रहता है।

दो या अधिक शब्दों का मिलकर इस प्रकार एक हो जाना कि उनके बीच के संयोजक शब्दों और कारक चिह्नों का लोप हो जाए, समास कहलाता है। समास का तात्पर्य है संक्षिप्त रूप में समीपस्थ हो जाना। संस्कृत में इनका विशेष महत्व है, पर हिंदी में भी समास पदों का काफी प्रयोग होता है।

समास में दो पद अपनी विभक्ति छोड़कर या बीच के संयोजक शब्दों को छोड़कर मिलते हैं। कभी–कभी समास युक्त पदों में वर्णों की संधि भी हो जाती है। समासयुक्त पदों को अलग–अलग करके मूल रूप में रखने का नाम है– समास विग्रह।

समास छः प्रकार के माने गए हैं– द्वंद्व, द्विगु, कर्मधारय, तत्पुरुष, अव्ययी भाव और बहुब्रीहि। परंतु कुछ वैयाकरण चार प्रकार के ही समास मानते हैं– द्वंद्व, तत्पुरुष, अव्ययी भाव और बहुब्रीहि। द्विगु और कर्मधारय को वे तत्पुरुष के भेद ही मान लेते हैं, अलग प्रकार नहीं। चार प्रकार के समास मानने वाले विद्वानों के द्वारा ये समास लक्षण पद की प्रधानता के आधार पर बनाए जाते हैं। जैसे, जिसमें दोनों पद प्रधान हों, वह द्वंद्व समास है। जिसमें द्वितीय पद प्रधान हो, वह तत्पुरुष। जिसमें दोनों पद गौण हो जाएं और बाहर

से लाया अर्थ प्रधान हो, वह बहुब्रीहि और जिसमें अव्यय पद प्रधान हो वह अव्ययी भाव माना जाता है।

टिप्पणी

4.8 मुख्य शब्दावली

- **आमफ़हम** : सामान्य।
- **प्रसूत** : निकला हुआ।
- **पाश** : बंधन।
- **नौनिहाल** : बच्चे।
- **युद्धेच्छु** : युद्ध की इच्छा रखने वाला।
- **प्रादुर्भाव** : उत्पत्ति, उद्‌भव।
- **व्याधि** : रोग।
- **प्रत्यारोपण** : पुनः आरोपित करना।

4.9 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. डॉ. अब्दुल कलाम की पारिवारिक पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालिए।
2. डॉ. अब्दुल कलाम को 'जनता का राष्ट्रपति' क्यों कहा जाता है?
3. 'सपनों की उड़ान' निबंध में क्या कहने का प्रयास है?
4. 'सौरमंडल की खोज' पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
5. आग के आविष्कार से क्या परिवर्तन आया?
6. कम्प्यूटर के आविष्कार ने किस प्रकार दुनिया बदल दी?
7. बहुब्रीहि समास तथा कर्मधारय समास में अंतर स्पष्ट कीजिए।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. डॉ. अब्दुल कलाम के व्यक्तित्व और उपलब्धियों पर विस्तार से प्रकाश डालिए।
2. 'सपनों की उड़ान' निबंध का महत्व और प्रासंगिकता बताइए।
3. 'सपनों की उड़ान' निबंध का समीक्षात्मक विश्लेषण कीजिए।
4. हमारे सौरमंडल की संरचना एवं स्वरूप पर एक निबंध लिखिए।
5. दुनिया को बदल देने वाले प्रमुख वैज्ञानिक आविष्कारों का विवरण लिखिए।
6. समास का अर्थ बताते हुए उसके भेदों की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।

4.10 सहायक पाठ्य सामग्री

टिप्पणी

1. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, *अग्नि की उड़ान*, प्रभात प्रकाशन, नयी दिल्ली : 2009
2. गुणाकर मुले, *सौरमंडल*, ईशान प्रकाशन, नयी दिल्ली : 2009
3. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती, *विज्ञान और मानव*, आलेख प्रकाशन, नयी दिल्ली : 2007
4. डॉ. मीनाक्षी अग्रवाल, *आदर्श हिन्दी व्याकरण*, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली : 2008

इकाई 5 नैतिक मूल्य

टिप्पणी

संरचना

5.0 परिचय

5.1 उद्देश्य

5.2 शिकागो व्याख्यान (व्याख्यान) : स्वामी विवेकानन्द

- 5.2.1 शिकागो व्याख्यान का मूल पाठ
- 5.2.2 शिकागो व्याख्यान का सार
- 5.2.3 शिकागो व्याख्यान का व्याख्यांश
- 5.2.4 शिकागो व्याख्यान की महत्ता एवं प्रासंगिकता
- 5.2.5 शिकागो व्याख्यान का समीक्षात्मक अध्ययन

5.3 धर्म और राष्ट्रवाद (लेख) : महर्षि अरविन्द

- 5.3.1 धर्म और राष्ट्रवाद लेख का मूल पाठ
- 5.3.2 धर्म और राष्ट्रवाद लेख का सार
- 5.3.3 धर्म और राष्ट्रवाद लेख का व्याख्यांश
- 5.3.4 धर्म और राष्ट्रवाद लेख का समीक्षात्मक अध्ययन

5.4 सादगी (आत्मकथा) : महात्मा गांधी

- 5.4.1 सादगी आत्मकथा का मूल पाठ
- 5.4.2 सादगी आत्मकथा का सार
- 5.4.3 सादगी आत्मकथा का व्याख्यांश
- 5.4.4 सादगी आत्मकथा का समीक्षात्मक अध्ययन

5.5 चित्त जहां भयशून्य (कविता) : रवीन्द्रनाथ टैगोर

- 5.5.1 मूल कविता : चित्त जहां भयशून्य
- 5.5.2 चित्त जहां भयशून्य कविता की व्याख्या
- 5.5.3 चित्त जहां भयशून्य : कविता की मूल संवेदना
- 5.5.4 चित्त जहां भयशून्य कविता का कला एवं भावपक्ष

5.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

5.7 सारांश

5.8 मुख्य शब्दावली

5.9 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

5.10 सहायक पाठ्य सामग्री

5.0 परिचय

भारतीय युवाओं को प्राचीन भारत से लेकर वर्तमान भारत तक सबसे ज्यादा किसी महापुरुष से प्रभावित और प्रेरित किया होगा, तो वे हैं स्वामी विवेकानंद। स्वामी विवेकानंद जी का व्यक्तित्व ही कुछ ऐसा है कि आज वे हर भारतीय युवा के लिये आदर्श हैं। हम सभी जानते हैं कि स्वामी विवेकानंद एक शक्तिशाली वक्ता थे, उनके भाषणों में श्रोताओं को मंत्र–मुग्ध करने की ताकत थी।

महर्षि अरविन्द का लेखन उनके अंतिम समय तक अनवरत चलता रहा। सन् 1910 में वे कर्मयोगी और धर्म को विवेकानंद की शिष्या भगिनी निवेदिता को सौंप कर चन्द्रनगर चले गये। इसके बाद वे अंतः प्रेरणा से पांडिचेरी पहुंचे। वहां भी उन्होंने 'आर्य' अंग्रेजी मासिक पत्रिका की शुरुआत की, जिसमें उन्होंने प्रमुख रूप से धार्मिक और

टिप्पणी

आध्यात्मिक विषयों पर लिखा। आर्य में उनकी अमर रचनाएं प्रकाशित हुई, जिनमें प्रमुख 'लाइफ डिवाइन, सीक्रेट ऑफ योग एवं गीता' पर उनके निबन्ध प्रमुख हैं। महर्षि अरविन्द का भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के समय की पत्रकारिता में महत्वपूर्ण योगदान रहा।

गांधी जी सत्याग्रह (व्यापक सविनय अवज्ञा) के माध्यम से अत्याचार के प्रतिकार के अग्रणी नेता थे। उनकी इस अवधारणा की नींव संपूर्ण अहिंसा के सिद्धांत पर रखी गई थी जिसने भारत को आजादी दिलाकर पूरी दुनिया में जनता को नागरिक अधिकारों एवं स्वतंत्रता के प्रति आंदोलन के लिए प्रेरित किया।

इस इकाई में हम स्वामी विवेकानंद, महर्षि अरविंद, महात्मा गांधी एवं रवीन्द्रनाथ टैगोर से परिचित हो इनकी कृतियों क्रमशः शिकागो व्याख्यान, धर्म और राष्ट्रवाद, सादगी एवं चित्त जहां भयशून्य का अध्ययन करेंगे।

5.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- स्वामी विवेकानंद के 'शिकागो व्याख्यान' का निहितार्थ समझ पाएंगे;
- महर्षि अरविंद के लेख 'धर्म और राष्ट्रवाद' की समीक्षा कर पाएंगे;
- गांधी जी की आत्मकथा 'सादगी' का मर्म समझ पाएंगे;
- रवीन्द्रनाथ टैगोर की कविता 'चित्त जहां भयशून्य' की संवेदना अनुभव कर पाएंगे।

5.2 शिकागो व्याख्यान (व्याख्यान) : स्वामी विवेकानन्द

स्वामी विवेकानंद का जन्म 12 जनवरी, 1863 को कलकत्ता में हुआ। स्वामी विवेकानंद वेदान्त दर्शन के विख्यात विद्वान और प्रभावशाली आध्यात्मिक गुरु थे। उनका वास्तविक नाम नरेन्द्र दत्त था। उन्होंने अमेरिका स्थिति शिकागो में सन् 1893 में आयोजित विश्व धर्म महासभा में भारत की ओर से सनातन धर्म का प्रतिनिधित्व किया था। भारत का वेदान्त दर्शन अमेरिका और यूरोप के हर एक देश में स्वामी विवेकानंद की कुशलता के कारण ही पहुंचा। उन्होंने रामकृष्ण मिशन की स्थापना की थी जो आज भी अपना काम कर रहा है। वे रामकृष्ण परमहंस के सुयोग्य शिष्य थे। उन्होंने अपने भाषण की शुरुआत "मेरे अमेरिकी भाइयों और बहनो" संबोधन से करने के लिए जाना जाता है। उनके इस संबोधन अमेरिका वासियों का दिल जीत लिया था।

स्वामी विवेकानंद का आरंभिक जीवन

नरेन्द्र की प्राथमिक शिक्षा घर में ही हुई। इसके बाद वह कई स्थानों पर पढ़ने गये। इनको कुश्ती, बॉक्सिंग, दौड़, घुड़दौड़, तैराकी का शौक था। उनका स्वास्थ्य बहुत अच्छा था। आकर्षक व्यक्तित्व के कारण लोग उन्हें मंत्रमुग्ध होकर देखते रह जाते। उन्होंने बी.ए. तक की शिक्षा प्राप्त की। इस समय तक उन्होंने पाश्चात्य और भारतीय संस्कृति का अध्ययन कर लिया था।

टिप्पणी

दार्शनिक विचारों के अध्ययन से उनके मन में सत्य को जानने की इच्छा जागने लगी। कुछ समय बाद नरेन्द्र ने अनुभव किया कि उन्हें बिना योग्य गुरु के सही मार्गदर्शन नहीं मिल सकता है। जहां एक ओर उनमें आध्यात्मिकता के प्रति जन्मजात रुझान था, वहीं दूसरी ओर उनका बुद्धियुक्त तार्किक स्वभाव था। ऐसी परिस्थिति में वह ब्रह्म समाज की तरफ आकर्षित हुए। नरेन्द्र का प्रश्न था– क्या ईश्वर का अस्तित्व है? इस प्रश्न के समाधान के लिए वह अनेक व्यक्तियों से मिले पर समाधान नहीं पा सके।

स्वामी विवेकानंद के घर का वातावरण बहुत धार्मिक था। दोपहर को घर की सभी स्त्रियां बैठकर कथावार्ता करती तो नरेन्द्र बहुत चाव से सुनते। बचपन में ही नरेन्द्र ने महाभारत, रामायण के अनेक प्रसंग और कुछ भजन याद कर लिये थे। बचपन से ही इनको ध्यान का शौक था। एक बार इनका ध्यान ऐसा लगा कि उनके पास से सांप भी निकल गया; पर इन्हें पता ही नहीं चला।

गुरु

स्वामी विवेकानंद के विदेशी मित्र ने उनके गुरु श्री रामकृष्ण परमहंस से मिलने का आग्रह किया। कहा कि वह उस महान व्यक्ति से मिलना चाहता है जिसने आप जैसे व्यक्तित्व का निर्माण किया। जब स्वामी विवेकानंद ने उस मित्र को अपने गुरु से मिलवाया तो वह स्वामी रामकृष्ण परमहंस के पहनावे को देखकर चकित हो गया और कहा– "यह व्यक्ति आपका गुरु कैसे हो सकता है। इनको तो कपड़े पहनने का भी ढंग नहीं है।" तो स्वामी विवेकानंद ने बड़ी विनम्रतापूर्वक कहा– "मित्र आपके देश में चरित्र का निर्माण एक दर्जी करता है लेकिन हमारे देश में चरित्र का निर्माण आचार–विचार करते हैं।"

युवावस्था में उन्हें पाश्चात्य दार्शनिकों के निरीश्वर भौतिकवाद तथा ईश्वर के अस्तित्व में दृढ़ विश्वास के कारण गहरे द्वंद्व से गुजरना पड़ा। परमहंस जी जैसे जौहरी ने रत्न को परखा। उन दिव्य महापुरुष के स्पर्श ने नरेन्द्र को बदल दिया। जब उनकी भेंट रामकृष्ण परमहंस से हुयी तो उन्होंने पहले उन्हें विश्वास दिलाया कि ईश्वर वास्तव में है और मनुष्य ईश्वर को पा सकता है। रामकृष्ण ने सर्वव्यापी परम सत्य के रूप में ईश्वर की सर्वोच्च अनुभूति पाने में नरेन्द्र का मार्गदर्शन किया और उन्हें शिक्षा दी कि सेवा कभी दान नहीं, बल्कि सारी मानवता में निहित ईश्वर की सचेतन आराधना होनी चाहिए।

यह उपदेश विवेकानंद के जीवन का प्रमुख दर्शन बन गया। कहा जाता है कि उस शक्तिपात के कारण कुछ दिनों तक नरेन्द्र उन्मत्त से रहे। गुरु ने उन्हें आत्मदर्शन करा दिया। पच्चीस वर्ष की अवस्था में नरेन्द्र दत्त ने काषाय वस्त्र धारण किये। अपने गुरु से प्रेरित होकर नरेन्द्र ने संन्यासी जीवन बिताने की दीक्षा ली और स्वामी विवेकानंद के रूप में जाने गये। जीवन का आलोक जगत के अंधकार में भटकते प्राणियों के समक्ष उन्हें उपस्थित करना था। इसके लिए स्वामी विवेकानंद ने पैदल ही पूरे भारत की यात्रा की।

देश के प्रति लगाव

रामकृष्ण की मृत्यु के बाद उन्होंने स्वयं को हिमालय में चिंतनरूपी आनंद सागर में डुबाने की चेष्टा की, लेकिन जल्दी ही वह इसे त्यागकर भारत की कारूणिक निर्धनता

से साक्षात्कार करने और देश के पुनर्निर्माण के लिए समूचे भारत में भ्रमण पर निकल पड़े। इस दौरान उन्हें कई दिनों तक भूखे भी रहना पड़ा। इन छह वर्षों के भ्रमण काल में वह राजाओं और दलितों, दोनों के अतिथि रहे।

टिप्पणी

उनकी यह महान यात्रा कन्याकुमारी में समाप्त हुई, जहां ध्यानमग्न विवेकानंद को यह ज्ञान प्राप्त हुआ कि राष्ट्रीय पुनर्निर्माण की ओर रुझान वाले नए भारतीय वैरागियों और सभी आत्माओं, विशेषकर जनसाधारण की सुप्त दिव्यता के जागरण से ही इस मृतप्राय देश में प्राणों का संचार किया जा सकता है। भारत के पुनर्निर्माण के प्रति उनके लगाव ने ही उन्हें अंततः 1893 में शिकागो धर्म संसद में जाने के लिए प्रेरित किया। यहां वह बिना आमंत्रण के गये थे। धर्म परिषद में उनके प्रवेश की अनुमति मिलनी ही कठिन हो गयी। उनको समय न मिले इसका भरपूर प्रयत्न अमेरिका में किया गया।

उन्तालिस वर्ष के संक्षिप्त जीवनकाल में स्वामी विवेकानंद जो काम कर गये, वे आने वाली अनेक शताब्दियों तक पीढ़ियों का मार्गदर्शन करते रहेंगे। तीस वर्ष की आयु में स्वामी विवेकानंद ने शिकागो, अमेरिका में विश्व धर्म सम्मेलन में हिंदू धर्म का प्रतिनिधित्व किया और उसे सार्वभौमिक पहचान दिलवाई। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के शब्दों में– "यदि आप भारत को जानना चाहते हो तो विवेकानंद को पढ़िये। उनमें आप सब कुछ सकारात्मक ही पायेंगे, नकारात्मक कुछ भी नहीं।"

रोमा रोला ने उनके बारे में कहा था, "उनके द्वितीय होने की कल्पना करना भी असंभव है। वे जहां भी गये, सर्वप्रथम हुए। हर कोई उनमें अपने नेता का दिग्दर्शन करता। वे ईश्वर के प्रतिनिधि थे और सब पर प्रभुत्व प्राप्त कर लेना ही उनकी विशिष्टता थी। हिमालय प्रदेश में एक बार एक अनजान यात्री उन्हें देखकर ठिठककर रुक गया और आश्चर्यपूर्वक चिल्ला उठा, 'शिव'। यह ऐसा हुआ मानो उस व्यक्ति के आराध्य देव ने अपना नाम उनके माथे पर लिख दिया हो।

विचार

जो साम है, उसे साहसपूर्वक निर्भीक होकर लोगों से कहो– उससे किसी को कष्ट होता है या नहीं, इस ओर ध्यान मत दो। दुर्बलता को कभी प्रश्रय मत दो। सत्य की ज्योति 'बुद्धिमान' मनुष्यों के लिए यदि अत्यधिक मात्रा में प्रखर प्रतीत होती है, और उन्हें बहा ले जाती है, तो ले जाने दो– वे जितना शीघ्र बह जायें उतना अच्छा ही है।

ईश्वर ही ईश्वर की उपलब्धि कर सकता है। सभी जीवंत ईश्वर है– इस भाव से सबको देखो। मनुष्य का अध्ययन करो, मनुष्य ही जीवन काव्य है। जगत में जितने ईसा या बुद्ध हुए हैं, सभी हमारी ज्योति से ज्योतिष्मान हैं। इस ज्योति को छोड़ देने पर ये सब हमारे लिए और अधिक जीवित नहीं रह सकेंगे, मर जायेंगे। तुम अपनी आत्मा के ऊपर स्थित रहो।

मानव–देह ही सर्वश्रेष्ठ है, एवं मनुष्य ही सर्वोच्च प्राणी है, क्योंकि इस मानव–देह तथा इस जन्म में ही हम इस सापेक्षिक जगत से संपूर्णतया बाहर हो सकते हैं– निश्चय ही मुक्ति की अवस्था प्राप्त कर सकते हैं, और यह मुक्ति ही हमारा चरम लक्ष्य है।

टिप्पणी

जो महापुरुष प्रचार कार्य के लिए अपना जीवन समर्पित कर देते हैं, वे उन महापुरुषों की तुलना में अपेक्षाकृत अपूर्ण है, जो मौन रहकर पवित्र जीवनयापन करते हैं और श्रेष्ठ विचारों का चिंतन करते हुए जगत की सहायता करते हैं। इन सभी महापुरुषों में एक के बाद दूसरे का आविर्भाव होता है। अंत में उनकी शक्ति का चरम फलस्वरूप ऐसा कोई शक्ति संपन्न पुरुष आविर्भूत होता है, जो जगत को शिक्षा प्रदान करता है।

मुक्ति लाभ के अतिरिक्त और कोन–सी उच्चावस्था का लाभ किया जा सकता है, देवदूत कभी कोई बुरे कार्य नहीं करते, इसलिए उन्हें कभी दंड भी प्राप्त नहीं होता, अतएव वे मुक्त भी नहीं हो सकते। सांसारिक धक्का ही हमें जगा देता है, वहीं इस जगतस्वप्न को भंग करने में सहायता पहुंचाता है। इस प्रकार के लगातार आघात ही इस संसार से छुटकारा पाने की अर्थात मुक्ति लाभ करने की हमारी आकांक्षा को जाग्रत करते हैं।

ज्ञान स्वयमेव वर्तमान है, मनुष्य केवल उसका अविष्कार करता है।

जिस प्रकार स्वर्ग में, उसी प्रकार इस नश्वर जगत में भी तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो, क्योंकि अनन्त काल के लिए जगत में तुमहारी ही महिला घोषित हो रही है एवं सब कुछ तुम्हारा ही राज्य है।"

अवसान

विवेकानंद के ओजस्वी और सारगर्भित व्याख्यानों की प्रसिद्धि विश्व भर में है। जीवन के अंतिम दिन उन्होंने शूक्त यजुर्वेद की व्याख्या की और कहा– "एक और विवेकानंद चाहिए, यह समझने के लिए कि इस विवेकानंद ने अब तक क्या किया है।"

उनके शिष्यों के अनुसार जीवन के अंतिम दिन 4 जुलाई, 1902 को भी उन्होंने अपनी ध्यान करने की दिनचर्या को नहीं बदला। प्रातः दो–तीन घंटे ध्यान किया और ध्यानावस्था में ही अपने ब्रह्मरन्ध्र को भेदकर महासमाधि ले ली। बेलूर में गंगा तट पर चंदन की चिता पर उनकी अंत्येष्टि की गई। इसी गंगा तट के दूसरी ओर उनके गुरु रामकृष्ण परमहंस का सोहल वर्ष पूर्व अंतिम संस्कार हुआ था। उनके शिष्यों और अनुयायियों ने उनकी स्मृति में वहां एक मंदिर बनवाया और समूचे विश्व में विवेकानंद तथा उनके गुरु रामकृष्ण के संदेशों के प्रचार के लिए 130 से अधिक केंद्रों की स्थापना की।

5.2.1 शिकागो व्याख्यान का मूल पाठ

अमेरिकावासी बहनो तथा भाइयो,

आपने जिस सौहार्द्र और स्नेह के साथ हम लोगों का स्वागत किया है, उसके प्रति आभार प्रकट करने के निमित्त खड़े होते समय मेरा हृदय अवर्णनीय हर्ष से पूर्ण हो रहा है। संसार में संन्यासियों की सबसे प्राचीन परम्परा की ओर से मैं आपको धन्यवाद देता हूं, धर्मों की माता की ओर से धन्यवाद देता हूं और सभी सम्प्रदायों एवं मतों के कोटि–कोटि हिन्दुओं की ओर से भी धन्यवाद देता हूं।

मैं इस मंच पर से बोलने वाले उन कतिपय वक्ताओं के प्रति भी धन्यवाद ज्ञापित करता हूं, जिन्होंने प्राची के प्रतिनिधियों का उल्लेख करते समय आपको यह बतलाया

टिप्पणी

है कि सुदूर देशों के लोग सहिष्णुता का भाव विविध देशों में प्रसारित करने के गौरव का दावा कर सकते हैं। मैं एक ऐसे धर्म का अनुयायी होने में गर्व का अनुभव करता हूं, जिसने संसार के प्रति सहिष्णुता तथा सार्वभौम स्वीकृति, दोनों की ही शिक्षा दी है। हम लोग सब धर्मों को सच्चा मानकर स्वीकार करते हैं। मुझे एक ऐसे देश का व्यक्ति होने का अभिमान है, जिसने इस पृथ्वी के समस्त धर्मों को और देशों के उत्पीड़ितों और शरणार्थियों को आश्रय दिया है। मुझे आपको यह बतलाते हुए गर्व होता है कि हमने अपने वक्ष में यहूदियों के विशुद्धतम अवशिष्ट अंश को स्थान दिया था, जिन्होंने दक्षिण भारत आकार उसी वर्ष शरण ली थी, जिस वर्ष उनका पवित्र मंदिर रोमन जाति के अत्याचार में धूल में मिला दिया गया था। ऐसे धर्म का अनुयायी होने में गर्व का अनुभव करता हूं, जिसने महान् जरथुष्ट जाति के अवशिष्ट अंश को शरण दी और जिसका पालन वह अब तक कर रहा है। भाइयो, मैं आप लोगों को एक श्लोक की पंक्तियां सुनाता हूं, जिसकी आवृत्ति मैं अपने बचपन से कर रहा हूं और जिसकी आवृत्ति प्रतिदिन लाखों मनुष्य किया करते हैं–

रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनाथपथजुषाम्।

नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव।।

अर्थात् जैसे विभिन्न नदियां भिन्न–भिन्न स्रोतों से निकलकर समुद्र में मिल जाती हैं, उसी प्रकार हे प्रभो! भिन्न–भिन्न रुचि के अनुसार विभिन्न टेढ़े–मेढ़े अथवा सीधे रास्ते से जाने वाले लोग अंत में तुझमें ही आकर मिल जाते हैं।

यह सभा, जो अभी तक आयोजित सर्वश्रेष्ठ पवित्र सम्मेलनों में से एक है, स्वतः ही गीता के इस अद्‌भुत उपदेश का प्रतिपादन एवं जगत् के प्रति उसकी घोषणा है–

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।

मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः।।

अर्थात् जो कोई मेरी ओर आता है, चाहे किसी प्रकार से हो, मैं उसको प्राप्त होता हूं। लोग भिन्न–भिन्न मार्ग द्वारा प्रयत्न करते हुए अंत में मेरी ही ओर आते हैं।

साम्प्रदायिकता, हठधर्मिता और उनकी वीभत्स वंशधर धर्मान्धता इस सुन्दर पृथ्वी पर बहुत समय तक राज्य कर चुकी है। यह पृथ्वी को हिंसा से भरती रहती है उसको बारम्बार मानवता के रक्त से नहलाती रही है, सभ्यताओं को विध्वस्त करती और पूरे–पूरे देशों को निराशा के गर्त में डालती रही है। यदि यह वीभत्स दानवीयता न होती, तो मानव समाज आज की अवस्था से कहीं अधिक उन्नत हो गया होता। पर, अब उनका समय आ गया है और मैं आंतरिक रूप से आशा करता हूं, कि आज सुबह इस सभा के सम्मान में जो घण्टाध्वनि हुई है, वह समस्त धर्मान्धता का, तलवार या लेखनी के द्वारा होने वाले सभी उत्पीड़नों का तथा एक ही लक्ष्य की ओर अग्रसर होने वाले मानवों की पारंपरिक कटुताओं का मृत्युनिनाद सिद्ध हो।

विश्वधर्म–महासभ एक मूर्तिमान तथ्य सिद्ध हो गयी है और दयामय प्रभु ने उन लोगों की सहायता की है तथा उनके परम निःस्वार्थ श्रम को सफलता से विभूषित किया है, जिन्होंने इसका आयोजन किया।

टिप्पणी

उन महानुभावों को मेरा धन्यवाद है, जिनके विशाल हृदय तथा सत्य के प्रति अनुराग ने पहले इस अद्‌भुत स्वप्न को देखा और फिर उसे कार्यरूप में परिणित किया। उन उदार भावों को मेरा धन्यवाद, जिनसे यह सभामंच आप्लावित होता रहा है। इस प्रबुद्ध श्रोतृमण्डली को मेरा धन्यवाद, जिसने मुझ पर अविकल कृपा रखी है और जिसने मत–मतान्तरों के मनोमालिन्य को हल्का करने का प्रयत्न करने वाले प्रत्येक विचार का सत्कार किया है। इस समसुरता में कुछ बेसुरे स्वर भी बीच–बीच में सुने गये हैं। उन्हें मेरा विशेष धन्यवाद, क्योंकि उन्होंने अपने स्ववैचित्र्य से इस समरसता को और भी मधुर बना दिया है।

धार्मिक एकता की सर्वसामान्य भित्ति के विषय में बहुत कुछ कहा जा सकता है। इस समय मैं इस संबंध में अपना मत आपके समक्ष नहीं रखूंगा, किंतु यदि यहां कोई यह आशा कर रहा है कि यह एकता किसी एक धर्म की विजय और बाकी सब धर्मों के विनाश से सिद्ध होगी, तो उनसे मेरा कहना है कि "भाई, तुम्हारी यह आशा असंभव है।" क्या मैं यह चाहता हूं कि ईसाई लोग हिन्दू हो जाएं? कदापि नहीं। ईश्वर ऐसा न करे! क्या मेरी यह इच्छा है कि हिन्दू या बौद्ध लोग ईसाई हो जाएं? ईश्वर इस इच्छा से बचाए।

बीज भूमि में बो दिया गया और मिट्‌टी, वायु तथा जल उसके चारों ओर रख दिये गये, तो क्या वह बीज मिट्‌टी हो जाता है? अथवा वायु का जल बन जाता है? नहीं, वह तो वृक्ष ही होता है। वह अपनी बुद्धि के नियम से ही बढ़ता है। वायु, जल और मिट्‌टी को अपने से पचाकर, उनको उद्भिज पदार्थ में परिवर्तित करके एक वृक्ष हो जाता है।

ऐसा ही धर्म के संबंध में भी है। ईसाई को हिन्दु या बौद्ध नहीं हो जाना चाहिए और न हिन्दू अथवा बौद्ध को ईसाई ही। पर हां, प्रत्येक को चाहिए कि वह दूसरों के सारभाग को आत्मसात् करके पुष्टिलाभ करे और अपने वैशिष्ट्य की रक्षा करते हुए अपनी निजी वृद्धि के नियम के अनुसार वृद्धि को प्राप्त हो।

इस धर्म–महासभा ने जगत् के समक्ष यदि कुछ प्रदर्शित किया है, तो वह यह है–"उसने यह सिद्ध कर दिया है कि शुद्धता, पवित्रता और दयाशीलता किसी सम्प्रदाय विशेष की ऐकान्तिक सम्पत्ति नहीं है एवं इसने प्रत्येक धर्म ने श्रेष्ठ एवं अतिशय उन्नतचरित्र स्त्री–पुरुषों को जन्म दिया है।"

अब इन प्रत्यक्ष प्रमाणों के बावजूद भी यदि कोई स्वप्न देखे कि अन्यान्य सारे धर्म नष्ट हो जाएंगे और केवल उसका धर्म ही जीवित रहेगा, तो उस पर मैं अपने हृदय के अन्तस्तल से दया करता हूं और उसे स्पष्ट बतलाए देता हूं कि शीघ्र ही सारे प्रतिरोधों के बावजूद, प्रत्येक धर्म की पताका पर यह लिखा रहेगा–"सहायता करो, लड़ो मत, 'परभाव–ग्रहण, न कि परभाव–विनाश', समन्वय और शान्ति, न कि मतभेद और कलह!"

5.2.2 शिकागो व्याख्यान का सार

अमेरिकावासी बहनो तथा भाइयो,

आपके प्रेममय स्वागत के लिए मैं भारतवासियों की ओर से आप सभी का धन्यवाद करता हूँ। मुझे गर्व है कि मैं ऐसे धर्म का अनुयायी हूँ जिसने विश्व के सभी धर्मों के

प्रति सहिष्णुता व सार्वभौम स्वीकृति की शिक्षा दी तथा पृथ्वी के सभी धर्मों और देशों के उत्पीड़ितों और शरणार्थियों को आश्रय दिया है। भारत के अनुसार–

रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनाथपथजुषाम्।

नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव।।

टिप्पणी

अर्थात् जैसे अलग–अलग स्रोतों से निकली नदियां समुद्र में जा मिलती हैं वैसे ही हे प्रभो! अलग–अलग मार्गों पर जाने वाले लोग भी आखिर में तुझ में ही आकर मिल जाते हैं।

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।

मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः।।

–गीता

अर्थात् जो भी मेरी तरफ, जिस तरफ से भी आता है वह मुझमें ही प्राप्त होता है।

सांप्रदायिकता, हठधर्मिता और धर्मांधता ने पृथ्वी पर लंबे समय तक अपना कब्जा जमाए रखा है और मानव समाज का अत्यधिक नुकसान किया है। मैं आशा करता हूं कि आज सभा के सम्मान में जो घंटाध्वनि हुई है वह पूरे संसार से धर्म के अंधे व बर्बर स्वरूप का मृत्युनिनाद साबित हो। विश्व धर्म महासभा का यह आयोजन मैं पूरी तरह सफल मानता हूं और उसके आयोजकों को बधाई देता हूं। इस सर्वधर्म समभाव रूपी आयोजन का स्वप्न देखने वाले, मंच पर अपने–अपने विचार व्यक्त करने वाले, यहां बैठे श्रोताओं को मेरा धन्यवाद। उन वक्ताओं का भी धन्यवाद जिनकी इस मंच के विचारों से घोर असहमति रही। धार्मिक एकता का अर्थ यह नहीं कि सभी धर्मों को माननेवाले लोग एक ही लीक पर चल पड़ें और न ही इसका अर्थ धर्मपरिवर्तन है। जिस प्रकार अलग–अलग बीज धरती में पड़कर भी वायु, जल, मिट्टी से पोषण पाकर अलग–अलग गति से वृद्धि करते हैं, उसी प्रकार सभी धर्मों का भी अपना–अपना विशेष गुण है तथा वे अपनी ही तरह से पुष्पित व पल्लवित होते हैं। हम एक दूसरे के धर्म से कुछ सार ग्रहण करके अवश्य अपने धर्म को भी समृद्ध कर सकते हैं। आज इस धर्मसभा ने यह सिद्ध कर दिया है कि विश्व के सभी धर्म शुद्धता, पवित्रता और दयाशीलता को अपने भीतर धारण किए हैं एवं प्रत्येक धर्म मनुष्य को श्रेष्ठ बनाने की क्षमता रखता है। अतः सिर्फ अपने ही धर्म का वर्चस्व कायम करने की इच्छा मूर्खतापूर्ण है क्योंकि सभी विरोधों के बावजूद एक दिन प्रत्येक धर्म परभाव विनाश की जगह परभाव ग्रहण, लड़ाई की जगह बंधुत्व तथा मतभेद व कलह की जगह समन्वय व शांति की ही उद्घोषणा करेगा।

5.2.3 शिकागो व्याख्यान का व्याख्यांश

1. सांप्रदायिकता, हठधर्मिता और उनकी वीभत्स ..... मृत्युनिनाद सिद्ध हो।

प्रसंग– उपरोक्त गद्यांश स्वामी विवेकानंद के उस विश्वप्रसिद्ध भाषण से लिया गया है जो उन्होंने शिकागो के विश्वधर्म सम्मेलन में सन् 1893 में दिया था।

टिप्पणी

व्याख्या– विश्व में लंबे समय तक सांप्रदायिक उन्माद, कट्टरता और धार्मिक आडंबर ने अपना आतंक मचाए रखा है। एक दूसरे के इलाकों को जीतकर वहां अपने धर्म के कुत्सित प्रचार की लंबी शृंखलाओं का अपना रक्त रंजित इतिहास रहा है जिसने मानवता का बहुत नुकसान किया है। इस अंधी महत्वाकांक्षा और धार्मिक भूख ने विश्व की हिंसा में हमेशा से ही बड़ी भूमिका निभाई है। यदि हम इस धार्मिक उन्माद व इससे पैदा हुई हिंसा से दूर रहते तो आज का मानव समाज न जाने कितनी उन्नति और कर चुका होता। परंतु मुझे उम्मीद है कि आने वाला समय ऐसा नहीं होगा। ऐसी विश्व धर्म की सभाएं हमें धार्मिक रूप से एकजुट करेंगी और एक दूसरे के धर्मों को परस्पर समझने तथा मानव सभ्यता को और आगे ले जाने में मदद करेंगी। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि विश्वधर्म सम्मेलन का यह प्रयास धर्म के कुत्सित व अंधस्वरूप से हमें पूरी तरह मुक्ति दिलाने में सफल होगा।

विशेष

- धार्मिक कट्टरता, आडंबर, अंधमान्यता व उससे उपजी धार्मिक हिंसा के मानवीय नुकसानों को इस गद्यांश में विशेष रूप से रेखांकित किया गया है।
- भाषा ओज से परिपूर्ण है तथा प्रखरता से कथ्य को प्रकट करने में सक्षम हैं।
- शब्दावली तत्समनिष्ठ तथा संस्कृत बहुल है जिससे भाषण की गरिमा को उच्चतम स्तर पर लिखित रूप में प्रस्तुत करने में सहायता मिली है।
- यह अंग्रेजी में दिए गए भाषण का हिंदी अनुवाद है। इस संदर्भ में हम कह सकते हैं कि अनुवाद की भाषा व शैली नियमानुकूल व प्रभावी है।

2. बीज भूमि में बो दिया गया ..... नियम के अनुसार वृद्धि को प्राप्त हो।

प्रसंग– उपरोक्त गद्यांश स्वामी विवेकानंद के उस विश्वप्रसिद्ध भाषण से लिया गया है जो उन्होंने शिकागो के विश्वधर्म सम्मेलन में सन् 1893 में दिया था।

व्याख्या– जिस प्रकार जब हम मिट्टी में किसी बीज को बोते हैं, उसे जल और वायु का सानिघ्य देते हैं तो हम इस बारे में निश्चित होते हैं कि वह व्यर्थ नहीं होगा बल्कि विकसित होकर एक दिन वृक्ष बन जाएगा। वस्तुतः वह अपनी गति और लय से ही विकसित होता है तथा आगे बढ़ता है। उसके विकास व वृद्धि की एक स्वाभाविक प्रक्रिया होती है तथा उस पर हमारा कोई बस नहीं चलता। इसी प्रकार सभी धर्म भी अपने–आप में अलग विशिष्टताएं धारण किए हुए हैं। हम उनसे एक समान आचारण या एक समान विशिष्टताओं की उम्मीद नहीं कर सकते। वे सभी मानवता और मानवीय गुणों का भिन्न–भिन्न प्रकार से विकास करते हैं। इसलिए हमें यह अपेक्षा नहीं करनी चाहिए कि एक धर्म को मानने वाला व्यक्ति दूसरे धर्म की शरण में चला जाए। हमें चाहिए कि हम एक–दूसरे के धर्म में उपस्थित उसके सार–तत्व को अपने धर्म में ग्रहण करने का प्रयास करें। इससे एक ओर तो सभी धर्म अपनी विशिष्टता में भी बचे रहेंगे और दूसरी ओर वे विकसित और समृद्ध भी होंगे।

टिप्पणी

विशेष

- इस गद्यांश में प्रत्येक धर्म की विशिष्टता व उसके महत्व को रेखांकित करते हुए उसे बचाने तथा दूसरे धर्मों के प्रति आदर भाव व सहिष्णुता का व्यवहार करने की बात की गई है।
- भाषा ओज से परिपूर्ण है तथा प्रखरता से कथ्य को प्रकट करने में सक्षम है।
- शब्दावली तत्समनिष्ठ तथा संस्कृत बहुल है जिससे भाषण की गरिमा को उच्चतम स्तर पर लिखित रूप में प्रस्तुत करने में सहायता मिली है।

5.2.4 शिकागो व्याख्यान की महत्ता एवं प्रासंगिकता

1893 में शिकागो में हुए विश्व धर्म संसद में भारत का प्रतिनिधित्व कर रहे स्वामी विवेकानंद ने जब भाषण शुरू किया– 'मेरे अमेरिकी भाइयो और बहनो' से तो पूरा हॉल तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठा था। इस भाषण ने दुनिया में भारत की छवि मजबूत की। स्वामी विवेकानंद ने शिकागो में विश्व धर्म संसद के दौरान सबसे दमदार भाषण देकर भारत की पहचान को विश्व में स्थापित किया था। उन्होंने अपने भाषण से भारत के प्रति दुनिया को अपना नजरिया बदलने के लिए मजबूर कर दिया था। उनके भाषण को सुनकर वहां मौजूद सभी लोग बेहद आश्चर्यचकित थे। ऐसा इसलिए भी था क्योंकि इतनी कम आयु में इतना जबरदस्त भाषण देने वाला वहां पर कोई दूसरा नहीं था। इससे पहले शून्य को लेकर भी ऐसा भाषण किसी ने नहीं दिया था।

इस शिकागो व्याख्यान की महत्ता एवं प्रासंगिकता को इस प्रकार रेखांकित किया जा सकता है–

1. प्रेम ही जीवन का एकमात्र नियम है

वह जो प्रेम करता है, जीवित रहता है और वह जो स्वार्थी है मर रहा है, इसलिए प्रेम के लिए ही प्यार कीजिये, क्योंकि यह जीवन का नियम है, ठीक उसी तरह जैसे आप जिन्दा रहने के लिए सांस लेते हैं।

2. जीवन सुंदर है पहले इस दुनिया में विश्वास करें

विश्वास करें कि यहां जो कुछ भी है उसके पीछे कोई अर्थ छुपा हुआ है, दुनिया में सब कुछ अच्छा, पवित्र है और सुंदर भी है। यदि आप कुछ बुरा देखते हो तब इसका मतलब है आप इसे पूर्ण रूप से समझ नहीं पाए हैं। आप अपने ऊपर का सारा बोझ उतार फेंके।

3. आप कैसा महसूस करते हैं

आप मसीहा की तरह महसूस करें तो आप मसीहा जैसे बनेंगे। आप बुद्ध की तरह महसूस करें तो आप बुद्ध जैसा बनेंगे। विचार ही जीवन है। यह शक्ति है और इसके बिना कोई बौद्धिक गतिविधि भगवान तक नहीं पहुंच सकती है।

4. निन्दा दोष का खेल मत खेलें

किसी पर भी आरोप प्रत्यारोप न करें। आप किसी की मदद के लिए हाथ बढ़ा सकते हैं तो ऐसा अवश्य करें और उन्हें अपने–अपने रास्ते पर चलने दें।

5. अपने आपको शुरू करें

जिस क्षण मैं यह अहसास करता हूं कि भगवान हर मानव शरीर के अंदर है उस पल मैं किसी भी मनुष्य के सामने खड़ा होता हूं तो मैं उसमें भगवान को पाता हूं। उस पल में मैं बंधन से मुक्त हो जाता हूं और सारे बंधन अदृश्य हो जाते हैं और मैं शुरू हो जाता हूं।

टिप्पणी

6. अपनी आत्मा को सुनें

स्वामी विवेकानंद जी का कहना है कि तुम अंदर से बाहर की ओर बढ़ो। यह कोई तुम्हें सिखा नहीं सकता और न ही कोई तुम्हें आध्यात्मिक बना सकता है। यहां कोई अन्य शिक्षक नहीं है, जो कुछ भी है आपकी खुद की आत्मा है।

7. दूसरों की मदद करें

यदि धन दूसरों के लिए अच्छा करने के लिए आदमी को मदद करता है, यह कुछ मूल्य का है। अगर ऐसा नहीं तो यह केवल बुराई की जड़ है और जितनी जल्दी इससे छुटकारा मिल जाए उतना अच्छा है।

8. कुछ भी असंभव नहीं है

ये कभी मत सोचो कि आत्मा के लिए कुछ भी असंभव है। ऐसा सोचना सबसे बड़ा पाखंड है। यदि कोई पाप है, तो केवल यही है कि तुम कहते हो, तुम कमजोर हो या दूसरे कमजोर हैं।

9. सच्चे रहें

सब कुछ सच के लिए बलिदान किया जा सकता है लेकिन सत्य, सब कुछ के लिए बलिदान नहीं किया जा सकता है।

10. तुम में शक्ति है

ब्रह्माण्ड में सभी शक्तियां पहले से ही हमारी हैं। यह हम हैं जो अपनी आंखों को हाथों से ढंक लेते हैं और बोलते हैं कि यहां अंधेरा है।

11. अलग सोचें

दुनिया में सारे मतभेद उनको विभिन्न नजरिए से देखने की वजह से हैं। कहने का अर्थ यह है कि हमें अपनी अनुभूतियों के कारण सब कुछ अलग–अलग दिखता है परंतु सच में सारा कुछ एक में ही समाया हुआ है।

शाब्दिक नहीं, जीवन से निकले विचार :

विवेकानंद के विचार उनके जीवन के अनुभवों से निकले थे। वे अपने विचारों को जीते थे, अनुभव से बोलते थे, इसलिए उनके विचार प्रभावित करने की शक्ति रखते हैं।

स्वामी विवेकानंद जी एक ऐसे महापुरुष थे जिनके उच्च विचारों, आध्यात्मिक ज्ञान, सांस्कृतिक अनुभव से हर कोई प्रभावित है। जिन्होंने हर किसी पर अपनी एक अद्‌भुत छाप छोड़ी है। उनका जीवन हर किसी के जीवन में नई ऊर्जा भरता है और आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है। वे प्रतिभाशाली महापुरुष थे जिन्हें वेदों का पूर्ण ज्ञान था। स्वामी जी दूरदर्शी सोच के व्यक्ति थे, जिन्होंने न सिर्फ भारत के विकास के लिए काम किया बल्कि लोगों को जीवन जीने की कला भी सिखाई।

टिप्पणी

स्वामी विवेकानंद की भारत में वैदिक हिन्दू दर्शन को बढ़ाने में मुख्य भूमिका रही और भारत को औपनिवेशिक बनाने में भी उनका मुख्य सहयोग रहा। स्वामी जी दयालु स्वभाव के व्यक्ति थे जो कि न सिर्फ मानव बल्कि जीव–जंतु को भी इसी भावना से देखते थे। वे हमेशा भाईचारा और प्रेम की शिक्षा देते थे। उनका मानना था कि प्रेम, भाईचारा और सद्भाव से जिंदगी अर्थपूर्ण बनाई जा सकती है और जीवन के हर संघर्ष से आसानी से निपटा जा सकता है। वे आत्म–सम्मान करने वाले व्यक्ति थे।

स्वामी विवेकानंद जी के आचरण सम्मत अनमोल विचारों ने उनको महान पुरुष बनाया। उनका अध्यात्म ज्ञान, धर्म, ऊर्जा, समाज, संस्कृति, देश, प्रेम, परोपकार, सदाचार, आत्म सम्मान के समन्वय पर आधारित रहा। ऐसा उदाहरण कम ही देखने को मिलता है। इतने गुणों के धनी व्यक्ति ने भारत भूमि में जन्म लेकर भारत को गौरवान्वित किया है।

विवेकानंद जी ने रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन की स्थापना की, जो आज भी भारत में सफलतापूर्वक चल रहा है। उन्हें प्रमुख रूप से उनके भाषण की शुरुआत 'मेरे अमेरिकी भाइयों ओर बहनों' के साथ करने के लिए जाना जाता है जो शिकागो विश्व धर्म सम्मेलन में उन्होंने हिन्दू धर्म की पहचान कराते हुए कहे थे।

विद्यार्थी जीवन से ही उनमें आध्यात्मिकता के क्षेत्र में रुचि थी। वे हमेशा ध्यान लगाकर साधना करते थे। साधुओं और संन्यासियों की बातें उन्हें हमेशा प्रेरित करती रहीं। वहीं आगे जाकर यही नरेन्द्र नाथ दुनिया भर में ध्यान, आध्यात्म, राष्ट्रवाद, हिन्दू धर्म और संस्कृति का वाहक बने और स्वामी विवेकानंद के नाम से प्रसिद्ध हो गये।

25 साल की उम्र में ही स्वामी विवेकानंद ने गेरूए वस्त्र धारण कर लिये। इसके बाद वे पूरे भारत वर्ष की पैदल यात्रा के लिए निकल पड़े। अपनी पैदल यात्रा के दौरान अयोध्या, वाराणसी, आगरा, वृंदावन, अलवर समेत कई जगहों पर पहुंचे। इस दौरान वे राजाओं के महल में भी रुके ओर गरीब लोगों की झोपड़ी में भी रुके। पैदल यात्रा के दौरान उन्हें अलग–अलग क्षेत्रों और उनसे संबंधित लोगों की जानकारी मिली। इस दौरान उन्हें जातिगत भेदभाव जैसी कुरीतियों का भी पता चला जिसे उन्होंने मिटाने की कोशिश भी की।

उन्होंने अपनी भारत यात्रा के दौरान हुई वेदना प्रकट की और कहा कि उन्होंने इस यात्रा में देश की गरीबी और लोगों के दुखों को जाना है और ये सब देखकर बेहद दुखी हैं। इसके बाद उन्होंने इन सब से मुक्ति के लिए अमेरिका जाने का फैसला लिया। अमेरिका यात्रा के बाद उन्होंने दुनिया में भारत के प्रति सोच में बड़ा बदलाव किया था।

1893 में स्वामी विवेकानंद जी शिकागो पहुंचे जहां उन्होंने विश्व धर्म सम्मेलन में हिस्सा लिया। इस दौरान एक जगह पर कई धर्मगुरुओं ने अपनी किताब रखी, वहीं भारत के धर्म के वर्णन के लिए श्रीमद्भगवत गीता रखी गई थी जिसका खूब मजाक उड़ाया गया, लेकिन जब विवेकानंद ने अपने आध्यात्म और ज्ञान से भरे भाषण की शुरुआत की तब सभागार तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठा। स्वामी विवेकानंद जी के भाषण में जहां वैदिक दर्शन का ज्ञान था वहीं उसमें दुनिया में शांति से जीने का संदेश भी छुपा था। अपने भाषण में स्वामी जी ने कट्टरतावाद और सांप्रदायिकता पर

जमकर प्रहार किया था। उन्होंने इस दौरान भारत की एक नई छवि बनाई। इसके साथ ही वे लोकप्रिय होते चले गए।

टिप्पणी

स्वामी विवेकानंद जी मानते थे कि हर व्यक्ति को अपनी जिंदगी में एक विचार या फिर संकल्प निश्चित करना चाहिए और अपनी पूरी जिंदगी उसी संकल्प के लिए न्योछावर कर देना चाहिए। तभी आपको सफलता मिल सकेगी। उन्होंने हमेशा देशवासियों के विकास के लिए काम किया है। उनके अनमोल विचारों को मानकर कोई भी मनुष्य अपना जीवन संवार सकता है। स्वामी विवेकानंद जी ने 'योग', 'राज योग' तथा 'ज्ञान योग' जैसे अनेक ग्रंथों की रचना करके युवा जगत को एक नई राह दिखाई है जिसका प्रभाव जनमानस पर युगों–युगों तक पड़ता रहेगा।

5.2.5 शिकागो व्याख्यान का समीक्षात्मक अध्ययन

शिकागो व्याख्यान सन् 1893 में स्वामी विवेकानंद द्वारा अमेरिका के शिकागो शहर में दिया गया था। यह व्याख्यान अपने कथ्य की दृष्टि से इतना सुंदर था कि इसकी गहरी छाप न केवल अमेरिका बल्कि पूरे विश्व के मानस पर पड़ी। इस व्याख्यान की समीक्षा निम्नलिखित प्रमुख बिंदुओं के आधार पर की जा सकती है–

1. **सर्वधर्मसम्भाव की अवधारणा** : इस व्याख्यान की सबसे प्रमुख विशेषता इसकी सर्वधर्मसम्भाव की भावना है। जहां अन्य धर्मावमतालंबियों ने वहां अपने–अपने धर्म की श्रेष्ठता की बात की वहीं विवेकानंद ने अपने व्याख्यान में सभी धर्मों को समान सम्मान व आदर के साथ देखा। उनकी इस भावना ने सभी का दिल जीत लिया। इतना ही नहीं, उन्होंने हिंदू धर्म के सर्वधर्मसम्भाव को पूरे विश्व में प्रचारित किया।
2. **धार्मिक कट्टरता** : स्वामी विवेकानंद ने अपने इस व्याख्यान में सबका ध्यान दर्शन के उस रूप की ओर की दिलाया जो कट्टर और उन्मादी है तथा जिसकी वर्चस्ववादी भावना ने पूरे विश्व का नुकसान किया– मानवता के कोमल स्वरूप को आहत किया', बंधुत्व की भावना को कलंकित किया। स्वामी जी ने कहा कि धर्म के ऐसे अंधे व कट्टर स्वरूप ने मानवता की बजाय पशुता का पोषण किया। हम पूरे संसार में सदा दूसरे धर्म को मिटाने और अपने धर्म को आगे बढ़ाने में लगे रहे जिसने धर्म के स्वरूप, आत्मा और उद्देश्य को गंभीर रूप से आहत कर दिया।
3. **सर्वस्वीकृति का मूल संदेश** : इस व्याख्यान का मूल संदेश सभी धर्मों को समान आदर, प्रेम व स्वीकृति प्रदान करना तथा धर्म को मानवतावादी दृष्टिकोण से देखना है। इसमें यह संदेश भी समाहित है कि धर्म का मकसद मनुष्यता का विकास करते हुए उसे आगे बढ़ाना है लेकिन यह धारा के विपरीत बात है कि हम मनुष्य स्वयं विकसित होने की बजाय धर्म के ही प्रचार–प्रसार में लगे रहते हैं। यह प्रवृत्ति धर्म और मनुष्य दोनों का ही गंभीर नुकसान करती है।
4. **भाषा** : व्याख्यान की भाषा शुद्ध साहित्यिक प्रांजल भाषा है जिसमें अर्थ की दृष्टि से सामासिक शब्दों का बहुतायत से प्रयोग देखने को मिलता है। इसकी भाषा ने व्याख्यान में गजब का कसाव पैदा किया है जिसे 'गागर में सागर' कहा जाना उचित होगा। इसमें प्रयुक्त हुए सहिष्णुता, सार्वभौमिकता, सौहार्द्र, धर्मांधता,

टिप्पणी

समरसता आदि ऐसे शब्द हैं जो अपने आप में अर्थ की इतनी गहराई व विस्तार रखते हैं कि जिस पर विचार करते हुए प्रत्येक के लिए कई–कई पृष्ठ लिखे जा सकते हैं। इस भाषा व व्याख्यान को समझने के लिए पूर्ण मानसिक–आध्यात्मिक तैयारी आवश्यक है जिसके बिना इसे पढ़ते हुए इसके सार तक नहीं पहुंचा जा सकता।

अपनी प्रगति जांचिए

1. शिकागो धर्म संसद में प्रवेश की अनुमति मिलना विवेकानंद के लिए कठिन क्यों था?

   (क) वे बिना आमंत्रण के वहां गए थे (ख) वे हिन्दू धर्म के अनुयायी थे

   (ग) वे अंग्रेजी से अनभिज्ञ थे (घ) इनमें से कोई नहीं

2. शिकागो व्याख्यान में विवेकानंद का आधारभूत विषय क्या था?

   (क) हिंदू धर्म को ही सत्य बताना (ख) सर्वधर्म समभाव

   (ग) इस्लाम का विरोध (घ) ईसाई धर्म का गुणगान

5.3 धर्म और राष्ट्रवाद (लेख) : महर्षि अरविन्द

महर्षि अरविन्द महान योगी, क्रांतिकारी, राष्ट्रवाद के अग्रदूत, प्रखर वक्ता एवं पत्रकार के रूप में जाने जाते हैं। उनका जन्म 15 अगस्त, 1872 में कलकत्ता के एक बंगाली परिवार में हुआ था। उनके पिता कृष्णधन घोष कलकत्ता के ख्याति प्राप्त वकील थे, जो पूरी तरह से पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव में थे। महर्षि अरविन्द की माता का नाम स्वर्णलता देवी था। पिता के दबाव में माता को भी पश्चिम की सभ्यता के अनुसार ही रहना पड़ता था। महर्षि अरविन्द की पत्रकारिता के बारे में देशवासियों को बहुत अधिक जानकारी नहीं रही है, जिसके बारे में जानना नवोदित पत्रकार पीढ़ी के लिए आवश्यक है। महर्षि अरविन्द उन पत्रकारों में से एक थे जिन्होंने समाचार पत्रों के माध्यम से तत्कालीन जनमानस को स्वाधीनता संग्राम के लिए तैयार करने में प्रमुख भूमिका निभाई थी।

महर्षि अरविन्द की शिक्षा–दीक्षा भी अंग्रेजी वातावरण में ही हुई थी। उनके पिता ने उन्हें पांच वर्ष की अवस्था में दार्जिलिंग के लोरेटो कान्वेंट स्कूल में दाखिल करवा दिया जिसका प्रबंध यूरोपीय लोग करते थे। अरविन्द अपने बाल्यकाल के सात वर्षों तक ही भारत में रहे, जिसके पश्चात उनके पिताजी ने उन्हें उनके भाइयों के साथ इंग्लैंड भेज दिया जहां मैनचेस्टर के एक अंग्रेज परिवार में उनका पालन–पोषण हुआ।

महर्षि अरविन्द ने ब्रिटेन में अपनी शिक्षा सेंट पाल स्कूल और कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी के किंग्स कॉलेज में प्राप्त की। पश्चिमी सभ्यता में पले–बढ़े महर्षि अरविन्द एक दिन भारतीय संस्कृति के व्याख्याता होंगे ऐसा शायद किसी ने सोचा भी नहीं होगा। फरवरी 1893 में महर्षि अरविन्द भारत लौटे। ब्रिटेन से लौटने के पश्चात क्रांति की ज्वाला एक बार फिर से प्रखर हो रही थी, जिसका केंद्र कलकत्ता ही था। महर्षि अरविन्द बड़ौदा

से कलकत्ता भी आते–जाते रहते थे जहां वे क्रांतिकारी गतिविधियों में सहयोग करने लगे।

टिप्पणी

सन् 1907 में अरविन्द ने कांग्रेस के क्रांतिकारी संगठन नेशनलिस्ट पार्टी के राष्ट्रीय अधिवेशन की अध्यक्षता की। इसी वर्ष अरविन्द घोष ने विपिनचंद्र पाल के अंग्रेजी दैनिक 'वंदे मातरम्' में काम करना शुरू कर दिया। महर्षि अरविन्द का पत्रकारिता के क्षेत्र में इससे पूर्व ही पदार्पण हो चुका था। उन्होंने पत्रकारिता की शुरुआत सन् 1893 में मराठी साप्ताहिक 'इन्दु प्रकाश' से की थी जिसमें उनके नौ लेख प्रकाशित हुए थे। इनमें शुरुआती दो लेख उन्होंने भारत और ब्रिटिश संसद शीर्षक के साथ लिखे थे। इसके बाद 16 जुलाई से 27 अगस्त 1894 के दौरान उनकी सात लेखों की एक शृंखला प्रकाशित हुई थी। वे लेख उन्होंने 'वन्दे मातरम्' के रचयिता एवं बांग्ला के महान साहित्यकार बंकिम चंद्र चटर्जी को श्रद्धांजलि देते हुए लिखे थे। इसके बाद अरविन्द की लेखन प्रतिभा के दर्शन बंगाली दैनिक 'युगांतर' में हुए जिसकी शुरुआत मार्च 1906 में उनके भाई बरिन्द्र और अन्य साथियों ने की। इस पत्र के प्रकाशन पर मई 1908 में ब्रिटिश सरकार ने प्रतिबंध लगा दिया।

इसके बाद महर्षि अरविन्द ने अंग्रेजी दैनिक वंदे मातरम् में कार्य किया। इस पत्र में प्रकाशित उनके लेखों ने क्रांति के ज्वार में एक नया तूफान ला दिया। वन्दे मातरम् में उनके लेखों के बारे में कहा जाता है कि भारतीय पत्रकारिता के इतिहास में इतने प्रखर राष्ट्रवादी लेख कभी नहीं लिखे गये। ब्रिटिश सरकार की नीतियों के विरोध में लिखने पर वन्दे मातरम् पर राजद्रोह का मुकदमा दायर कर दिया गया। महर्षि अरविन्द को संपादक के रूप में अभियुक्त बनाया गया इस अवसर पर विपिनचंद्र पाल ने उनका बहुत सहयोग किया। उन्होंने अरविन्द को पत्र का संपादक मानने से ही इनकार कर दिया जिसके लिए उन्हें छह माह का कारावास भुगतना पड़ा। सरकार अरविन्द को दोषी सिद्ध नहीं कर पाई। अदालत के द्वारा अरविन्द को दोषमुक्त करार दिए जाने पर संगोष्ठियां आयोजित हुई। उनके पक्ष में संपादकीय लिखे गए तथा उन्हें सम्मानित किया गया। अरविन्द की पत्रकारिता की लोकप्रियता का ही कारण था कि कलकत्ता के लाल बाजार की पुलिस अदालत के बाहर हजारों युवा एकत्र थे, जब वन्दे मारतम् की सुनवाई चल रही थी। सितम्बर 1908 में वन्दे मातरम् का प्रकाशन बंद हो गया। इसके बाद उन्होंने 15 जून, 1909 को कलकत्ता से ही अंग्रेजी साप्ताहिक कर्मयोगी और 23 अगस्त 1909 को बंगाली साप्ताहिक धर्म की शुरुआत की जिनका मूल स्वर राष्ट्रवाद ही था। महर्षि अरविन्द ने इन दोनों पत्रों में राष्ट्रवाद के अलावा सामाजिक समस्याओं पर भी लिखा।

5 दिसंबर 1950 को महर्षि अरविन्द देह त्याग कर अनंत में विलीन हो गए। पत्रकारिता में राष्ट्रवादी स्वर को स्थान देने वलों में अरविंद का नाम सदैव उल्लेखनीय रहेगा।

5.3.1 धर्म और राष्ट्रवाद लेख का मूल पाठ

जब मैं उस समय (अरविंद के इंग्लैण्ड से लौटने के पश्चात्) ईश्वर के समीप गया था तब मुझे उसमें शायद ही जीवंत विश्वास रहा है। मेरे भीतर एक अज्ञेयवादी था, एक नास्तिक था, एक संशयवादी था और मुझे यह पक्का निश्चय नहीं था कि ईश्वर नाम

की कोई वस्तु है भी अथवा नहीं। मुझे उसकी उपस्थिति महसूस नहीं होती थी। फिर भी किसी ने मुझे वेदों के सत्य की ओर, गीता के सत्य की ओर, हिन्दू धर्म के सत्य की ओर आकर्षित किया।

टिप्पणी

मुझे लगा कि इस योग में कहीं कोई भारी सत्य होगा, एक भारी सत्य उस धर्म में भी होगा जो वेदांत पर आधारित है। इसलिए जब इस योग की ओर मुड़ा और उसका अभ्यास करने और यह पता लगाने का संकल्प किया कि मेरी धारणा सही है अथवा नहीं, तो मैंने यह इसी भावना से किया और उसके प्रति इस प्रार्थना के साथ कि 'यदि तू है तो मेरे ह्रदय की बात जानता ही होगा। तू यह जानता है कि मैं मुक्ति नहीं मांगता और न मैं ऐसी कोई वस्तु मांगता हूं जो लोग मांगते हैं। मैं तो केवल ऐसी शक्ति मांगता हूं जिससे इस राष्ट्र का उत्थान कर सकूं। केवल यही चाहता हूं कि मुझे उन लोगों के लिए जीवित रहने और काम करने दिया जाए जिन्हें मैं प्यार करता हूं तथा जिनके लिए मेरी प्रार्थना है कि मैं अपना जीवन लगा सकूं।

योगसिद्धि प्राप्त करने के लिए मैंने बहुत लंबा प्रयास किया और कुछ सीमा तक वह मुझे प्राप्त भी हुई। जिस बात की मुझे सबसे अधिक चाह थी उसमें मुझे संतोष नहीं हुआ। फिर जेल के एकांत में, उसकी एकाकी कोठारी में बने मैंने वही मांग फिर से की मैंने कहा "तू मुझे अपना आदेश दे। मैं नहीं जानता कि मैं क्या काम करूं या उसे कैसे करूं। मुझे कोई संदेश दे।"

इस योग के समागम में मुझे दो संदेश मिले। पहले संदेश ने कहा, "मैंने तुम्हें एक काम दिया है और वह है इस राष्ट्र के उत्थान में सहायता देना। शीघ्र ही वह समय आयेगा जब तुम्हें जेल के बाहर जाना पड़ेगा क्योंकि मैं यह नहीं चाहता कि तुम्हें सजा हो या जैसा और लोगों को अपने देश के लिए कष्ट उठाना पड़ता है। वैसा समय तुम भी व्यतीत करो। मैंने तुमसे काम करने के लिए कहा है और यही वह आदेश है जिसकी तुमने मांग की है। मैं तुम्हें आदेश देता हूं कि जाओ और जाकर मेरा काम करो।"

जो दूसरा संदेश आया उसमें कहा गया– "एकाकीपन के इस वर्ष में तुम्हें कोई वस्तु दिखाई गई है, ऐसी वस्तु जिसके संबंध में तुम्हारे मन में संशय थे और वह वस्तु है– हिंदू धर्म का सत्य। इसी धर्म को मैं विश्व के आगे उठा रहा हूं, इसी को मैंने ऋषियों, संतों और अवतारों के द्वारा विकसित किया है और पूर्ण बनाया है और अब वह आगे बढ़कर राष्ट्रों के बीच मेरा काम करने जा रहा है। मैं इस राष्ट्र का उत्थान कर रहा हूं ताकि वह मेरे शब्दों को प्रचारित कर सके। इसलिए जब यह कहा जाता है कि भारत का उत्थान होगा तो वह सनातन धर्म है, जिसका उत्थान होगा। जब यह कहा जाता है कि भारत महान होगा तो वह सनातन धर्म है जो महान है। जब यह कहा जाए कि भारत का विस्तार और प्रसार होगा तो वास्तव में वह सनातन धर्म है जो अपना विस्तार और प्रसार स्वयं सारे विश्व में करेगा। धर्म के लिए और धर्म के द्वारा ही भारत का अस्तित्व है.....।"

पर हिंदू धर्म है क्या? यह कौन–सा धर्म है जिसे हम सनातन या शाश्वत कहकर पुकारते हैं? इसे हिंदू धर्म इसलिए कहते हैं क्योंकि इसे हिंदू राष्ट्र ने सुरक्षित रखा, क्योंकि सागर और हिमालय के एकांतिक इस प्रायद्वीप में इसका विकास हुआ। क्योंकि इस पुनीत और पुरातन भूमि में इसका भार आर्य जाति को उस युग–युगांतर तक सुरक्षित रखने के लिए सौंपा गया था।

टिप्पणी

किंतु वह किसी एक देश की सीमाओं से परिसीमित नहीं है, वह विश्व के किसी सीमित भाग की विशिष्ट और निरंतर संपत्ति नहीं है। जिसे हम हिंदू धर्म कहते हैं यह वास्तव में सनातन धर्म है क्योंकि वह सार्वभौम धर्म है जो अन्य सभी को अपने में समाहित कर लेता है। यदि कोई धर्म सार्वभौम नहीं है तो वह सनातन नहीं हो सकता। एक संकीर्ण धर्म, एक सांप्रदायिक धर्म, एक कनिष्ठ धर्म एक सीमित समय और सीमित उद्देश्य के लिए ही जीवित रह सकता है।

सनातन धर्म ही एक ऐसा धर्म है जो विज्ञान के आविष्कारों और दर्शन के चिंतनों का पूर्वानुमान करके और उन्हें आत्मसात् करके भौतिकवाद के ऊपर विजय प्राप्त कर सकता है। वह अकेला एक ऐसा धर्म है जो हमारे प्रति ईश्वर की निकटता पर बल देकर मानवता को बताता है और अपने में उन सभी संभव साधनों को संजोये है, जिनके द्वारा मनुष्य ईश्वर के समीप जा सकता है। वही एक ऐसा धर्म है जो सभी धर्मों द्वारा स्वीकृत इस सत्य पर प्रति क्षण जोर देता है कि ईश्वर सभी मनुष्यों और चराचर वस्तुओं में विद्यमान है और उसी में हम चलते–फिरते और वास करते हैं। केवल यही धर्म हमें इस सत्य को समझने और उस पर विश्वास करने में न केवल सहायता करता है बल्कि अपने अस्तित्व के हर भाग से उसका एहसास कराता है। यही एक धर्म है जो विश्व को बताता है कि यह संसार है क्या, कि वह वासुदेव की ही एक लीला है। यही धर्म है जो हमें बताता है कि उस लीला में, उसके सूक्ष्मतम विधानों में, उसके उत्कृष्टतम नियमों में हम अच्छी से अच्छी तरह अपनी भूमिका कैसे निभा सकते हैं, यही एक धर्म है जो छोटे से छोटे ब्योरे में भी जीवन को धर्म से अलग नहीं करता, जो यह जानता है कि अमरत्व क्या है और जिसने हमसे मृत्यु की विभीषिका को बिल्कुल दूर हटा दिया है..... ।

मैंने कहा था (पिछले वर्ष) कि यह आंदोलन एक राजनैतिक आंदोलन नहीं है और राष्ट्रवाद राजनीति नहीं बल्कि एक धर्म है, एक सिद्धांत है, एक विश्वास है। मैं फिर से आज उसे दोहराता हूं, पर उसे दूसरी तरह प्रस्तुत करता हूं। मैं अब यह नहीं कहा कि राष्ट्रवाद एक सिद्धांत है, एक धर्म है, एक विश्वास है, मैं कहता हूं यह सनातन धर्म है जो हमारे लिए राष्ट्रवाद है।.....सनातन धर्म ही राष्ट्रवाद है। यही वह संदेश है जो मैं तुम्हें बताना चाहता हूं।

5.3.2 धर्म और राष्ट्रवाद लेख का सार

राष्ट्रवाद का अर्थ एक धर्म विशेष की विचारधारा का पालन करना या उसका अनुकरण नहीं होता है। राष्ट्रवाद आपके धर्म से हटकर, अपने मजहब से हटकर, अपने राष्ट्र के प्रति, अपनी मिट्टी के प्रति ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा को दर्शाता है। भारत जैसे देश में कुछ लोग उन्हें राष्ट्रवादी कहते हैं जो अपने धर्म के सामने बाकियों को तुच्छ समझते हैं। अपने धर्म का अनुकरण करना या उसका प्रचार–प्रसार उसकी संस्कृति का संरक्षण करना कोई गलत बात नहीं है परंतु किसी अन्य धर्म की संस्कृति का मजाक बनाना तनिक भर भी उचित नहीं। आप उस धर्म का मजाक नहीं अपने आचरण का मजाक बना रहे हो। आप उंगली उस व्यक्ति के धर्म पर नहीं बल्कि आपके धर्म पर उठा रहे हो।

किसने आपको ये अधिकार दिया?

क्या आपका धर्म आपको यही सिखाता है?

धर्म आपको जीवन जीने का तरीका सिखाता है।

टिप्पणी

हर धर्म के अपने नियम, अपनी मान्यताएं और धारणाएं सब कुछ अलग–अलग होता है। पर हर धर्म का मूल उद्देश्य और संदेश एक ही है जिसे मैं स्वयं के हिन्दू धर्म के संदेश में लिखूं तो इस प्रकार है–

"सर्वे भवन्तु सुखिनः।

सर्वे सन्तु निरामयाः।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु

मा कश्चिददुःखभागभवेत्"

अर्थात्

'सब सुखी हो

सब स्वस्थ हों।

सब शुभ को पहचान सके

कोई प्राणी दुःखी ना हो।

जब हर धर्म चाहता है कि सब सुखी हो, सब स्वस्थ हो, समस्त प्राणी जगत का कल्याण हो, तो ये कौन लोग होते हैं जो कहते हैं कि फलां धर्म गलत शिक्षा देता है?

भारतीय समाज में महर्षि अरविन्द का विचार था कि धर्म ही भारतीय लोकतंत्र का मूल है जिसे पूरे भारत को एकता के सूत्र में बांधने के बाद ही प्राप्त किया जा सकता है। उन्होंने भारतीयों को अपने उज्जवल भविष्य को प्राप्त करने के लिए अपने सुनहरे अतीत को पुर्नस्थापित करने का आह्वान किया।

महर्षि अरविन्द के विचार में स्वराज्य का आदर्श या पूर्ण स्वायत्तता किसी भी विदेशी नियंत्रण से स्वतंत्रता प्राप्त करना था। उनके विचार में प्रत्येक राष्ट्र का यह अधिकार था कि वह अपनी प्रकृति अपने आदर्शों और अपनी ऊर्जा के अनुरूप स्वतंत्र जीवन यापन करे। उन्होंने कहा कि भारत की आध्यात्मिकता राजनीति में प्राप्त होती है और 'सनातन धर्म' को पूर्ण रूप से 'स्वराज्य' से ही प्राप्त किया जा सकता है।

महर्षि अरविन्द एक प्रखर राष्ट्रवादी थे और उन्होंने अपने विचारों में "राष्ट्र का विकास मानव एकता के आदर्श की ओर उन्मुख होना चाहिए" इस सत्य को भी स्वीकार किया। मानव जाति के विकास में एकता का सिद्धांत के अतिरिक्त स्वतंत्रता और विभिन्नता का सिद्धांत भी उतना ही अधिक आवश्यक है क्योंकि परम तत्व में एकता की और अनेकता दोनों ही है। प्रकृति की सामान्य योजना असीम विविधता पर आधारित होती है इसलिए आदर्श समाज में वैयक्तिक, राष्ट्रीय, धार्मिक, सामाजिक और नैतिक सब प्रकार की स्वाधीनता आवश्यक है। स्वाधीनता का अर्थ स्पष्ट करते हुए महर्षि अरविन्द ने लिखा है– "स्वाधीनता से हमारा अभिप्राय है अपनी सत्ता के नियम के अनुसार चलना, अपनी स्वाभाविक आत्म परिपूर्णता तक विकसित होना और अपने वातावरण के साथ स्वाभाविक और स्वतंत्र रूप में समरसता प्राप्त करना।"

टिप्पणी

महर्षि अरविन्द का लक्ष्य था एक आदर्श आध्यात्मिक समाज की स्थापना करना। उनका मानना था कि एक पूर्ण समाज का निर्माण अपूर्ण व्यक्तियों द्वारा नहीं किया जा सकता। अरविन्द को भारत की सांस्कृतिक परंपराओं और प्राचीन मूल्यों पर बहुत गर्व था। उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय स्वतंत्रता संघर्ष को ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध 'धर्म युद्ध' के रूप में प्रस्तुत किया। वह महाभारत और रामायण में वर्णित 'धर्म युद्ध' से प्रेरित थे। जिस प्रकार श्रीमद्भगवत गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को धर्म युद्ध करने के लिए प्रेरित किया उसी प्रकार महर्षि अरविन्द ने भी ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध भारतीय को संगठित होकर अपने नैतिक बल द्वारा संघर्ष करने का आह्वान किया।

महर्षि अरविन्द ने राष्ट्र और राष्ट्रीयता की संकल्पना को एक बृहद दृष्टिकोण प्रदान किया। उनके अनुसार राष्ट्रीयता एक आध्यात्मिक बल है जो सदैव विद्यमान रहती है और इसमें किसी प्रकार का क्षरण नहीं होता। महर्षि अरविन्द राष्ट्रवाद को ही सच्चा धर्म मानते थे और राजनीति–स्वतंत्रता को ईश्वरीय कार्य की संज्ञा देते थे।

महर्षि अरविन्द का कथन है राष्ट्रवाद महज एक राजनीतिक कार्यक्रम नहीं है बल्कि राष्ट्रवाद एक धर्म है जिसका स्रोत ईश्वर है। अरविन्द जी आध्यात्मिक राष्ट्रवाद को 'आदर्श राज्य' के रूप में प्रस्तुत करते हैं और यही आदर्श राज्य स्वराज का रूप लेता है। महर्षि अरविन्द का लक्ष्य था एक आदर्श आध्यात्मिक समाज की स्थापना करना। उनका मानना था कि एक समाज अपूर्ण व्यक्तियों द्वारा नहीं बन सकता और बिना आध्यात्म के व्यक्ति की पूर्णता संभव नहीं।

5.3.3 धर्म और राष्ट्रवाद लेख का व्याख्यांश

1. मुझे लगा कि इस योग में ..... मेरी प्रार्थना है कि मैं अपना जीवन लगा सकूँ।

प्रसंग–प्रस्तुत गद्यांश महर्षि अरविंद के प्रसिद्ध निबंध 'धर्म और राष्ट्रवाद' से लिया गया है, जिसमें उन्होंने धर्म व राष्ट्रवाद के बीच के अन्योन्याश्रित संबंध को स्थापित किया है।

व्याख्या–महर्षि अरविंद को लगता था कि वेदांत समाहित किए धर्म में अथवा योग में कोई न कोई सत्य अवश्य छुपा हुआ है जिसका अन्वेषण किया जा सकता है। अरविंद इसी सत्य का पता लगाना चाहते थे। इस इच्छा ने उन्हें 'योग' अपनाने तथा उसका अभ्यास करने के लिए प्रेरित किया। इस क्रम में वे योग की ओर मुड़े तथा ईश्वर से प्रार्थना की कि यदि तुम्हारा अस्तित्व है तो ऐसे में तुम मुझे और मेरे हृदय की बात को अवश्य जानते होंगे। उन्होंने ईश्वर से ऐसी शक्ति देने की प्रार्थना की जिससे वे राष्ट्र की प्रगति व उत्थान के लिए काम कर सके। उन्होंने ईश्वर से यह भी प्रार्थना की कि वे जिन लोगों को प्यार करते हैं उनके लिए अपना जीवन समर्पित कर सकें।

वस्तुतः उनकी आकांक्षा अपना जीवन राष्ट्र और धर्म की सेवा में लगा देने की थी। इसलिए उन्होंने ईश्वर से किसी भौतिक वस्तु की माँग नहीं की बल्कि यही सदिच्छा व्यक्त की कि वे परमार्थ में अपना जीवन व्यतीत कर सकें।

टिप्पणी

विशेष :

- इस गद्यांश में उस प्रेरणा सूत्र की बात की गई जिसमें अरविंद को महर्षि अरविंद बनाया : सत्य की खोज, धर्म और राष्ट्रीयता।
- आध्यात्मिक रूप से संपन्न भाषा का प्रयोग है जो महर्षि अरविंद को जीवन व चरित्र का उद्घाटन करती है।
- तत्समनिष्ठ मानक शब्दावली का प्रयोग है जिससे एक और भाषा में कसाव पैदा हुआ है तथा दूसरी ओर अर्थ विस्तार की संभावना भी उसमें प्रकट रूप से नजर आती है।

2. पर हिंदू धर्म है क्या? यह ..... रखने के लिए सौंपा गया था।

प्रसंग–प्रस्तुत गद्यांश महर्षि अरविंद के प्रसिद्ध निबंध 'धर्म और राष्ट्रवाद' से लिया गया है, जिसमें उन्होंने हिंदू धर्म की नए सिरे से व्याख्या की है।

व्याख्या

यह सबके लिए विचार का प्रश्न है कि हिंदू धर्म क्या है? जिसे हम प्रायः सनातन धर्म कहकर पुकारते हैं वह कौन सा धर्म है तथा उसका वास्तविक स्वरूप क्या है? लेखक के अनुसार इस धर्म को लंबे समय तक एक हिंदू राष्ट्र ने बचाकर रखा इसलिए इस संस्कृति को ही हिंदू धर्म कहा जाने लगा। हिंदू धर्म का जन्म तथा विकास एक प्रायद्वीप में हुआ जो तीन तरफ से विशाल महासागर तथा उत्तर की तरफ से विशाल हिमालयी पर्वतमाला से घिरा हुआ था। अतः लंबे समय तक किसी का यहाँ आना तथा यहां के धर्म व संस्कृति को प्रभावित कर पाना संभव ही नहीं हुआ। यही कारण है कि हजारों साल पुराना हिंदू धर्म व संस्कृति भली–भांति फलता–फूलता गया। यह एक पवित्र व प्राचीन धरती है जहाँ हजारों सालों से आर्यों (आर्य जाति) ने इस धर्म को बचाने तथा इसे विकसित करने का उत्तरदायित्व अपने कंधों पर संभाला हुआ था; जिसे उसने बखूबी पूरा भी किया। आज यही धर्म हिंदू धर्म या सनातन धर्म के नाम से पूरे विश्व में अपनी एक अलग व नई पहचान बना चुका है।

विशेष

- इस गद्यांश में हिंदू धर्म को बड़ी खूबसूरती से परिभाषित किया गया है।
- आध्यात्मिक रूप से संपन्न भाषा का प्रयोग है जो दर्शन के अनुकूल है।
- तत्समनिष्ठ मानक शब्दावली का प्रयोग है जिससे एक ओर भाषा में कसाव तथा दूसरी ओर अर्थ अन्विति का प्रभाव पैदा हुआ है।

5.3.4 धर्म और राष्ट्रवाद लेख का समीक्षात्मक अध्ययन

महर्षि अरविंद के अनुसार– जब मैंने ईश्वर की समीप्यता को अनुभव किया तब मैं एक अज्ञेयवादी, नास्तिक और संशयवादी व्यक्ति था और मुझे उसके होने के बारे में कुछ भी पक्का नहीं था। मैं कभी वेद, कभी गीता तो कभी हिंदू धर्म के सत्य की ओर आकर्षित होता रहा। वेद और योग से भी मैं आकर्षित हुआ, इस सत्य को खोजने के लिए। महसूस करते हुए मेरे भीतर यही भावना थी कि मुझे अपने राष्ट्र का उत्थान करने, लोगों के जीवन को बेहतर बनाने की शक्ति प्राप्त हो। मैंने योगसिद्धि के लिए

टिप्पणी

लंबा प्रयास किया जिसमें मुझे आंशिक सफलता भी मिली फिर जेल की एकाकी कोठरी में भी मैंने उसे पुकारा कि मुझे अपने अपना आदेश को, मैं नहीं जानता कि मैं क्या करूं कैसे करूं? मुझे कोई संदेश दे। योग के माध्यम से मुझे पहला संदेश जो मिला वह था जेल से बाहर जाने के बाद राष्ट्र के उत्थान में सहयोगी बनो तथा दूसरा संदेश था– हिंदू धर्म के सत्य का जिसके बारे में उसने कहा कि इसके बारे में व्याप्त संशय को दूर करो। अब मैं इसी धर्म को विश्व के स्तर पर उठा रहा हूं जिसे हमारे ऋषि, मुनि तथा संत पहले ही परिमार्जित, परिष्कृत करते रहे हैं। भारत के उत्थान का अर्थ है, सनातन धर्म का उत्थान, भारत की महानता का अर्थ है सनातन धर्म की महानता और भारत के प्रसार विस्तार का अर्थ है हिंदू सनातन धर्म का विस्तार व प्रसार। किंतु यह विचारणीय प्रश्न है कि यह हिंदू धर्म है क्या? हम इसे हिंदू धर्म इसलिए कहते हैं क्योंकि इसे एक प्रायद्वीप में सुरक्षित हिंदू राष्ट्र के सुरक्षित रखे। किंतु यह किसी एक देश की सीमा तक परिसीमित नहीं है। हिंदू सनातन धर्म सार्वभौम धर्म है क्योंकि सार्वभौमिकता के गुण के बिना विश्व का कोई भी धर्म सनातन हो ही नहीं सकता। सनातन धर्म ही भौतिकवाद के ऊपर विजय प्राप्त कर सकता है और अपने में वे सभी संभव संसाधन संजोए है जो किसी व्यक्ति को ईश्वर के समीप ले जा सकता है। केवल यही सनातन धर्म हमें सत्य की पहचान करने व उसे ठीक से परिभाषित करने की प्रेरणा प्रदान करता है। यही एक धर्म है जो जीवन के छोटे से छोटे ब्यौरे से भी जुड़ा हुआ है। मैंने पहले भी कहा था कि यह आंदोलन एक राजनैतिक आंदोलन नहीं है और राष्ट्रवाद राजनीति बल्कि एक धर्म, एक सिद्धांत, एक विश्वास है, मैं कहता हूं यह सनातन धर्म है जो हमारे लिए राष्ट्रवाद है। सनातन धर्म ही राष्ट्रवाद है और यही संदेश मैं तुम्हें बताना चाहता हूं।

'धर्म और राष्ट्रवाद' लेख में महर्षि अरविंद ने हिंदू धर्म तथा राष्ट्रीयता बोध के बीच की अन्योन्याश्रिता पर गंभीर विचार प्रस्तुत किया है। ऐसे में जब धर्म और राजनैतिक विचारों को अलग–अलग रखने या विचार करने की वकालत की जाती रही है तब महर्षि अरविंद का यह विचार धर्म, संस्कृति व राष्ट्रीयता को एकसूत्र में पिरोने का काम करता है। इस दृष्टि से यह निबंध उल्लेखनीय है। इस निबंध की समीक्षा निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर की जा सकती है–

विषय प्रतिपादकता

यह लेख अपने विषय को गहराई से प्रतिपादित करता है साथ ही साथ इसमें विषय को क्रमबद्ध रूप से समझाने का प्रयास किया गया है। उदाहरणार्थ निबंध की शुरुआत में महर्षि अरविंद ने योग व अध्यात्म के प्रति अपनी रुचि व प्रेरणा सूत्र का जिक्र किया है; तदुपरांत उन्होंने बताया है कि किस प्रकार उन्होंने धर्म को राष्ट्रीयता या राष्ट्र की सेना से जोड़कर देखा और उसकी प्रेरणा किस प्रकार उन्हें अपने अंतःकरण से प्राप्त हुई। महर्षि ने हिंदू धर्म के सनातन रूप को विस्तार से अपने लेख में स्पष्ट किया है तथा बताया है कि यह एक पुरानी सांस्कृतिक शृंखला है जिसे हिंदू राष्ट्र लंबे समय से संरक्षित करता चला आया है।

महर्षि अरविंद ने इसके उपरांत हिंदू सनातन धर्म की श्रेष्ठता को रेखांकित किया है तथा अंत में इस निष्कर्ष के साथ लेख का समापन किया है कि सनातन धर्म और राष्ट्रीयता दो भिन्न विचार नहीं है तथा हमें इन्हें एक मानकर ही स्वीकार करना चाहिए।

टिप्पणी

परिवेश–लेख में लेखक का परिवेश गहरे स्तर पर प्रस्तुत होता है। इस क्रम में लेखक अपने आसपास के जनजीवन की सांस्कृतिक विशेषताओं से वैचारिक रूप से प्रभावित होता है अथवा अपने विचारों का स्रोत वहीं से ग्रहण करता है। फिर चाहे वह उनके विरोध में ही क्यों न हो। महर्षि अरविंद की मूल प्रकृति अध्यात्म है किंतु हम देख सकते हैं कि उनके समस्त जीवन व जीवन–दर्शन पर भारतीय स्वाधीनता संग्राम की गहरी छाया पड़ी है। स्वाभाविक ही है कि उन्होंने धर्म व अध्यात्म को राष्ट्रीयता के साथ जोड़कर ही देखा। यहाँ तक कि कहा कि यह सनातन धर्म ही हमारे लिए राष्ट्रवाद है। इस तरह हम कह सकते हैं कि इस निबंध में आसपास का परिवेश गहरी छाप लेकर समाहित हुआ है।

आत्माभिव्यंजना

लेखक कहीं न कहीं स्वयं को ही प्रस्तुत करता है जो उसका भावात्मक, विचारात्मक व दार्शनिक स्वरूप होता है। यही स्वरूप उसकी आत्माभिव्यंजना है जो परोक्ष व गहरे संस्तरों पर निबंध के कथ्य के रूप में प्रस्तुत होती है। महर्षि अरविंद का दर्शन भी इस लेख में स्पष्टता से प्रस्तुत हुआ है। इस दृष्टि से देखा जाए तो यह लेख इसका प्रत्यक्ष व सटीक उदाहरण है, क्योंकि यह विशुद्ध रूप से विचारात्मक है। महर्षि अरविंद ने धर्म, योग, राष्ट्रीयता, ईश्वर आदि पर इस लेख में पर्याप्त चर्चा की है तथा अपना वैचारिक निष्कर्ष सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया है।

भाषा

इस लेखक की भाषा आध्यात्मिक व दार्शनिक रूप से संपन्न है। जब हम आध्यात्म व दर्शन की ओर उन्मुख होकर लिखते हैं तब भाषा एक गहन व सूत्रात्मक स्तर पर प्रवेश कर जाती है और उसका एक–एक शब्द बहुत महत्वपूर्ण हो उठता है। इस लेख में भी यही भाषिक विशेषता विद्यमान है। अनेक स्थानों पर बेहद लंबे वाक्यों का प्रयोग किया गया है तथा यथास्थान तत्समनिष्ठ शब्दावली का भी जो इस निबंध के विषय संबंधी मांग के अनुकूल भी है। बावजूद इसके, इस निबंध में कहीं अति क्लिष्टता महसूस नहीं होती और निबंध का प्रवाह भी इससे बाधित नहीं होता। यह भी कहा जा सकता है कि इस निबंध में शब्दावली का चयन बहुत सोच–समझकर किया गया है जिसने इस निबंध की भाषा को बेहद संपन्न किया है।

अपनी प्रगति जांचिए

3. महर्षि अरविंद क्या थे?

   (क) राष्ट्रवाद के अग्रदूत (ख) महान योगी

   (ग) क्रांतिकारी पत्रकार (घ) उपरोक्त सभी

4. महर्षि अरविंद ने किस धर्म को किसी एक देश की सीमाओं से परिसीमित नहीं; सनातन और सार्वभौम धर्म कहा?

   (क) हिंदू धर्म को (ख) इस्लाम धर्म को

   (ग) ईसाई धर्म को (घ) इनमें से कोई नहीं

5.4 सादगी (आत्मकथा) : महात्मा गांधी

टिप्पणी

महात्मा गांधी का पूरा नाम मोहनदास करमचंद गांधी है। वे एक महान स्वतंत्रता–सेनानी थे और एक राष्ट्रवादी नेता की तरह ब्रिटिश शासन के खिलाफ उन्होंने भारत का नेतृत्व किया था। दक्षिण अफ्रीका में चलाये गये रंगभेद के विरोध में गांधी जी के ऐतिहासिक आंदोलन को देखते हुए रवीन्द्रनाथ टैगोर ने 1915 में उन्हें एक पत्र लिखा था और सर्वप्रथम 'महात्मा' कहकर संबोधित किया था। गांधी जी का जीवन एक अनुकरणीय जीवन माना जाता है। वे किसी को केवल उपदेश नहीं देते थे, बल्कि पहले स्वयं करके उदाहरण पेश करते थे। उन्होंने देश को आजाद कराने के लिए जो हथियार चुना, वह सर्वथा कल्पनातीत है। सत्य और अहिंसा जैसे दो उनके दो अकल्पनीय शस्त्रों के आगे अंग्रेजों को भी घुटने टेकने पड़े। इस तरह वे अहिंसा के पुजारी के रूप में मानवता के इतिहास में अमर हो गये।

'सादगी' महात्मा गांधी की आत्मकथा 'सत्य के साथ मेरे प्रयोग' का एक भाग है। इसमें महात्मा गांधी के जीवन के कुछ पहलू यहां प्रस्तुत किए जा रहे हैं–

5.4.1 सादगी आत्मकथा का मूल पाठ

गांधी जी ने अहिंसा और सत्य के सिद्धांतों को सर्वोपरि मानकर उनका व्यावहारिक जीवन में प्रयोग किया। साबरमती आश्रम अहमदाबाद में उनका जीवन चरखे से बने सूत और भारतीय पोशाक धोती के लिए भी लोकप्रिय हुआ। उपवास, शाकाहारी भोजन भी उनके प्रिय थे। उनके सादगी भरे जीवन को इस कृति में सुंदरता से वर्णित किया गया है।

"घर बसाने के साथ ही मैंने खर्च घटाना शुरू कर दिया। धोबी का खर्च भी अधिक जान पड़ा। दूसरे वह वक्त पर कपड़े न देता था, इससे दो–तीन दर्जन कमीजों और इतने ही कालरों से भी मेरा काम न चलता था, कालर रोज बदलता। कमीज रोज नहीं तो एक दिन बीच में देकर बदलता था। इससे दोहरा खर्च पड़ता था। यह मुझे बेकार लगा। अतः धुलाई का सामान जुटाया। धुलाई–कला पर पुस्तक पढ़कर धोना सीखा। पत्नी को भी सिखाया। काम का बोझ कुछ बढ़ा तो जरूर, पर नई चीज थी, इसे करने में मजा आता।"

"मेरा पहला अपने हाथों धोया हुआ कालर तो मुझे कभी न भूलेगा। उसमें मांड़ी अधिक लग गई और इस्त्री काफी गरम नहीं थी। कालर जल जाने के डर से इस्त्री को भलीभांति दबाया नहीं, इससे कालर में कड़ापन तो आ गया, पर उसमें से मांड़ी झड़ा करती थी।"

"वही कालर लगाकर मैं कचहरी गया और वहां बारिस्टरों के विनोद का साधन बन गया। पर ऐसा मजाक सह लेने की शक्ति उस समय भी मुझमें यथेष्ट थी।"

"कालर धोने का यह पहला ही मौका है, इसलिए इससे मांड़ी झड़ती है। मुझे इससे कोई अड़चन नहीं होती और आप सब लोगों के लिए इतनी दिल्लगी का सामान जुटा दिया सो घाटे में नहीं रहा।" मैंने यह कैफियत दी।

एक मित्र ने पूछा, "पर क्या धोबियों का अकाल है?"

"यहां धोबी का खर्च मुझे तो असह्य लगता है। जितनी कालर की कीमत उतनी धुलाई दो और ऊपर से धोबी की गुलामी भी करो। इससे तो मैं अपने हाथ से धो लेना अधिक अच्छा समझता हूं।"

टिप्पणी

स्वावलंबन की यह खूबी मैं मित्रों को न समझा पाया।

मैं यह कहता हूं कि अंत में धोबी के धन्धे में अपने काम पर भी कुशलता मैंने प्राप्त कर ली। घर की धुलाई, धोबी की धुलाई से किसी तरह घटिया नहीं थी। कालर की सख्ती और चमक भी धोबी के धोए कालर से उन्नीस न थी।

गोखले के पास स्व. महादेव गोविंद रानडे की प्रसाद–स्वरूप एक चादर थी। इस चादर को वह बड़े ही जतन से रखते थे और विशेष अवसरों पर ही काम में लाते थे। जोहान्सबर्ग में उनके सम्मान में जो भोज दिया गया था, वह सम्मेलन का महत्वपूर्ण अवसर था। दक्षिण अफ्रीका में यह उनका बड़े–से–बड़ा भाषण था। अतः उस अवसर पर उन्हें उस चादर का उपयोग करना था। उसमें शिकन पड़ी हुई थी और उस पर इस्त्री करने की आवश्यकता थी। धोबी को बुलाकर तुरंत इस्त्री करा देना संभव न था। मैंने अपनी कला का उपयोग करने की इजाजत मांगी।

"आपकी वकालत का तो मैं विश्वास कर लूंगा, पर इस चादर पर अपनी धोबीगिरी दिखाने की इजाजत मैं आपको नहीं दे सकता। इस चादर पर आपने दाग लगा दिया तो? इसकी कीमत आप जानते हैं?" यह कहकर बड़े उल्लास से प्रसाद की कथा मुझे कह सुनाई।

मैंने फिर प्रार्थना की और दाग न पड़ने की जिम्मेदारी ली। मुझे इस्त्री करने की अनुमति मिली। मुझे अपनी कुशलता का सर्टीफिकेट मिल गया! अब दुनिया मुझे सर्टीफिकेट न दे तो उससे क्या होता है? जैसे धोबी की गुलामी से छूटा वैसे ही नाई की गुलामी से भी छूटने का अवसर आ गया। हजामत तो विलायत जाने वाले सभी हाथ से बनाना सीख ही लेते हैं। पर बालछंटाई कोई सीखता हो, इसका ख्याल मुझे नहीं है। प्रिटोरिया में मैं एक बार अंग्रेज हज्जाम की दुकान पर पहुंचा। उसने मेरी हजामत बनाने से साफ इनकार किया और इनकार करते हुए जो अपमान किया वह घाटे में रहा। मुझे दुःख हुआ। मैं बाजार पहुंचा और बाल काटने की कल खरीद ली। घर आकर शीशे के सामने खड़े होकर बाल कतरे। जैसे–तैसे बाल कट तो गये, पर पीछे के बाल काटने में बड़ी कठिनाई हुई। सीधे नहीं ही कटे। कचहरी में खूब कहकहा लगा, "तुम्हारे सिर पर चूहा तो नहीं चढ़ गया था?" मैंने कहा, "नहीं जनाब। मेरे काले सिर को सफेद हज्जाम कैसे छुए? इसलिए जैसे–तैसे अपने हाथ से काटे बाल मुझे अधिक प्यारे हैं।"

इस उत्तर से मित्रों को अचरज नहीं हुआ। सच पूछिये तो उस हज्जाम का कोई दोष नहीं था। वह काले चमड़े वालों के बाल काटने लगे तो उसकी रोजी मारी जाए। हमीं लोग कहां अपने अछूतों के बाल उच्च वर्ण के हिन्दुओं के हज्जामों को काटने देते हैं? इसका बदला मुझे दक्षिण अफ्रीका में एक नहीं, अनेक बार मिला है और यह हमारी करनी का फल है। मेरा यह विश्वास होने के कारण इस बात से मुझे कभी रोष नहीं हुआ।

5.4.2 सादगी आत्मकथा का सार

टिप्पणी

घर बसाने के साथ गाँधी जी ने खर्च घटाने के उपक्रम में धोबी से कपड़े धुलवाने के स्थान पर स्वयं कपड़े धोने का कार्य किया। धुलाई कला पर पुस्तक पढ़कर कपड़े धोना सीखी। धुलाई का सामान जुटाया और पत्नी को भी कपड़े धोना सिखाया। काम का बोझ तो कुछ बढ़ा पर स्वयं यह काम करना आनन्ददायी थी।

अपने हाथों धोया और अधिक मांडी लगा कॉलर लेखक के लिए यादगार बन गया। हल्की इस्त्री करने के कारण इसमें से मॉडी झड रही थी और वही कॉलर लगाकर वे कचहरी चले गये और बैरिस्टरों के विनोद का साधन बन गये। गाँधी जी ने पूरा सच ईमानदारी से बता दिया। ऐसे मजाक सह लेने की शक्ति उनमें उस समय भी पर्याप्त मात्रा में थी।

पर्याप्त अभ्यास से गाँधी जी ने धुलाई कला में पूर्ण निपुणता प्राप्त कर ली। और एक दिन उन्होंने गोपालकृष्ण गोखले की गोविन्द रानाडे से प्रसादस्वरूप मिली चादर को कुशलतापूर्वक धोकर उनसे धुलाई कला में दक्षता का मौखिक प्रमाणपत्र पाया।

धोबी की गुलामी से छूटने के बाद नाई की गुलामी से छूटने का अवसर विलायत में मिला। वहाँ प्रिंटोरिया में एक अंगेज हज्जाम ने उनकी हजामत बनाने से साफ इन्कार करते हुए अपमानित किया। दुःखी होकर गाँधी जी ने खुद ही अपने बाल काटने की ठानी। और बाजार से बाल काटने की कल खरीदकर शीशे के सामने खड़े होकर जैसे तैसे अपने बाल काट लिये। कचहरी में उनके सिर के बालों की उल्टी–सीधी काँट छाँट देखकर कचहरी में कहकहे लगे लेकिन उन्होंने कोई मिथ्या भाषण न करके निर्विकार भाव से सच बता दिया–'नहीं जनाब! मेरे काले सिर को सफेद हज्जाम कैसे हुए? इसलिए जैसे–तैसे अपने हाथ से कटे बाल मुझे अधिक प्यारे हैं।

बाद में इस घटना को भारत में फैली अस्पृश्यता से जोड़कर गाँधी जी को लगा कि यह हमारी ही करनी का फल हमें विदेश में मिल रहा है।

5.4.3 सादगी आत्मकथा का व्याख्यांश

1. आपकी वकालत का तो मैं ..... मुझे कह सुनाई।

प्रसंग–प्रस्तुत अवतरण बीसवीं सदी के सर्वाधिक प्रभावशाली नेता, सत्याग्रही, लेखक व पत्रकार, राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी द्वारा लिखित सत्य के प्रयोग से उद्धृत है। 'सत्य के प्रयोग' गाँधी जी की बहुचर्चित आत्मकथा है जिसमें उन्होंने अपने जीवन से जुड़े छोटे–बड़े प्रसंगों को बड़ी साफगोई के साथ लिखा है। ये प्रसंग इतनी रोचकता से व्यक्त हैं कि इन्हें पढ़कर कहानी पढ़ने जैसा आनन्द आ जाता है। साथ ही गांधी जी से जुड़े होने के कारण इनका महत्व बहुत अधिक बढ़ जाता है।

घर बसाने के साथ गाँधी जी को खर्च घटाने की सूझी और इसी उपक्रम में धोबी से कपड़े धुलवाने के स्थान पर स्वयं कपड़े धोने का निर्णय लिया और धीरे–धीरे इस काम में कुशलता प्राप्त कर ली। एक बार गोपालकृष्ण गोखले की एक चादर जो उन्हें महादेव गोविन्द रानाडे से प्रसादस्वरूप मिली थीं, और जिसे वे बड़े जतन से रखते थे। धोने और इस्त्री करने के लिए गाँधी ने मांगी क्योंकि उस चादर को गोखले दक्षिण

अफ्रीका में भाषण के समय उपयोग में लाना चाहते थे और उस चादर में शिकन पड़ी हुई थी।

व्याख्या–

टिप्पणी

गोपालकृष्ण गोखले ने गाँधी जी से स्पष्ट कहा कि उनकी वकालत पर तो उन्हें पूर्ण विश्वास है पर धोबी गिरी पर बिल्कुल नहीं। इसलिए इस चादर को धोने की अनुमति वे गाँधी जी को नहीं दे सकते। यदि धुलाई की कला का उपयोग करने के चक्कर में उनकी यह अमूल्य चादर खराब हो गई तो क्या होगा? यह चादर बड़ी अनमोल है और कितनी अनमोल है। क्यों अनमोल है? क्या वे इस बात को जानते हैं? यह सवाल गाँधी जी पर उछालकर उन्होंने स्वयं ही बड़े मनोयोग से वह चादर गोविन्द रानाडे को मिलने की कथा उनको सुना दी।

विशेष–

- यह अवतरण राजनीति की दोनों बड़ी हस्तियों के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालता है। गाँधी जी ने स्वयं ही गोखले जी की चादर धोने और इस्त्री करने का प्रस्ताव रखा, जो कि उनकी महानता और सरलता का परिचायक है। दूसरी ओर इस प्रसंग से यह भी ज्ञात होता है कि वे महादेव जी द्वारा उपहार स्वरूप दी गई उस चादर की कितनी कद्र करते थे। महान लोगों से उपहार में मिली चीजें, अपने साथ उनका आशीर्वाद भी लेकर आती हैं। इसलिए ऐसी चीजों से प्राप्तकर्ता का मानसिक लगाव बहुत गहरा हो जाता है।
- भाषा शैली बहुत सरल एवं सुबोध है। इस पूरे अवतरण में प्रश्न शैली का प्रयोग किया गया है।

2. इस उत्तर से मित्रों को अचरज.....कभी रोष नहीं हुआ।

प्रसंग–प्रस्तुत अवतरण बीसवीं सदी के सर्वाधिक प्रभावशाली नेता, सत्याग्रही, लेखक व पत्रकार, राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी द्वारा लिखित सत्य के प्रयोग से उद्धृत है। 'सत्य के प्रयोग' गाँधी जी की बहुचर्चित आत्मकथा, जिसमें उन्होंने अपने जीवन से जुड़े छोटे–बड़े प्रसंगों को बड़ी साफगोई के साथ लिखा है। ये प्रसंग इतनी रोचकता से व्यक्त है कि इन्हें पढ़कर कहानी पढ़ने जैसा आनन्द आ जाता है। साथ ही गांधी जी से जुड़े होने के कारण इनका महत्त्व बहुत अधिक बढ़ जाता है।

विवाह के बाद अपने खर्च कम करने के लिए गाँधी जी ने धोबी से कपड़े धुलवाने के स्थान पर स्वयं कपड़े धोना शुरू कर दिया और धीरे–धीरे इसमें कुशलता भी प्राप्त कर ली। धोबी की गुलामी से छूटने के बाद विलायत में नाई की गुलामी से छूटने का भी अवसर आ गया। प्रिंटोरिया में जब गाँधी जी एक अंग्रेज हज्जाम के यहाँ हजामत बनवाने पहुँचे तो उसने रंग भेद के कारण न केवल उनके बाल काटने से इन्कार किया, बल्कि उन्हें अपमानित भी किया। इस घटना से दुखी होकर गाँधी जी ने खुद ही अपनी हजामत बनाना सीख लिया। मित्रों द्वारा उनके उल्टे–सीधे कटे बालों पर कहकहा लगाया गया, तो उन्होंने बिना किसी लागलपेट के स्पष्ट बता दिया कि उन्हें काले सिर को सफेद हज्जाम कैसे छू सकता था?

व्याख्या–

मित्रों को गाँधी जी का उत्तर सुनकर हैरानी नहीं हुई। रंग–भेद की नीति वहाँ सामान्य बात थी। यदि हज़्जाम उनके बाल काट देता तो गोरे अंग्रेज उसका बुरा हाल कर देते। उससे अपने बाल कटाना बन्द कर सकते थे या उसका रोजगार किसी अन्य तरीके से ठप्प करा सकते थे। इस प्रकार उसकी रोजी–रोटी मारी जाती। गाँधी जी को ध्यान आया कि भारत में भी तो इसी प्रकार की अस्पृश्यता है। फर्क इतना है कि वहाँ रंग–भेद की है तो यहाँ वर्णभेद की। भारत में भी उच्च वर्ण के लोगों के बाल काटने वाले हज्जाम को अछूतों का बाल कहाँ काटने दिया जाता है। अगर कोई हज्जाम चोरी–छिपे ऐसा कर भी दे तो उसका दाना–पानी बन्द हो जाये। मार–पीट होगी सो अलग। जो काम भारत में उच्च वर्णों के लोग अहंकारवश निम्न के लोगों से करते हैं, वहीं काम और वही अपमान विलायत में गोरे अंग्रेज काले भारतीयों से करते हैं। यहाँ का बदला वहाँ मिल रहा है। दक्षिणी अफ्रीका में ऐसे कटु प्रसंग एक नहीं, अपितु अनेक बार गाँधी जी को झेलने को मिले। गाँधी जी को यह बोध हुआ कि भारत में हम उच्च वर्ग के लोग ऐसा घृणित व्यवहार निम्न समझी जाने वाली जातियों के साथ करते हैं, इसी का ही फल भारतीय विदेश जाकर अपमान सहकर चुका रहे हैं। इसलिए गाँधी जी को कभी क्रोध भी नहीं आया। इसीलिए उन्होंने भारत में अस्पृश्यता निवारण के लिए काम भी किया।

टिप्पणी

विशेष–

- दक्षिणी अफ्रीका में व्याप्त रंग भेद की नीति का मार्मिक वर्णन है।
- अस्पृश्यता की समस्या की ओर गाँधी जी ने बड़े मार्मिक ढंग से संकेत किया है।
- भाषा शैली सरल–सुबोध व प्रभावशाली है।

5.4.4 सादगी आत्मकथा का समीक्षात्मक अध्ययन

'सादगी' आत्मकथा महात्मा गाँधी द्वारा लिखित आत्मकथा 'सत्य के प्रयोग' से अवतरित एक अंश है। गाँधी जी ने यह पुस्तक मूलतः गुजराती भाषा में लिखी थी। इसका प्रथम प्रकाशन 1927 में हुआ है और इसका हिन्दी में अनुवाद महादेव देसाई ने किया था।

निकट के कुछ साथियों के आग्रह से उन्होंने आत्मकथा लिखना स्वीकार किया। पुस्तक लिखने के लिए उनके पास इकट्ठा इतना समय नहीं था। उन्हें अपने पत्र 'नवजीवन' के लिए तो कुछ न कुछ लिखना ही होता था। इसलिए उन्होंने नवजीवन के लिए आत्मकथा लिखने का संकल्प लिया। गाँधी जी ने इन प्रयोगों के विषय में लिखा–''मेरा यह मत रहा है कि जो एक के लिए शक्य है, वह सबके लिए शक्य है। मेरे प्रयोगों में तो आध्यात्मिकता का मतलब है नैतिक, धर्म का अर्थ है नीति। आत्मा की दृष्टि से पाली गई नीति, धर्म है। इसलिए जिन वस्तुओं का निर्णय बालक, नौजवान और बूढ़े करते हैं और कर सकते हैं, इस कथा में उन्हीं वस्तुओं का समावेश होगा। अगर ऐसी कथा में तटस्थ भाव से निरभिमान होकर लिख सकूं तो उसमें से दूसरे प्रयोग करने वालों को कुछ सामग्री मिलेगी।''

गाँधी जी ने 29 नवम्बर, 1925 को इस किताब को लिखना शुरू किया था और 3 फरवरी, 1925 को यह किताब पूरी हुई थी। यह किताब दुनिया की सर्वाधिक पढ़ी जाने वाली किताबों में से एक है।

टिप्पणी

आत्मकथा का अंश होने के कारण यह अंश आत्मकथात्मक शैली में है। इस पर डॉ. भागीरथ मिश्र की यह अभिव्यक्ति अतिशय उपयुक्त है–''निबन्ध वह गद्य रचना है जिसमें लेखक किसी भी विषय पर स्वच्छन्दतापूर्वक परन्तु एक विशेष सौष्ठव, संहिति, सजीवता और वैयक्तिकता के साथ अपने भावों, विचारों और अनुभवों को व्यक्त करता है।'' इस परिभाषा के आधार पर 'सादगी' के प्रमुख तत्वों का निरूपण व प्रस्तुत निबन्ध की समीक्षा इस प्रकार की जा सकती है–

1. **व्यक्तित्व सापेक्षता**– व्यक्तित्व का अंश सभी साहित्य रूपों में कम या अधिक मात्रा में रहता है, किन्तु आत्मकथा और निबन्ध में उसकी उपस्थिति सर्वाधिक रहती है। निबन्ध में व्यक्तित्व की प्रधानता को सभी श्रेष्ठ आलोचकों ने स्वीकार किया है। बाबू गुलाब राय के अनुसार ''निबन्ध में व्यक्तिगत को छिपाया नहीं जा सकता। लेखक जो कुछ लिखता है, उसे अपने निजी मत के रूप में अथवा उसे अपने निजी दृष्टिकोण से देखता है। उसके पीछे उसके निजी अनुभव की प्रेरणा दिखाई देता है। निबन्ध तभी सार्थक होगा, जब वह लेखक के निजी दृष्टिकोण से लिखा गया हो। जयनाथ 'नलिन' की दृष्टि में 'व्यक्तित्वविहीन रचना निबन्ध नहीं', और चाहे, जो कुछ हो।' इस दृष्टि से हम गांधी जी के 'सादगी' शीर्षक निबन्ध पर विचार करते हैं तो कह सकते हैं कि यह निबन्ध तो गांधी जी के व्यक्तित्व का प्रतिबिम्ब है।

   आत्मकथा का अंश होने के कारण यह आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया। इसमें लेखक ने अपने युवा जीवन को दो घटनाओं–1. धोबी से कपड़े धुलवाना छोड़कर स्वयं कपड़े धोने की 2. दक्षिण अफ्रीका में अंग्रेज हज्जाम द्वारा बाल काटने से इन्कार करने पर स्वयं ही बाजार से बाल काटने की कना लाकर शीशे में देखकर बाल काटने की : का कथात्मक शैली में जिक्र किया है।

आत्मकथा का प्रारम्भ ही लेखक ने अपने व्यक्तिगत जीवन के प्रसंग से किया है : घर बसाने के साथ ही मैंने खर्च घटाना शुरू कर दिया। धोबी का खर्च भी अधिक जान पड़ा। दूसरे वह वक्त पर कपड़े न देता था, इससे दो–तीन वर्जन कमीजों और इतने ही कॉलरों से भी मेरा काम न चलता था, कालर रोज बदलता। कमीज रोज नहीं तो एक दिन बीच में देकर बदलता था। इससे दोहरा खर्च पड़ता था। यह मुझे बेकार लगा। अतः धुलाई का सामान जुटाया। धुलाई कला पर पुस्तक पढ़कर धोना सीखा। पत्नी को भी सिखाया। काम का बोझ कुछ बढ़ा तो जरूर, पर नई चीज थी, इसे करने में मजा आया।

गांधी जी ने अपने हाथों धोये पहले कॉलर, जिससे मॉडी अधिक लग जाने के कारण मॉडी झड़ रही थी, को कचहरी में पहन कर जाने और बैरिस्टरों के मनोविनोद का साधन बनने का भी रोचक वर्णन किया है।

अन्य जो पात्र गोपाल कृष्ण गोखले और कचहरी के मित्र, वे भी गाँधी जी से जुड़े कथात्मक प्रसंग के संदर्भ में ही आये हैं। गोपाल कृष्ण गोखले का जिक्र उनकी कीमती

चादर धोने के सन्दर्भ में है तथा मित्रों का जिक्र कचहरी में मजाक बनाने के सन्दर्भ में। इस निबन्ध का अंत भी एक आत्मकथात्मक पंक्ति से होता है–'मेरा यह विश्वास होने के कारण इस बात से मुझे कोई रोष नहीं हुआ।'

टिप्पणी

इस आत्मकथा से गांधी जी की सादगी, धैर्य, हाजिरजवाबी और विनोदप्रियता तथा स्वावलम्बन आदि प्रवृत्तियों पर प्रकाश पड़ता है। निबन्ध की पंक्ति देखिये; ''यहाँ धोबी का खर्च मुझे तो असह्य लगता है। जितनी कालर की कीमत उतनी धुलाई दो और ऊपर से धोबी की गुलाबी भी करो। इससे तो अपने हाथ से धो लेना अधिक अच्छा समझता हूं।''

वैचारिकता–यह विचारात्मक आत्मकथा नहीं है, आत्मकथात्मक निबन्ध है। फिर भी इसमें वैचारिकता अन्तर्निहित है। चिन्तन, मनन, मनोविनोद से घटनाओं को पूर्णता और रोचकता प्राप्त हुई है। धोबी से कपड़े धुलवाना छोड़ने में भी उन्होंने विश्लेषणात्मक बुद्धि से काम लिया ''धोबी का खर्च भी अधिक जान पड़ा। दूसरे वह वक्त पर कपड़े न देता था, इससे दो–तीन दर्जन कमीजों और इतने ही कालरों से भी मेरा काम न चलता था। कॉलर रोज बदलता। कमीज रोज नहीं तो एक दिन बीच में देकर बदलता था। इससे दोहरा खर्च पड़ता था। यह मुझे बेकार लगा।

अंग्रेज हज्जाम द्वारा बाल काटने से साफ इन्कार करने और अपमान करने पर गाँधी जी ने इस घटना को भारत में व्याप्त अस्पृश्यता से जोड़ दिया और एक वैचारिक निष्कर्ष निकाला, ''वह काले चमड़े बालों के बाल काटने लगे तो उसकी रोजी मारी जाए। हमीं लोग कहाँ अपने अछूतों के बाल उच्च वर्ण के हिन्दुओं के हज्जामों को काटने देते हैं? इसका बदला मुझे दक्षिण अफ्रीका में एक नहीं, अनेक बार मिला और यह हमारी करनी का फल है।''

इस प्रकार इस छोटे से निबन्ध में भी विचार और चिन्तन की छबियां मौजूद हैं।

अनुभूति तत्त्व–आत्मकथा लेखक की मानसिक चेतना और भावात्मक अनुभूति का लिखित रूप होती है। यह लेखक और पाठक के बीच सबसे छोटा, सरल और सीधा राजपथ है। निबन्ध में लेखक के विचारों के साथ–साथ उसकी निजी अनुभूतियाँ और भावनाएँ भी रहती हैं, इसलिए उन्हें पहचानने में देर नहीं लगती। सच पूछिये तो आत्मकथा और निबन्ध में ही लेखक अपने पाठक के सामने यथार्थ रूप में बैठता है। आत्मकथा और निबन्ध में विचारों और भावों की ईमानदारी बहुत महत्वपूर्ण चीज है। इसमें लेखक को अपनी दुर्बलताओं, जीवन के कटु प्रसंगों व मानापमान को छिपाना नहीं चाहिए। इससे इन विधाओं में मार्मिकता व सजीवता का समावेश होता है।

इस आत्मकथात्मक निबन्ध में गांधी जी ने अपनी यथार्थ अनुभूतियों और भावनाओं को प्रकट करने में कहीं कोई संकोच नहीं किया। कपड़े धोने से मिले संतोष को भी उन्होंने लिखा, साथ ही कॉलर की मॉडी निकलने पर मित्रों द्वारा मजाक बनाये जाने पर रखे गये धैर्य को भी–

(i) काम का बोझ कुछ बढ़ा तो जरूर, पर नई चीज थी, इसे करने में मजा आता।

(ii) पर ऐसा मजाक सह जीने की शक्ति उस समय भी मुझे में यथेष्ट थी।

टिप्पणी

अंग्रेज हज्जाम द्वारा बाल न काटे जाने और अपमान करने पर गाँधी जी ने अपनी पीड़ा को इस प्रकार व्यक्त किया–'प्रिंटोरिया में एक बार अंग्रेज हज्जाम की दुकान पर पहुंचा। उसने मेरी हजामत बनाने से साफ इंकार किया और इंकार करते हुए जो अपमान किया वह घाटे में रहा। मुझे दुख हुआ। मैं बाजार पहुँचा और बाल काटने की कल खरीद ली। घर आकर शीशे के सामने खड़े होकर बाल काटे। उल्टे सीधे कटे बालों में कचहरी जाने पर साथियों द्वारा मजाक बनाये जाने पर उन्होंने स्वयं को संभालकर संयत शब्दों में जवाब दिया। ''नहीं जनाब। मेरे काले सिर को सफेद हज्जाम कैसे हुए? इसलिए जैसे तैसे अपने हाथ से काटे बाल मुझे अधिक प्यारे हैं।''

गाँधी जी ने जब इस घटना को भारत में व्याप्त अस्पृश्यता से जोड़ लिया तो उनका दुःख कम हो गया और कभी इस भयंकर भेदभाव पर रोष नहीं हुआ ''इसका बदला मुझे दक्षिण अफ्रीका में एक नहीं, अनेक बार मिला है और यह हमारी करनी का फल है। मेरा यह विश्वास होने के कारण इस बात से मुझे कभी रोष नहीं हुआ।''

एकान्विति–एकान्विति का अर्थ है एक सूत्रता। निबन्ध में सर्वत्र एकसूत्रता का होना आवश्यक है। निबन्ध में प्रारम्भ से लेकर अन्तिम वाक्य एक दूसरे से सुखदबद्ध हों। निबन्ध में वर्णित घटनाएँ आपस में जुड़ी हों। निबन्ध में असबद्ध प्रसंग नहीं होने चाहिए। अन्यथा निबन्ध प्रलाप बनकर रह जाता है।

प्रस्तुत सादगी निबन्ध में प्रारम्भ से लेकर अन्त तक लेखक ने अपने जीवन से जुड़ी दो तीन घटनाओं का वर्णन किया है। इस संक्षिप्त निबन्ध में कहीं भी विषय–विस्तार अथवा अवान्तर प्रसंग नहीं है। कपड़े स्वयं धोने की घटना भारत की है और बाल स्वयं काटने की घटना दक्षिण अफ्रीका की। दोनों घटनाओं को लेखक ने परस्पर एक ही वाक्य से बखूबी जोड़ दिया है–''जैसे धोबी की गुलामी से छूटा वैसे ही माई की गुलामी से भी छूटने का अवसर आ गया। हजामत तो विलायत जाने वाले सभी हाथ से करना सीख ही लेते हैं पर बाल छँटाई कोई सीखता हो, इसका ख्याल मुझे नहीं है।''

इस प्रकार कह सकते हैं कि एकान्विति की दृष्टि से भी निबन्ध पूरी तरह सफल है।

कलात्मकता–यह भी आत्मकथा का एक महत्वपूर्ण पक्ष है क्योंकि विचारों व भावों की अभिव्यक्ति भाषा शैली के माध्यम से ही होती है। भाषा शैली में लेखक के विचारों व अनुभूतियों को प्रभावी ढंग से व्यक्त करने की क्षमता होनी चाहिए। सहज–सरल परिवेशोचित सारगर्भित शब्दावली ही निबन्धकार की सफलता की कुंजी है। जैपसन के अनुसार, ''प्रत्येक कलात्मक वस्तु की भाँति इसका एक ढाँचा होता है जो लेखक के व्यक्तित्व का बोध कराता है। इसे रुक्ष नहीं होना चाहिए।''

सर्वप्रथम भाषा की बात करें तो सादगी निबन्ध की भाषा बहुत सरल, बोधगम्य व दैनिक बोलचाल की है। कह सकते हैं कि गाँधी जी ने हिन्दुस्तानी भाषा का प्रयोग किया है जिसमें कैफियत, गुलामी, इजाजत, रोजी, जैसे उर्दू–फारसी के शब्दों का प्रयोग है तो सर्टिफिकेट जैसे अंग्रेजी शब्दों का भी। 'उन्नीस न होना' आदि मुहावरों के भाषा की सजीवता में अभिवृद्धि की है। वाक्य–योजना बहुत सुगठित बन पड़ी है। प्रायः छोटे छोटे वाक्यों का प्रयोग हुआ है–''इससे दोहरा खर्च पड़ता था। यह मुझे

बेकार लगा। अतः धुलाई का सामान जुटाया। धुलाई–कला पर पुस्तक पढ़कर धोना सीखा। पत्नी को भी सिखाया। काम का बोझ कुछ बढ़ा तो जरूर। पर नई चीज़ थी, इसे करने में मजा आया।'' संवादों ने निबन्ध को कथात्मक रमणीयता प्रदान की–

''तुम्हारे सिर पर चूहा तो नहीं चढ़ गया था?''

मैंने कहा–"नहीं जनाब। मेरे काले सिर को सफेद हज्ज़ाम कैसे हुए? इसलिए जैसे तैसे अपने हाथ से कटे बाल मुझे अधिक प्यारे हैं।"

गोखले के गाँधी जी के प्रति प्रश्नवाचक वाक्य भी बड़े रोचक हैं–

आपकी वकालत का तो मैं विश्वास कर लूँगा, पर इस चादर पर अपनी धोबीगिरी दिखाने की इजाजत मैं 'आपको नहीं' दे सकता। इस चादर पर आपने दाग लगा दिया तो? इसकी कीमत आप जानते हैं?''

'कचहरी में खूब कहका लगा 'तुम्हारे सिर पर चूहा तो नहीं चढ़ गया था' जैसे वाक्यों से हास्य व्यंग्य की सृष्टि की गई है।

यह आत्मकथा विचारात्मक अथवा भावात्मक की श्रेणी में तो नहीं आती लेकिन डॉ. दशरथ ओझा द्वारा किये गये वर्गीकरण की दृष्टि से यह विषयीनिष्ठ श्रेणी में आ जायेगा। डॉ. ओझा के शब्दों में ''हिन्दी साहित्य में उपलब्ध निबन्धों की विषय–विविधता तथा वर्णन शैली की भिन्नता को देखकर निबन्ध को स्थूल रूप से दो विभागों में विभक्त किया जा सकता है–विषय निष्ठ निबन्ध और विषयीनिष्ठ निबन्ध।''

आत्मकथात्मक होने के कारण 'सादगी' विषयीनिष्ठ निबन्ध के अन्तर्गत आयेगा। शैली निस्सन्देह बहुत रोचक है। पूरे निबन्ध में सरसता की कोई कमी नहीं। आकार की दृष्टि से भी यह बहुत संक्षिप्त है।

गाँधी जी का अधिकांश लेखन पत्रकारिता की वजह से हुआ। उनका लेखन और पत्रकारिता चार दशकों में व्याप्त है। इस समयावधि में उन्होंने अनेक पत्रों का सम्पादन किया। गाँधी जी ने अपने लेखन और पत्रकारिता की शुरुआत सन् 1888 में लंदन से की। 21 साल की उम्र में उन्होंने 9 लेख शाकाहार के ऊपर एक अंग्रेजी साप्ताहिक 'दि वेजीटेरियन के लिये लिखे। उनके लेखों की भाषा उनके व्यक्तित्व की ही भाँति सरल और सीधी होती थी। उनकी आत्मकथा जो दुनिया की पचास से अधिक भाषाओं में अनूदित है और विश्वभर में करोड़ों पाठकों द्वारा पढ़ी गई है।

दक्षिण अफ्रीका में गाँधी जी ने भारतीयों की शिकायतों को दूर करने और उनके पक्ष में जनमत जुटाने के लिए समाचार पत्रों में लिखना और साक्षात्कार देना शुरू किया। जल्द ही उन्हें भारतीय समुदाय के अधिकारों की रक्षा के लिए संघर्ष हेतु पत्रकार बनने की आवश्यकता महसूस हुई और उन्होंने 35 साल की उम्र में अपने सम्पादकत्व में 'इण्डियन ओपिनियन' अखबार निकाल दिया। दक्षिण अफ्रीका में उनकी पत्रकारिता पूरे वर्चस्व के साथ फली–फूली। इसमें उन्होंने उस दौर के रंगभेद सहित ऐसे कई मुद्दों को प्रकाशित किया, जिन पर दूसरे अखबार बात करने से घबरा रहे थे। इसने दक्षिण अफ्रीका के प्रान्तीय शासन को भारतीयों के खिलाफ दमनकारी कानूनों को संशोधित करने के लिए मजबूर किया।

टिप्पणी

टिप्पणी

भारत लौटकर भी गाँधी जी ने लेखन और पत्रकारिता के अपने सफर को जारी रखा। उन्होंने 8 अक्तूबर 1919 को अपने सम्पादकत्व में 'यंग इण्डिया' का पहला अंक निकला। इसके बाद उन्होंने हिन्दी और गुजराती में 'नवजीवन' नाम से नया प्रकाशन शुरू किया। उन्हें यह बात बताने में गर्व का अनुभव होता था कि नवजीवन के पाठक किसान और मजदूर हैं जो कि असली हिन्दुस्तान है। इसी नवजीवन अखबार में ही उनकी आत्मकथा क्रमशः प्रकाशित होती थी।

उनकी आत्मकथा पर आधारित यह किताब 30 विदेशी और भारत की सभी प्रमुख भाषाओं में प्रकाशित हो चुकी है। यह आत्मकथा 1925 से 1929 के बीच उनके समाचार पत्र 'नवजीवन के साप्ताहिक स्तम्भ के रूप में छपी। इसका अंग्रेजी अनुवाद कई कड़ियों में साप्ताहिक समाचार पत्र 'यग इंडिया' में प्रकाशित हुआ। नवजीवन ट्रस्ट के अनुसार अब तक 19 लाख से अधिक इस आत्मकथा की प्रतियाँ बिक चुकी हैं। आत्मकथा लिखने के आशय के बारे में गाँधी जी ने स्वयं कहा है ''आत्मकथा लिखने का मेरा आशय नहीं है। मुझे तो आत्मकथा के बहाने सत्य के जो प्रयोग मैंने किये हैं, उसकी कथा लिखनी है। उसमें मेरा जीवन ओत–प्रोत होने के कारण कथा एक जीवन–वृत्तान्त जैसी बन जायेगी, यह सही है, लेकिन उसके हर पन्ने पर मेरे प्रयोग ही प्रकट हों तो मैं स्वयं इस कथा को निर्दोष मानूंगा। मैं ऐसा मानता हूं कि मेरे सब प्रयोगों का लेखा–जोखा जनता के सामने रहे तो वह लाभदायक सिद्ध होगा अथवा यों समझिये कि मेरा मोह है। राजनीति के क्षेत्र में हुए प्रयोगों को अब हिन्दुस्तान जानता है लेकिन मेरे आध्यात्मिक प्रयोगों को, जिन्हें मैं जान सकता हूं और जिनके कारण राजनीति के क्षेत्र में मेरी शक्ति भी जन्मी है, उन प्रयोगों का वर्णन करना मुझे अवश्य ही अच्छा लगेगा। अगर ये प्रयोग सचमुच आध्यात्मिक हैं तो इनमें गर्व करने की गुंजाइश ही नहीं। इनमें तो केवल नम्रता की ही वृद्धि होगी। ज्यों ज्यों मैं अपने भूतकाल के जीवन पर दृष्टि डालता जाता हूं, त्यों त्यों अपनी अज्ञानता स्पष्ट ही देख सकता हूं। मैं तो सिर्फ यह चाहता हूं कि उनमें बताये गये प्रयोगों को दृष्टान्त रूप मानकर अपने–अपने प्रयोग यथाशक्ति करें। मुझे विश्वास है कि इस संकुचित क्षेत्र में आत्मकथा के मेरे लेखों से बहुत कुछ मिल सकेगा, क्योंकि कहने योग्य एक भी बात मैं छिपाऊँगा नहीं। मुझे आशा है कि मैं अपने दोषों का ख्याल पाठकों को पूरी तरह से दे सकूंगा। मुझे सत्य के शास्त्रीय प्रयोगों का वर्णन करना है, मैं कितना भला हूँ; इसका वर्णन करने की मेरी तनिक भी इच्छा नहीं होती है। जिस गज से मैं स्वयं को मापना चाहता हूं जिसका उपयोग हम सबको अपने–अपने विषयों में करना चाहिए। उसके अनुसार तो मैं अवश्य कहूंगा कि उनसे तो अभी मैं दूर हूँ।... मुझे जो करना है, तीस वर्षों से मैं आतुर भाव से रट लगाये हुए हूं वह तो आत्मदर्शन है; ईश्वर का साक्षात्कार है, मोक्ष है। मेरे सारे काम इसी दृष्टि से होते हैं। मेरा लेखन भी इसी दृष्टि से होता है और मेरा राजनीति के क्षेत्र में पड़ना भी इसी के अधीन है।

गाँधी जी ने 1933 में 'हरिजनबन्धु' और 'हरिजन सेवक' को क्रमशः अंग्रेजी, गुजराती में और हिन्दी में 'हरिजन' पत्र संचालित किया। इन पत्रों के माध्यम से उन्होंने अछूतोद्धार आन्दोलन का संचालन किया। 'हरिजन' पत्र तो दो महीने में ही विचारों का बेहद लोकप्रिय पत्र बन गया। लोग इसे मनोरंजन के लिए नहीं, अपितु गाँधी जी से दिशा–निर्देश प्राप्त करने के लिए पढ़ते थे।

टिप्पणी

सक्रिय राजनीति में रहते हुए भी एक साथ इतनी पत्रिकाओं का सम्पादन करना व उनके लिए इतने आलेख लिखना किसी के लिए भी आश्चर्योत्पादक हो सकता है। गाँधी जी का समय प्रबन्धन व उनकी कार्यशैली बड़ी अद्‌भुत थी। वे 24 घंटे में 72 घंटे जितना काम कर लेते थे। साथ ही वे अपने दाएँ और बायें दोनों हाथों से लिखा करते थे। यही नहीं वे समुद्र में हिचकोले खाते जहाज पर, चलती ट्रेन में, पथरीले रास्ते पर, चलती मोटर गाड़ियों में भी लिख लिया करते थे। लिखते–लिखते जब एक हाथ थक जाता था, तो वे दूसरे हाथ से लिखना प्रारम्भ कर देते थे। जहाज में ही उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'हिन्द स्वराज' लिखी। साथ ही यह भी उल्लेख है कि लिखने की रफ्तार उनके चलने की गति से कहीं तेज होती। जरूरत पड़ने पर वे खुद टाइप भी कर लिया करते थे। काम के अतिशय बोझ के चलते उन्हें देर रात तक या फिर सुबह से ही काम करना पड़ता था। तमाम व्यस्तताओं के बावजूद वे रोजाना तीन से चार लेख लिख लेते थे। गाँधी जी हमेशा नपे–तुले शब्दों में संक्षिप्त में लिखा करते थे। वाक्य प्रायः छोटे छोटे व सधे हुए हुआ करते थे। भाषा–शैली बहुत सरल किन्तु प्रभावपूर्ण होती।

अपने लेखों में बीच–बीच में गाँधी जी ने यथास्थान संवाद भी डाले हैं और हास्य व्यंग्य के छींटे भी उनके आलेखों में विद्यमान हैं। अपने स्वयं काटे गये बेढ़ंगे बालों वाले सिर के साथ जब वे कचहरे में जाने के प्रसंग को उन्होंने बड़ी रोचकता के साथ संक्षिप्त में प्रस्तुत किया है :–

''घर आकर शीशे के सामने खड़े होकर बाल कतरे। जैसे तैसे बाल कट तो गये, पर पीछे के बाल काटने में बड़ी कठिनाई हुई। सीधे नहीं ही कटे। कचहरी में खूब कहकहा लगा–

''तुम्हारे सिर पर चूहा तो नहीं चढ़ गया था?''

मैंने कहा–''नहीं जनाब। मेरे काले सिर को सफेद हज्ज़ाम कैसे हुए? इसलिए जैसे–तैसे अपने हाथ से कटे बाल मुझे अधिक प्यारे हैं।''

एक अच्छे पत्रकार और लेखक होने के लिए बहुत जरूरी है–एक अच्छा विचारक और चिन्तक होना। गाँधी जी के विचारों पर अनेक भारतीय धार्मिक पुस्तकों, धर्मों और पश्चिमी दार्शनिकों के विचारों का प्रभाव पड़ा था। निश्चित रूप से कोई भी चिन्तक शून्य में जन्म नहीं लेता। हर चिन्तक पर भूतकाल की विरासत का प्रभाव पड़ता है। किसी चिन्तक को सही परिप्रेक्ष्य में समझने के लिए उसमें चिन्तन के विभिन्न स्रोतों में व्यक्तिगत जीवन, भारतीय परम्परा और वैश्विक प्रभाव का अध्ययन किया जा सकता है।

व्यक्तिगत अनुभवों के अन्तर्गत उनकी माता जी के प्रभाव, पारिवारिक शिक्षाओं और निजी अनुमानों को रख सकते हैं। गाँधी जी की दृष्टि में तुलसीदास की रामायण और भगवत गीता उनके लिए विचार रत्नों के भंडार, पथ प्रदर्शक और आध्यात्मिक निर्देश ग्रन्थ हैं। इनके अतिरिक्त गाँधी जी ने उपनिषद्, पातंजलि के योग सूत्र, महाभारत, जैन व बौद्ध धर्म की पुस्तकों का और कुरान, बाइविल का भी अध्ययन किया था। पाश्चात्य साहित्यकारों में गाँधी जी पर रस्किन और टोलस्टॉय का सर्वाधिक प्रभाव पड़ा।

टिप्पणी

इन प्रभावों के कारण नैतिक मूल्यों के प्रति गाँधी जी की आस्था इतनी परिदृढ़ हो गई कि उनके लेखन में भी उनका आध्यात्मिक दृष्टिकोण बार–बार अभिव्यक्त होता रहा। अपने आदर्शपरक संस्कारों और दृष्टिकोण के कारण गांधी जी का लेखन महत्वाकांक्षा और आर्थिक हितों के परे था। उनके पत्रों में कभी कोई सनसनीखेज समाचार अथवा विज्ञापन नहीं छपा। 30 सालों तक उन्होंने बिना किसी विज्ञापन के अपने पत्रों का प्रकाशन जारी रखा और इन पत्रों के माध्यम से सम्पादकीय और आलेखों व स्तम्भों रूपों में उनका लेखन सामने आता रहा।

हम प्रायः गाँधी जी को एक लेखक और पत्रकार के रूप में नहीं देखते, भले ही वे कितने ही सफल पत्रकार क्यों न रहे हों। उनके राजनेता, चामत्कारिक नेतृत्व और समाज–सुधारक वाले रूप ने उनकी पत्रकार छवि को हमारे सम्मुख कुछ धुंधला कर दिया है। यह सच है कि गाँधी जी का मूल व्यक्तित्व एक पत्रकार व लेखक का नहीं था, उनका सरोकार तो समाज और राजनीति में आध्यात्मिक मूल्यों की स्थापना करना था। इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अन्य साधनों के अतिरिक्त उन्होंने पत्रकारिता को भी साधन बनाया। लेखन और पत्रकारिता उनके लिए साधन थी, साध्य नहीं। फिर भी उनके पुस्तकें विशेष रूप से आत्मकथा विश्व की सर्वाधिक पढ़ी जाने वाली पुस्तकों में एक है जिसका अनुवाद पचास से अधिक भाषाओं में हो चुका है। इसके बाद भी क्या गाँधी के प्रभावी व ईमानदार व सम्प्रेषण कला में कोई सन्देह बाकी रह सकता है?

अपनी प्रगति जांचिए

5. विश्व में गांधी जी का जन्मदिन किस रूप में मनाया जाता है?
   (क) गांधी जयंती (ख) वैश्विक प्रार्थना दिवस
   (ग) अंतर्राष्ट्रीय अहिंसा दिवस (घ) सर्वधर्म एकता दिवस
6. 'सादगी' आत्मकथा महात्मा गांधी की किस कृति का एक हिस्सा है?
   (क) सत्य के साथ प्रयोग (ख) मेरे सपनों का भारत
   (ग) गीता जी (घ) इनमें से कोई नहीं

5.5 चित्त जहां भयशून्य (कविता) : रवीन्द्रनाथ टैगोर

रवीन्द्रनाथ टैगोर का जन्म 7 मई, 1861 को कलकत्ता के प्रसिद्ध जोर सांको भवन में हुआ था। आपके पिता देवेन्द्रनाथ टैगोर ब्रह्म समाज के नेता थे। आप उनके सबसे छोटे पुत्र थे। आपका परिवार कोलकाता के प्रसिद्ध व समृद्ध परिवारों में से एक था।

भारत का राष्ट्रगान आप ही की देन है। रवीन्द्रनाथ टैगोर की बाल्यकाल से कविताएं और कहानियाँ लिखने में रुचि थी। रवीन्द्रनाथ टैगोर को प्रकृति से अगाध प्रेम था। वे एक बांग्ला कवि, कहानीकार, गीतकार, संगीतकार, नाटककार, निबंधकार और चित्रकार थे। भारतीय संस्कृति के सर्वश्रेष्ठ रूप से पश्चिमी देशों का परिचय और पश्चिमी देशों की संस्कृति से भारत का परिचय कराने में टैगोर की बड़ी भूमिका रही। आमतौर पर उन्हें आधुनिक भारत का असाधारण सृजनशील कलाकार माना जाता है।

टिप्पणी

शिक्षा

रवीन्द्रनाथ टैगोर की प्राथमिक शिक्षा सेंट जेवियर स्कूल में हुई। उनके पिता देवेन्द्रनाथ ठाकुर एक जाने–माने समाज सुधारक थे। वे चाहते थे कि रवीन्द्रनाथ बड़े होकर बैरिस्टर बने। इसलिए उन्होंने रवीन्द्रनाथ को कानून की पढ़ाई के लिए 1878 में लंदन भेजा। रवीन्द्रनाथ का मन तो साहित्य में था फिर मन वहाँ कैसे लगता। आपने कुछ समय तक लंदन के कॉलेज विश्वविद्यालय में कानून का अध्ययन किया लेकिन 1880 में बिना डिग्री लिए वापस आ गए।

साहित्य सृजन

रवीन्द्रनाथ टैगोर ने साहित्य की विभिन्न विधाओं में सृजन किया। गुरुदेव रवीन्द्र नाथ की सबसे लोकप्रिय रचना 'गीतांजलि' रही जिसके लिए 1913 में उन्हें नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया। आप विश्व के एकमात्र ऐसे साहित्यकार हैं जिनकी दो रचनाएं दो देशों का राष्ट्रगान बनी। भारत का राष्ट्रगान 'जन गण मन' और बांग्लादेश का राष्ट्रीय गान 'आमार सोनार बांग्ला' गुरुदेव की ही रचनाएं हैं।

गीतांजलि लोगों को इतनी पसंद आई कि अंग्रेजी, जर्मन फ्रैंच, जापानी, रूसी आदि विश्व की सभी प्रमुख भाषाओं में इसका अनुवाद किया गया। टैगोर का नाम दुनिया के कोने–कोने में फैल गया और वे विश्व मंच पर स्थापित हो गए।

रवीन्द्रनाथ की कहानियों में काबुलीवाला, मास्टर साहब और पोस्ट मास्टर आज भी लोकप्रिय कहानियाँ है। रवीन्द्रनाथ की रचनाओं में स्वतंत्रता आंदोलन और उस समय के समाज की झलक स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है।

सामाजिक जीवन

16 अक्टूबर, 1905 को रवीन्द्रनाथ के नेतृत्व में कोलकाता में मनाया गया रक्षाबन्धन उत्सव से बंग–भंग आन्दोलन का आरम्भ हुआ। इसी आन्दोलन ने भारत में स्वदेशी आन्दोलन का सूत्रपात किया।

टैगोर ने विश्व के सबसे बड़े नरसंहारों में एक जलियांवाला कांड (1919) की घोर निंदा की और इसके विरोध में उन्होंने ब्रिटिश प्रशासन द्वारा प्रदान की गई, 'नाइट हुड' की उपाधि लौटा दी।

निधन

7 अगस्त, 1961 कलकत्ता में इस बहुमुखी साहित्यकार का निधन हो गया।

टैगोर को ये मंजूर नहीं था कि राष्ट्रवाद की भावना पूरी मानवता की एकजुटता के रास्ते में अड़चन बने। उन्होंने कहा था ''मैं हीरे के दाम में कांच नहीं खरीदूंगा। जब तक जिंदा हूं मानवता के ऊपर राष्ट्रभक्ति की जीत नहीं होने दूंगा। दुनिया पर इस समय जो राजनीतिक सभ्यता हावी है। वो खुद को दूसरों से अलग मानने की सोच पर टिकी है। इसमें दूसरों से हमेशा दूरी बनाए रखने या उन्हें नष्ट करने की भावना रहती है। इसकी प्रवृत्ति परभक्षी और नरभक्षी है। ये दूसरों के संसाधनों को हड़पकर जिन्दा रहती है और उनके पूरे भविष्य को निगल जाने की कोशिश करती है। ये दूसरी नस्लों के प्रभावशाली होने की आशंका से डरी रहती है और अपनी सरहदों से बाहर किसी भी तरह की महानता को जन्म लेने से पहले ही खत्म कर देना चाहती है।"

उन्होंने राष्ट्रवाद की बेड़ियों को तोड़कर पूरी मानवता की एकता का लक्ष्य हासिल करने का वैश्विक सपना पेश किया था।

टिप्पणी

सांस्कृतिक रूप में सजग भारत के किसी भी व्यक्ति को रवीन्द्रनाथ ने आकर्षित न किया हो ऐसा संभव नहीं है। रवीन्द्रनाथ के समूचे व्यक्तित्व पर कोई जितना ही विचार करता है सबसे पहले उसे उनके जीवन और व्यक्तित्व की विशालता और विपुलता का वैभव आश्चर्यचकित करता है। रवीन्द्रनाथ कहीं से ऐसे इनसान नहीं थे जिनमें एक गुलाम देश के नागरिक की किसी भी प्रकार की कुंठा का लेश मात्र मौजूद हो। स्वतन्त्रता उनकी कामना नहीं उनकी नैसर्गिकता थी। वे इस बात पर हमेशा बल दे रहे थे कि राजनीतिक 'स्वराज' से ही मुक्ति नहीं है हमारी आत्मा की है। मनुष्य की मुक्ति की लड़ाई सिर्फ राजनीतिक स्वाधीनता नहीं है।

5.5.1 मूल कविता : चित्त जहां भयशून्य

चित्त जहाँ भयविहीन, शीर्श जहाँ उच्च रे!
ज्ञान जहाँ मुक्त, रे!
सत्य का गंभीर जहाँ वाणी के उत्स, रे!
भेद औ' प्रभेद–मयी कुंचित दीवार बीच,
घिर–घिर कर जगत जहाँ नहीं खंड–खंड, रे!
अनवरत परिश्रम निज अति प्रचंड बाहु–दंड
सर्वदा उठा रहा कि पा सके अखंड, रे!
मरे रूढ़ि–बन्धन के सूखे मरु–प्रान्तर में
खो नहीं गई जहाँ प्रवाहिनी विवेक की–
प्रेरित करता है तू मन को उस ओर जहाँ–
निर्मल विचार का कि शाश्वत विस्तार है
अविरलित प्रवाहित निर्बाध कर्म–धार है।
प्रभु हे! पिता हे! उस विगत–बन्ध स्वर्ग में
उद्यत कर, जाग्रत कर, मेरे इस देश को।

5.5.2 चित्त जहां भयशून्य कविता की व्याख्या

1. चित्त जहां भयविहीन ..... सर्वदा उठा रहा कि पास के अखण्ड रे

संदर्भ– प्रस्तुत काव्यपंक्तियां, विश्वविख्यात महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा विरचित 'चित्त जहां भयशून्य' शीर्षक कविता से अवतरित है। बांग्ला में इसे चित्त जेथा भयशून्य' कहा गया है। इसका प्रकाशन जून–जुलाई 1901 के आसपास माना जाता है। यह बांग्ला में प्रकाशित गीतांजलि में शामिल है, पर अंग्रेजी के उस गीतांजलि में शामिल नहीं है जिसे 1913 के साहित्य के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था और जिसकी भूमिका डब्ल्यू बी. यीट्स ने लिखा।

इस कविता में गुरुदेव ने पराधीन भारत को एक आदर्श स्वतंत्रता युग में ले जाने की कल्पना की है, जहां भारत को राजनैतिक स्वतंत्रता तो प्राप्त हो ही, साथ ही जहां भेदभाव अकर्मण्यता और असत्य के अंधेरे न हों।

टिप्पणी

व्याख्या

महान दार्शनिक और साहित्यकार रवीन्द्रनाथ टैगोर ईश्वर से प्रार्थना करते हुए कह रहे हैं कि भारत को ऐसे आदर्श समय में पहुंचाओं, जहां दुर्गणों के स्थान पर सद्‌गुणों का वास हो। पराधीन भारत में सब भय के वातावरण में जी रहे हैं और भारतवासी आत्महीनता में जीने के लिए विवश हैं। ऐसा परिवेश निर्मित हो जहां लोगों के मन में किसी भी प्रकार का डर न हो क्योंकि जहां भय का वातावरण होता है वहां किसी भी प्रकार की सद्‌वृत्तियां और खुशियां निवास नहीं कर सकतीं। पराधीन लोग अपनी गर्दन ऊंची करके नहीं चल पाते। उनके आत्म–सम्मान को नष्ट करने के लिए उन्हें ऐसा ही करने के लिए विवश किया जाता है। पराधीन देश में ज्ञान भी बंधनों में रहता है। उस पर सरकार का नियंत्रण रहता है। भय के वातावरण में ज्ञान की स्वतंत्रत अभिव्यक्ति नहीं हो सकती और साथ ही ज्ञानवर्धक साहित्य न रचा जा सकता है और न सब तक पहुंच सकता है। आगे भी गुरुदेव प्रार्थना करते हुए कहते हैं कि भारत ही नहीं अपितु समूचे संसार में सत्य के गंभीर स्वर गूंजें। जहां विशाल वसुधा को खंडों में विभाजित कर छोटे–छोटे आंगन न बनाये जाते हों। जहां विचारों की सरिता अबाध रूप से बहती हो, जहां लोग अपने अपने कर्म में सर्वदा लीन रहें; उनके बाजुओं में कर्म करने की शक्ति विद्यमान रहे जिससे कि वे जीवन को संपूर्ण रूप में पा सकें, जीवन को भरपूर रूप में जी सकें।

विशेष

- महाकवि ने ईश्वर से एक आदर्श जीवन की प्रार्थना की है। आदर्श जीवन तभी प्राप्त किया जा सकता जब जीवन में भय, आत्महीनता, बंधन, असत्य, भेदभाव, अकर्मण्यता के स्थान पर साहस, आत्मगौरव, सत्य, ऐक्य और कर्मठता की प्रतिष्ठा हो। उच्च भावों से ही उच्च जीवन की प्राप्ति संभव है।
- इन पंक्तियों पर 'गागर में सागर' भरने की कहावत चरितार्थ होती है। कवि ने बहुत सारे भावों को कम से कम शब्दों में अभिव्यक्त कर दिया है।

व्याख्या–2

1. मरे रूढ़ि बन्धन के ..... मेरे इस देश की

संदर्भ– प्रस्तुत काव्यपंक्तियां, विश्वविख्यात महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा विरचित 'चित्त जहां भयशून्य' शीर्षक कविता से अवतरित है। बांग्ला में इसे चित्त जेथा भयशून्य' कहा गया है। इसका प्रकाशन जून–जुलाई 1901 के आसपास माना जाता है। यह बांग्ला में प्रकाशित गीतांजलि में शामिल है, पर अंग्रेजी के उस गीतांजलि में शामिल नहीं है जिसे 1913 के साहित्य के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था और जिसकी भूमिका डब्ल्यू बी. यीट्स ने लिखा।

इस कविता में गुरुदेव ने पराधीन भारत को एक आदर्श स्वतंत्रता युग में ले जाने की कल्पना की है, जहां भारत को राजनैतिक स्वतंत्रता तो प्राप्त हो ही, साथ ही जहां भेदभाव अकर्मण्यता और असत्य के अंधेरे न हों।

टिप्पणी

व्याख्या

विश्वविख्यात कवि एवं दार्शनिक इस कविता में ईश्वर से प्राथ्रना करते हुए कहते हैं कि भारत को पराधीनता के बंधनों से मुक्त कर स्वतंत्रता के उस स्वर्ग में ले चलो जहां वर्तमान में चल रहे रूढ़ियों के बंधन नष्ट हो जाएं। रूढ़ियां पराधीन भारत में बहुत फल–फूल रही हैं। रूढ़ियां के जड़ बंधन ऐसे ही सूख जाएं, जैसे रेगिस्तान में हरियाली सूख जाती है। दुराग्रहों के स्थान पर जहां विवेक की सरिता बहती हो। विवेक के आलोक में ही कर्तव्य–अकर्तव्य तथा अच्छे–बुरे का अंतर ठीक प्रकार से समझ में आता है। विवेक हमारे बुद्धि की जड़ता को नष्ट करता है। वह हमारे भावों और विचारों को प्रगतिशीलता प्रदान करता है। मन ही इस जीवन और शरीर का वास्तविक संचालक है। वह मनुष्य को अपने वेगों के हिसाब से हांकता रहता है। कभी कभी मन मनुष्य का निर्माण विचारों से दूर कर देता है। इसलिए हमारा मन सबल और स्वस्थ हो। वह हमेशा हमें निर्मल विचारों की ओर अग्रसर करे, हर मनुष्य मन को साधना सीख ले जिससे कि वह धीरे–धीरे सार्वभौमिकता की ओर बढ़ सके और जीवन के शाश्वत सत्यों को देख सके। और यह सब भावों और विचारों से संभव नहीं होगा। इसके लिए मनुष्य को निरंतर कर्म भी करने होंगे। मनुष्य अपने कर्मों की धारा सदैव प्रवाहित रखे। धारा यदि बहती रहती है तो अच्छा रहता है, उसमें निर्मलता व प्रवाह बना रहता है लेकिन यदि धारा का प्रवाह अवरुद्ध हो जाए, तो उसमें अपवित्र और मलिनता आ जाती है। कवि पुनः ईश्वर से प्रार्थना करता है कि ईश्वर पराधीन भारत, जो कि वर्तमान में परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ है, को स्वतंत्रता की राह पर चलाओ ओर निवासियों में प्रगतिशीलता, बुद्धि, विवेक और निर्मलता और कर्मठता का समावेश करे। इन गुणों के आधार पर ही भारत अपना खोया गौरव प्राप्त कर सकते हैं।

विशेष

- मानव मन में नकारात्मक और सकारात्मक दोनों ही भावों की स्थिति होती है लेकिन साहित्यकार का एक दायित्व अच्छे भावों को निरंतर प्रेरित प्रोत्साहित करना तथा नकारात्मक भावों को हतोत्साहित करना होता है। इसलिए प्रेमचंद ने साहित्य को जीवन के आगे चलने वाली मशाल कहा है। साहित्य समाज का दर्पण ही नहीं पथ–प्रदर्शक भी होना चाहिए।
- 'मरे रूढ़ि बन्धन के सूखे मरु–प्रात्तर में' प्रवाहिनी विवेक की तथा 'निर्बाध कर्म धार' में रूपक अलंकार है।
- भाव और कलापक्ष का अतीव सुन्दर समन्वय दृष्टिगोचर होता है। माधुर्य गुण विद्यमान है। छन्द की दृष्टि से मुक्त छन्द प्रयुक्त है।

5.5.3 चित्त जहां भयशून्य : कविता की मूल संवेदना

विश्वकवि रवीन्द्रनाथ की कविता चित्त जेथा भयशून्य का हिन्दी अनुवाद है 'चित्त जहां भयशून्य'। मूल कविता का प्रकाशन जून–जुलाई 1901 के आसपास हुआ था। तब भारत पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था। यह कविता बांग्ला में प्रकाशित गीतांजलि में तो शामिल है परंतु अंग्रेजी की उस गीतांजलि में शामिल नहीं है, जिसका अनुवाद स्वयं रवीन्द्रनाथ टैगोर ने किया था।

टिप्पणी

118 साल पहले लिखी गई इस कविता के दो हिन्दी अनुवाद देखने को मिलते हैं। एक अनुवाद डॉ. शिवमंगल सुमन ने किया है और दूसरा अनुवाद 'भवानी प्रसाद मिश्र' का है, जो साहित्य अकादमी से 1967 में प्रकाशित रवीन्द्रनाथ की कविताओं में शामिल हैं, जिसकी भूमिका हुमायूं कबीर ने लिखी है। इस संकलन में टैगोर की कुछ कविताओं के अनुवाद हजारी प्रसाद द्विवेदी और रामधारी सिंह दिनकर ने भी किये है। रवीन्द्रनाथ टैगोर की 150वीं जयंती पर मशहूर शिक्षाविद और वक्ता स्टीवन रूडोल्फ ने इस कविता पर where the mind is without fear की एक संगीत संरचना प्रस्तुत की थी।

आजादी के 7वें दशक में इस कविता को बढ़ते हुए उन मूल्यों के प्रति सम्मान पैदा होता है जो भारत की आजादी की निर्मिति में शामिल थे। इन मूल्यों को समझना और सहेजना सच्ची देशभक्ति होगी।

कविता का मूल संवेदना भारत की स्वतंत्रता और भावात्मक समृद्धि की है। कवि भारत को पुराने आध्यात्मिक गौरव शिखर पर प्रतिष्ठित करना चाहता है। इतने वर्षों तक पराधीन रहने के कारण भारतवासियों में उन पुराने सद्‌गुणों का ह्रास हो गया है, जिनके लिए भारत विख्यात रहा है। साहस, आत्म–सम्मान, सत्यनिष्ठा, सामाजिक एकता, सहिष्णुता, कर्मठता, प्रगतिशीलता, विवेक और निर्मल विचार जैसे सद्‌भाव और सद्‌गुण भारतवासियों के व्यक्तित्व की पहचान रहे हैं, लेकिन पराधीनता के अंकुश ने इस गुणों को दमित कर दिया है। गुरुदेव इन गुणों की पुनर्प्रतिष्ठा के लिए ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि भारतवासी (शासको के) भय से मुक्त हो, जहां धर्म और जाति के आधार पर समाज में भेदभाव प्रभावित न हो, जहां ज्ञान पर नियंत्रण के पहरे न हो और सबसे बड़ी बात तो आत्म–सम्मान की है। भारत पुनः एक ऐसा गौरवपूर्ण देश बन जाए जहां हम गर्व से माथा ऊंचा करके चल सकें। जहां हर वाक्य हृदय की गहराई से निकलता हो और जहां हर दिशा में कर्म को स्रोत झूटते हो अर्थात् जहां भारत के हर क्षेत्र के लोग स्वतंत्रतापूर्वक अपने–अपने कर्म में निरत हो सके। जहां विवेक और नदियां खुले आसमान के नीचे बेरोकटोक बहती हो। और जहां मारे सभी कर्म अन्तःप्रेरणा से निःसृत हों। हमारी भावनाएं स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त हो सकें और हम आनन्दानुभूतियों को महसूस कर सके।

इस कविता में विशेष बात यह है कि यहां ईश्वर से प्रार्थना भारतवर्ष के लिए तो है ही, संपूर्ण संसार के लिए भी है। उनकी राष्ट्रीयता अंतर्राष्ट्रीयता में समापित हो जाती है। उनकी शुभेच्छा भारत की सीमाओं के पार समूचे विश्व के लिए व्याप्त हो जाती है–

भेद औ प्रभेदमयी कुंचित दीवार बीच
घिर घिरकर जगत जहां नहीं खंड खंडेरे।

यह कविता भारत की स्वतंत्रता का स्वर तो स्वयं में समाये हुए है ही–

'प्रभु हो पिता हो। उस बिगत बन्ध स्वर्ग में
उद्यतकर, जाग्रत कर, मेरे इस देश को।

वैचारिक और भावात्मक समृद्धि पाने का स्वर कविता में काफी मुखर है। परंतु भारत को स्वतंत्रता मुफ्त में अथवा अनायास नहीं मिल सकती, उसके लिए भय, आत्महीनता, वर्गभेद, निराशा, हताशा, जड़ बुद्धि और अकर्मण्यता का परित्याग करना

टिप्पणी

पड़ेगा। स्वयं को शारीरिक और मानसिक रूप इतना सबल करना होगा कि भारत अपनी स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर सके। अंग्रेजी में कहा भी कहा गया है– पहले योग्य बनो, फिर इच्छा करो अर्थात् First Deserve and then Desire. इस प्रकार कविता की मूल संवेदना यही है कि भारतवासी अपनी दुर्बलताओं को पहचान कर उनके निराकरण के लिए उद्यत हों और अपने व्यक्तित्व को आत्म–सम्मान, साहस, एकता, विवेक आदि से समृद्ध करें।

5.5.4 चित्त जहां भयशून्य कविता का कला एवं भावपक्ष

किसी भी कविता के दो पक्ष होते हैं भाव पक्ष और कला पक्ष। भाव पक्ष कविता का आंतरिक पक्ष होता है और कला पक्ष कविता का बाह्य पक्ष। दोनों के सौंदर्य से ही कविता संपूर्ण बनती है। यदि कविता भाव पक्ष से समृद्ध है लेकिन कला पक्ष कमजोर है तो कविता का सौंदर्य और आकर्षण कम होता है और इसके विपरीत यदि कविता कला पक्ष की दृष्टि से समृद्ध है और भाव पक्ष की दृष्टि से कमजोर, तो ऐसा लगेगा कि निर्जीव वस्तु को सुसज्जित कर दिया गया हो। हिन्दी के कवि केशवदास की कविताएं इसी प्रकार की हैं।

प्रस्तुत कविता 'चित्त जहां भयशून्य' की बात करें तो यह कविता दोनों ही दृष्टियों से अत्यंत समृद्ध है। इसमें आत्मसम्मान, साहस, सत्यनिष्ठ, वाणी, मानव–मानव में भेदभाव का अभाव, वसुधैव कुटुम्बकम् का भाव, उद्यमशीलता, विवेक, रूढ़िवादिता के स्थान पर प्रगतिशीलता, आंतरिक शुचिता आदि की प्राप्ति के लिए ईश्वर से प्रार्थना है। कविता की प्रार्थना व्यक्तिगत न होकर समाज और देश की सीमाओं का अतिक्रमण करती हुई अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहुंच जाती है– 'घिर घिरकर जगत जहां नहीं खंड खंड रे'। इस प्रकार कविता के भावों में सार्वभौमिक विस्तार है। वह किसी व्यक्ति विशेष, स्थान विशेष, देश विशेष या काल विशेष तक सीमित नहीं है। कवि की शुभेच्छा भारतवासियों के साथ–साथ मानव मात्र के लिए। इस प्रकार यह कविता भावों का उत्कर्ष प्रस्तुत करती है।

कला पक्ष की दृष्टि से देखें तो कविता मुक्त छन्द में लिखित है। मुक्त छन्द का अर्थ द्वन्द्व मुक्त होना नहीं होता, अपितु छन्दों के परंपरागत बंधनों से मुक्त होकर स्वतंत्र लय ताल में बंधा होना होता है।

भाषा की बात करें तो कविता की शब्द–योजना बहुत अच्छी है। छोटे–छोटे, अर्थगर्भित व ध्वन्यात्मक शब्दों का प्रयोग है। ध्वन्यात्मक शब्दों के प्रयोग की वजह से कविता को गीत की तरह गाया जा सकता है। कविता मुक्त छन्द में है लेकिन लय–ताल सर्वत्र बनी हुई है– कविता के अन्त में 'रे' की ध्वनि इसकी संगीतात्मकता व प्रभावात्मकता में वृद्धि करती है

चित्त जहां भयविहीन, शीर्ष जहां उच्च रे
ज्ञान जहां मुक्त रे
सत्य का गंभीर जहां वाणी के उत्स रे
भेद और प्रभेदमयी कुंचित दीवार बीच
घिर घिर कर जगत जहां नहीं खंड खंड रे

× × ×

निर्मल विचार का कि शाश्वत विस्तार है

अविरलित प्रवाहित निर्बाध कर्म–धार है।

टिप्पणी

अलंकारों की दृष्टि से रूपक अलंकार की छटा सर्वत्र दिखाई पड़ती है। वाणी के उत्स, मरे रूढ़ि बंधन के सूखे मरु–प्रान्तर में, प्रवाहिनी विवेक की। तीनों ही स्थलों पर रूपक अलंकार की छटा बहुत आकर्षक व प्रभावी है।

इसके अतिरिक्त एक ही शब्द की पुनरावृत्ति अलंकार भी दृष्टव्य है। यथा घिर–घिर, खंड–खंड। महाकवि ने विशेषण मुक्त शब्दावली के प्रयोग से कविता को बहुत अधिक अर्थ–विस्तार दे दिया है। लगभग हर पंक्ति में ही ऐसा किया गया है। कहीं–कहीं तो एक ही शब्द के साथ दो–दो विशेषण या क्रिया विशेषण प्रयुक्त हुए हैं यथा–

1. भेद औ *प्रभेदमयी कुंचित* दीवार बीच
2. अनवरत परिश्रम निज *अति प्रचंड* बाहु दंड
3. *निर्मल* विचार का कि शाश्वत विस्तार है
4. *अविरलित* प्रवाहित *निर्बाध* कर्मधार है
5. प्र भुहे! पिता हे! उस *विगतबन्ध* स्वर्ग में

शब्द शक्ति की दृष्टि से अमिधा और लक्षणा विद्यमान है तथा गुण की दृष्टि से प्रसाद व माधुर्य गुण है।

निस्संदेह यह कविता भाव एवं कला दोनों की दृष्टियों से उत्कृष्ट है। हिन्दी के दो प्रसिद्ध कवियों डॉ. शिवमंगल सिंह सुमन तथा भवानी प्रसाद मिश्र ने अनुवाद किया है। इसके साथ ही रवीन्द्रनाथ टैगोर की 150वीं जयंती पर मशहूर शिक्षाविद और वक्ता स्टीवन रूडोल्फ ने इस कविता की एक संगीत संरचना प्रस्तुत की थी। इसके अतिरिक्त उनकी जयंती पर 2019 में 'साहित्य आज तक' के अंतर्गत उनकी पांच कविताएं शामिल की गई जिनमें प्रथम कविता के रूप में यही कविता शामिल रही–

1. 'हो चित्त जहां भयशून्य, माथ हो उन्नत,
2. धीरे चलो, धीरे बन्धु,
3. सोने के पिंजरे में नहीं रहे दिन
4. यह कौन विरहणी आती और
5. 'चीन्हूं मैं चीन्हूं तुम्हें ओ, विदेशिणी'।

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि विवेच्य कविता रवीन्द्रनाथ की प्रतिनिधि कविताओं में से एक है। यह कविता उनकी विराट जीवन दृष्टि का शब्दांकित करती है। यह उस संदेश को हम तक पहुंचाती है जो उन्होंने 26 मई 1921 को स्टाकहोम में दिये एक व्याख्यान में दिया था– मैं यह मानता हूं कि आप– हम जो कष्ट उठा रहे हैं, वह विस्मृति, एकांतता के संकट के कारण है क्योंकि हम मानवता का स्वागत करने के अवसर से तथा विश्व के साथ ऐसी सर्वोत्तम वस्तु को बांटने से चूक गये हैं जो हमारे

पास उपलब्ध है। भारत की आत्मा ने सदैव एकात्मकता के आदर्श का उद्घोष किया है। एकात्मकता का यह आदर्श किसी भी वस्तु को, किसी भी जाति को अथवा किसी भी संस्कृति को अस्वीकार नहीं करता।

टिप्पणी

प्रस्तुत कविता टैगोर के इसी आदर्श को ध्वनित करती है। मूलतः बांग्ला में लिखित इस कविता का अनेक साहित्यकारों ने अपनी अलग–अलग भाषाओं में अनुवाद किया, किन्तु मूल कविता को पढ़ने के बाद निरंतर ऐसा महसूस होता है कि कविता का अभी पूर्णतया सटीक अनुवाद नहीं हुआ। यह कविता अभी भी अनेक सही अनुवाद की प्रतीक्षा में है। ऐसा इसलिए है कि मूल कविता में जो भाव और कला का जो सौंदर्य है, वह अनुवाद में नहीं हो पा रहा है। 'चित्त जहां भयशून्य' कविता को पढ़ना और गीत–संगीत से संयुक्त रूप में सुनना एक अद्भुत आनन्दालोक की सृष्टि से गुजरने जैसा है।

अपनी प्रगति जांचिए

7. विश्व का एकमात्र साहित्यकार जिसकी दो रचनाएं दो देशों का राष्ट्रगान बनी–

   (क) महर्षि अरविंद (ख) महात्मा गांधी

   (ग) रवीन्द्रनाथ टैगोर (घ) मैक्सिम गोर्की

8. टैगोर द्वारा ब्रिटिश प्रशासन प्रदत्त 'नाइट हुड' उपाधि लौटाना किससे संबंधित है?

   (क) बंग–भंग आंदोलन (ख) रक्षाबंधन उत्सव

   (ग) नोबेल पुरस्कार प्राप्ति (घ) जलियांवाला कांड

5.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (क)
2. (ख)
3. (घ)
4. (क)
5. (ग)
6. (क)
7. (ग)
8. (घ)

5.7 सारांश

1893 में स्वामी विवेकानंद जी शिकागो पहुंचे जहां उन्होंने विश्व धर्म सम्मेलन में हिस्सा लिया। इस दौरान एक जगह पर कई धर्मगुरुओं ने अपनी किताब रखी, वहीं भारत के

टिप्पणी

धर्म के वर्णन के लिए श्रीमद्भगवत गीता रखी गई थी जिसका खूब मजाक उड़ाया गया, लेकिन जब विवेकानंद ने अपने आध्यात्म और ज्ञान से भरे भाषण की शुरुआत की तब सभागार तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठा। स्वामी विवेकानंद जी के भाषण में जहां वैदिक दर्शन का ज्ञान था वहीं उसमें दुनिया में शांति से जीने का संदेश भी छुपा था। अपने भाषण में स्वामी जी ने कट्टरतावाद और सांप्रदायिकता पर जमकर प्रहार किया था। उन्होंने इस दौरान भारत की एक नई छवि बनाई। इसके साथ ही वे लोकप्रिय होते चले गए।

महर्षि अरविन्द एक प्रखर राष्ट्रवादी थे और उन्होंने अपने विचारों में "राष्ट्र का विकास मानव एकता के आदर्श की ओर उन्मुख होना चाहिए" इस सत्य को भी स्वीकार किया। मानव जाति के विकास में एकता का सिद्धांत के अतिरिक्त स्वतंत्रता और विभिन्नता का सिद्धांत भी उतना ही अधिक आवश्यक है क्योंकि परम तत्व में एकता की और अनेकता दोनों ही है। प्रकृति की सामान्य योजना असीम विविधता पर आधारित होती है इसलिए आदर्श समाज में वैयक्तिक, राष्ट्रीय, धार्मिक, सामाजिक और नैतिक सब प्रकार की स्वाधीनता आवश्यक है। स्वाधीनता का अर्थ स्पष्ट करते हुए महर्षि अरविन्द ने लिखा है– "स्वाधीनता से हमारा अभिप्राय है अपनी सत्ता के नियम के अनुसार चलना, अपनी स्वाभाविक आत्म परिपूर्णता तक विकसित होना और अपने वातावरण के साथ स्वाभाविक और स्वतंत्र रूप में समरसता प्राप्त करना।"

गांधी जी का व्यक्तित्व बहुआयामी है। विश्व की सभी प्रमुख भाषाओं में उनके व्यक्तित्व एवं जीवन के विविध पक्षों पर अनेकानेक पुस्तकें लिखी गई हैं और लिखी जा रही हैं। गाँधी जी की ख्याति पूरी दुनिया में अहिंसा के जरिये चमत्कारी नेतृत्व देने वाले नेता की रही, साथ ही देश में मिशनरी लेखन व पत्रकारिता की बुनियाद रखने और उसके पल्लवन में भी उनकी महत्वपूर्ण भूमिका थी।

रवीन्द्रनाथ टैगोर ने साहित्य की विभिन्न विधाओं में सृजन किया।

सांस्कृतिक रूप में सजग भारत के किसी भी व्यक्ति को रवीन्द्रनाथ ने आकर्षित न किया हो ऐसा संभव नहीं है। रवीन्द्रनाथ के समूचे व्यक्तित्व पर कोई जितना ही विचार करता है सबसे पहले उसे उनके जीवन और व्यक्तित्व की विशालता और विपुलता का वैभव आश्चर्यचकित करता है। रवीन्द्रनाथ कहीं से ऐसे इनसान नहीं थे जिनमें एक गुलाम देश के नागरिक की किसी भी प्रकार की कुंठा का लेश मात्र मौजूद हो। स्वतन्त्रता उनकी कामना नहीं उनकी नैसर्गिकता थी। वे इस बात पर हमेशा बल दे रहे थे कि राजनीतिक 'स्वराज' से ही मुक्ति नहीं है हमारी आत्मा की है। मनुष्य की मुक्ति की लड़ाई सिर्फ राजनीतिक स्वाधीनता नहीं है।

5.8 मुख्य शब्दावली

- **पाश्चात्य** – पश्चिमी देशों से संबंधित।
- **अस्तित्व** – वजूद।
- **आवृत्ति** – दुहराव।

टिप्पणी

- **परभाव** – दूसरों की भावना।
- **सर्वधर्म समभाव** – सभी धर्मों के प्रति समान भावना।
- **अध्यात्म** – ईश्वरत्व व आत्मोन्नति से संबंधित।
- **सर्टिफिकेट** – प्रमाणपत्र।
- **निरभिमान** – अहंकारशून्यता।

5.9 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. स्वामी विवेकानंद कौन थे?
2. विवेकानंद ने रामकृष्ण परमहंस को ही अपना गुरु क्यों माना?
3. महर्षि अरविंद को पढ़ने के लिए कहां व क्यों भेजा गया?
4. महर्षि अरविंद ने किस पत्र–पत्रिका का संपादन किया?
5. गांधी जी ने धोबी से कराया जाने वाला काम स्वयं करना क्यों आरंभ किया?

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. विवेकानंद के शिकागो व्याख्यान का समीक्षात्मक अवलोकन कीजिए।
2. शिकागो व्याख्यान की महत्ता एवं वैशिष्ट्य पर प्रकाश डालिए।
3. महर्षि अरविंद के लेख 'धर्म और राष्ट्रवाद' का सार लिखिए।
4. 'धर्म और राष्ट्रवाद' का समीक्षात्मक विश्लेषक कीजिए।
5. गाँधी जी की आत्थकथा 'सादगी' का सारांश लिखिए।
6. रवीन्द्रनाथ टैगोर की कविता 'चित्त जहां भयशून्य' की व्याख्या कीजिए।

5.10 सहायक पाठ्य सामग्री

1. आशा प्रसाद, *स्वामी विवेकानंद : एक जीवनी*, डायमंड बुक्स, नयी दिल्ली : 2005
2. रामधारी सिंह 'दिनकर', *श्री अरविन्द : मेरी दृष्टि में*, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद : 2008
3. महात्मा गांधी, *मेरी आत्मकथा : सत्य के मेरे प्रयोग*, कल्पना प्रकाशन, नयी दिल्ली : 2016
4. नरेन्द्र जाधव, *विश्वमानव रवीन्द्रनाथ टैगोर*, प्रभात प्रकाशन, नयी दिल्ली : 2015